

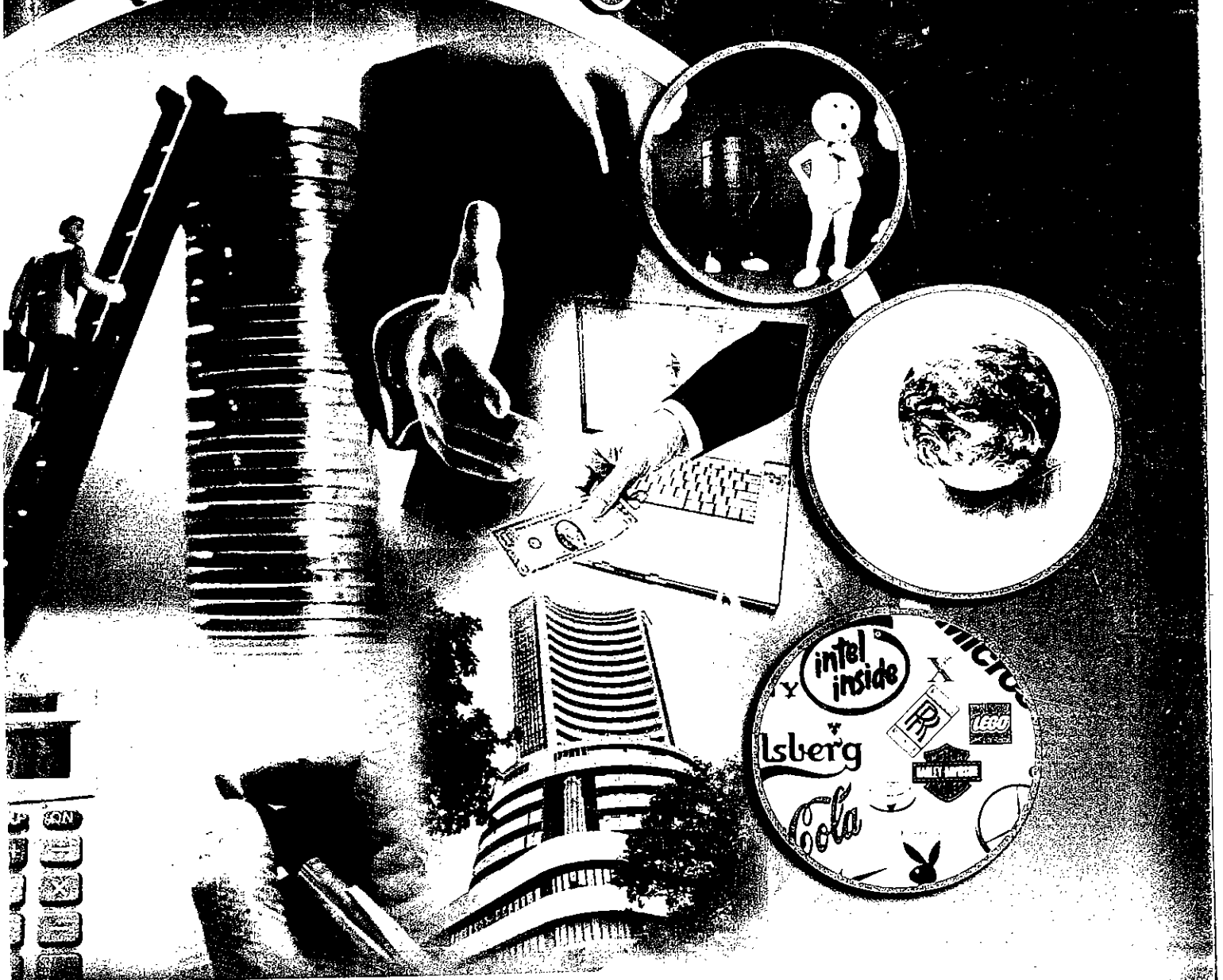
स्याध्याय

स्यमन्थन

स्यादलम्बन



उ. प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय



प्रथम खण्ड : व्यावसायिक सम्प्रेषण
द्वितीय खण्ड : सम्प्रेषण कुशलताएँ
तृतीय खण्ड : शोध विधियों से परिचय
चतुर्थ खण्ड : आंकड़ों का विश्लेषण
पंचम खण्ड : सांख्यिकीय पैकज एवं रिपोर्ट लेखन

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

विश्वविद्यालय परिसर

शांतिपुरम् (सेक्टर-एफ), काफामऊ, इलाहाबाद, 211013



उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

M.Com-04 (N)
संचार कौशल एवं
शोध विधि

खण्ड

1

व्यावसायिक सम्प्रेषण (Business Communication)

इकाई - 1 5
व्यावसायिक सम्प्रेषण की अवधारणा, प्रकृति, प्रक्रिया, महत्व, बाधाएँ एवं दूर करने के उपाय। (Business Communication : Concept, Nature, Process, Importance, Barriers and means to Overcome.)

इकाई - 2 34
व्यावसायिक लेखन, वाणिज्यिक पत्र, व्यावसायिक रिपोर्ट एवं मौखिक सम्प्रेषण (Business writing Commercial Letters, Business Report and Oral Communication)

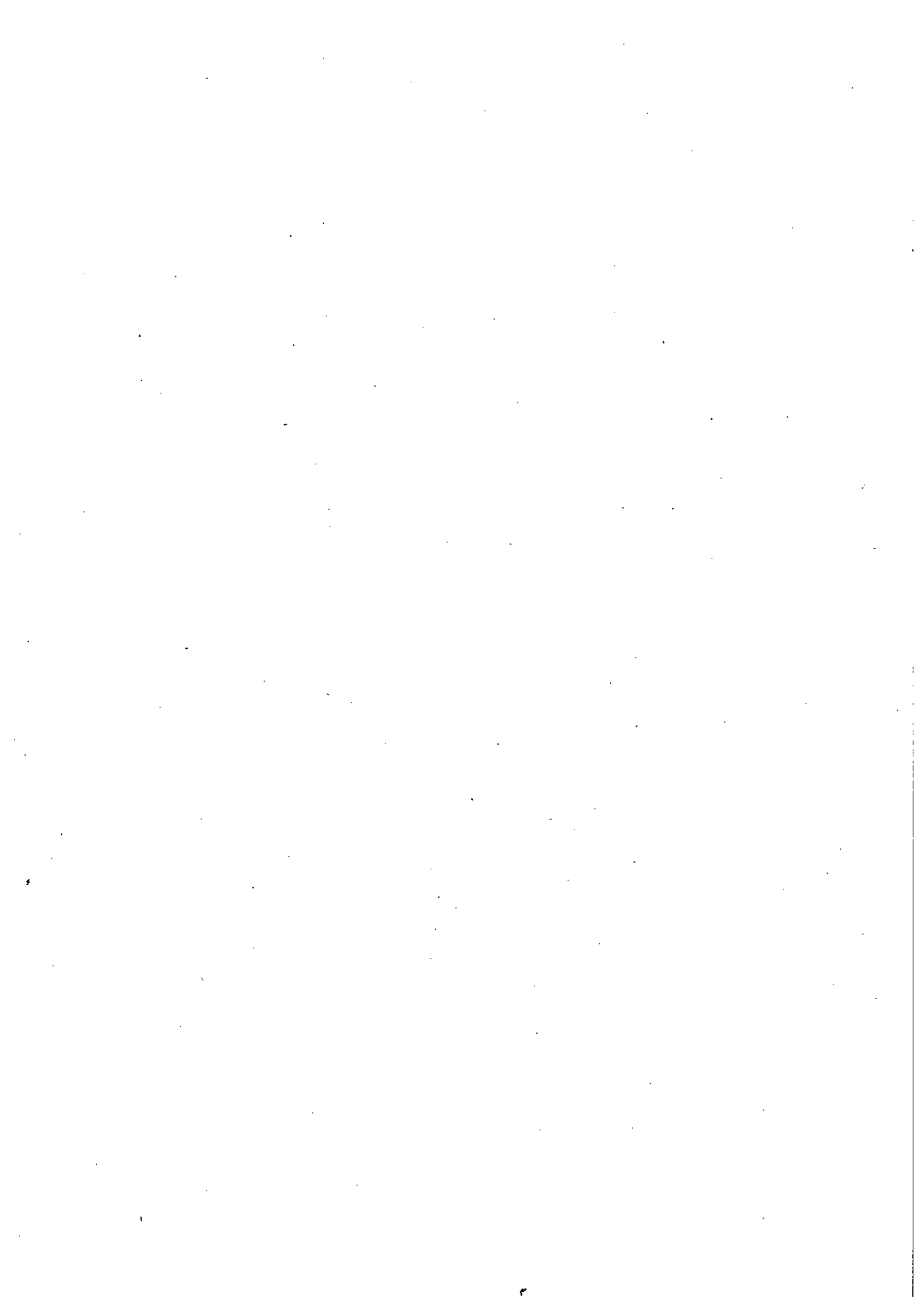
इकाई - 3 75
रिपोर्ट प्रस्तुतिकरण, सार्वजनिक भाषण एवं विचार-विनिमय द्वारा निर्णयन (Report Presentation, Public Speaking and Negotiation)

**MCOM : 06 खण्ड- 1 परिचय-Communication and Research
Methodology**

खण्ड-1 : व्यावसायिक सम्प्रेषण (Business Communication)

इस खण्ड में कुल तीन इकाईयां हैं जिनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है:

- इकाई-1** व्यवसाय में सम्प्रेषण की बड़ी महत्ता है। व्यावसायिक सम्प्रेषण लिखित, मौखिक दोनों प्रकार का होता है। इस इकाई में सम्प्रेषण का आशय, सम्प्रेषण की प्रकृति, सम्प्रेषण की प्रक्रिया, सम्प्रेषण के महत्व एवं सम्प्रेषण में आने वाली बाधाओं तथा उन्हें दूर करने के उपायों के बारे में बताया गया है।
- इकाई-2** व्यावसायिक जगत में अनेक अवसरों पर लिखित सम्प्रेषण ही किया जाता है क्योंकि यह भविष्य के लिये प्रमाण के रूप में प्रयोग किया जाता है। व्यापारिक पत्र, व्यवसाय की आत्मा है बिना पत्र व्यवहार के व्यापार होना कठिन कार्य है। व्यवसाय में अनेक व्यावसायिक रिपोर्ट की आवश्यकता पड़ती है। मौखिक सम्प्रेषण तीव्र तथा तुरन्त प्रभावकारी होता है। इस इकाई में उपरोक्त विषयों के बारे में बताया गया है।
- इकाई-3** व्यावसायिक रिपोर्ट कैसे बनाई और प्रस्तुत की जाये। सार्वजनिक प्रस्तुतिकरण एवं वार्तालाप की भी व्यवसाय में आवश्यकता पड़ती है। इन सब विषयों को इस इकाई में समझाया गया है।



इकाई-1 व्यावसायिक संप्रेषण : अवधारणा, प्रकृति, प्रक्रिया, महत्व एवं बाधाएँ (Business Communication : Concept, Nature, Process, Importance, and Barriers)

इकाई की रूपरेखा

- 1.0 इकाई का उद्देश्य
- 1.1 प्रस्तावना : (Introduction)
- 1.2 व्यावसायिक संप्रेषण : अवधारणा, उद्देश्य एवं विशेषताएँ
- 1.3 व्यावसायिक संप्रेषण की प्रकृति
- 1.4 व्यावसायिक संप्रेषण की प्रक्रिया
- 1.5 प्रभावशाली संप्रेषण के आवश्यक तत्त्व
- 1.6 व्यावसायिक संप्रेषण का महत्व
- 1.7 व्यावसायिक संप्रेषण की बाधाएँ
- 1.8 व्यावसायिक संप्रेषण की बाधाओं को दूर करने के उपाय
- 1.9 सारांश
- 1.10 शब्दावली
- 1.11 अभ्यास के लिये प्रश्न
- 1.12 संदर्भ पुस्तकें

1.0 उद्देश्य : (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- व्यावसायिक संप्रेषण की अवधारणा, प्रकृति, उसकी प्रक्रिया के बारे में बता सकें;
- व्यावसायिक संप्रेषण कैसे प्रभावशाली हो यह बता सकें;
- व्यावसायिक संप्रेषण के महत्व को बता सकें तथा
- व्यावसायिक संप्रेषण की बाधाओं और उन्हें दूर करने के सुझाव बता सकें।

1.1 प्रस्तावना : (Introduction)

आधुनिक युग तकनीकी युग है जहाँ एक ओर भीमकाय उत्पादन सम्भव हुआ है वहीं दूसरी ओर प्रत्येक उद्योग में कार्य करने वाले व्यक्तियों की संख्या में भी पर्याप्त वृद्धि हुई है। अतः किसी संस्था में सभी व्यक्तियों

को एक सूत्र में पिरोने के लिये सम्प्रेषण व्यवस्था का महत्वपूर्ण स्थान है।

सम्प्रेषण का अर्थ दो या दो से अधिक व्यक्तियों के मध्य तथ्यों, विचारों, अनुमानों या संवेगों (Emotions) के पारस्परिक आदान-प्रदान से है। वर्तमान समय में तार, टेलीफोन, टेलीविजन तथा रेडियो आदि ने विचारों के सम्प्रेषण को अधिक सुलभ बना दिया है परन्तु ये सभी साधन स्वयं सम्प्रेषण नहीं हैं। चार्ल्स ई० रेडफील्ड (Charles E. Redfield) के अनुसार सम्प्रेषण से आशय मानवीय तथ्यों एवं विचारों के पारस्परिक विनिमय से है, न कि टेलीफोन, तार, रेडियो आदि तकनीकी साधनों से। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सफल सम्प्रेषण हेतु सूचना देने वाला और सूचना पाने वाला विषय वस्तु का एक-सा अर्थ बोध करने में समर्थ हो सके। किसी व्यक्ति द्वारा कोई बात कह देना ही पर्याप्त नहीं होता बल्कि आवश्यकता इस बात की भी होती है कि सूचना पाने वाला सूचना को उसी प्रकार प्राप्त करे एवं उसका वही अर्थ लगावे जो सूचना देने वाला का है। यद्यपि किसी तथ्य पर कहने और सुनने वाले में मतैक्य होना आवश्यक नहीं है परन्तु सम्प्रेषण हेतु उन दोनों ही व्यक्तियों को सम्बन्धित तथ्य या सूचना का एक-सा अर्थ समझना आवश्यक है।

आधुनिक व्यावसायिक युग में व्यापार अथवा उपक्रम की सफलता का मूल तत्व न केवल सम्प्रेषण बल्कि 'प्रभावी सम्प्रेषण' के कारण ही सम्भव है। सम्प्रेषण ही वह साधन है जिसके द्वारा व्यवहार को क्रियान्वित किया जाता है, परिवर्तनों को लागू किया जाता है, सूचनाओं को उत्पादक बनाया जाता है एवं व्यावसायिक लक्ष्यों को प्राप्त किया जाता है। सम्प्रेषण में एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक सूचनाओं का आदान-प्रदान शामिल होता है। आधुनिक संचार क्रान्ति के युग में समस्त व्यावसायिक उपक्रमों की सफलता काफी सीमा तक प्रभावी सम्प्रेषण प्रक्रिया पर निर्भर करती है।

सम्प्रेषण (Communication) शब्द अंग्रेजी के 'Common' शब्द से बना है जिसका उत्पत्ति लैटिन शब्द 'Communis' से हुई है, जिसका शाब्दिक अर्थ है एक समान। सम्प्रेषण वह साधन है जिसमें संगठित क्रिया द्वारा तथ्यों, सूचनाओं, विचारों, विकल्पों एवं निर्णयों का दो या दो से अधिक व्यक्तियों के मध्य अथवा व्यावसायिक उपक्रमों के मध्य आदान-प्रदान होता है। सन्देशों का आदान-प्रदान लिखित, मौखिक अथवा सांकेतिक हो सकता है। माध्यम बातचीत, विज्ञापन, रेडियो, टेलीविजन, समाचार पत्र, ई-मेल, पत्राचार आदि कुछ भी हो सकता है। सम्प्रेषण को सन्देशवाहन, संचार अथवा संवहन आदि समानार्थी शब्दों से पुकारा जाता है।

1.2 व्यावसायिक सम्प्रेषण की अवधारणा, उद्देश्य एवं विशेषतायें

:(Concept, Objectives and Elements of Business Communication)

अर्थ के सम्बन्ध में एकमत नहीं हैं। कुछ विद्वानों ने सूचनाओं के प्रेषण की प्रक्रिया को ही सम्प्रेषण माना है और कुछ ने प्रेषण के साधनों को ही सम्प्रेषण माना है। अतः इसके अर्थ का ठीक ढंग से समझने के लिये विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषाओं का अध्ययन करना आवश्यक है। सम्प्रेषण की कुछ प्रमुख विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषायें निम्नांकित हैं:-

व्यावसायिक सम्प्रेषण;
अवधारणा, प्रकृति,
प्रक्रिया महत्व बाधायें
एवं दूर करने के उपाय

आंग्ल शब्द Communication को हिन्दी में संचार, संवादवाहन, सम्प्रेषण, सन्देशवाहन नामों से जाना जाता है।

1. वेबस्टर शब्दकोष के अनुसार, सम्प्रेषण से आशय- "शब्दों, पत्रों अथवा सन्देशों द्वारा समागम, विचारों एवं सम्मतियों के विनिमय से है।"¹
2. कीथ डेविस के अनुसार, "सम्प्रेषण वह प्रक्रिया है जिसमें सन्देश और समझ को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुँचाया जाता है।"²
3. लुई ए० एलेन के अनुसार, "सम्प्रेषण में वे सभी चीजें शामिल हैं जिनके माध्यम से एक व्यक्ति अपनी बात दूसरे व्यक्ति के मस्तिष्क में डालता है। यह अर्थ का पुल है। इसके अन्तर्गत कहने, सुनने और समझने की व्यवस्थित तथा निरन्तर प्रक्रिया सम्मिलित होती है।"³
4. न्यूमैन तथा समर के अनुसार, "सम्प्रेषण दो या दो से अधिक व्यक्तियों के मध्य तथ्यों, विचारों, सम्मतियों अथवा भावनाओं का विनिमय है।"⁴
5. मेयर के अनुसार "सम्प्रेषण से आशय एक व्यक्ति के विचारों और सम्मतियों से दूसरे व्यक्ति को अवगत कुराने से है।"⁵
6. कार्टियर एवं हारवर्ड के अनुसार, "सम्प्रेषण स्मरण शक्तियों के दोहराने (Replication) के लिये एक प्रक्रिया है।"⁶

1. "Inter course by words, letters or messages, interchange of thoughts and opinions."
-Webster's Dictionary
2. "Communication is the process of passing information, and understanding from one person to another." -Keith Devis : Human Relation in Business, p. 288
3. "Communication is the sum of all things that one person does when he wants to create understanding in the mind of other. It is a bridge of meaning. It involves a systematic and continuous process of telling, listening and understanding."
-Louis A. Allen : Management and Organisation, p. 114
4. "Communication is an exchange of facts, ideas, opinions or emotions by two or more persons."
-Newman and Summer : The Process of Management, p. 59
5. "Communication means the act of making one's ideas and opinion known to others".
-F.G. Meyer
6. "Communication is a process for the replication of memories".
- P.A. Cartier and K.A. Haward

7. मैकफारलैण्ड के अनुसार, "सम्प्रेषण को विस्तृत रूप में मानवीय पहलुओं के मध्य अर्थपूर्ण बातों का विनिमय करने की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। विशिष्टतया यह वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से मानवों के मध्य समझ को पहुँचाया जाता है तथा अर्थों को समझा जाता है।"
8. स्ट्रॉस के अनुसार, "सम्प्रेषण को विस्तृत रूप में मानवों के मध्य अर्थपूर्ण बातों के आदान-प्रदान की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।"²

उपर्युक्त परिभाषाओं का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि सम्प्रेषण एक सतत प्रक्रिया है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति अपने सन्देशों, भावनाओं, विचारों, सम्मतियों तथा तर्कों आदि का पारस्परिक विनिमय करते हैं। इस प्रकार सम्प्रेषण एक ऐसी युक्ति है, कला है जिसके माध्यम से सूचनाओं का आदान प्रदान होता है।

व्यावसायिक सम्प्रेषण के उद्देश्य : (Objectives of Business Communication)

व्यवसाय करने में सम्प्रेषण की अत्यधिक आवश्यकता पड़ती है, क्योंकि कोई भी व्यक्ति तब तक व्यवसाय नहीं कर सकता जब तक कि उसके पास व्यवसाय से सम्बन्धित सूचना के आदान-प्रदान की व्यवस्था न हो। यदि किसी व्यक्ति को रूपया देकर ताले में बन्द करके बिठा दिया जाये तो वह व्यवसाय नहीं कर सकता, ठीक उसी प्रकार व्यवसाय में सम्प्रेषण के निम्न मुख्य उद्देश्य हैं:-

1. सूचना का आदान-प्रदान : सम्प्रेषण प्रक्रिया का प्रयोग इसलिये किया जाता है ताकि व्यवसाय से सम्बन्धित समस्त सूचनाओं का विनिमय अथवा आदान-प्रदान किया जा सके। इसके माध्यम से क्रय-विक्रय, ग्राहक, पूर्तिकर्ता तथा अन्य पक्षों के बारे में सभी प्रकार की सूचनायें प्राप्त की जा सकती है अथवा भेजी जा सकती हैं।
2. कार्यवाही (Action) : सम्प्रेषण इस उद्देश्य से किया जाता है कि निश्चित किये गये लक्ष्यों के बारे में क्या कार्यवाही हो रही है, इसका पता लग सके। इसी कारण प्रबन्धक समय-समय पर अनेक प्रकार के विवरण मँगवाते हैं ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि प्रत्येक स्तर पर कार्यवाही हो रही है।

1. "Communication may be broadly defined as the process of meaningful interaction among human beings. More specifically, it is the process by which meanings are perceived and understandings are reached among human beings."

-D.E. McFarland; Management : Principles and Practices, p. 552

2. "Communication be broadly defined as the process of meaningful intefation among human beings"

-Strauss

3. **निष्पादन (Performance)** : सम्प्रेषण के माध्यम से वास्तव में किये गये कार्य की प्रगति का मूल्यांकन हो सकता है। यदि कोई कमी हो तो इसे सुधारा जा सकता है। यदि किसी स्थान पर कोई कार्य नहीं हो रहा है तो उचित कार्यवाही की जा सकती है।

4. **समन्वय (Co-ordination)** : सभी व्यावसायिक क्रियाओं को सुचारु रूप से चलाने के लिये यह आवश्यक है कि विभिन्न विभागों तथा अनुभागों में समन्वय स्थापित किया जाये और इस कार्य के लिये सम्प्रेषण का सहारा लिया जाता है। सम्प्रेषण का प्रयोग सभी स्तरों पर सूचनाएँ भेजने, नीतियों को अपनाने तथा श्रमिकों के मनोबल को बढ़ाने आदि में भी प्रयोजित किया जाता है। अतः सम्प्रेषण समन्वय के लिए बहुत सहायक है।

5. **प्रबन्धकीय कार्यों का आधार** : किसी भी व्यावसायिक संगठन में प्रबन्ध एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा लोगों से कार्य कराया जाता है। प्रबन्ध के मुख्य कार्य हैं— नियोजन, संगठन, मानवीय संसाधनों को जुटाना, नियुक्ति, अभिप्रेरणा आदि। इन सभी कार्यों के लिये सूचना का आदान-प्रदान आवश्यक है जो कि सम्प्रेषण द्वारा किया जाता है। यहाँ तक कि प्रबन्धकीय निर्णय भी सूचना के आधार पर लिये जाते हैं। अतः सम्प्रेषण की अत्यधिक आवश्यकता है।

6. **अभिप्रेरणा (Motivation)** : कर्मचारियों को कार्य के लिये प्रोत्साहित करने हेतु उन्हें सभी प्रकार की आवश्यक जानकारी देना आवश्यक है और यह कार्य सम्प्रेषण की सहायता से किया जाता है। यदि कर्मचारियों को इस बात का पूर्ण ज्ञान हो कि अच्छा कार्य करने पर उनकी तरक्की होगी अथवा पारितोषिक प्राप्त होगा तो वे निश्चय रूप से ही अच्छा कार्य करेंगे।

7. **शिक्षा (Education)** : व्यावसायिक संगठनों में कर्मिकों के शिक्षण तथा प्रशिक्षण हेतु सम्प्रेषण की अत्यधिक आवश्यकता है। सम्प्रेषण के माध्यम से समस्त कर्मचारियों और अधिकारियों का ज्ञान वर्धन किया जाता है, ताकि वह अपने कार्य को अधिक निपुणता से कर सकें।

संक्षेप में, हम यह कह सकते हैं कि व्यावसायिक सम्प्रेषण एक व्यवसाय की आधारशिला है और इसी की सहायता से सभी प्रकार के व्यावसायिक उद्देश्यों की पूर्ति की जा सकती है। आधुनिक जगत में व्यावसायिक कार्यकलाप इतने अधिक बढ़ चुके हैं कि उन्हें निपटाने के लिये एक कुशल सम्प्रेषण पद्धति की अत्यन्त आवश्यकता है, विशेषकर बैंकों की प्रबन्धकीय सूचना पद्धति की कुशलता इसी पर आधारित है।

व्यावसायिक सम्प्रेषण के आवश्यक तत्व : (Essential Features of Business Communication)

सम्प्रेषण के परम्परागत स्वरूप में पांच तत्व : (1) सन्देशवाहक, वक्ता

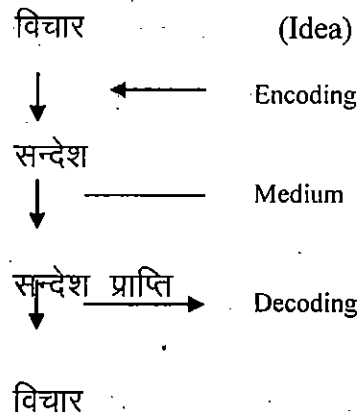
अथवा लेखक, (2) विचार जो सन्देश, आदेश या अन्य रूप में हैं, (3) संवाहन कहने, लिखने अथवा जारी करने के रूप में, (4) सन्देश प्राप्त करने वाला, (5) सन्देश प्राप्तकर्ता की प्रतिपुष्टि या प्रतिक्रिया आदि तत्व होते हैं। लेकिन सम्प्रेषण के आधुनिक स्वरूप का विश्लेषण किया जाए तो सम्प्रेषण के निम्नलिखित तत्व प्रकाश में आते हैं:

(1) सम्प्रेषण एक सतत प्रक्रिया (A Continuous Process) :

व्यावसायिक सम्प्रेषण निरन्तर (सतत) चलने वाली प्रक्रिया है। क्योंकि ग्राहकों, कर्मचारियों, सरकार आदि बाह्य एवं आन्तरिक पक्षों के मध्य सन्देशों के आदान-प्रदान की प्रक्रिया व्यवसाय में निरन्तर बनी रहती है। सम्प्रेषण में सूचना (Information), आदेश, निर्देश, सुझाव, सलाह, क्रियान्वयन, शिक्षा, चेतावनी, अभिप्रेरणा, ऊँचा मनोबल उठाने वाले संदेशों का आदान प्रदान निर्बाध रूप से सतत प्रक्रिया में चलता रहता है।

2. सम्प्रेषण अर्थ सम्प्रेषित करने का माध्यम (A Means to Convey Meaning) :

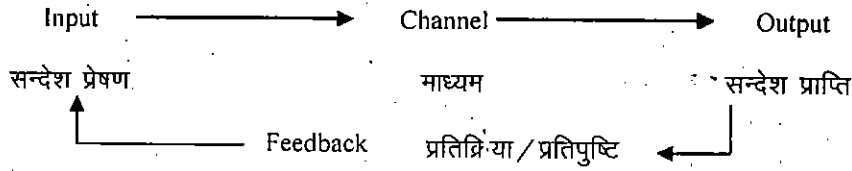
सम्प्रेषण का आशय सूचनाओं एवं सन्देशों को एक व्यक्ति (समूह) से दूसरे व्यक्ति (समूह) को भेजना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि इसके लिए यह भी आवश्यक है कि सूचना अथवा सन्देश प्राप्तकर्ता उसे उसी भाव (अर्थ) में समझे जिस भाव से उसे सूचना दी गई है। इसलिए सम्प्रेषण प्रक्रिया में सूचना प्रेषण करने वाले को 'Encoder' तथा सूचना प्राप्त करने वाले को 'Decoder' कहा जाता है। इस प्रक्रिया को निम्न ढंग से स्पष्ट किया जा सकता है :



3. सम्प्रेषण द्विमार्गी प्रक्रिया (Communication is a two-way Process):

सम्प्रेषण दोतरफा प्रक्रिया है। सम्प्रेषण में दो व्यक्तियों अथवा समूहों के मध्य सन्देश का आदान प्रदान होता है। सम्प्रेषण प्रक्रिया में सन्देश प्राप्तकर्ता सन्देश भेजने वाले के सही अर्थ भाव को समझता है एवं अपनी प्रतिपुष्टि अथवा प्रतिक्रिया (Feedback) सन्देश प्रेषक को प्रदान करता है। इस तरह सम्प्रेषण मूलतः द्विमार्गी प्रक्रिया है। सन्देश प्राप्त करने पर ही सम्प्रेषण प्रक्रिया

तब तक पूर्ण नहीं होती, जब तक प्राप्त करना वाला सम्बन्धित वांछित प्रतिपुष्टि का संवाहन न करे। द्विमार्गी प्रक्रिया को निम्न प्रकार स्पष्ट कर सकते हैं



व्यावसायिक सम्प्रेषण :
अवधारणा, प्रकृति,
प्रक्रिया महत्व बाधार्थ
एवं दूर करने के उपाय

4. सम्प्रेषण एक प्रबन्धकीय कार्य (Communication is a managerial task) :

सम्प्रेषण एक महत्वपूर्ण प्रबन्धकीय प्रक्रिया एवं संस्था के कार्यों के निष्पादन की आधारशिला है, व्यावसायिक संस्था के संगठित समूह के व्यक्तियों, सहकर्मचारियों के मध्य समन्वय, नेतृत्व, अभिप्रेरणा एवं निर्देशन का कार्य सम्प्रेषण द्वारा किया जाता है। नियन्त्रण प्रक्रिया का मूलाधार सम्प्रेषण ही है जिसके द्वारा कर्मचारियों एवं कार्य पर नियन्त्रण प्राप्त किया जाता है। कर्मचारियों के मध्य सौहार्दपूर्ण वातावरण प्रभावी सम्प्रेषण के द्वारा बनाया जा सकता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि सम्प्रेषण एक प्रबन्धकीय कार्य एवं अन्य प्रबन्धकीय कार्यों के सम्पादन के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण (तन्त्र) है।

5. सम्प्रेषण माध्यम के विभिन्न प्रकार : (Different Channels of Communication)

आधुनिक युग में सम्प्रेषण के लिए अनेक संचार माध्यम प्रयोग में लाए जाते हैं। सूचना क्रान्ति के वर्तमान युग में सम्प्रेषण के लिए परम्परागत माध्यम जैसे पत्राचार, टेलीफोन के साथ-साथ तीव्र गति वाले आधुनिक सम्प्रेषण माध्यम जैसे Telefax, E-mail, Video Conferencing आदि माध्यम प्रयोग में लाए जाते हैं। व्यावसाय का आकार एवं सन्देश की प्रकृति के अनुसार माध्यम का चयन किया जाता है।

सम्प्रेषण लिखित, मौखिक अथवा सांकेतिक होने के साथ-साथ एकमार्गीय (Inter-scaler), द्विमार्गीय (Intra-scaler) एवं त्रिस्तरीय (Extra-organisation) भी हो सकता है।

1.3 व्यावसायिक सम्प्रेषण की प्रकृति : (Nature of Business Communication)

सम्प्रेषण एक ऐसी साधारण प्रक्रिया है जिसके द्वारा निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रयास किया जाता है। इससे व्यक्तियों, समूहों एवं विभागों के बीच सूचनाओं का आदान-प्रदान होता है। सम्प्रेषण द्वारा समूहों एवं सूचनाओं का सम्प्रेषण मुख्य विभाग से उप-विभागों में तथा उप-विभागों से व्यक्तियों या समूहों को किया जाता है। सम्प्रेषण में वर्तमान एवं भूतकाल

की दोनों सूचनाओं को सम्मिलित किया जाता है। सम्प्रेषण प्रबन्ध प्रक्रिया का एक यन्त्र है। उच्चाधिकारियों एवं अधीनस्थों के मध्य मधुर सम्बन्धों का सृजन केवल प्रभावी एवं अर्थपूर्ण सम्प्रेषण द्वारा ही किया जाता सकता है। सम्प्रेषण की प्रकृति सन्देशों तथा अन्तर्सम्बन्धों के आदान-प्रदान करने की होती है। सम्प्रेषण लिखित, मौखिक, अभिनय एवं तस्वीरों आदि के द्वारा किया जा सकता है।

सम्प्रेषण का मुख्य उद्देश्य केवल यही होता है कि सन्देश प्राप्तकर्ता सन्देश को मूलरूप से तथा उसी दृष्टिकोण के अनुसार समझे जैसा कि सम्प्रेषक ने सम्प्रेषित किया है। सम्प्रेषण तभी प्रभावी होता है जब प्रापक द्वारा पूर्णतया समझ लिया जाता है। यदि प्रापक द्वारा न समझा जाए तो ऐसी सम्प्रेषण प्रक्रिया पूर्ण नहीं मानी जाती है।

(1) प्रबन्धकीय कार्यों के लिए आवश्यक : प्रबन्धकीय कार्यों जैसे निर्देशन के लिये सम्प्रेषण अत्यन्त आवश्यक है। सम्प्रेषण के बिना निर्देशन कार्य किया ही नहीं जा सकता।

(2) सम्प्रेषण दोहरी क्रिया है : सम्प्रेषण के अन्तर्गत केवल निर्देश ही नहीं दिये जाते, बल्कि अधीनस्थ कर्मचारियों से विचार-विमर्श भी किया जाता है, उनके सुझाव व कठिनाइयों को सुना जाता है। इस प्रकार यह दोहरी क्रिया है।

(3) सम्प्रेषण एक सतत क्रिया है : सम्प्रेषण की क्रिया निरन्तर चलती रहती है- विचारों का आदान-प्रदान सदैव चलता रहता है।

(4) अभिप्रेरणा का आधार : सम्प्रेषण को अभिप्रेरणा का आधार कहा जा सकता है, क्योंकि इस क्रिया के द्वारा कर्मचारियों को कार्य करने के लिए प्रेरित किया जाता है।

(5) सम्प्रेषण प्रवाह : सन्देश तीन दिशाओं में प्रवाहित होते हैं- अधोमुखी (Downward), ऊर्ध्वमुखी (Upward), तथा क्षैतिज (Horizontal)।

(6) सम्प्रेषण विज्ञान एवं कला दोनों ही है : यह विज्ञान इसलिये है क्योंकि सम्प्रेषण-प्रक्रिया को सम्पूर्ण एवं प्रभावी बनाने के लिये क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित ज्ञान की आवश्यकता होती है और सम्प्रेषण कला इसलिये है कि कलात्मक अभिव्यक्ति से ही सम्प्रेषण को प्रभावी बनाया जा सकता है। इस प्रकार कला एवं विज्ञान दोनों के उचित मिश्रण से ही सम्प्रेषण प्रभावी बनता है।

(7) सम्प्रेषण एक सामाजिक प्रक्रिया है : सम्प्रेषण केवल व्यावसायिक संस्थाओं में ही नहीं होता वरन् समाज के प्रत्येक व्यक्ति द्वारा यह प्रक्रिया अपनायी जाती है, इसलिये इसे एक सामाजिक प्रक्रिया कहा गया है।

व्यावसायिक सम्प्रेषण :
अवधारणा, प्रकृति,
प्रक्रिया महत्व बाधायें
एवं दूर करने के उपाय

(8) सम्प्रेषण एक मानवीय प्रक्रिया है : सम्प्रेषण के दोनो पक्ष—प्रेषक एवं प्राप्तकर्ता दोनों ही सामाजिक प्राणी होते हैं और सम्प्रेषण की सम्पूर्ण प्रक्रिया व्यक्ति या व्यक्तियों के समूहों के मध्य ही सम्पन्न होती है, इसलिये सम्प्रेषण एक मानवीय प्रक्रिया भी है।

(9) सम्प्रेषण एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है : सम्प्रेषण केवल व्यावसायिक संस्थाओं में ही नहीं होता है, बल्कि यह एक सर्वव्यापक प्रक्रिया है और इसके सिद्धान्त सार्वभौमिक प्रकृति के होते हैं।

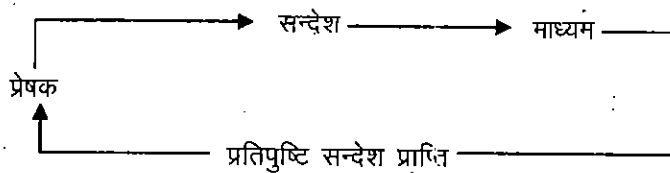
1.4 व्यावसायिक सम्प्रेषण की प्रक्रिया : (Process of Business Communication)

क्रियाओं के व्यवस्थित क्रम एवं स्वरूप को लागू करने के ढंग को प्रक्रिया कहते हैं। सम्प्रेषण के अन्तर्गत एक विभाग द्वारा दूसरे विभाग को विचारों, सूचनाओं एवं भावनाओं के आदान-प्रदान को सम्प्रेषण प्रक्रिया का नाम दिया जा सकता है।

सम्प्रेषण प्रक्रिया संगठन के प्रत्येक स्तर एवं व्यक्तियों तक प्रवाहित होती है। संगठन का प्रत्येक अधिकारी एवं अधीनस्थ सम्प्रेषण से प्रभावित अथवा संलग्न होता है। संगठन के सामूहिक निर्णयों का आधार तथा संगठन का सफल संचालन सम्प्रेषण प्रक्रिया पर निर्भर करता है।

सम्प्रेषण संगठन के व्यक्तियों एवं समूहों का वाहक एवं विचार अभिव्यक्ति का माध्यम है। सम्प्रेषण प्रक्रिया में सम्प्रेषक संदेश के प्रवाह के माध्यम का प्रयोग करता है। माध्यम लिखित, मौखिक, दृश्य अथवा श्रव्य एवं श्रव्य होता है। माध्यम का चयन सम्प्रेषण के उद्देश्य, गति एवं प्राप्तकर्ता की परिस्थितियों के अनुरूप किया जाता है। सम्प्रेषण माध्यम का चयन करते समय सम्प्रेषक ध्यान रखता है कि कब तथा क्या सम्प्रेषित करना है। प्राप्त संदेश को प्राप्त (Tapes) करता है, विवेचना करता है (Interprets) तथा अपने दृष्टिकोण से ग्रहण (Perceives) तथा वांछित प्रतिउत्तर (Response) प्रदान करता है।

सम्प्रेषण एक नैत्यक (Routine) एवं सतत् (Continuous) प्रक्रिया है एवं कभी न समाप्त होने वाला सम्प्रेषण चक्र संस्था में लगातार विद्यमान रहता है। सम्प्रेषण प्रक्रिया को निम्न चित्र द्वारा दर्शाया जा सकता है :



सम्प्रेषण की प्रक्रिया के मूल तत्व : (Basics Elements of Process)

of Communication) :

प्रचलित एवं एकरूप सम्प्रेषण प्रक्रिया के निम्न महत्वपूर्ण संघटक, तत्त्व, पग अथवा घटक हैं :

संदेश → प्रेषक → संकेतभाव → माध्यम → प्रापक → निहित अर्थ समझना → प्रतिपुष्टि.

जबकि डेविड के० बालो ने सम्प्रेषण प्रक्रिया में निम्न घटक बताए हैं :

विचार → संकेत भाव → पारेषण → प्राप्ति → प्रापक → संकेत भाव → क्रिया-चयन

संदेश (Message) : सम्प्रेषण प्रक्रिया की विषय वस्तु संदेश है। संदेश में सूचना, विचार, संकेत, दृष्टिकोण, निर्देश, परिवेदना, सुझाव, सलाह आदि शामिल हैं। यह लिखित, मौखिक, शाब्दिक, अथवा सांकेतिक होता है।

प्रेषक (Sender) : प्रेषक को सम्प्रेषणकर्ता, पारेषणकर्ता, संदेश देने वाला व्यक्ति कहा जाता है जो कि संदेश प्रदान करता है उपकरणों के माध्यम से यदि संदेश का प्रेषण किया जाता है तो संदेश देने वाले को सम्प्रेषक तथा उपकरण के प्रयोगकर्ता को सहायक (Operator) कहते हैं सम्प्रेषक संदेश द्वारा प्रापक के व्यवहार को गति प्रदान करने वाली शक्ति (Driving Force) है।

संकेत भाव (Encoding) : संदेश अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त भाषा संकेत को संकेत भाव कहते हैं सम्प्रेषण की विषय वस्तु अथवा संदेश सदैव भाव वाचक एवं अमूर्त होती है। भाव अभिव्यक्ति के लिए सदैव शब्द संकेत, ध्वनि, दृश्य आदि का सहारा लिया जाता है। सम्प्रेषक अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए उपरोक्त संकेतों अथवा शब्दों के समूह को प्रयोग करता है। यह सम्प्रेषक के कौशल पर निर्भर करता है कि वह शब्द, संकेत, दैहिक भाषा, ध्वनि, दृश्य, श्रव्य आदि किस माध्यम का चयन करता है तथा प्रभावी अभिव्यक्ति किस प्रकार देता है।

माध्यम (Channel) : सम्प्रेषण में माध्यम बहुवचन अर्थों में प्रयोग हुआ है सम्प्रेषण माध्यम का आशय वह साधन है जिसके द्वारा संदेश का सम्प्रेषण किया जाता है। सम्प्रेषण माध्यम के अन्तर्गत सम्प्रेषक को भाषा, संकेत भाषा, दैहिक-भाषा, आदि में किसी एक का चयन करना होता है जिसमें वह अपने विचार या संदेश की अभिव्यक्ति प्रदान करना चाहता है इसमें यह भी चयन किया जाता है कि संदेश लिखित अथवा मौखिक सम्प्रेषित किया जाए। तदोपरान्त सम्प्रेषण माध्यम को मार्ग एवं दिशा के रूप में प्रयोग किया जाता है कि सम्प्रेषण की दिशा एवं श्रृंखला कौन सी होगी, औपचारिक अथवा अनौपचारिक। मौखिक सम्प्रेषण के अन्तर्गत आमने-सामने टेलीफोन-सेमिनार, विचार-गोष्ठी आदि शामिल करते हैं जबकि लिखित सम्प्रेषण के लिए पत्र-व्यवहार, इन्टरनेट, ई० मेल

व्यावसायिक सम्प्रेषण :
अवधारणा, प्रकृति,
प्रक्रिया महत्व बाधाएँ
एवं दूर करने के उपाय

को प्रयोग करते हैं। इसी प्रकार संकेत भाषा श्रव्य अथवा दृश्य के लिए टेलीविजन, रेडियो, विज्ञापन पटल बोर्ड, वार्ट आदि का प्रयोग करते हैं।

प्राप्तकर्ता (Receiver) : प्रत्येक सम्प्रेषण में संदेश प्राप्त करने वाला महत्वपूर्ण पक्षकार होता है जो कि संदेश ग्रहण करता है बिना प्राप्तकर्ता के संदेश प्रक्रिया पूर्ण नहीं हो सकती। सम्प्रेषण में प्राप्तकर्ता का अस्तित्व महत्वपूर्ण संघटक है जो कि न केवल संदेश को प्राप्त करता है बल्कि संदेश की विवेचना व निहित अर्थ को समझता है तदनुसार प्रतिपुष्टि, प्रतिक्रिया या क्रियान्वयन करता है।

निहित भाव को समझना (Decoding) : संदेश के निहित भाव को समझने की क्रिया को Decoding कहते हैं वस्तुतः यह अनुवाद अथवा संकेतों का अर्थ जानने की क्रिया है। प्रेषक द्वारा भाषा, चिन्ह, संकेत द्वारा प्रेषित संदेश का अनुवाद अथवा अर्थ लगाकर प्रेषक द्वारा भेजे गए अन्तर्भाव को निश्चित अर्थ में समझता है।

(व्यवहार विद्वानों के अनुसार—व्यक्ति के मस्तिष्क में इन्द्रिय चेतना (Sensory) में एक महत्वपूर्ण अंग—जिसको L.A.D. (Linguistic Acquisition Device) कहते हैं जो कि संकेतों, दृश्यों, भाषा वाक्यों को अर्थ प्रदान करता है तथा अर्थ व्यक्त करता है अर्थात् दोनों क्रियाएँ (Encoding अर्थ छिपाना), तथा (Decoding अर्थ व्यक्त) कार्य करती है।)

क्रियान्वयन (Acting) : प्राप्तकर्ता संदेश के अर्थ ग्रहण कर सन्देशानुसार अपनी भूमिका का निर्वाहन करता है अथवा वांछित क्रियाओं को सम्पादित करता है।

प्रतिपुष्टि (Feedback) :

प्रतिपुष्टि (Feedback) का अर्थ प्रबन्धकीय विज्ञान में समझने से लिया गया है अर्थात् जब एक प्रबन्धक अपने सहायक से कोई कार्य करवाना चाहता है तब उस कार्य को किस रूप में किया जाए, उसकी प्रक्रिया क्या हो इस बात को अपने तरह से समझाना प्रतिपुष्टि का अर्थ दर्शाती है। प्रतिपुष्टि सन्देश प्रक्रिया का अन्तिम महत्वपूर्ण तत्व है सम्प्रेषण मूलतः आदान—प्रदान की क्रिया है। सन्देश प्राप्तकर्ता द्वारा सन्देश के क्रियान्वयन भूमिकाओं का सम्पादन, सन्देश की प्रतिक्रिया आदि की वांछित जानकारी जब सन्देश प्राप्तकर्ता द्वारा सम्प्रेषक को प्रदान की जाती है अथवा वापस भेजी जाती है तो इसको प्रतिपुष्टि कहते हैं। प्रतिपुष्टि के अभाव में कोई भी सम्प्रेषण प्रक्रिया पूरी नहीं होती। प्रतिपुष्टि के आधार पर ही सम्प्रेषक पूर्व संदेश में संशोधन, सुधार या परिवर्तन कर प्रभावी स्वरूप प्रदान करता है।

1.5 प्रभावशाली सम्प्रेषण के आवश्यक तत्व : (Essentials of Effective Communication)

सम्प्रेषण के सिद्धान्तों का आशय उन मार्गदर्शक नियमों के समूह से है जिनके पालन करने पर सम्प्रेषण प्रक्रिया अपने निहित उद्देश्यों को प्राप्त कर लेती है। व्यावसायिक सन्देशों एवं सूचनाओं के आदान-प्रदान में जिन महत्वपूर्ण नियमों को ध्यान में रखा जाना आवश्यक है उनको सम्प्रेषण के सिद्धान्त या प्रभावशाली सम्प्रेषण के आवश्यक तत्व कहते हैं।

प्रभावी सम्प्रेषण के निम्नलिखित प्रमुख सिद्धान्त हैं :

- (1) **संक्षिप्तता (Conciseness)** : प्रभावी व्यावसायिक सम्प्रेषण को संक्षिप्त होना चाहिए। सन्देश में अनावश्यक शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। संक्षिप्त सन्देश से प्राप्तकर्ता आसानी से प्रेषक के विचार को समझ सकता है। संचार माध्यमों में विगत वर्षों में एक क्रान्ति हुई है। अनेक नवीन माध्यमों का प्रचलन व्यावसायिक जगत में बढ़ा है। नवीन इलेक्ट्रानिक, डिजिटल संचार माध्यम का प्रचलन बढ़ा है। संक्षिप्त सन्देश का यह भी लाभ है कि सम्प्रेषण लागत कम आती है। अतः आवश्यक है कि प्रभावी सम्प्रेषण के लिए सन्देश संक्षिप्त एवं सारगर्भित हो।
- (2) **अर्थपूर्ण (Meaningful)** : सम्प्रेषण उद्देश्यपरक होना चाहिए। प्रत्येक व्यावसायिक सन्देश में महत्वपूर्ण अर्थ सन्निहित होता है। सम्प्रेषण प्रक्रिया का सार है कि सन्देश में जिस विचार (Idea) अथवा अर्थ (Meaning) को प्रेषित किया जा रहा है प्राप्तकर्ता भी उसी अर्थ एवं विचार को सुविधा से समझ सके। इसके लिए आवश्यक है कि सम्प्रेषण में वास्तविक तथ्यों एवं अंकों (Real Facts and Figures) का प्रयोग किया जाए एवं सन्देश का उचित गठन (Proper organization of the message) होना चाहिए।
- (3) **स्पष्टता एवं शुद्धता (Clarity and Correctness)** : सन्देश सदैव स्पष्ट होना चाहिए ताकि प्रेषक एवं प्राप्तकर्ता को आपसी समझ (Understanding) तथा वांछित प्रतिपुष्टि (Feedback) प्राप्त हो सके। सम्प्रेषण को स्पष्ट व्यक्त करने के लिए आवश्यक है कि परिचित शब्दों (Familiar words) में प्रभावी वाक्यों (Effective sentences) के द्वारा आदान प्रदान किया जाए। वाक्यों के दोहरापन (Double entry) एवं व्यर्थ शब्दों (Redundant words) से बचना चाहिए। तकनीकी भाषा (Jargon) का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। सामान्य सकारात्मक छोटे वाक्यों में सम्प्रेषण किया जाना चाहिए। सन्देश की भाषा (Language) तथा व्याकरण (Grammar) सही होना चाहिए। द्विअर्थी (Ambiguous) वाक्यों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। स्पष्ट एवं सही सन्देश ही सम्प्रेषण के औचित्य को प्रभावी बनाता है।

(4) पूर्णता : (Completeness) सम्प्रेषण की विषय सामग्री सदैव पूर्ण होनी चाहिए। अपूर्ण विषय सामग्री अनेक जटिलताओं एवं अवरोधों को ही उत्पन्न नहीं करती बल्कि सन्देशात्मक परिस्थितियों का निर्माण कर सकती है। पूर्ण सन्देश के लिए यह आवश्यक है कि प्रेषक Five Ws का ध्यान रखें। अर्थात् What (क्या), Who (कौन), Where (कहाँ), When (कब), Why (क्यों), का परीक्षण अवश्य कर लें एवं प्रतिउत्तर सन्देश (Response) की दशा में यह पुष्टि की जानी चाहिए कि सभी प्रश्नों का उत्तर दिया जा रहा है। सम्प्रेषण की पूर्णता तभी है जबकि सन्देश प्राप्तकर्ता का सन्देश के किसी भी भाग के प्रति भ्रम (Doubts) न रहे।

(5) शिष्टता (Courtesy) : सम्प्रेषण सदैव शिष्ट एवं शालीन भाषा में किया जाना चाहिए। व्यावसायिक प्रगति के लिए आवश्यक है कि बाह्य एवं आन्तरिक पक्षों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित हों। शिष्टता ही मूल आधार है जिसके द्वारा सभी पक्षों से मैत्रीपूर्ण व्यवहार स्थापित हो सकता है। प्रभावी सम्प्रेषण के लिए आवश्यक है कि सन्देश का शीघ्र प्रतिउत्तर, भाषा की शालीनता, कार्यों के प्रति कृतज्ञता, ज्ञापन, भूल के लिए क्षमा याचना की जानी चाहिए। आक्रामक एवं चिढ़ाने वाली भाषा (Offensive and irritating expression) से बचना चाहिए।

(6) वैचारिक लक्ष्य (Consideration) : प्रभावी सम्प्रेषण के लिए आवश्यक है कि सन्देश सदैव प्राप्तकर्ता की आवश्यकता (Receiver needs) के अनुरूप हो। सम्प्रेषण सदैव दूसरों के लिए विचारपूर्ण (Thoughtful for others) होना चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि प्रभावी सम्प्रेषण दूसरों की भावनाओं एवं परिस्थितियों के दृष्टिकोण (Empathetic attitude) से किया जाए। सम्प्रेषण सदैव मूल विषय पर केन्द्रित (Stick to the point) होना चाहिए।

(7) निरन्तर : (Continuity) सम्प्रेषण प्रणाली तभी प्रभावी हो सकती है जब सम्बन्धित दोनों पक्षों के मध्य निर्वाध गति से सम्प्रेषण चालू रहे जिससे निरन्तर विचारों के आदान-प्रदान के कारण लाभ मिल सके। सन्देश के महत्वपूर्ण तथ्यों का प्रभावोत्पादक (Emphasis) ढंग से प्रदर्शन किया जाए। निरन्तर सन्देशों के आदान-प्रदान से मुख्य बिन्दुओं (key points) पर पुनर्विचार (Review) भी सम्बन्धित पक्ष कर सकते हैं। सन्देशों के निरन्तर आदान-प्रदान से संवादहीनता (Communication Gap) से बच सकते हैं। क्योंकि संवादहीनता अनेक कठिनाइयों का मूल कारण है। निरन्तरता से उद्देश्य प्राप्ति में गति आती है।

(8) उपयुक्तता (Suitability) : सन्देश के प्रेषण का माध्यम उपयुक्त होना चाहिए ताकि मिथ्या धारणाएं जन्म न ले सकें। प्रभावी सम्प्रेषण के लिए आवश्यक है कि संचार व्यवस्था समुन्नत (Advance) होनी चाहिए। सम्प्रेषण माध्यम की उपयुक्तता का निर्धारण परिस्थितियों व प्राप्तकर्ता को दृष्टिगत

(3) समझाकर सहयोग प्राप्त करना :

श्रेष्ठ संवादवाहन की व्यवस्था कर्मचारियों को अच्छा कार्य करने का अवसर प्रदान करती है। किसी कार्य को करने से पूर्व उस कार्य के विषय में मानसिक रूप से तैयार होना बहुत अधिक आवश्यक है। इसका अर्थ यह है कि वास्तविक कार्य के पूर्व कार्य करने की इच्छा का जागृत होना अत्यन्त आवश्यक होता है। इस इच्छा को जागृत करने के लिये कार्य को समझाने हेतु संवादवाहन की आवश्यकता होती है। जब तक किसी कार्य को उचित प्रकार से न समझ लिया जाये तब तक कार्य के सम्बन्ध में विश्वास का उदय नहीं होता है। संवादवाहन सन्तोषप्रद कार्य को विश्वास जागृत करके सम्भव बनाता है। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि संवादवाहन आपसी समझ में वृद्धि करता है, इच्छा को जागृत करता है, अच्छे कार्य को करना सम्भव बनाता है।

(4) नेतृत्व का आधार : संवादवाहन नेतृत्व का आधार है। यदि प्रबन्धक अपने अधीनस्थ कर्मचारियों का प्रभावपूर्ण नेता बनना चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि वे कर्मचारियों का विश्वास जीत लें और यह तभी सम्भव है जब इन दोनों के बीच विचार-विमर्श की अच्छी व्यवस्था हो। प्रबन्धक कर्मचारियों की भावना और इच्छा को समझ सकें, उन्हें सही दिशा में मोड़ सकें और उन्हें उपयुक्त प्रकार के आदेश व निर्देश दे सकें। एक नेता अपने विचारों, सुझावों और निर्णयों को केवल संवादवाहन के द्वारा ही प्रसारित कर सकता है। इसी प्रकार से अनुयायी भी अपने अनुभव, सुझाव, प्रवृत्ति तथा समस्याओं को अपने नेता को संवादवाहन की व्यवस्था द्वारा ही अवगत करा सकते हैं। इस प्रकार द्विमार्गीय वैयक्तिक संवादवाहन की व्यवस्था द्वारा ही अवगत करा सकते हैं। इस प्रकार द्विमार्गीय वैयक्तिक संवादवाहन, नेतृत्व के अन्तर्गत व्यक्तियों में सम्बन्ध स्थापना के लिये अत्यन्त आवश्यक है। इस प्रकार से प्रभावशाली नेतृत्व संवादवाहन व्यवस्था की स्पष्टता तथा पूर्णता पर निर्भर करता है।

(5) समन्वय का आधार : उपक्रम के विभिन्न विभागों और कर्मचारियों की क्रियाओं में समन्वय स्थापित करने के लिये भी प्रभावपूर्ण संवादवाहन की व्यवस्था अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। इसके फलस्वरूप सारे कर्मचारियों को यह मालूम रहता है कि उपक्रम में कब और क्या हो रहा है और उपक्रम की प्रगति में उनके योगदान का क्या महत्व है। प्रत्येक विभाग यह प्रयत्न करता है कि अपने काम में वह दूसरे विभागों से पीछे न रह जाये और उसकी योजनायें व प्रगति दूसरे विभागों की योजनाओं और प्रगति से मेल खायें।

(6) न्यूनतम व्यय पर अधिकतम उत्पादन : बड़े पैमाने वाले उत्पादन के वर्तमान युग में प्रबन्धक और कर्मचारियों के बीच प्रत्यक्ष, घनिष्ठ एवं आमने-सामने

के सम्पर्क का अभाव हो गया है। इस अभाव की पूर्ति संवादवाहन की उचित व्यवस्था द्वारा की जा सकती है। एक संगठन से सूचनायें एवं आदेश विभिन्न कर्मचारियों के माध्यम से श्रमिकों तक पहुँचाये जाते हैं। इस कारण संगठन के प्रत्येक स्तर पर यह भय बना रहना स्वाभाविक है कि कहीं सूचनायें गलत ढंग से प्रसारित न हो जायें। संगठन में भ्रम उत्पन्न न हो सके, इसके लिये यह आवश्यक होता है कि प्रत्येक कर्मचारी के कार्य को निश्चित कर दिया जाये, उन्हें आवश्यक निर्देशों के प्रसारण की भी व्यवस्था होनी चाहिए। इन कार्यों के लिये उचित संवादवाहन की व्यवस्था ही सहायक होती है और उचित संवादवाहन की व्यवस्था पर ही संगठन की सफलता निर्भर करती है तथा न्यूनतम व्यय पर अधिकतम उत्पादन सम्भव होता है।

(7) मनोबल का निर्माण एवं जनतन्त्रीय प्रबन्ध : एक प्रभावशाली संवादवाहन की व्यवस्था के अधीन कर्मचारियों के लिये अपनी शिकायतें प्रस्तुत करना और उनका उचित निराकरण करना सरल होता है। इससे वातावरण में तनाव नहीं आने पाता। इसके विपरीत यदि शिकायतें बनी रहीं तो वे कुछ समय बाद गम्भीर मोड़ ले लेती हैं तथा हडतालें और तालेबन्दी होती हैं। वास्तव में, व्यवसाय में अधिकांश विवाद और संघर्ष इसीलिये उत्पन्न होते हैं कि उद्देश्यों को गलत समझ लिया जाता है और कर्मचारी तथ्यों से अनभिज्ञ रहते हैं। डब्ल्यू० एच० ह्वाइट (W.H. Whyte) के शब्दों में, "संवादवाहन का सबसे बड़ा शत्रु या यों कहें कि संवादवाहन की सफलता में सबसे बड़ी बाधा भ्रम की ही होती है।" इस प्रकार व्यावसायिक संघर्ष बुनियादी नहीं होते। यदि सम्बन्धित पक्षों के मध्य समुचित संवादवाहन की व्यवस्था हो तो झगड़े का प्रश्न घट जाये और न रोके जा सकने वाले झगड़ों की संख्या कम से कम हो जाये। इसके अतिरिक्त औद्योगिक जनतन्त्र की स्थापना के लिये कर्मचारियों का विश्वास एवं समर्थन पाना आवश्यक है। इन्हीं सब कारणों से बड़ी कम्पनियों ने तो संवादवाहन के विस्तृत कार्यक्रम बनाने प्रारम्भ कर दिये हैं तथा वे इन पर यथेष्ट धन व्यय कर रही हैं।

(8) मानवीय सम्बन्धों की स्थापना : कुल सम्प्रेषण व्यवस्था के अभाव में अच्छे मानवीय सम्बन्धों की स्थापना नहीं हो सकती। रॉबर्ट डी० वर्थ के अनुसार, "बिना सम्प्रेषण के मानवीय सम्बन्धों की स्थापना तथा बिना मानवीय सम्बन्धों की स्थापना के सम्प्रेषण असम्भव है।" इस प्रकार स्पष्ट है कि ये दोनों ही एक-दूसरे की स्थापना में सहायक हैं।

(9) शीघ्र निर्णय एवं कार्यान्वयन : एक कुशल एवं सुसंगठित सम्प्रेषण प्रणाली शीघ्र निर्णय लेने में एवं उनके कार्यान्वयन में सहायक सिद्ध होती है।

(10) पद सन्तुष्टि की व्यवस्था : प्रभावपूर्ण सम्प्रेषण व्यक्तियों को सन्तोष प्रदान करता है, मानव की सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है तथा उनमें अपने पद के प्रति विश्वास एवं आस्था उत्पन्न करता है।

व्यावसायिक सम्प्रेषण :
अवधारणा, प्रकृति,
प्रक्रिया महत्व बाधाएँ
एवं दूर करने के उपाय

1.7 व्यावसायिक सम्प्रेषण में बाधाएँ : (Barriers to Business Communication)

सम्प्रेषण का प्रमुख उद्देश्य किसी व्यक्ति अथवा समूह को किसी संवाद का अर्थबोध कराके प्रभावित करना है, परन्तु कभी-कभी ऐसा होता है कि संवाददाता और संवाद प्राप्तकर्ता संवाद को भिन्न-भिन्न रूप में समझ लेते हैं और सम्प्रेषण के इच्छित उद्देश्य की प्राप्ति नहीं हो पाती। ऐसा कुछ बाधाओं के कारण होता है। सम्प्रेषण में भौतिक, मनोवैज्ञानिक तथा बोधक (Physical, Psychological and Semantic) बाधाएँ आती हैं। भौतिक बाधाएँ दूरी, शोरगुल तथा समय के अभाव आदि घटकों से उत्पन्न होती हैं अर्थात् भौतिक बाधाओं पर वातावरण का प्रभाव पड़ता है। मनोवैज्ञानिक बाधाएँ भावनाओं, पदों की स्थितियों, सामाजिक मूल्यों तथा वैयक्तिक मतभेदों आदि घटकों से उत्पन्न होती हैं। बोधक बाधाएँ उस समय उत्पन्न होती हैं जब संवाददाता संवाद प्राप्तकर्ता की योग्यता, अनुभव और भाषा-ज्ञान आदि की जानकारी किये बिना ही संवाद को प्रेषित कर देता है। ऐसी स्थिति में संवाद प्राप्तकर्ता संवाद को समझने और उसके अनुसार कार्य करने में अपने को असमर्थ पाता है।

प्रो० थियो हैमैन (Prof. Theo Haimann) ने सम्प्रेषण की बाधाओं को निम्न चार भागों में विभक्त किया है :

1. संगठनात्मक संरचना सम्बन्धी बाधाएँ,
2. स्थिति एवं पद सम्बन्धी बाधाएँ,
3. भाषा सम्बन्धी बाधाएँ, एवं
4. परिवर्तन सम्बन्धी बाधाएँ।

मैकफारलैण्ड (McFarland) के अनुसार सम्प्रेषण की मुख्य बाधाएँ निम्नलिखित

1. दोषपूर्ण या विकृत उद्देश्य,
2. संगठनात्मक अवरोध,
3. भाषा अवरोध, एवं

1. The Haimann : Professional Management. p. 472

2. Dalton E. McFarland : Management. Principles & Practice. p. 564.

4. मानवीय सम्बन्धी समस्या।

कीथ डेविस (Keith Davis) के अनुसार सम्प्रेषण की तीन प्रमुख बाधाये हैं³:

1. भौतिक बाधाये।
2. व्यक्तिगत, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक बाधाये, एवं
3. भाषा सम्बन्धी बाधाये,

संक्षेप में सम्प्रेषण की कुछ प्रमुख बाधाये निम्न हैं :

(1) संगठनात्मक संरचना (Organisational Structure) : व्यापारिक एवं औद्योगिक संस्थाओं में सम्प्रेषण की प्रभावशीलता काफी हद तक उनके संगठन संरचना पर निर्भर करती है। किसी संगठन संरचना में जितने अधिक स्तर होंगे उतनी ही अधिक बाधाये संवाद को भेजने और समझने में उत्पन्न होंगी, क्योंकि सन्देश को प्रसारित होने के लिये इन सभी स्तरों से गुजरना पड़ता है। ऊपर की ओर सम्प्रेषण (Upward Communication) में जब अधीनस्थ अपने निकटतम अधिकारी (Immediate Boss) के अतिरिक्त अन्य अधिकारियों से प्रत्यक्षतया नहीं मिल पाते तो उन्हें घुटन एवं बेचैनी का अनुभव होने लगता है। यह परेशानी या बाधा उस समय और उग्र रूप धारण कर लेती है जब उनका संवाद उच्च अधिकारी तथा विभिन्न स्तरों की वजह से उसी रूप में नहीं पहुँच पाता है, अतः वारेन जी० बेनिस (Warren G. Bennis) ने ठीक ही कहा है कि, "जब संवाद विभिन्न स्तरों से गुजरता है तो वह संवाद प्राप्तकर्ता को ठीक उसी रूप में प्राप्त नहीं होता, क्योंकि प्रत्येक मध्यस्थ संवाद में कुछ न कुछ कमी करता है।"

(2) भाषा सम्बन्धी बाधाये (Barriers to Language) : भाषा की समस्या सम्प्रेषण की प्रक्रिया की सर्वाधिक महत्वपूर्ण बाधा मानी जाती है। भाषा के कारण संवाददाता द्वारा प्रेषित संवाद, संवाद प्राप्तकर्ता को भली भाँति समझने में कठिनाइयाँ उत्पन्न कर देता है। इन कठिनाइयों को भाषा के कारण उत्पन्न बाधाये कहा जायेगा। ये बाधाये उस समय उत्पन्न होती है जब संवाददाता संवाद प्राप्तकर्ता की योग्यता की पूर्ण जानकारी किये बिना ही संवाद का प्रेषण कर देता है और संवाद में ऐसे शब्दों का प्रयोग करता है जिनके अनेक अर्थ निकलते हैं। ऐसी परिस्थिति में संवाद प्राप्तकर्ता संवाद की अपनी सुविधा, योग्यता एवं अनुभव के आधार पर ही अर्थ लगाता है। एक ही शब्द विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त होने के कारण उनके अर्थ वाक्यानुसार अलग-अलग हो जाते हैं। यदि संवाददाता शब्दों का उचित चयन नहीं करता जो आशय सन्देश द्वारा वह प्रकट करना चाहता है, आवश्यक नहीं कि सन्देश प्राप्तकर्ता उसे उसी रूप में ग्रहण कर लें और समझ ले। इसलिये यह आवश्यक है

कि संवाददाता को सन्देश प्रसारण के पूर्व ही पर्याप्त सावधानी से शब्दों का उचित चयन कर लेना चाहिये।

(3) **दोषपूर्ण उद्देश्य (Unsound Objectives)** : कई बार सम्प्रेषण का उद्देश्य ही दोषपूर्ण या विकृत होने से सम्प्रेषण की अनेक बाधाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। कभी-कभी सम्प्रेषण का वास्तविक उद्देश्य प्रकट उद्देश्य से भिन्न होता है जिससे सम्प्रेषण के इच्छित उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं हो पाती। उदाहरणार्थ, किसी संस्था में कर्मचारियों को दिये जाने वाले प्रशिक्षण का उद्देश्य उन्हें कार्य सम्बन्धी प्रशिक्षण देना न होकर उनके नेताओं के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न करना हो तो प्रशिक्षण योजनाओं का सफल होना असम्भव नहीं तो दुष्कर अवश्य ही होगा।

(4) **स्थिति-सम्बन्ध (Status-Relationship)** : सम्प्रेषण की एक मुख्य बाधा स्थिति सम्बन्ध से उत्पन्न होती है। औपचारिक संगठन संरचना में विभिन्न व्यक्तियों का पारस्परिक सम्बन्ध अधिकारी एवं अधीनस्थ का होता है। यह स्थिति-सम्बन्ध सम्प्रेषण की प्रभावशीलता को पर्याप्त मात्रा में प्रभावित करता है। संगठन में व्यक्ति की स्थिति और पद उसकी भावनाओं एवं दूसरे व्यक्तियों के प्रति उसके व्यवहार को प्रभावित करते हैं। फलतः ऊपर की ओर एवं नीचे की ओर दोनों ओर के सम्प्रेषण पक्षपातपूर्ण हो जाते हैं। अधिकारी सदैव पद भिन्नता बनाये रखना चाहते हैं। वह अधीनस्थों पर अपनी पद-रूपी उच्चता बनाये रखने के कारण ऐसे सुझाव एवं सूचनायें स्वीकार नहीं करता जो उसकी निर्णय योग्यता को कमजोर साबित करती है। इसके विपरीत अधीनस्थ अधिकारी एवं कर्मचारी प्रायः उच्च अधिकारी की दृष्टि एवं आचरण की ओर ध्यान रखते हैं। वह ऐसी बात ही कहने का प्रयत्न करते हैं जो उन्हें उच्च अधिकारी की दृष्टि में बनाये रखे और जो उच्च अधिकारी की इच्छानुकूल हो। इसके अतिरिक्त अधीनस्थ अपनी त्रुटियों को भी अधिकारियों के समक्ष लाना नहीं चाहते। इस प्रकार स्थिति सम्बन्धों से सूचनायें सही रूप में सम्बन्धित व्यक्तियों के पास नहीं पहुँच पातीं। इस सम्बन्ध में साइमन (Simon) ने ठीक ही कहा है कि, "संगठन संरचना में विद्यमान स्थिति-सम्बन्ध के कारण खुश करने वाली सूचनायें ऊपर की ओर भेज दी जाती हैं, त्रुटियों से सम्बन्धित सूचनायें नहीं भेजी जाती।"

(5) **समयाभाव (Shortage of Time)** : अनेक अवसरों पर यह देखने को मिलता है कि संवाददाता संवाद को समयाभाव के कारण यथासमय संवाद प्राप्तकर्ता को प्रेषित नहीं कर पाते जिससे संवाद की प्रभावशीलता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इसके अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि संवाद को ऐसे समय प्रेषित किया जाये जब संवाद प्राप्तकर्ता उसे ग्रहण करने के लिये मानसिक एवं शारीरिक दृष्टि से तैयार हो। प्रायः यह देखा जाता है कि किसी व्यक्ति पर एक ही संवाद भिन्न-भिन्न समय पर अलग-अलग प्रभाव

डालता है। यह प्रभाव ही संवाद के अनुसार उसके आचरण को प्रभावित करता है। अतः यदि समयानुकूलता का ध्यान संवाददाता द्वारा नहीं रखा गया तो संवाद प्राप्तकर्ता द्वारा संवाद को ठीक तरह से न समझने की सम्भावना बनी रहती है।

(6) **श्रवण (Listening) :** सम्प्रेषण की एक मुख्य बाधा श्रवण सम्बन्धी बाधा है। सम्प्रेषण की प्रभावशीलता के लिये यह आवश्यक है कि संवाद प्राप्तकर्ता संवाद को ठीक प्रकार से सुने। यदि संवाद प्राप्तकर्ता संवाददाता द्वारा प्रेषित संवाद को अच्छी तरह से नहीं सुनता तो उसके लिये संवाद का सही एवं पूर्ण अर्थ निकाल पाना कठिन ही होता है। अतः जोसेफ दूहर (Joseph Dooher) ने अपनी पुस्तक 'Effective Communication on the Job' में स्पष्ट किया है कि, "सम्प्रेषण में श्रवण सबसे उपेक्षित तत्व है। अर्द्ध-श्रवण गियर को न्यूटल में डाल कर इंजिन चलाने के समान है। आप गैसोलीन तो प्रयोग में लाते हैं किन्तु पहुँच कहीं भी नहीं पाते।" (Listening is the most neglected skill of Communication. Half-listening is like racing your engine with the gears in neutral. You use gasoline but you get nowhere.) अतः यह स्पष्ट है कि यदि संवाद प्राप्तकर्ता संवादों को ठीक प्रकार से नहीं सुनता तो वह संवादों को सही रूप में समझ भी नहीं सकता जिसके परिणामस्वरूप सम्प्रेषण के इच्छित उद्देश्य की प्राप्ति नहीं हो पाती।

(7) **भौगोलिक दूरी (Geographical Distance) :** संवाददाता और संवाद प्राप्तकर्ता के मध्य भौगोलिक दूरी भी सम्प्रेषण की एक प्रमुख बाधा है। यद्यपि आधुनिक समय में सम्प्रेषण के शीघ्रगामी साधनों यथा तार, टेलीफोन, टेलेक्स आदि ने संवाददाता और संवाद प्राप्तकर्ता के मध्य इस दूरी को कम कर दिया है, लेकिन जिन क्षेत्रों में इनका प्रयोग नहीं हुआ है वहाँ पर यह समस्या ज्यों की त्यों विद्यमान है। भारत एक गाँवों का देश है। छोटे-छोटे गाँवों में अभी भी इन सम्प्रेषण साधनों का अभाव होने के कारण सन्देशवाहक एवं पत्र द्वारा ही सूचनाओं का आदान-प्रदान किया जाता है जिससे पर्याप्त समय, श्रम एवं धन का अपव्यय होता है। इसके अतिरिक्त व्यावसायिक गोपनीयता के लिये कभी-कभी किसी संवाद को व्यक्तिशः पहुँचाना आवश्यक होता है, लेकिन संवाद प्राप्तकर्ता और संवाददाता के मध्य पर्याप्त दूरी इस कार्य में मुख्य बाधक बन जाती है। फलतः अन्य साधनों का सहारा लेना पड़ता है जिससे व्यावसायिक गोपनीयता नहीं रह पाती।

(8) **भावनात्मक धारणायें (Emotional Attitudes) :** संवाददाता और संवाद प्राप्तकर्ता की भावनात्मक धारणायें भी सम्प्रेषण में बाधा उत्पन्न करती हैं। कभी-कभी संवाददाता और संवाद प्राप्तकर्ता की धारणायें एवं विचार इतने दृढ़ हो जाते हैं कि संवाद प्राप्तकर्ता संवाददाता के प्रत्येक संवाद का एक

ही अर्थ लगाता है और उसे (संवाद), सही रूप में समझने को तैयार ही नहीं होता। संवाददाता और संवाद प्राप्तकर्ता की भावनाओं में अन्तर अनेक कारणों से होता है। इन कारणों में शारीरिक बनावट, आचरण, खान-पान, वेश-भूषा आदि प्रमुख हैं।

(9) पदोन्नति की भावना (Desire of Promotion) : जिन संगठनों की पदोन्नति-नीति उच्च अधिकारियों को सर्वाधिक महत्त्व देती हो और अधीनस्थों की पदोन्नति उनकी कृपा पर निर्भर करती हो, वहाँ अधीनस्थ अपने उच्च अधिकारियों को सदैव प्रसन्न रखना चाहते हैं। वे सदैव उनके व्यवहार, क्रिया-कलापों एवं निर्देशों के प्रति अधिकारियों की हों में हों मिलाकर उनका विश्वास प्राप्त करना चाहते हैं। इस मनोवृत्ति से अधीनस्थ अपने उच्च अधिकारियों की दृष्टि में ऊपर उठ जाते हैं जो उनकी पदोन्नति में सहायक होती है। इस प्रकार अधीनस्थों की पदोन्नति की भावना उच्च अधिकारियों तक पूर्ण एवं सही सूचनाओं के आदान-प्रदान में पर्याप्त बाधक सिद्ध हुयी है।

(10) मानवीय सम्बन्ध (Human Relations) : वर्तमान समय में प्रबन्ध जगत में जितना ध्यान मानवीय सम्बन्ध विचारधारा पर दिया जा रहा है उतना शायद ही किसी अन्य विचारधारा पर दिया जा रहा हो। जिन औद्योगिक एवं व्यापारिक प्रतिष्ठानों में औद्योगिक अज्ञान्ति व्याप्त है, अर्थात् अधिकारियों एवं अधीनस्थों के मध्य मधुर सम्बन्ध नहीं हैं वहाँ सन्देशों का गलत ही अर्थ लगाया जाता है। कभी-कभी तो मानवीय सम्बन्धों में हीनता के कारण अधिकारी एवं अधीनस्थ एक दूसरे के सन्देशों के अनुसार कार्य करना तो दूर रहा, सुनना तक पसन्द नहीं करते। फलतः सम्प्रेषण के इच्छित लक्ष्यों की प्राप्ति नहीं हो पाती।

1.8 व्यावसायिक सम्प्रेषण की बाधाओं को दूर करने के सुझावः (Suggestions to Overcome Barriers to Business Communication)

सम्प्रेषण की उपर्युक्त बाधाओं को औद्योगिक, व्यावसायिक एवं मानवीय सभी दृष्टिकोणों से दूर करना आवश्यक है।

अल्फ्रेड वॉगल : (Alfred Vogel) के अनुसार, ऊपर की ओर सम्प्रेषण तथा अधीनस्थों द्वारा स्वतन्त्रतापूर्वक सम्प्रेषण के लिये प्रबन्धकों को निम्न सुझावों का अनुसरण करना चाहिये :

(1) द्विमार्गीय सम्प्रेषण की व्यवस्था करना। (2) अधीनस्थों के सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों तरह के विचारों को सुनना और उन्हें सहन करना। (3) अधीनस्थों को उनके द्वारा प्रस्तुत किये गये उपयोगी सुझावों के लिये पारितोषण प्रदान करना। (4) अधीनस्थों द्वारा की गयी आलोचनाओं को पर्याप्त

महत्त्व देना। (5) श्रेष्ठ श्रवण के लिये उत्तरदायित्व की भावना का विकास करना।

इन बाधाओं को दूर करने के लिये निम्न सुझाव उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं :

(1) **सम्प्रेषण योजना** : सम्प्रेषण की विभिन्न बाधाओं को दूर करने के लिये प्रथम सुझाव यह है कि सम्प्रेषण का कार्य एक निश्चित योजनानुसार होना चाहिये। योजनाबद्ध सम्प्रेषण से जहाँ एक ओर उच्च अधिकारियों और अधीनस्थों के मध्य सूचनाओं का आदान-प्रदान सरल हो जायेगा वहाँ दूसरी ओर अधीनस्थों को समय पर सूचनायें प्राप्त होने से वे कार्य का भली भाँति निष्पादन कर सकेंगे और सूचनाओं की प्राप्ति में लगने वाले समय की बचत होगी।

(2) **भाषा** : सम्प्रेषण की बाधाओं में सबसे प्रमुख बाधा भाषा सम्बन्धी बाधा है इस बाधा को दूर करने के लिये निम्न सुझाव उपयोगी साबित होंगे :

(i) संवाददाता द्वारा संवाद के प्रेषण में सरल भाषा का प्रयोग करना चाहिये।

(ii) संवाददाता द्वारा प्रयोग में लायी गयी भाषा उसके स्वयं के ज्ञान एवं स्तर के अनुकूल न होकर संवाद प्राप्तकर्ता के ज्ञान एवं स्तर के अनुरूप होनी चाहिये।

(iii) संवाददाता को संवाद के प्रेषण में ऐसे शब्दों का चयन नहीं करना चाहिये। जिनके अनेक अर्थ निकलते हों अर्थात् बहुअर्थीय शब्दों का प्रयोग न किया जाये।

(iv) साधारणतया तकनीकी भाषा का प्रयोग संवाददाता द्वारा नहीं किया जाना चाहिये। संवाददाता द्वारा ऐसी भाषा का प्रयोग किया जाना चाहिये जिसे संवाद प्राप्तकर्ता आसानी से समझ जायेंगे। लेकिन यदि तकनीकी भाषा का प्रयोग आवश्यक है तो लिखित सम्प्रेषण के साथ-साथ मौखिक सम्प्रेषण विधियों का भी सहारा लिया जाना चाहिये।

(3) **प्रत्यक्ष सम्प्रेषण** : सम्प्रेषण की बाधाओं को दूर करने के लिये एक अन्य उपयोगी सुझाव यह है कि जहाँ तक सम्भव हो संवाद संक्षिप्त लेकिन परिपूर्ण हो और वह प्रत्यक्ष रूप में हो। प्रत्यक्ष सम्प्रेषण के लिये संगठन स्तरों में कमी करना अत्यावश्यक है। उपक्रम में जितने संगठन स्तर कम होंगे उतना ही अधिक प्रत्यक्ष सम्प्रेषण सम्भव होगा। फलतः संवाद पूर्ण एवं सही रूप में संवाद प्राप्तकर्ता के पास पहुँच सकेंगे।

(4) **पारस्परिक विश्वास** : संवाददाता और संवाद प्राप्तकर्ता के मध्य पारस्परिक अविश्वास अनेक बाधाओं को जन्म देता है। पारस्परिक अविश्वास एक-दूसरे को आवश्यक सूचनाएँ देने, स्वीकार करने एवं समझने में रोड़े अटकाता है। अतः उच्च अधिकारियों एवं अधीनस्थों के मध्य पारस्परिक सद्विश्वास एवं सदभावना होनी चाहिये। किसी भी संगठन में पारस्परिक सदभावना एवं सद्विश्वास की स्थापना करने का दायित्व उच्च अधिकारियों का होता है। अधिकारियों की कथनी एवं करनी में अन्तर नहीं होना चाहिये। यह अन्तर ही पारस्परिक अविश्वास को जन्म देता है। पारस्परिक विश्वास से सम्प्रेषण सम्बन्धी अनेक औपचारिकताओं की समाप्ति हो जाती है, संवाद का उचित अर्थ लगाया जाता है और संवाद के अनुरूप ही शीघ्रातिशीघ्र कार्य समाप्त किया जाता है।

(5) **पदोन्नति नीति** : पदोन्नति की भावना से उत्पन्न सम्प्रेषण की बाधाओं को दूर करने के लिये एक आदर्श पदोन्नति नीति का अनुसरण किया जाना चाहिये। पदोन्नति नीति अधिकारियों द्वारा अधीनस्थों के सहयोग से तैयार की जानी चाहिये। इसमें आवश्यक नियमों एवं उपनियमों की व्यवस्था की जाये और इसका कठोरता एवं ईमानदारी के साथ पालन किया जाये। निष्पक्ष पदोन्नति के लिये आवश्यक है कि पदोन्नति का आधार योग्यता, अनुभव, परिश्रम एवं कर्तव्यनिष्ठा आदि को ताक में नहीं रख देना चाहिये। एक बार गलत पदोन्नति भविष्य में अनेक बाधाओं को जन्म देती है और कामचोर व्यक्तियों की लाभ-प्राप्ति की लालसा का साधन बन जाती है।

(6) **यथासमय सम्प्रेषण** : सम्प्रेषण की बाधाएँ इसलिये उत्पन्न होती हैं कि संवाददाता द्वारा संवादों का प्रेषण यथासमय नहीं किया जाता है। सम्प्रेषण की प्रभावशीलता के लिये यह आवश्यक है कि संवाद प्राप्तकर्ता को सन्देश यथासमय दिये जायें। समय से पूर्व एवं बाद में दिये गये सन्देश महत्वहीन होते हैं। इसके अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि संवादों का प्रेषण ऐसे समय हो जबकि संवाद प्राप्तकर्ता उसके ग्रहण करने के लिए मानसिक एवं शारीरिक दोनों दृष्टि से तैयार हो।

(7) **लिखित सम्प्रेषण पर अत्यधिक बल नहीं** : सामान्यतः लिखित सम्प्रेषण पर अत्यधिक बल दिया जाता है और ऐसा समझा जाता है कि यदि संवाद लिखित में है तो वह सभी बाधाओं से मुक्त है, लेकिन व्यवहार में ऐसा नहीं है। लिखित सम्प्रेषण किसी भी दशा में प्रत्यक्ष सम्प्रेषण का रूप ग्रहण नहीं कर सकता अथवा स्थानापन्न नहीं हो सकता। अतः लिखित सम्प्रेषण पर अत्यधिक बल नहीं देना चाहिये। लिखित सम्प्रेषण के साथ-साथ मौखिक सम्प्रेषण पर भी पर्याप्त बल दिया जाना चाहिये।

(8) **सौहार्द्रपूर्ण मानवीय सम्बन्धों की स्थापना** : प्रायः यह देखने को

मिलता है कि जिन प्रतिष्ठानों में अधिकारियों एवं अधीनस्थों के मध्य पारस्परिक सम्बन्ध मधुर नहीं होते वहाँ परिपूर्ण संवादों का विपरीत ही अर्थ लगाया जाता है। फलतः सम्प्रेषण के इच्छित लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होती। अतः सम्प्रेषण की प्रभावशीलता के लिये यह आवश्यक है कि अधिकारियों एवं अधीनस्थों के मध्य सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्धों की स्थापना की जाये। मधुर सम्बन्धों की स्थापना से संवादों का विपरीत अर्थ नहीं लगाया जाता और सम्प्रेषण की अनेक बाधाएँ स्वतः ही दूर हो जाती हैं।

1.9 सारांश : (Summary)

आधुनिक युग सूचना तकनीक का युग माना जाता है जहाँ एक ओर विशालकाय उत्पादन के कारखाने विकसित हुये हैं वहीं दूसरी ओर उद्योग/व्यापार में काम करने वालों को एक सूत्र में पिरोने के लिये सम्प्रेषण व्यवस्था की भूमिका एवं महत्व दिन प्रति दिन बढ़ता जा रहा है।

सम्प्रेषण का अर्थ दो या दो से अधिक व्यक्तियों के मध्य तथ्यों, विचारों, अनुमानों या संवेगों के पारस्परिक आदान-प्रदान से है। वर्तमान सूचना तकनीक की सुविधाओं ने इसे और आसान बना दिया है। आजकल किसी भी व्यावसायिक उपक्रम की सफलता का मूल तत्व प्रभावी सम्प्रेषण ही है।

सम्प्रेषण (Communication) शब्द अंग्रेजी के Common शब्द से बना है जिसकी उत्पत्ति लैटिन भाषा के 'Communis' शब्द से हुई है जिसका अर्थ है एक समान। अर्थात् सन्देश देने और पाने वाले के लिये सन्देश का अर्थ एक समान ही होना चाहिये न कि भिन्न-भिन्न। सम्प्रेषण लिखित, मौखिक अथवा सांकेतिक हो सकता है। सम्प्रेषण का माध्यम बातचीत, पत्राचार, विज्ञापन, रेडियो, टेलीविजन, समाचार पत्र, ई-मेल आदि कुछ भी हो सकता है।

सम्प्रेषण की परिभाषा अलग-अलग विद्वानों ने अलग-अलग अर्थों में दिया है। सम्प्रेषण एक सतत प्रक्रिया है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति अपने सन्देशों, भावनाओं, विचारों, सम्मतियों तथा तर्कों आदि का पारस्परिक विनिमय करते हैं।

सम्प्रेषण का उद्देश्य सूचनाओं का आदान-प्रदान करना, कार्य निष्पादन कराना, प्रबन्ध के कार्यों में मदद करना, कर्मचारियों को शिक्षित प्रशिक्षित तथा अभिप्रेरित करना है। सम्प्रेषण एक सतत प्रक्रिया है यह अर्थ/भाव को प्रेषित करने का माध्यम है। सम्प्रेषण एक द्विमार्गी प्रक्रिया है। सम्प्रेषण कार्यों का आधार है।

सम्प्रेषण की प्रकृति के बारे में यह कहा जाता है कि यह विज्ञान एवं कला दोनों है। यह एक सामाजिक एवं मानवीय प्रक्रिया है इसे सार्वभौमिक प्रक्रिया भी कहा जाता है। एक विभाग से दूसरे विभाग को विचारों, सूचनाओं एवं भावनाओं के आदान-प्रदान को ही सम्प्रेषण प्रक्रिया का नाम दिया जा

सकता है। सम्प्रेषण की प्रक्रिया के प्रमुख घटक हैं : सन्देश → प्रेषक → संकेतभाव → माध्यम → प्रापक → अर्थ समझना → प्रतिपुष्टि आदि।

व्यावसायिक सम्प्रेषण :
अवधारणा, प्रकृति,
प्रक्रिया महत्व बाधाएँ
एवं दूर करने के उपाय

प्रभावशाली सम्प्रेषण के लिये निम्नलिखित सिद्धान्तों का पालन करना आवश्यक है : संक्षिप्तता, अर्थपूर्ण, स्पष्ट एवं सही, पूर्णता, शिष्टता, निरन्तरता एवं उपयुक्तता आदि।

वर्तमान गतिशील वातावरण में सूचनाओं का आदान-प्रदान एक अपरिहार्य कार्य हो गया है। सम्प्रेषण के बढ़ते महत्व के प्रमुख कारण हैं : संगठनों का बढ़ता महत्व, व्यवसाय का बढ़ता सामाजिक उत्तरदायित्व, व्यावहारिक विज्ञान एवं तकनीकी प्रगति आदि।

सम्प्रेषण के महत्व को रेखांकित करते हुये हैरोल्ड यारिकन ने कहा कि आज का व्यवसाय और समाज सम्प्रेषण के बिना चल ही नहीं सकता। जार्ज आर० टेरी ने कहा कि सम्प्रेषण ही प्रबन्धकीय कुशलता का आधार है। रेडफील्ड ने तो यहां तक कहा कि सम्प्रेषण ही किसी संगठन को सुदृढ़ बना सकता है या उसका विनाश भी कर सकता है। सम्प्रेषण के महत्व को हम कुशल संचालन, सहयोग नेतृत्व, समन्वय, मितव्ययता, अधिक उत्पादन, मनोबल, मानवीय सम्बन्ध, शीघ्र निर्णयन, जनतांत्रिक प्रबन्ध के आधार के रूप में समझ सकते हैं।

सम्प्रेषण का इतना महत्व होने के बावजूद सम्प्रेषण की अनेक बाधाएँ भी हैं। यदि उचित तरीके से सन्देश का प्रेषण न हो तो अर्थ का अनर्थ हो सकता है और पूरी व्यवस्था ध्वस्त हो सकती है। प्रो० थियोहैमेन ने सम्प्रेषण की बाधाओं को चार भागों में बाटा है : संगठनात्मक, पद एवं स्थिति सम्बन्धी, भाषा सम्बन्धी, परिवर्तन सम्बन्धी बाधा का नाम दिया है। वही कीथ डेविस ने इन बाधाओं को भौतिक, व्यक्तिगत, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक एवं भाषा सम्बन्धी बाधा का नाम दिया है। सम्प्रेषण की बाधाओं/रूकावटों को दूर करने के लिये सम्प्रेषण का कार्य योजनानुसार हो, भाषा सरल एवं प्राप्तकर्ता के ज्ञान स्तर की हो, संवाद संक्षिप्त एवं प्रत्यक्ष हो, परस्पर विश्वास के साथ सन्देश भेजे जायें, सम्प्रेषण यथा समय एवं लिखित हो एवं सौहार्दपूर्ण वातावरण में सम्प्रेषण किया जाये। इन बिन्दुओं का ध्यान रखने से सम्प्रेषण की रूकावटों/बाधाओं पर विजय प्राप्त किया जा सकता है।

1.10 शब्दावली : (Key Words)

सम्प्रेषण : दो या अधिक पक्षों के बीच तथ्यों, विचारों, अनुमानों, संवेगों, सम्मतियों का आदान-प्रदान।

सम्प्रेषण माध्यम : जिस माध्यम से सन्देशों का आदान-प्रदान होता है जैसे- पत्र, बातचीत, विज्ञापन, रेडियो, टेलीविजन, समाचार पत्र, ई-मेल आदि।

प्रतिपुष्टि : सन्देश का प्रेषण माध्यम के द्वारा प्राप्तकर्ता को होता है जब इसकी प्रतिक्रिया प्राप्तकर्ता देता है तो इसे प्रतिपुष्टि कहते हैं।

सम्प्रेषण प्रक्रिया : संदेश भेजने की क्रियाओं के व्यवस्थित क्रम, स्वरूप और ढंग को सम्प्रेषण प्रक्रिया कहते हैं।

मानवीय सम्बन्ध : किसी संगठन में काम करने वाले व्यक्तियों एवं प्रबन्ध वर्ग के परस्पर सम्बन्ध को मानवीय सम्बन्ध कहते हैं।

सम्प्रेषण की बाधाएँ : सम्प्रेषण का उद्देश्य सन्देश को प्राप्तकर्ता तक सही अर्थ में पहुँचाना होता है जब किसी कारणवश जैसे : कठिन भाषा, गलत उच्चारण, भौगोलिक दूरी, संगठनात्मक जटिलता, समयान्तर के कारण यह उद्देश्य पूरा नहीं होता तो इन्हीं कारणों को सम्प्रेषण की बाधाएँ कहते हैं।

1.11 अभ्यास के लिये प्रश्न : (Question for Exercise)

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न : (Long Answer Type Questions)

1. सम्प्रेषण की परिभाषा दीजिए व इसकी प्रकृति एवं उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।
(Define communication and describe its nature and objectives.)
2. व्यावसायिक सम्प्रेषण का महत्व एवं तत्व बताइए।
(Discuss the importance and elements of business communication.)
3. सन्देशवाहन की परिभाषा दीजिए और व्यवसाय एवं प्रबन्ध में प्रभावी सन्देशवाहन के महत्व की विवेचना कीजिए।
(Define Communication and discuss the importance of effective communication in Business and Management.)
4. "सम्प्रेषण एक-दूसरे के मध्य सूचना एवं समझदारी बनाए रखने की प्रक्रिया है।" इस कथन की व्याख्या कीजिए।
"Communication is the process of passing information and understanding from one person to another." Explain this statement.
5. सम्प्रेषण प्रक्रिया को समझाइए तथा प्रभावी सम्प्रेषण के मुख्य तत्वों को बतलाइए।
Explain the process of communication and state the key factors of effective communication.
6. प्रभावशाली सम्प्रेषण के आवश्यक तत्व बताइए एवं सम्प्रेषण क्षेत्र की व्याख्या कीजिए।
State the essentials of effective communication and explain the scope of communication.

लघु उत्तरीय प्रश्न : (Short Answer Type Questions)

व्यावसायिक सम्प्रेषण :
अवधारणा, प्रकृति,
प्रक्रिया महत्व बाधाये
एवं दूर करने के उपाय

9. व्यावसायिक सम्प्रेषण की अवधारणा
Concept of Business Communication
10. सन्देशवाहन के आवश्यक तत्व
Essential elements of Business Communication
11. व्यावसायिक संवहन के उद्देश्य
Objects of Business Communication
12. सम्प्रेषण की प्रकृति
Nature of Communication
13. प्रबन्धकों के लिए सम्प्रेषण का महत्व
Importance of Communication for Managers
14. सम्प्रेषण प्रक्रिया
Communication Process

1.12 संदर्भ पुस्तकें (Reference Books) :

1. Sachdeva S. Business Communication, Lakshmi Narain Agrawal, Agra
2. Keith Devis : Human Relation in Business
3. Newman and Summar : The Process of Management
4. पासी आर. एल. : व्यावसायिक संचार; संजीव प्रकाशन, मेरठ
5. अग्रवाल पी. के. एवं मिश्रा ए. के. : व्यावसायिक संचार, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
6. कुमार दिनेश एवं गोस्वामी संजय : व्यावसायिक संचार एवं कम्प्यूटर, आस्था पब्लिकेशन, इलाहाबाद

इकाई-2 व्यावसायिक लेखन, व्यापारिक पत्र, व्यावसायिक रिपोर्ट एवं मौखिक संप्रेषण (Business Writing, Commercial Letters, Business Report and Oral Communication)

इकाई की संरचना

- 2.0 उद्देश्य
- 2.1 प्रस्तावना
- 2.2 व्यावसायिक लेखन का आशय, ध्यान देने योग्य बातें, लाभ एवं हानि
- 2.3 व्यावसायिक लेखन का महत्व
- 2.4 वाणिज्यक पत्र : आशय, आवश्यकता एवं प्रकार
- 2.5 अच्छे वाणिज्यक पत्र की विशेषतायें
- 2.6 वाणिज्यक पत्र का स्वरूप
- 2.7 व्यावसायिक रिपोर्ट, आशय, उद्देश्य, प्रकार, महत्व एवं स्वरूप
- 2.8 मौखिक संप्रेषण : आशय, लाभ, दोष एवं ध्यान देने योग्य बातें
- 2.9 सारांश
- 2.10 शब्दावली
- 2.11 अभ्यास के लिये प्रश्न
- 2.12 संदर्भ पुस्तकें

2.0 उद्देश्य : (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप :

- व्यावसायिक लेखन, इसके लाभ एवं हानि के बारे में जान सकेंगे;
- व्यावसायिक लेखन के महत्व एवं इसमें ध्यान देने योग्य बातों को बता सकेंगे;
- व्यापारिक पत्र, इनकी आवश्यकता एवं विशेषतायें जान सकेंगे;
- व्यापारिक पत्र के प्रकार एवं स्वरूप से अवगत हो सकेंगे;
- व्यावसायिक रिपोर्ट, इसके उद्देश्य एवं महत्व की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे; तथा
- मौखिक संप्रेषण का आशय, महत्व एवं ध्यान देने योग्य बातों को जान सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना : (Introduction)

वर्तमान जटिल व्यावसायिक पर्यावरण में व्यावसायिक संगठनों को स्मृति के रूप में अपने नियमों, योजनाओं, विगत निर्णयों, सौदों के सन्दर्भ में अभिलेख की आवश्यकता पड़ती है। व्यावसायिक संगठनों को सरकार के साथ, वैधानिक दावों की रक्षा के लिये, बाहरी पक्षकारों जैसे— बैंक, आपूर्तिकर्ता, ग्राहक, श्रम संघ आदि के साथ समझौता करने में लिखित दस्तावेजों को अधिक परिशुद्ध, सुस्पष्ट तथा विश्वसनीय माना जाता है। जब कोई व्यक्ति किसी दस्तावेज पर अपने हस्ताक्षर करता है तो वह उसके प्रति वचनबद्ध रहता है। व्यावसायिक लेखन (Business Writing) के अन्तर्गत हम विशेष रूप से लिखित संप्रेषण का अध्ययन करते हैं। व्यवसाय से सम्बन्धित नियम, नीति, बुलेटिन, हैण्डबुक, कार्यविधि पुस्तिकाएँ, व्यक्तिगत प्रत्रावली (कर्मचारियों की) वार्षिक रिपोर्ट, अध्यक्ष का भाषण, एजेण्डा एवं मिनट्स, प्रतिवेदन, संगठन की अनुसूचियाँ एवं पत्र, पत्रिकाएँ आदि इसके अन्तर्गत आती हैं।

2.2 व्यावसायिक लेखन का आशय, ध्यान देने योग्य बातें, लाभ एवं हानि (Meaning of Business Writing, Prerequisites, Advantages & Disadvantages) :

व्यावसायिक लेखन व्यावसायिक सन्देश प्रेषित करने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। पत्र-पत्रिकाएँ, पैम्फलेट, हैण्डबुक, मैनुअल्स, सुझाव पुस्तिकाएँ, डायरियाँ, बुलेटिन, समाचार-पत्र, सूचना-पट्ट आदि लिखित माध्यमों से सन्देशों का प्रेषण किया जाता है। इनमें संस्था से सम्बन्धित मैनुअल्स तथा हैण्डबुक एक व्यावसायिक संस्था की श्रमनीति का विश्लेषण करती हैं। इनमें श्रमिकों के सम्बन्ध में आवश्यक शर्तें दी हुयी रहती हैं। इनमें मजदूरी की दरें, कार्य के घण्टे, पदोन्नति, सेवानिवृत्ति, छुट्टियाँ, अनुपस्थिति, बीमारी, अवकाश एवं भत्तों आदि से सम्बन्धित सूचनाएँ विशेष रूप से होती हैं। इनके अतिरिक्त श्रमिक कल्याण योजनाओं से सम्बन्धित सूचनाएँ व्यक्तिगत रूप से ही देनी हों, तो पत्र, स्मरण-पत्र आदि का प्रयोग किया जा सकता है।

कर्मचारियों एवं व्यवसाय से सम्बन्ध रखने वालों को अन्य सूचनाएँ देने हेतु संस्था पत्रिका भी प्रकाशित करवा सकती हैं। बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ एक निश्चित समयान्तर में अपनी पत्रिकाएँ प्रकाशित करवाती रहती हैं। इन पत्रिकाओं का उद्देश्य व्यवसाय की गतिविधियों से सम्बन्धित व्यक्तियों को सूचित करना होता है। इनमें इसकी गतिविधियों का पूर्ण विवरण होता है। ऐसी पत्रिका में व्यवसाय से सम्बन्धित सूचनाओं के अतिरिक्त कर्मचारियों से सम्बन्धित सूचनाएँ भी प्रकाशित की जाती हैं। कर्मचारियों के स्थानान्तरण,

पदोन्नति, सम्मान, पुरस्कार, नियमतिकरण, सेवानिवृत्ति आदि के सम्बन्ध में सूचनायें भी होती हैं। टाटा, डी0सी0एम0 जैसी बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ इस प्रकार की पत्रिकाओं का प्रकाशन कराने लगी हैं।

व्यावसायिक लेखन के सम्बन्ध में ध्यान रखने योग्य बातें : (Pre-requisites of Business Writing)

व्यावसायिक लिखित सन्देशवाहन को तैयार करते समय पर्याप्त सतर्कता बरतनी चाहिये। लिखित सन्देशवाहन की भाषा नम्र एवं प्रभावपूर्ण होनी चाहिये, क्योंकि भाषा की मधुरता ही पाठक पर स्थायी प्रभाव डाल सकती है। अस्पष्ट अर्थ वाले शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिये अन्यथा लेखक जो कुछ कहना चाहता है पाठक वह नहीं समझ पायेगा और ऐसा सन्देशवाहन प्रभावी सन्देशवाहन नहीं होगा। लिखित सन्देशवाहन संक्षिप्त भी होना चाहिये। संक्षिप्तता के लिये पूर्णता का त्याग नहीं करना चाहिये। यहाँ आशय यह है कि 'गागर में सागर' भरने का प्रयास करना चाहिये। सन्देश स्वच्छ रूप से लिखे अथवा टाइप किये होने चाहिये।

कीथ डेविस : (Keith Davis) के अनुसार, सन्देश को लिखते समय निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिये :

1. सरल शब्दों एवं मुहावरों का प्रयोग करना चाहिये।
2. छोटे तथा प्रचलित शब्दों का प्रयोग करना चाहिये।
3. व्यक्तिगत सर्वनामों (Personal Pronouns as 'you' and 'he') का प्रयोग करना चाहिये।
4. उदाहरणों, चार्टों आदि का उपयोग करना चाहिये।
5. छोटे-छोटे वाक्यों एवं अनुच्छेदों में लिखना चाहिये। यद्यपि पाठक बड़े-बड़े वाक्यों एवं अनुच्छेदों से प्रभावित अवश्य होता है, परन्तु सन्देशवाहन का मुख्य उद्देश्य उनको वाक्यों से प्रभावित करना नहीं होता वरन् उन्हें सूचित करना होता है।
6. जहाँ तक हो सके किसी वाक्य की रचना में 'एक्टिव वाइस' (Active Voice) का प्रयोग करना चाहिये न कि 'पैसिव वाइस' (Passive Voice) का।
7. विशेषणों एवं अलंकारों का प्रयोग कम से कम करना चाहिये।
8. विचारों को तर्कपूर्ण एवं साधारण शैली में लिखना चाहिये।
9. प्रत्येक शब्द सार्थक होना चाहिये।

लिखित व्यावसायिक संचार के लाभ (Advantages of Written Business Communication):

1. मितव्ययिता (Economy): लिखित व्यावसायिक संचार से सन्देश भेजने

में बहुत ही कम व्यय आता है। डाक द्वारा ये सन्देश भेजे जा सकते हैं। इनमें नाममात्र का ही खर्चा पड़ता है, जबकि टेलीफोन, आदि पर बात की जाये तो काफी खर्चा होता है।

2. **स्पष्टता (Clarity)** : मौखिक सन्देशों की अपेक्षा लिखित व्यावसायिक सन्देश अधिक स्पष्ट होते हैं। लेखक प्रत्येक बात को ध्यान से लिखकर स्पष्ट करने का प्रयत्न करता है।

3. **कई व्यक्तियों को एक साथ सन्देश (Communication to many persons at a Time)** : यद्यपि मौखिक सन्देशवाहन में भी मीटिंग्स, कान्फ्रेंस आदि के माध्यम से अनेक व्यक्तियों को एक ही साथ सन्देश दिया जा सकता है लेकिन लिखित सन्देशवाहन के माध्यम से भी यह सब सम्भव है। उदाहरणार्थ हैण्डबुक, मैनुअल्स, गश्ती-पत्र अथवा बहुसंख्यक पते के तार के माध्यम से एक ही साथ कई व्यक्तियों को सन्देश प्रसारित किये जाते हैं।

4. **भविष्य में सन्दर्भ (Reference for Future)** : भविष्य में आवश्यकता पड़ने पर लिखित व्यावसायिक सन्देश सन्दर्भ के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है।

5. **लिखित प्रमाण (Written Proof)** : लिखित होने के कारण यह प्रमाण का भी कार्य करता है। भविष्य में यदि न्यायालय की शरण लेनी पड़े तो न्यायालय में इच्छित तथ्य को लिखित बातों के द्वारा प्रमाणित किया जा सकता है।

6. **फेर-बदल कठिन (Difficult to Change)** : लिखित व्यावसायिक सन्देशवाहन द्वारा भेजे गये सन्देशों में फेर-बदल कठिन होता है, जबकि मौखिक सन्देशवाहन में प्रायः फेर-बदल कर दिया जाता है। लिखित सन्देशवाहनों के माध्यम से सन्देश की मौलिकता बनी रहती है तथा अधिकारियों की सहमति के बिना उसमें फेर-बदल नहीं हो पाता है।

7. **कुछ विशेष दशाओं में आवश्यक (Essential in Certain Conditions)**: जब सन्देश काफी लम्बे होते हैं तो लिखित सन्देशवाहन का ही प्रयोग करना पड़ता है। उदाहरणार्थ, कम्पनी की वार्षिक सभा में अध्यक्ष का भाषण, कम्पनी की नीतियाँ, व्यक्तिगत आवश्यक सूचनायें, नौकरी सम्बन्धी आवश्यक शर्तों आदि का लिखित होना आवश्यक है। इसी प्रकार वैधानिक कार्यवाहियों को पूरा करने के लिये भी लिखित सन्देशवाहन ही प्रयोग में आते हैं।

लिखित व्यापारिक सन्देशवाहन से हानियाँ (Disadvantages of Written Business Communication) :

1. **समय, श्रम व धन का अपव्यय (Wastage of Time, Labour and Money)** : प्रत्येक सन्देश को लिखित रूप प्रदान करने में मौखिक सन्देशवाहन

की अपेक्षा औसतन अधिक समय, श्रम एवं धन व्यय होता है। लिखित सन्देशवाहन में यदि कोई बात लिखने से रह जाये तो नया सन्देश लिख कर भेजना पड़ता है और तब तक सन्देश प्राप्तकर्ता कुछ भी कार्य नहीं कर पाता है। अतः कार्य के निष्पादन में विलम्ब ही होता है। इसके अतिरिक्त लिखित सन्देश को समझाने के दृष्टिकोण से पूर्ण विस्तार के साथ लिखना होता है। इन कारणों से समय, श्रम व धन का अपव्यय ही होता है।

2. **गोपनीयता भंग होने का भय (Fear of Disclosure of secrecy)** : मुख से कही गयी बात कहने एवं सुनने वाले तक सीमित रह सकती है, यदि वे ऐसा चाहते हैं। परन्तु लिखित सन्देशवाहन में प्रेषक और प्राप्तकर्ता के अतिरिक्त अन्य कोई व्यक्ति भी सन्देश को जान सकता है। लिखित सन्देशवाहन से लेखक अथवा टाइपकर्ता, निर्गत पत्र-लेखा-कर्मचारी, प्राप्तकर्ता विभाग का कर्मचारी तथा अन्य और भी व्यक्तियों को सन्देश की जानकारी हो जाती है। इतना आवश्यक है कि लिफाफे पर 'व्यक्तिगत एवं गोपनीय' शब्द लिख देने से कुछ गोपनीयता रह सकती है, परन्तु फिर भी मौखिक संवादवाहनों की तुलना में अधिक या समकक्ष गोपनीयता नहीं रह पाती है।

3. **औपचारिकताओं के कारण अनावश्यक विलम्ब (Delay due to Formalities)** : लिखित सन्देशवाहनों में अनेक औपचारिकतायें पूरी करनी पड़ती हैं। अभिलेख तैयार करना, उसे अधिकारी से स्वीकृत कराना, टाइपिस्ट के पास उसे टाइप करने के लिये भेजना, अधिकारी को हस्ताक्षर हेतु प्रस्तुत करना, निर्गत-पत्र-कर्मचारी के पास निर्गत रजिस्टर में दर्ज कराना, तत्पश्चात् डाक द्वारा अथवा संस्था के व्यक्ति के साथ भेजना आदि अनेक औपचारिकतायें हैं जिनमें पर्याप्त समय लगता है। अन्ततोगत्वा, कार्य मन्द गति से होते हैं और उत्पादकता कम हो जाती है।

4. **लालफीताशाही (Red Tapism)** : अनेक औपचारिकताओं के कारण लालफीताशाही सम्भव है। आलस्यवश सन्देशों को भेजा नहीं जाता है। टाइपिस्ट समय पर टाइप नहीं करता है अथवा अभिलेख-लेखक समय पर नहीं लिखता है अथवा निर्गत-पत्र-कर्मचारी पत्रों को समय पर नहीं भेजता है तो 'लालफीताशाही' सम्भव है।

5. **प्रत्येक बात को लिपिबद्ध करना कठिन है (Difficult to Write Everything)** : सब सन्देशों को लिपिबद्ध करना सम्भव नहीं होता है। कई बार ऐसे अवसर भी आते हैं जब लिखित संवादवाहनों के अलावा मौखिक सन्देशवाहनों का भी प्रयोग किया जाता है।

6. **सब लिखित सन्देश पढ़े नहीं जाते (All the Written Communication are not Read)** : प्रायः यह देखा जाता है कि प्राप्तकर्ता सभी लिखित सन्देशों को नहीं पढ़ता है। जब प्राप्तकर्ता सन्देश को पढ़ता नहीं है तो सन्देशवाहन

पूर्ण नहीं होता है और सन्देशों का भेजना ही व्यर्थ हो जाता है।

7. प्रभाव का तत्काल ज्ञान नहीं होता है (No Immediate knowledge of its effects) : लिखित संवादवाहन से सन्देश-प्रेषक को सन्देश के प्राप्तकर्ता पर इसके प्रभाव का तत्काल ज्ञान नहीं हो पाता है। सन्देश-प्रेषक को इसके प्रभाव का ज्ञान प्राप्त करने में कुछ समय लगता है।

8. प्रेषक की भावनाओं का उचित ज्ञान नहीं होता है (It Fails to Convey Feelings of the Sender) :

लिखित सन्देशवाहन में प्रेषक की सम्पूर्ण भावनाओं का प्रेषण असम्भव है। शब्दों से प्रत्येक बात का वर्णन कठिन है, जबकि मौखिक सन्देशवाहन की दशा में सन्देश-प्राप्तकर्ता उसकी भाषा, उसके बोलने के ढंग तथा चेहरे के हाव-भाव से सभी बातों एवं भावनाओं का ज्ञान प्राप्त कर लेता है।

2.3 व्यावसायिक लेखन का महत्व : (Importance of Business Writing)

आज व्यवसाय का क्षेत्र किसी एक गाँव, कस्बे, शहर, राज्य व राष्ट्र तक ही सीमित नहीं रह गया है, अपितु अन्तर्राष्ट्रीय हो गया है। विश्व के एक छोर पर वस्तुओं का निर्माण होता है तो उसका विक्रय दूसरे छोर पर। अतः क्रेता व विक्रेता के मध्य सम्पर्क स्थापित करने का सबसे सुगम एवं मितव्ययी साधन पत्र-व्यवहार ही रह जाता है। पत्रों के माध्यम से ही निर्माता अपने ग्राहकों को अपने उत्पादनों (Products) से प्रभावित कर माल का विक्रय करता है। एक पत्र एक व्यावसायिक संस्था के विक्रय प्रतिनिधि के समान ही होता है, जो ग्राहकों को आकर्षित करता है और अपनी संस्था की विक्रय-वृद्धि करने का सतत प्रयास करता है। हरबर्ट एन० केसन (Herbert N. Casson) के शब्दों में, "प्रत्येक निर्गत पत्र आपकी संस्था का यात्री है। यह विक्रयकर्ता है। यह सन्देश ले जाता है। यह शान्त होता है परन्तु गूंगा नहीं यह (ग्राहकों को) आकर्षित करता है अथवा भगा देता है। यह संस्था की ख्याति निर्माण में सहायता पहुँचाता है।" प्रभावशाली पत्रों के अभाव में पुराने ग्राहक भी टूट सकते हैं, डूबते ऋण की मात्रा में वृद्धि हो सकती है। इतना ही नहीं व्यावसायिक संस्था का अस्तित्व ही समाप्त हो सकता है। इसके विपरीत एक प्रभावशाली पत्र व्यवसाय की श्रीवृद्धि करता है। हरबर्ट एन० केसन (Herbert N. Casson) का मत है कि एक प्रभावशाली पत्र निम्न कार्य कर सकता है²—

1. Keith Davis : Human Relations in Business p. 238.
2. Every outgoing letter is traveller for your firm. It is a salesman. It carries a message. It is silent, but not dumb. It attracts or repels. It helps to make the reputation of the firm."

-Herbert N. Casson: Betler Business Letters

1. माल का विक्रय करता है।
2. खोये हुये ग्राहकों को लाता है अर्थात् रूटे ग्राहकों को मनाता है।
3. नये ग्राहक बनाता है।
4. यात्रियों (यात्री विक्रय प्रतिनिधियों) को प्रोत्साहित करता है।
5. यात्रियों के लिये विक्रय मार्ग खोलता है।
6. विक्रेताओं को प्रोत्साहित करता है।
7. ख्याति का निर्माण करता है।
8. डूबते ऋणों को प्राप्त करता है।
9. शिकायतों का समाधान करता है।
10. नये बाजारों का निर्माण करता है।

विस्तृत रूप से पत्र - व्यवहार का महत्व निम्नलिखित शीर्षकों के माध्यम से स्पष्ट किया जाता है :

1. दूरस्थ ग्राहकों से सम्पर्क स्थापित करना : आज व्यवसाय का क्षेत्र संकुचित नहीं है। सम्पूर्ण संसार एक बाजार है। संसार के एक कोने में क्रेता है तो दूसरे कोने में विक्रेता। इन दूरस्थ ग्राहकों से सम्पर्क बनाये रखने के लिये पत्र-व्यवहार एक सस्ता व सुलभ साधन है। बिना पत्र-व्यवहार के आज का व्यवसाय बिल्कुल ही असम्भव है। प्रसिद्ध विद्वान् हरबर्ट एन0 केसन (Herbert N. Casson) के अनुसार, "यह (पत्र) व्यवसाय वृद्धि का सबसे अच्छा तथा सबसे शीघ्र साधन है। यह विज्ञापन के समान प्रभावी होता है तथा इससे अधिक सस्ता है। इसके माध्यम से अधिक लोग सम्पर्क में आते हैं। आप अपने व्यापार को क्यों सीमित रखना चाहते हैं? पत्रों के माध्यम से आप दूरस्थ ग्राहकों से सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं" निश्चय ही पत्र व्यवहार दूरस्थ ग्राहकों से सम्पर्क बनाये रखने के लिये सबसे सस्ता एवम् उत्तम साधन है। आज व्यावसायिक क्षेत्र में ऐसे व्यवसायी भी विद्यमान हैं जिन्होंने अपने ग्राहकों को कभी देखा तक नहीं जबकि वे वर्षों से व्यवसाय कर रहे हैं। इनके मध्य पत्र-व्यवहार के माध्यम से ही लेन-देन होते रहते हैं।

2. प्रभावपूर्ण सम्पर्क : यद्यपि व्यक्तिगत सम्पर्क की तुलना में तो पत्रों से सम्पर्क प्रभावशाली नहीं होता परन्तु किन्हीं कारणों से पत्रों का सम्पर्क प्रभावपूर्ण होता है। प्रथम तो बार-बार मिलना सम्भव नहीं होता है। व्यक्तिगत

1. "It is one of the quickest and cheapest way of building a business. it is equal to advertising and much cheaper. It enables you to get in touch with more people. Why limit your market? By means of letters, you can reach to people at a distance."

भेंट में आपसी बोलचाल में कुछ-कुछ कटुता आने का डर बना रहता है। मनुष्य को आवेश आना स्वाभाविक ही है। व्यवसायी भी एक मनुष्य ही है। यदि वह आवेश में आकर कुछ कह दे अथवा कटुसत्य कह दे तो वह भेंट केवल उस ग्राहक को ही नहीं खोयेगी बल्कि अनेक ग्राहकों को खो सकती है। पत्र-व्यवहार करते समय लेखक पूर्णतः सोच-विचार कर लिखता है। अतः मतभेद की सम्भावना कम हो जाती है।

3. **व्यवसाय की अभिवृद्धि** : एक अच्छा पत्र विक्रय वृद्धि करता है। यह पुराने ग्राहकों को सन्तुष्ट कर नये ग्राहकों को आकर्षित करता है। यह रूठे हुये ग्राहकों को मनाता है। यह विक्रयकर्त्ताओं (Salesman) से अधिक प्रभावपूर्ण होता है। एस०आर० गुप्ता (S.R. Gupta) के शब्दों में, "जब यह सत्य है कि कोई भी वस्तु जो विक्रयकर्त्ताओं द्वारा बेची जा सकती है, डाक द्वारा भी बेची जा सकती है तो यह भी सत्य है कि अच्छे विक्रय-पत्र विक्रयकर्त्ताओं की अपेक्षा अच्छी तरह और ज्यादा मात्रा में बेच सकेंगे।" प्रत्येक पत्र विक्रय-वृद्धि करता है और 'अन्ततोगत्वा येन-केन प्रकारेण व्यवसाय की अभिवृद्धि ही करता है। एल०ई० फ्रेली (L.E. Frailey) का मत है "पत्र अन्य साधनों की तुलना में व्यवसाय के प्रसार एवं विकास में अधिक योगदान देते हैं।"²

4. **प्रतिस्पर्द्धा में** : आज व्यवसाय में प्रतिस्पर्द्धा है। सन्देशवाहन के साधनों के विकास से यह और अधिक बढ़ी है। इस तीव्र प्रतिस्पर्द्धा में व्यापारी तभी विजित हो सकता है जब अपने यहाँ पर यह कुशल पत्र-लेखन की व्यवस्था करें। प्रभावशाली पत्र ग्राहकों में व्यवसाय के प्रति आत्मीयता एवं अपनत्व की भावना का विकास करते हैं। ग्राहक व्यावसायिक संस्था को अपनी संस्था समझने लगते हैं। परिणामस्वरूप वे संस्था से स्थायी सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयत्न करते हैं, अतः एक व्यवसायी को अधिक प्रतिस्पर्द्धा का सामना नहीं करना पड़ता है।

5. **लिखित प्रमाण** : पत्र व्यवहार ग्राहक एवं संस्था के मध्य होने वाले व्यवहारों का लिखित प्रमाण है। इससे आपसी मतभेद की सम्भावना कम हो जाती है। मतभेद हो जाने पर न्यायालय में पुष्टि हेतु प्रस्तुत किया जा सकता है।

6. **मितव्ययी एवं सुलभ साधन** : सन्देशवाहन के अन्य साधनों की अपेक्षा पत्र-व्यवहार अत्यन्त ही मितव्ययी एवं सुलभ साधन है। छोटी से

1. "While it is true that almost any thing that can be sold by salesmen can be sold by mail; yet it is also true that any thing sold by salesman can be more thoroughly sold, and in large quantities by sales-letter of proper type." - S.R. Gupta, Principles and Practice of Business Correspondence.

2. "Letters more than any other part of business help to make possible growth and expansion".
-L.E. Frailey: Hand Book of Business Letter, p. 3

छोटी संस्था भी पत्रों का प्रयोग करती है, क्योंकि यह एक मितव्ययी साधन है। तार, टेलीफोन, टेलीप्रिन्टर इत्यादि साधन प्रयोग में लाने से अधिक खर्च पड़ता है, जो एक छोटे व्यापार के लिये सम्भव नहीं है।

7. **पुष्टि हेतु पत्र-व्यवहार** : व्यवसायियों को पत्र-व्यवहार तब भी करना होता है जबकि उन्होंने अन्य मौखिक संवाद-साधनों का प्रयोग किया है। उदाहरणार्थ, माल का क्रयादेश टेलीफोन पर दिया है तो उसकी पुष्टि हेतु पत्र-व्यवहार करना ही पड़ेगा। अन्य कई अवसर आते हैं जब पुष्टि हेतु पत्र-व्यवहार अनिवार्य हो जाता है।

8. **ख्याति निर्माण करता है** : एक अच्छा एवं प्रभावशाली पत्र संस्था की ख्याति का निर्माण करता है। अनेक बार पत्र संस्था की ख्याति बनाये रखने के लिये ही भेजते हैं। अनेक बार उन व्यक्तियों को पत्र लिखे जाते हैं जो ग्राहक नहीं है, परन्तु पहले थे अथवा जिनसे केवल प्रथम बार ही पत्र व्यवहार हुआ है। इन व्यक्तियों को पत्र लिखने का उद्देश्य इनके मस्तिष्क में संस्था की उदार नीति एवं व्यवहार की छाप छोड़ना ही होता है।

2.4 वाणिज्यक पत्र - आशय, आवश्यकता एवं प्रकार :

(Commercial Letters - Meanings Need and Kinds)

व्यापारिक पत्र से आशय : (Meaning of Commercial Letter)

वाणिज्यक कार्यों के निष्पादन के लिये दो व्यावसायिक संस्थाओं के मध्य होने वाले पत्र-व्यवहार को ही "व्यावसायिक पत्र व्यवहार" कहते हैं। दो व्यावसायिक संस्थाओं के मध्य मूल्य व माल की पूछताछ करने, भाव बताने, क्रयादेश भेजने, माल सम्बन्धी सूचनायें भेजने, शिकायतें व उनका समाधान करने, तकाजा करने, भुगतान करने, सन्दर्भ मॉगने व भेजने आदि-आदि अवसरों पर पत्र व्यवहार होता ही रहता है। ये समस्त पत्र व्यावसायिक पत्रों की परिधि में ही आते हैं।

ए0पी0 स्टोव के अनुसार, "वाणिज्यक पत्र वे पत्र होते हैं, जो दो व्यापारियों के मध्य किसी व्यापारिक उद्देश्य की पूर्ति हेतु लिखे जाते हैं।"

हर्बर्ट कैसन के अनुसार, "व्यापार के सम्बन्ध में लिखे जाने वाले पत्रों को वाणिज्यक पत्र कहा जाता है।

प्रो0 आर0एल0 पाटनी के अनुसार "जिन पत्रों से व्यापार के उद्देश्यों की पूर्ति होती है, उन्हें व्यापारिक पत्र कहा जाता है।

वाणिज्यक पत्र की आवश्यकता : (Need of Commercial Letter)

व्यवसाय छोटा हो या बड़ा, उसमें व्यावसायिक पत्रों की आवश्यकता पड़ती है। प्रत्येक व्यावसायी संस्था को अपने विक्रेताओं, ग्राहकों, सरकारी

विभागों एवं अन्य सम्बन्धित विभागों से सम्पर्क बनाना पड़ता है। अपने नियमित कार्य को पूरा करने हेतु व्यवसायी को विभिन्न पक्षों से सूचनाओं का आदान-प्रदान करना पड़ता है। पूछताछ करने के लिये, आदेश प्रेषित करने के लिये, आदेशों को पूरा करने के लिये, साख की अनुमति एवं स्वीकृति प्राप्त करने के लिये, देनदारों को खातों के विवरण भेजने के लिये, माल की पूर्ति में की गयी कमी की शिकायत करने के लिये, ग्राहकों की समस्याओं का समाधान करने के लिये तथा फर्म की ख्याति में वृद्धि करने के लिये प्रत्येक संस्था में संचार की आवश्यकता होती है। यह संचार केवल व्यावसायिक पत्रों के माध्यम से ही किया जा सकता है। जैसे-जैसे व्यावसायिक क्रियाओं में विस्तार होता है, वैसे-वैसे विक्रेताओं, ग्राहकों, कर्मचारियों, आदेशों की संख्या में भी वृद्धि होती है। किसी भी व्यावसायिक संस्था के लिये सह सम्भव नहीं है कि वह प्रत्येक व्यक्ति या पक्ष या विभाग से व्यक्तिगत सम्बन्ध बनाकर रखे। इसमें मुख्य बाधक तत्व है- भौगोलिक दूरी। अतः व्यक्तियों व विभिन्न संस्थानों से सम्बन्ध बनाने के लिये यह उचित तरीका है कि एक-दूसरे से लिखित संचार द्वारा पत्र-व्यवहार किया जाये। यह बात सही है कि संचार के लिये अन्य साधन भी उपलब्ध हैं, जैसे- दूरभाष, टेलेक्स, टेलीग्राफ इत्यादि, परन्तु ये सभी साधन प्राप्तकर्ता के मस्तिष्क पर अस्थायी प्रभाव डालते हैं तथा न ही उसके पास लिखित में कोई रिकार्ड बन पाता है। विभिन्न व्यावसायिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिये संचार का लिखित होना श्रेष्ठ होता है। यदि आर्थिक दृष्टिकोण से भी देखा जाये तो ये सभी साधन अत्यन्त व्ययपूर्ण होते हैं, जबकि पत्र-व्यवहार अत्यन्त सस्ता होता है।

वाणिज्यिक पत्रों के प्रकार (Kinds of Commercial Letters) :

व्यापारी को अनेक अवसरों पर पत्र लिखने की आवश्यकता होती है। पत्र में लिखे जाने वाले विषयों के आधार पर वाणिज्यिक पत्र निम्नलिखित प्रकार के होते हैं :

1. पूछताछ के पत्र,
2. भाव सूचक पत्र,
3. आदेश भेजने के पत्र,
4. आदेश प्राप्ति की सूचना के पत्र,
5. व्यापारिक सन्दर्भ पत्र,
6. शिकायतें एवं उनके समाधान के पत्र,
7. तकादे के पत्र,
8. अन्य व्यापारिक पत्र,
9. नौकरी सम्बन्धी आवेदन-पत्र।

2.5 अच्छे वाणिज्यक पत्र की विशेषतायें (Essentials of a Good Commercial Letter)

आधुनिक युग में पत्र-व्यवहार का महत्व बढ़ता ही जा रहा है। इसका प्रयोग एक छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी व्यावसायिक संस्था भी करती है। ये पत्र व्यवसाय की अभिवृद्धि करते हैं और ख्याति में चार चाँद लगा देते हैं। "एक अच्छा पत्र उस चाबी के समान है जो बन्द द्वार खोल देती है। यह बाजार खोलता है। यह आपकी सेवाओं तथा माल के लिये मार्ग खोलती है। यह आपकी संस्था के चरित्र की सही कहानी कहता है।" अतः पत्रों में विशेष गुणों का होना अनिवार्य है।

आज पत्रों ने व्यक्तिगत भेंट का स्थान ले लिया है। जब व्यक्तिगत भेंट होती है, व्यवसायी अपने ग्राहकों को येन-केन प्रकारेण प्रभावित करने का प्रयत्न करता है। वह परिस्थिति एवं ग्राहक की प्रकृति के अनुसार ही अपना व्यवहार परिवर्तित कर लेता है। परन्तु अब पत्र ही यह कार्य कर लेता है। अतः पत्र में भी ऐसे गुणों का समावेश करना चाहिये जिससे ग्राहक को किसी भी मनोदशा में प्रभावित किया जा सके। अतः पत्रों में नम्रता, शिष्टता, सरलता, स्पष्टता जैसे अन्यान्य गुणों का समावेश आवश्यक है। आधुनिक पत्रों में इनका विशेष महत्व है, जबकि ग्राहक एक राजा है ("Consumer is a king in the market")। व्यवसायी को अपने पत्र में उन सभी गुणों का समावेश करना चाहिये जिससे वह प्रभावित हो सके। एस०आर० गुप्ता (S.R. Gupta) के शब्दों में, "What modern business requires is accurate letters, lucid letters, straight to the point letters, courteous letters, human letters, letters that read as though the writers were talking face to face with the customer, letters that give in simple words and sentences the facts about merchandise, service, or other subject under consideration. No useless introductions, no hackneyed conclusion."² नीचे एक अच्छे वाणिज्यक पत्र के गुणों का उल्लेख किया गया है :

1. शुद्धता एवं सत्यता (Correctness) : डॉ० राबर्ट आर्नर (Dr. Robert Aurner) के अनुसार, "जिस प्रकार सज्जन व्यक्तियों में अच्छी आदतें होती हैं उसी प्रकार व्यवसायी के लिये सत्यता अनिवार्य है। यदि व्यवसायी लिखने में सत्यता नहीं अपनाता है तो वह व्यावसायिक क्षेत्र के लिये योग्य नहीं है।" अतः व्यापारी को पत्र-लेखन में पर्याप्त सत्यता बरतनी चाहिये। पत्र

1 "A good letter is a master key that opens locked doors. It opens market. It opens the way for your goods or your services. It tells the story of the real character of your firm".
-Herbert N. Casson: Better Business Letters

2 "What good manners are to the gentlemen, correctness is to the businessman. If the businessman does not observe the rules of writing etiquette, he is not accepted in the best business circles."

-Robert Aurner, Effective English in Business

में दी गयी विषय-सामग्री बिल्कुल सत्य होनी चाहिये। पत्रों में झूठी एवं आधारहीन बातों को स्थान नहीं देना चाहिये, अन्यथा इससे परस्पर कटुता एवं वैमनस्य बढ़ता है। व्यवसायी को सदैव सच्चाई एवं ईमानदारी से काम लेना चाहिये। वस्तुओं के भाव बताते समय, शिकायतों का निवारण करते समय विशेष ध्यान रखना चाहिये। पत्रों में स्पष्टता होनी चाहिये अन्यथा समय, श्रम एवं धन तीनों की हानि होगी। अतः पत्रों में स्पष्टता लाने के उद्देश्य से सर्वप्रथम उस विषय पर सोचना चाहिये, जिस विषय में पत्र लिखना है, इसके बाद लिखना शुरू करना चाहिये। भाषा पूर्णतः स्पष्ट होनी चाहिये ताकि पाठक विचारों का मौलिक रूप समझ सकें।

2. **स्पष्टता (Clarity)** : स्पष्टता पत्रों का महत्वपूर्ण गुण है। स्पष्टता के अभाव में पत्र व्यर्थ होता है और वह रददी की टोकरी के योग्य होता है। लॉर्ड चेस्टर फील्ड (Lord Chester Field) के अनुसार, "प्रत्येक अनुच्छेद इतना स्पष्ट तथा निश्चित होना चाहिये कि दुनिया का सबसे मन्द बुद्धि वाला व्यक्ति भी उसका गलत अर्थ न लगा सके और इसे समझने के लिये दुबारा न पढ़ना पड़े।" हिरोमु नेगौका और डेनियल थेयोफिलस (Hiromu Nagaoka and Daniel Theophilus) ने स्पष्ट लिखा है, "अस्पष्टता बहुत बड़ा अवगुण है, इससे बचना चाहिये। व्यावसायिक पत्रों में अस्पष्टता हानिकारक है। यह प्रायः गलत विचारों तथा लम्बे व प्रभावहीन वाक्यों के प्रयोग से उत्पन्न होती है। भूल एवं शब्दों के गलत चयन के कारण भी पत्र वाक्यों की स्पष्टता से विकसित करेंगे। वकीलों का कहना है कि आधे कानूनी मुकदमों अस्पष्टता के कारण होते हैं जिनका जान-बूझकर विविध प्रकार से अर्थ लगाया जाता है।" मिथ्या बातों को स्थान नहीं देना चाहिये। किसी बात को लिखने में सम्पूर्ण तथ्यों द्वारा स्पष्ट करनी चाहिये।

सत्यता पत्र लेखक की इस बात पर निर्भर करती है कि उसे पत्र की विषय वस्तु के सम्बन्ध में कितना ज्ञान है। विषय-वस्तु के सम्बन्ध में पूर्ण ज्ञान नहीं है तो असत्यता की सम्भावना अधिक बढ़ जाती है। अतः विषय-वस्तु को पूर्ण समझना चाहिये, तत्पश्चात् इसे संक्षेप में लिखकर समझाने का प्रयास करना चाहिये। अन्यथा असत्य पत्र व्यावसायिक कार्यों में विलम्ब पैदा करेंगे, तथा साथ ही वित्तीय हानि भी होगी। अतः सत्यतापूर्ण व्यवहार करना चाहिये तथा सदैव 'Honesty is the best policy' के सिद्धान्त का अनुसरण

1. "Ambiguity: a very common fault, must be guarded against. Lack of clarity in a business letter is disastrous. It often arises from inaccurate thinking, and the use of long unwieldy sentences. The 'Misuse' and omission of words will also detract from the clarity of a sentence. Lawyers say that half the law cases are caused by people expressing themselves so ambiguously that their intentions can reasonably be interpreted in several ways."

-Hiromu Nagaoka and Denial Theophilus: English and Commercial Correspondence

करना चाहिये।

3. पूर्णता (Completeness) : प्रत्येक पत्र में पूर्णता का गुण विद्यमान रहना चाहिये। जिस सम्बन्ध में पत्र लिखा जा रहा है, उस सम्बन्ध में प्रत्येक बात का पूर्ण विवरण देना चाहिये। महत्वपूर्ण बातों के छूट जाने से पत्र अपूर्ण हो जाते हैं। अतः प्रत्येक महत्वपूर्ण बात के लिये पूर्ण स्थान देना चाहिये। पत्र छोटे अवश्य होने चाहिये पर इसके लिये पूर्णता का त्याग नहीं होना चाहिये, क्योंकि अपूर्ण पत्र कई पत्रों के लिखने को बाध्य कर देते हैं। इसलिये किसी विद्वान ने ठीक ही कहा है कि एक पूर्ण पत्र तीन अपूर्ण पत्रों के बराबर है। पत्रों की पूर्णता के गुण को प्राप्त करने के लिये पत्र निम्न क्रम में लिखना चाहिये—

1. उस व्यक्ति को आँकना चाहिये जिसे पत्र लिख रहे हैं।
2. उन तथ्यों का संकलन एवं तुलनात्मक अध्ययन करना चाहिये जो कि उस पत्र में लिखे जाने हैं।
3. उक्त तथ्यों का पुनर्निरीक्षण करना चाहिये।
4. प्रत्येक बात का निरीक्षण करके देखना चाहिये कि कोई बात रह तो नहीं गयी है।
5. लिखना चाहिये अथवा लिखवाना चाहिये।

पत्र-लेखक की पूर्णता का ध्यान तब विशेष रखना चाहिये जब गश्ती-पत्र या डाक-व्यापार सम्बन्धी पत्र लिखने हों। विदेशी व्यापारियों अथवा ग्राहकों से पत्र-व्यवहार करते समय पत्र-व्यवहार में पूर्णता विशेष रूप से होनी चाहिये। क्रयादेश के पत्रों में भी पूर्णता का अपना महत्व है। ऐसे पत्रों में माल की मात्रा, किस्म, मूल्य, पैकिंग आदि अन्यान्य बातों का उल्लेख न करने से अपूर्णता का गुण बढ़ जाता है और अनावश्यक पत्रों की संख्या में वृद्धि हो जाती है।

4. संक्षिप्तता (Conciseness) : व्यवसाय में समय ही धन है (Time is money)। अनावश्यक लम्बे पत्र से पत्र-लेखक का समय ही व्यर्थ नहीं होता वरन् पाठक का समय भी व्यर्थ होता है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि पूर्णता व शुद्धता का ध्यान ही न रखा जाये। इसका तात्पर्य यह है कि वह प्रत्येक बात लिखी जानी चाहिये जो आवश्यक है। अब्राहम लिंकन (Abraham Lincoln) से एक बार एक प्रश्न पूछा गया कि आदमी की टोंगे कितनी लम्बी होनी चाहिए? उन्होंने उसके उत्तर में बताया कि Just long enough to reach the ground. ठीक इसी प्रकार एक पत्र भी उतना ही लम्बा होना चाहिये जिससे उसके लिखने का उद्देश्य पूरा हो जाये। प्रत्येक महत्वपूर्ण बात का समावेश हो जाना चाहिये और अनावश्यक बातों को स्थान नहीं मिलना चाहिये। पत्रों में संक्षिप्तता लाने के लिये निम्न बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिये—

1. पत्रों में मुहावरे एवं अलंकारों का प्रयोग कम से कम करना चाहिये।
2. पत्रों में अनावश्यक बातें नहीं लिखनी चाहिये।
3. संक्षिप्तता की दृष्टि से प्रत्येक पत्र को भेजने से पूर्व दुबारा पढ़ कर अनावश्यक बातें हटा देनी चाहिये।

5. **नम्रता (Courtesy):** नम्रता व्यावसायिक पत्रों का प्रमुख गुण है। प्रत्येक पत्र भाषा व लहजे दोनों में नम्र होना आवश्यक है। नम्रता का कोई मूल्य नहीं होता, परन्तु इसका परिणाम बहुत अच्छा होता है (Courtesy costs nothing but means much)। नम्रता एक ऐसा गुण है जो पत्र के अन्य गुणों के अभाव में भी पाठक का ध्यान अकर्षित कर लेता है। जिन पत्रों में नम्रता का अभाव होता है वे पत्र ग्राहकों को खोते ही नहीं, वरन् संस्था की ख्याति (Goodwill) को भी कम कर देते हैं। एम० मजूमदार (M. Majumdar) के अनुसार, "A discourteous letter is probably more detrimental than is personal discourtesy. The stigma of professional discourtesy attaches to the particular person guilty and may be forgotten, but the discourteous letter's reflects upon the firm as a firm and as the old Latin tag says, the written words remain"

नम्रता का आशय नम्र शब्दों का प्रयोग तथा 'धन्यवाद', 'कृपया' आदि शब्दों का प्रयोग मात्र नहीं है। सही अर्थों में 'नम्रता' दूसरों की भावना का आदर करना है। पत्र लेखक को चाहिये कि वह पत्र-पाठक को भी उतना ही आत्म-स्वाभिमान समझे जितना कि वह स्वयं है। अतः पत्रों में पत्र-पाठक के आत्म स्वाभिमान का हनन नहीं करना चाहिये, चाहे वह कैसा भी अवसर हो। चाहे वह क्रयदेश का पत्र हो, चाहे वह तकाजे का अन्तिम पत्र। पत्र में नम्रता होनी ही चाहिये।

6. **प्रभावपूर्णता (Effectiveness):** पत्र प्रभावशाली होना चाहिये अन्यथा पत्र का महत्व नहीं रहता। आज अप्रत्यक्ष विक्रय का युग है। इस युग में ग्राहक एवं विक्रेता के बीच काफी दूरी है। पत्रों के माध्यम से ही व्यवसायी अपने माल का विक्रय करता है, और निरन्तर सम्पर्क बनाये रखता है। अतः पत्र प्रभावशाली होना आवश्यक है। पत्र में पाठक के हित की बात लिखने और उसके विचारों को महत्व देने से पत्र प्रभावशाली बन जाते हैं। भाषा और शैली इस सम्बन्ध में अपना विशेष महत्व रखती है।

7. **सन्तुष्टता (Satisfaction):** पत्र में विचार तर्क-युक्त हो जिससे पाठक पूर्ण रूप से सन्तुष्ट हो सके। साथ ही वह लेखक की इच्छानुसार कार्य करने लगे। विक्रय-पत्रों के सम्बन्ध में विशेष ध्यान देना चाहिये। जो कुछ लिखा जाये उससे ग्राहक सन्तुष्ट होना चाहिये। ऐसे पत्र में पूर्ण तथ्य प्रस्तुत करना चाहिये। माल के मूल्य, किस्म आदि के दिये गये विवरण से पाठक को सन्तुष्ट करना चाहिये तभी वह प्रभावशाली विक्रय होगा।

15. पुनश्च (Postscripts).
16. सीमान्त (Margin)

वाणिज्यक पत्र का प्रारूप (Format of Commercial Letters) :

शीर्षक (1)

तार का पता.....

पता.....

टेलीफोन नं०.....

स्थान.....

कोड सं०.....

(2) तिथि.....

(3) सन्दर्भ क्रमांक.....

(4) भीतरी पता

(5) अभिवादन

(6) विषय शीर्षक.....

(7) प्रारम्भिक अनुच्छेद.....

(8) पत्र का मुख्य भाग.....

(9) अन्तिम अनुच्छेद.....

(10) पत्र का अन्त.....

(11) हस्ताक्षर

(12) सतत पत्र.....

(13) संलग्नक.....

(14) पहचान चिन्ह.....

(15) पुनश्च.....

(16) सीमान्त

1. मुद्रित शीर्षक (The Printed Heading) : एक मुद्रित शीर्षक "व्यवसाय की आवाज है।" इसकी सुन्दरता प्राप्तकर्ता को आकर्षित कर पढ़ने को बाध्य करती है। पिछले दो दशकों में पत्रों के मुद्रित शीर्षक में काफी परिवर्तन

देखने में आ रहा है। आजकल मुद्रित शीर्षक अधिक साधारण, आकर्षक, स्वच्छ एवं उपयोगी होते हैं। विक्रय-पत्रों अथवा कुछ विशेष प्रकार के व्यवसाय करने वाली संस्थाओं के पत्रों के शीर्षक तड़क-भड़क वाले होते हैं।

पत्र के शीर्षक के मुद्रण में 2" से 2 1/2" तक जगह उपयोग में लाना उपयुक्त माना गया है। कुछ का मत है कि प्रमाणित नाप के कागजों के 1/5 भाग से अधिक में शीर्षक नहीं आना चाहिये। शीर्षक का मुद्रण आधुनिक टाइपों में करवाना चाहिये। इस भाग में निम्न बातों का उल्लेख किया जाता है—

1. संस्था का नाम (Name of the Concern),
2. पता (Address)
3. व्यवसाय की प्रकृति (Nature of the Business)
4. टेलीफोन नम्बर (Telephone Number)
5. तार का पता (Telegraphic Address)
6. संहिता संख्या (Code Number)
6. पत्र संख्या (Letter Number)
7. संस्था की शाखाओं का पता (Address of Branches)
8. संस्था के भवन एवं प्लांट का चित्र (Photograph of Building and Plant)

यह भाग विभिन्न रंगों में मुद्रित हो सकता है, परन्तु उचित यही है, कि एक ही रंग में हो। यद्यपि इसमें विभिन्न डिजाइनों को काम में लिया जा सकता है, परन्तु ये डिजाइनें आकर्षक हों और पाठक को आकर्षित कर सकने योग्य हों। एक शीर्षक का नीचे उदाहरण दिया जाता है—

राय एण्ड कम्पनी

फोन : 72640

जौहरी बाजार

तार का पता 'शशि'

जयपुर-3

कोड नं० ए०बी०सी० (पंचम संस्करण)

दिनांक.....

2. तिथि (Date) : तिथि पत्र का आवश्यक अंग है। इसका स्थान संस्था के पते के ठीक नीचे होता है। दिनांक में महीने का नाम और वर्ष लिखना चाहिये। दिनांक लिखने की निम्न विधियाँ हैं—

1. अंग्रेजी विधि (English Style)
2. अमेरिकन विधि (American Style)

माना कि 1 मार्च, 2009 लिखना है तो विभिन्न विधियों के अनुसार निम्न प्रकार लिखा जायेगा :

अंग्रेजी विधि के अनुसार 1 मार्च, 2009 (1st March, 2009)

अमेरिकन विधि के अनुसार मार्च 1, 2009 (March 1st, 2009)

इसके अतिरिक्त अन्य विधियों का प्रयोग भी प्रचलन में है। जैसे 1. 3.2009 इत्यादि।

3. **सन्दर्भ क्रमांक (Reference Number)** : कभी-कभी पूर्व पत्र का हवाला दे दिया जाता है जिससे उस पूर्व पत्र में लिखी बात का पुनः उल्लेख नहीं करना पड़ता है। सन्दर्भ क्रमांक व्यवसायी का अपना तथा पत्र प्राप्त करने वाले दोनों का लिखा जा सकता है।

4. **भीतरी पता (Inside Address)** : यह पत्र प्राप्त करने वाले व्यक्ति अथवा संस्था का पता होता है। मुद्रित शीर्षक के नीचे बायीं ओर अभिवादन से पहले लिखा जाता है। कुछ पत्र-लेखक भीतरी पता पत्र समाप्त होने के पश्चात् नीचे बायीं ओर लिखते हैं। पता लिखने की यह विधि निजी पत्रों में ही अधिक प्रचलित है। व्यावसायिक पत्रों में यह विधि अभी अधिक प्रचलित नहीं है।

भीतरी पता तीन पंक्तियों में लिखा जाता है। पहली पंक्ति में पत्र प्राप्तकर्ता का नाम, दूसरी में सड़क (रास्ते) या गली का नाम तथा तीसरी पंक्ति में नगर का नाम लिखा जाता है। यदि प्राप्तकर्ता विदेश में रहता है तो चौथी लाइन में उस देश का नाम लिखा जाता है। भीतरी पता लिखने की प्रचलित विधियाँ निम्न की प्रकार हैं :

(i) अंग्रेजी विधि (English Style)	(ii) अमेरिकन विधि (American Style)
सर्वश्री राम एण्ड कम्पनी	सर्वश्री राम एण्ड कम्पनी,
15, सोजती गेट,	15, सोजती गेट,
जोधपुर	जोधपुर।

भीतरी पता लिखते समय व्यक्ति, फर्म या कम्पनी के नाम के साथ आदर-सूचक शब्दों का प्रयोग करना चाहिये। प्रायः पुरुषों के नाम के पहले श्री अथवा श्रीयुत शब्दों का प्रयोग किया जा सकता है। अंग्रेजी में Mr. शब्द का प्रयोग किया जा सकता है। कुछ व्यक्तियों के नाम के पूर्व उनकी जाति के अनुसार लाला, पण्डित, ठाकुर, कुँवर, सैयद, मिर्जा आदि का प्रयोग किया जाता है। विश्वविद्यालय की डिग्रियों नाम के बाद लिखी जाती है। उदाहरणार्थ, डा० ज्वालादत्त शर्मा, एम०ए०, पी०एच-डी०। यदि कोई व्यक्ति सेना के उच्च पद पर है तो पद, नाम के पहले लगाकर लिखा जाता है। ये पद 'कप्तान', 'मेजर', 'करनल', 'जनरल' आदि होते हैं।

हिन्दू विवाहित महिलाओं के नाम के साथ श्रीमती और मुसलमान महिलाओं के नाम के साथ बेगम का प्रयोग होता है। कन्याओं के नाम के पूर्व कुमारी

या Miss का प्रयोग करना चाहिये।

जिन संस्थाओं के नाम किसी व्यक्ति विशेष के नाम से प्रारम्भ होते हैं, उनके नाम के साथ में 'श्री' अथवा 'सर्वश्री' या 'Messrs' लिखना चाहिये। स्त्रियों के नाम से प्रारम्भ होने वाली संस्था के नाम के पहले श्रीमती लिखना चाहिए। जिन संस्थाओं के नाम किसी व्यक्ति विशेष के नाम से प्रारम्भ न हों उनके नाम के साथ श्री अथवा सर्वश्री नहीं लगाना चाहिये। उनके नाम के साथ अंग्रेजी में प्रायः 'The' का प्रयोग किया जाता है, जैसे— The Universal Supply Corporation। जब किसी संस्था का नाम ऐसे व्यक्ति के नाम से आरम्भ होता है जिसको कोई उपाधि मिली हुयी है तो उस संस्था के नाम में Messrs शब्द का प्रयोग नहीं किया जाता है। जैसे— लाला केदारनाथ एण्ड सन्स।

5. **अभिवादन (The Salutation):** भीतरी पता लिख चुकने के बाद अभिवादन करना आवश्यक है। यह पत्र प्राप्तकर्ता को सम्बोधन है। व्यावसायिक पत्रों में अभिवादन निम्न प्रकार से होता है—

1. एक पुरुष के लिये प्रिय महोदय, माननीय महोदय या श्रीमान जी
(Dear Sir)
2. दो या दो से अधिक पुरुषों अथवा संस्था के लिये प्रिय महोदय, या माननीय महोदय
(Dear Sir or Gentlemen)
3. एक स्त्री के लिये प्रिय महोदया या माननीय महोदया
या श्रीमती जी (Dear Madam)
4. स्त्रियों की संस्था के लिये प्रिय महोदया या माननीय महोदया
(Dear Madam)

पत्र लेखक के अभिवादन में Gentlemen के साथ 'Dear' का प्रयोग नहीं करना चाहिये। 'Sir' का प्रयोग बहुत कम प्रचलन में है। महत्वपूर्ण व्यक्तियों के सम्बोधन हेतु इसका प्रयोग होता है।

6. **विषय शीर्षक (Subject Heading):** पत्र पाने वाले की सुविधा की दृष्टि से पत्र का विषय शीर्षक देना उचित है। यह अभिवादन के नीचे तथा पत्र के प्रारम्भिक अनुच्छेद से पूर्व लिखा जाता है। इससे प्राप्तकर्ता पत्र को देखते ही एक लाइन पढ़ने मात्र से पत्र का संक्षिप्त उद्देश्य समझ जाता है। पत्र के विषय से स्पष्ट हो जाता है कि यह किस विभाग से सम्बन्धित है। उचित अधिकारी के पास भेजकर आवश्यक कार्यवाही शीघ्रता से सम्पन्न की जा सकती है।

7. **प्रारम्भिक अनुच्छेद (Opening Paragraph) :** प्रारम्भिक अनुच्छेद ही पत्र के प्राप्तकर्ता का ध्यान आकर्षित करता है और उसे सम्पूर्ण पत्र पढ़ने को बाध्य करता है। अतः इस अनुच्छेद को बहुत ही सोच-समझ कर लिखना चाहिये। प्रायः इस अनुच्छेद में उस पत्र का सन्दर्भ व तिथि लिखी जाती है जिसका यह उत्तर है। यह अनुच्छेद नम्रता तथा हृदयग्राही गुणों से परिपूर्ण होना चाहिये।

विक्रय पत्रों के सम्बन्ध में तो विशेष सावधानी बरतनी चाहिये। इस अनुच्छेद से पाठक के दिल में रुचि पैदा होनी चाहिये अन्यथा वह पत्र रद्दी की टोकरी में फेंक देगा। इसमें पाठक की भावना को पर्याप्त प्रतिष्ठा एवं समर्थन मिलना चाहिये, तभी पाठक को प्रभावित किया जायेगा। बुक्ले के अनुसार, "प्रारम्भिक अनुच्छेद आपके भावी ग्राहकों के विचारों को सही दिशा देने का अवसर है। यह आपकी नीतियों का मार्ग निर्धारण करता है, यह वह रक्षक है जो पाठक का मस्तिष्क आपके लिये तैयार करता है।" उदाहरणस्वरूप पत्र प्रारम्भ करने के लिये कुछ वाक्य नीचे दिये जा रहे हैं :

- (i) हमें आपका 1st मार्च, 2002 का क्रयादेश प्राप्त कर अत्यन्त प्रसन्नता है।
- (ii) आप द्वारा प्रेषित मूल्य-सूची कल प्राप्त हुयी, तदर्थ धन्यवाद।
- (iii) आप द्वारा प्रेषित विस्तृत सूचना के लिये हम आपके आभारी हैं।
- (iv) हमें यह सूचित करते हुये प्रसन्ता है कि....

8. **पत्र का मुख्य भाग (The Body of the Letter) :** यह वह भाग है जिसमें पत्र की मुख्य विषय वस्तु का वर्णन किया जाता है। इस भाग में सरलता एवं स्पष्टता को विशेष महत्व देना चाहिये। लिखते समय लेखक को इस भाग के सम्बन्ध में पूर्ण आश्वस्त हो जाना चाहिये कि जो कुछ लिखा जा रहा है उन्हें पाठक समझ जायेगा।

पत्र का यह भाग लेखक के मूल विचारों से ओत-प्रोत होता है। इसे 'पत्र का दिल' की संज्ञा भी दी जाती है। पत्र के मुख्य भाग को विभिन्न अनुच्छेदों में विभक्त किया जा सकता है। प्रत्येक विचार एवं विषय को अलग-अलग अनुच्छेदों में लिखना चाहिये।

विक्रय-पत्रों में मुख्य भाग को इस प्रकार लिखना चाहिये कि इसका प्रथम अनुच्छेद पाठक के दिल में रुचि पैदा करे, द्वितीय इच्छा जागृत करे तथा तृतीय अनुच्छेद पाठक को पत्र के अनुसार करने को बाध्य करे। तभी

"The opening is your opportunity to guide the thoughts of your prospect in to the proper channels. It is the way paver for your proposition, the advance guard that makes receptive the mind of your reader."
-Earle A. Buckley: How to

वह एक अच्छा विक्रय-पत्र होगा।

व्यावसायिक लेखन,
वाणिज्यक पत्र,
व्यावसायिक रिपोर्ट एवं
मौखिक संमोषण

पत्र के मुख्य भाग को विभिन्न अनुच्छेदों में विभक्त किया जा सकता है, परन्तु उसमें एक्यता बनी रहनी चाहिये। एक अनुच्छेद किसी एक उद्देश्य के सन्दर्भ में होना चाहिये अन्यथा पत्र का मूल उद्देश्य पूरा नहीं हो सकेगा। साथ ही साथ इस भाग की भाषा बनावटी नहीं होनी चाहिये। बनावटी भाषा पाठक के मन में पत्र को पढ़ने की रुचि पैदा करने में असमर्थ रहेगी।

9. **अन्तिम अनुच्छेद (Closing Paragraph) :** यह अनुच्छेद सम्पूर्ण पत्र को संवारने (Finishing touch) के लिये लिखा जाता है। यह अनुच्छेद प्राप्तकर्ता का अपने पक्ष में (Positive) मत प्राप्त होने की आशा से लिखा जाता है। अन्तिम अनुच्छेद में निम्न वाक्य में से आवश्यकतानुसार प्रयोग किया जा सकता है :

- (i) हमें आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि आप सदा की भाँति सेवा का अवसर देते रहेंगे।
- (ii) प्रत्युत्तर अति शीघ्र प्राप्त होगा, ऐसी आशा है।
- (iii) हम आपके सहयोग के लिये आभारी हैं, और भविष्य में बनाये रखने की आशा करते हैं।
- (iv) आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास भी है कि आप हमें कष्ट देने के लिये क्षमा करेंगे।
- (v) हमें आशा है कि आप इस ओर पर्याप्त ध्यान देंगे।

10. **पत्र का अन्त (The Close) :** पत्र के इस भाग में कुछ शब्दों के प्रयोग से प्राप्तकर्ता का आदर किया जाता है। ये शब्द 'भवदीय', 'आपके विश्वासपात्र', 'आपके शुभाकांक्षी' इत्यादि हैं। अधिक प्रचलन में भवदीय (Yours faithfully or your Sincerely) है। इनमें से कोई भी शब्द पत्र के अन्त में दायीं ओर लिखा जाता है।

11. **हस्ताक्षर (The Signature) :** पत्र का सत्यापन करने हेतु पत्र-लेखक के हस्ताक्षर होने आवश्यक हैं। 'पत्र का अन्त' वाले भाग के ठीक नीचे हस्ताक्षर का स्थान होता है। हस्ताक्षर स्याही से ही करनी चाहिये। यदि पत्र टाइप किया हुआ हो तो भी पत्र पर हस्ताक्षर हाथ से ही करना चाहिये। हस्ताक्षर अस्पष्ट होने की दशा में हस्ताक्षरकर्ता का नाम हस्ताक्षर के ठीक नीचे लिखा जा सकता है। हस्ताक्षर करने के सम्बन्ध में निम्न आवश्यक बातें ध्यान में रखनी चाहिये :

(1) एकल व्यापारी अथवा एक व्यक्ति की ओर से पत्र लिखा जाता है तो वही अपने पत्रों में हस्ताक्षर करता है। जैसे :

(a) भवदीय

चुकने के बाद हस्ताक्षर होने आवश्यक है।

16. सीमान्त हॉशिया (Margin) : पत्र के मुख्य अंगों में 'हॉशिया' भी है। यह पत्र के बायीं ओर छोड़ा जाता है। इससे निम्न लाभ हैं :

- (i) पत्र की सुन्दरता बढ़ती है।
- (ii) इसमें संस्था की शाखाओं का नाम दिया जा सकता है।
- (iii) आजकल बहुत सी संस्थायें अपने द्वारा विक्रय की जाने वाली वस्तुओं का ब्लॉक बनवाकर इसमें छपवाती हैं। अतः विज्ञापन के साधन का कार्य करता है।
- (iv) पत्र फाइल करते समय लिखित अंश फाइल में दबता नहीं है।
- (v) आवश्यक बातें पत्र के हॉशिये में लिखी जा सकती हैं।

2.7 व्यावसायिक रिपोर्ट : आशय, उद्देश्य, प्रकार, महत्व एवं स्वरूप (Business Report : Meaning, Objectives, Kinds, Importance and Format)

आधुनिक व्यावसायिक संगठनों के आकार एवं गतिविधियों में वृद्धि के साथ ही लिखित संचार (Written Communication) की आवश्यकता में भी वृद्धि हुई है। शीर्ष प्रबन्धन भी विभिन्न विषयों पर विशेषज्ञों की रिपोर्ट पर निर्भर रहने लगा है। एक रिपोर्ट वास्तव में किसी घटना, कार्य की प्रगति एवं व्यावसायिक गतिविधि का एक व्यवस्थित प्रस्तुतिकरण है। यह किसी परिणाम, घटना, गुणवत्ता, परिस्थिति, प्रगति या रिकार्ड के विश्लेषण का लिखित विवरण है। बहुत से व्यावसायिक निर्णयों का आधार यह रिपोर्ट ही होती है। यहाँ यह बात ध्यान में रखना चाहिये कि बिना तथ्यात्मक आंकड़ों के अपने विचार व्यक्त करना रिपोर्ट नहीं है।

एक रिपोर्ट, वास्तव में एक अधिकारिक दस्तावेज होती है, जो प्रयोगकर्ता/पाठक को तथ्यात्मक सूचना देती है। यह अनुसंधान एवं विश्लेषण करती है, जिससे आगे चलकर निर्णय, सारांश एवं संस्तुति बनाई जा सके। आंकड़े वास्तविक, सम्पूर्ण तथा सुलभ एवं विश्लेषण योग्य होने चाहिये, क्योंकि ये व्यवसाय के लिए मूल्यवान रिकार्ड होते हैं। इनका उपयोग भविष्य में भी किया जा सकता है। एक सम्पूर्ण एवं विश्लेषणात्मक रिपोर्ट में भूत, वर्तमान एवं भविष्य अर्थात् आगे के लिए संस्तुति, सभी का समावेश होना चाहिये।

व्यवसायिक रिपोर्ट के उद्देश्य (Purpose of Business Reports) :

एक रिपोर्ट निम्नलिखित उद्देश्यों को पूरा करती है :

1. यह प्रबन्धन के सम्मने तथ्यात्मक सूचना प्रस्तुत करती है।

2. यह भविष्य के लिए तथ्य एवं परिणाम तथा अनुसंधान एवं विश्लेषण सामग्री प्रस्तुत करती है।
3. यह अंशधारियों, उपभोक्ताओं, लेनदारों एवं सामान्य जनता के लिये महत्वपूर्ण जानकारी प्रस्तुत करती है।
4. यह भविष्य में प्रयोग करने हेतु संस्तुति करती है।
एक रिपोर्ट लिखित या मौखिक दोनों हो सकती है लेकिन एक लिखित रिपोर्ट ज्यादा वांछनीय है।

व्यावसायिक रिपोर्ट के प्रकार (Kinds of Business Report) :

रिपोर्ट प्रायः निम्न प्रकार की होती है :

1. औपचारिक रिपोर्ट (Formal Report) :

जब एक रिपोर्ट विधिक आवश्यकता अथवा आदेशानुसार तैयार की जाती है एवं एक प्रक्रिया के अन्तर्गत प्रस्तुत की जाती है तो इसे औपचारिक रिपोर्ट कहते हैं।

2. अनौपचारिक रिपोर्ट (Informal Report) :

यह एक लिखित संचार होता है जो बिना किसी निश्चित प्रक्रिया के तैयार की जाती है। ये पत्र के रूप में एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति के पास भेजी जाती है। अनौपचारिक रिपोर्ट दो प्रकार की होती है—

अ. सांविधिक रिपोर्ट

ब. गैर सांविधिक रिपोर्ट

अ. सांविधिक रिपोर्ट (Statutory Report) :

सांविधिक रिपोर्ट कुछ विधिक औपचारिकताओं को पूरा करने के लिए तैयार की जाती है जैसे कम्पनी अधिनियम, 1956 की आवश्यकतानुसार वार्षिक साधारण सभा में संचालकों की रिपोर्ट, अंकेक्षक की रिपोर्ट आदि प्रस्तुत करना। ऐसी सांविधिक रिपोर्ट का प्रारूप सम्बन्धित अधिनियम में दिया रहता है।

ब. गैर सांविधिक रिपोर्ट (Non Statutory Report) :

ऐसी रिपोर्ट कानूनी रूप से आवश्यक नहीं है वरन् प्रबन्धन के निर्देशानुसार तैयार की जाती है। ऐसी रिपोर्ट या तो नियमित रिपोर्ट या विशेष रिपोर्ट होती है। उदाहरण के लिए विक्रय विभाग से मासिक विक्रय रिपोर्ट मांगना। ऐसी रिपोर्ट एक नियमित रिपोर्ट कही जायेगी। लेकिन विशेष रिपोर्ट विशेषज्ञों द्वारा विशेष परिस्थितियों में तैयार की जाती है।

3. सूचनात्मक रिपोर्ट (Informational Report) :

इस प्रकार की रिपोर्ट का उद्देश्य किसी व्यावसायिक गतिविधि की

सूचना प्रदान करना होता है। इसमें कोई सुझाव नहीं होता है।

4. विश्लेषणात्मक रिपोर्ट (Analytical Report) :

ऐसी रिपोर्ट में तथ्य एवं उसका विश्लेषण दोनों होता है। इसके तथ्यों को वैज्ञानिक तरीके से प्रस्तुत किया जाता है। फिर उसका सारांश प्रस्तुत किया जाता है।

व्यावसायिक रिपोर्ट लिखने के दिशा निर्देश (Guidelines of Writing Business Report) :

सामान्यतया, व्यवसाय में दिन प्रतिदिन के कार्यों के सम्बन्ध में जो रिपोर्ट प्रस्तुत की जाती है उसमें कई कमियां होती हैं। रिपोर्ट तैयार करना मध्यम अथवा बड़े प्रतिष्ठानों के लिए अपरिहार्य होता है। इसलिए कहा जाता है कि एक अच्छी रिपोर्ट तैयार करना एक कला है। रिपोर्ट इस प्रकार तैयार की जानी चाहिये कि यह जिसके लिए तैयार की गई है उसे तुरन्त समझ में आ जाए। रिपोर्ट निबन्ध की तरह नहीं होनी चाहिए।

एक रिपोर्ट तैयार करने के लिए कुछ निश्चित नियम बनाना संभव नहीं है। निम्नलिखित दिशा निर्देश सामान्यतया एक रिपोर्ट तैयार करने में प्रयोग किये जाते हैं :

1. रिपोर्ट किसी निश्चित अधिकारी को सम्बोधित होनी चाहिए जैसे— प्रबन्ध निदेशक, निदेशक मण्डल आदि।
2. रिपोर्ट का एक संक्षिप्त एवं स्पष्ट शीर्षक होना चाहिए जिससे कि रिपोर्ट के बारे में एक दृष्टि में जाना जा सके।
3. चूंकि रिपोर्ट प्रायः किसी पाठक/पढ़ने वाले के अनुरोध पर तैयार की जाती है इसलिए इसे तैयार करने की शर्तें अवश्य लिखी होनी चाहिए, जिससे यह मालूम हो सके कि रिपोर्ट क्यों तैयार की गई है।
4. रिपोर्ट का मसौदा नियोजित तरीके से एवं तर्कसंगत तथा पैराग्राफ में बंटा होना चाहिए।
5. सुझाव यदि हो तो स्पष्ट एवं मोटे अक्षरों में लिखे होने चाहिए ताकि उन पर तुरन्त ध्यान दिया जाय। इस पर जिम्मेदार अधिकारी के हस्ताक्षर तिथि सहित होना चाहिए।

प्रस्तुतीकरण (Presentation) :

रिपोर्ट प्रायः टाइप की हुई, डुप्लीकेट कापी में अथवा छपी, जैसी भी आवश्यकता या उद्देश्य हो, तैयार की जाती है। रिपोर्ट का पारूप आकर्षक होना चाहिए अन्यथा यह अच्छा प्रभाव नहीं डालती है। रिपोर्ट को फाइल करने के लिए पृष्ठ पर उचित खाली जगह रखनी चाहिए। रिपोर्ट का प्रारूप

तैयार करने में प्रायः दो विकल्प रहते हैं :

- पत्र के रूप में रिपोर्ट, जिसका प्रारम्भ प्रिय महोदय/प्रिय सज्जनों के सम्बोधन से होता है।
- विवरण पत्र/विज्ञप्ति के रूप में रिपोर्ट जिसका प्रारम्भ प्रिय महोदय/प्रिय सज्जनों के सम्बोधन से होता है।

रिपोर्ट तैयार करने के बाद यदि यह ज्यादा पृष्ठों की है तो इसे आकर्षक तरीके से जिल्द करा लेना चाहिये, जिससे यह सुविधापूर्वक खोली एवं पढ़ी जा सके।

रिकार्ड एवं रिपोर्ट में सम्बन्ध : (Relation between Record and Report)

रिकार्ड से आशय किसी व्यावसायिक संस्थान के क्रिया कलापों का लिखित या चित्र आदि के रूप में साक्ष्य। रिकार्ड के अन्तर्गत नोटिस, पत्र, मुद्रित पत्र, रिपोर्ट, बीजक, प्रमाणक, कार्यवाही का विवरण, खाता पुस्तकें, चित्र आदि शामिल हैं। रिकार्ड को कई तरह से विभाजित किया जा सकता है जैसे कार्मिक रिकार्ड, पत्र व्यवहार रिकार्ड, विधिक रिकार्ड, लेखांकन रिकार्ड, विक्रय रिकार्ड, आदि।

रिपोर्ट शब्द का प्रयोग विभिन्न अर्थों में होता है। उदाहरण के लिए एक सभा की रिपोर्ट में, सभा में क्या क्या घटित हुआ, इसका विवरण होता है। यह रिपोर्ट वर्णनात्मक रूप में होती है, जिसमें सभा की कार्यवाही का भूतकाल में वर्णन होता है। एक दूसरे अर्थ में रिपोर्ट लिखित संवहन के रूप में होती है यह ऐसे व्यक्ति द्वारा तैयार की जाती है, जो उस मुद्दे/विषय का विशेषज्ञ होता है और वह रिपोर्ट के माध्यम से अपने विचार/सुझाव देता है। रिपोर्ट नियंत्रण पत्र के रूप में भी प्रयोग की जाती है प्रायः प्रबन्धक गण अपने अधीनस्थों को अपनी उपलब्धियों के बारे में साप्ताहिक या मासिक रिपोर्ट तैयार करने के लिए कहते हैं।

रिपोर्ट और रिकार्ड के बीच एक निश्चित सम्बन्ध होता है। रिपोर्ट प्रायः रिकार्ड का अंग होते हैं क्योंकि उनका प्रयोग भविष्य में सन्दर्भ के लिए या नियंत्रण के लिए होता है। रिपोर्ट में दी गई सूचनायें व्यावसायिक नीति निर्माण में बहुत सहायक होती हैं। इसीलिए रिपोर्ट को रिकार्ड का अंग माना जाता है। एक अच्छी रिपोर्ट में भूत, वर्तमान एवं भविष्य की समस्याओं को सम्मिलित किया जाता है और यह संस्थान के लिए मूल्यवान रिकार्ड माने जाते हैं।

रिपोर्ट का महत्व (Importance of Report) :

1. निर्णयन में : व्यवसाय, उद्योग अथवा सरकार के द्वारा लिये गये महत्वपूर्ण निर्णय रिपोर्ट में दी गई सूचनाओं एवं सुझावों के आधार पर

ही होते हैं

2. **नियोजन में सहायक :** अधिकारियों को अपने कार्य निष्पादन हेतु नियोजन करने में रिपोर्ट सहायक होती है जिससे वह मनुष्य, सामग्री आदि के बारे में सही सूचना प्राप्त करते हैं।
3. **सत्य एवं सटीक जानकारी :** रिपोर्ट सूचनाओं एवं तथ्यों की सटीक एवं विश्लेषणात्मक जानकारी देती है।
4. **बड़े संस्थानों के लिए सहायक :** सभी बड़े संस्थानों में प्रबन्धन को इस बात की जानकारी रिपोर्ट से ही मिलती है कि दूसरे लोग क्या कर रहे हैं।
5. **नियंत्रण के पत्र :** कुछ रिपोर्ट संस्थाओं में नियंत्रण पत्र के रूप में प्रयोग की जाती है और उन्हीं के आधार पर सुधारात्मक कार्यवाही की जाती है।

रिपोर्ट के स्वरूप (Form of Report) :

रिपोर्ट का स्वरूप इसके उद्देश्य के अनुसार बदलता रहता है फिर भी एक औपचारिक रिपोर्ट में निम्नलिखित बिन्दु होने चाहिये :

1. **विषय प्रवेश (Introduction) :** यहां पर रिपोर्ट का उद्देश्य एवं नाम दिया जाता है।
2. **विभाजन (Division) :** रिपोर्ट का विभाजन इस प्रकार किया जाता है जिससे उसको पढ़ना आसान हो।
3. **सम्बोधन (Address) :** रिपोर्ट किसी व्यक्ति या संस्था को अवश्य सम्बोधित होनी चाहिए।
4. **विषय सामग्री की सारिणी (Table of Contents) :** यदि रिपोर्ट काफी लम्बी हो तो उसके विभिन्न विषय एवं अध्याय पृष्ठ संख्या के साथ देना चाहिए।
5. **निष्कर्ष (Findings) :** रिपोर्ट के इस भाग में निष्कर्ष दिया जाता है। जो सारणी, चित्र, चार्ट आदि के रूप में हो सकता है।
6. **सुझाव (Recommendations) :** रिपोर्ट के इस भाग में विश्लेषण एवं अध्ययन के आधार पर, सुझाव दिये जाते हैं।
7. **संक्षेप (Summary) :** रिपोर्ट के इस भाग में पूरी रिपोर्ट का संक्षिप्त विवरण दिया जाता है।
8. **परिशिष्ट (Appendix) :** रिपोर्ट के परिशिष्ट भाग में सांख्यिकीय तथ्य, सारणी, ग्राफ, व्यक्तियों तथा साक्ष्यों की सूची दी जाती है। परिशिष्ट की सहायता से रिपोर्ट के निष्कर्ष एवं सुझावों को बताना आसान

हो जाता है।

9. **हस्ताक्षर एवं तिथि (Signature and Data) :** रिपोर्ट पर तिथि एवं उसे बनाने वाले के हस्ताक्षर अवश्य होने चाहिये।

10. **रिपोर्ट का प्रारूप (Layout of the Report) :** रिपोर्ट या तो पत्र के रूप में या विवरणात्मक स्वरूप में तैयार की जाती है। इसके उदाहरण नीचे दिये जा रहे हैं :

अ. पत्र के प्रारूप में रिपोर्ट (Report in the Form of a Letter Form) :

इस प्रकार की रिपोर्ट प्रारम्भिक सम्बोधन जैसे 'प्रिय महोदय' से प्रारम्भ होती है और 'भवदीय' से समाप्त होती है। इस प्रकार की रिपोर्ट का प्रारूप इस प्रकार हो सकता है।

पता.....

तिथि.....

प्रेषित : जिसको दी जानी है।

प्रिय महोदय

विषय.....

विषय सामग्री :

1. सन्दर्भ (Reference)
2. निष्कर्ष (Findings)
3. टिप्पणी (Observations)
4. सुझाव (Recommendations)

भवदीय

(हस्ताक्षर)

अधिकारिक पद नाम

यदि रिपोर्ट काफी लम्बी हो तो पैराग्राफ की क्रम संख्या दी जानी चाहिये।

ब. विवरणात्मक स्वरूप में रिपोर्ट (Report in the form of a Memorandum) :

इस प्रकार की रिपोर्ट अनौपचारिक एवं सक्षिप्त होती है। यह सम्बोधन के साथ प्रारम्भ तथा शुभकामनाओं के साथ समाप्त होती है। यह

प्रायः एक ही संस्थान के विभिन्न विभागों के बीच प्रयोग की जाती है। यह विभिन्न विभागों के बीच स्मरण पत्र के रूप में, रिकार्ड के रूप में एवं सभा के विचार विमर्श के रिकार्ड के रूप में प्रयोग की जाती है।

विवरणात्मक स्वरूप रिपोर्ट का प्रारूप : (Specimen of a Memorandum form of Report)

एक कम्पनी के संचालक ने अपने एकाउन्टेंट से अपनी कम्पनी में लेखा मशीनों को लगाने के बारे में अपनी रिपोर्ट देने को कहा, जो संचालक मण्डल के सामने रखी जायेगी निम्न है :

सितम्बर 1, 2009

संचालक मण्डल,

ए0बी0सी0 कम्पनी लिमिटेड

प्रिय महोदय

सन्दर्भ : लेखा विभाग में लेखांकन मशीनों का प्रयोग

आपके निर्देश पर मैंने लेखा विभाग में लेखांकन मशीनों के प्रयोग के सन्दर्भ में विश्लेषण करने के बाद निम्नलिखित निष्कर्ष एवं सुझाव निकाले हैं :

लेखांकन मशीने एक आधुनिक यांत्रिक उपकरण हैं, जो प्रायः बड़े प्रतिष्ठानों में लेखा करने, विवरण तैयार करने, गणना के लिए प्रयोग की जाती है। इन मशीनों के प्रयोग से निम्न लाभ होते हैं :

1. **श्रम की बचत (Saving of Labour) :** लेखा कार्यों के मशीनीकरण से न केवल मानवीय श्रम की बचत होती है बल्कि ये किफायती एवं उत्पादकता बढ़ाती हैं।
2. **कार्य में तेजी (Speeding up Work) :** मानवीय कार्य की अपेक्षा मशीनों से तेजी से कार्य किये जा सकते हैं। मशीन से कार्य करने से कार्य की मात्रा भी ज्यादा होती है।
3. **कार्य में निपुणता (Work Efficiency) :** मशीन से कार्य होने पर पर कार्य में गलती कम होती है जबकि मानवीय कार्यों में ऐसा नहीं है।
4. **स्टाफ/कर्मचारियों पर अच्छा प्रभाव (Good Effect on Staff) :** लेखा विभाग में कार्य नीरस एवं पुनरावृत्ति वाला होता है ऐसे में मशीन इस समस्या से छुटकारा दिला सकती है इससे कर्मचारियों पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

लेखांकन मशीनों के उपयोग से मेरी राय में अनेक लाभ होंगे। कार्य की गुणवत्ता बढ़ेगी तथा साथ ही कार्य की लागत भी घटेगी। लाभ

बढ़ने से बोनस एवं लाभांश अधिक दिया जा सकता है। मशीनों के प्रयोग से लेखा रिकार्ड हमेशा अद्यतन (Upto date) रहते हैं तथा उसमें गलती की संभावना भी कम हो जाती है। इस प्रकार कार्य कम नीरस तथा कर्मचारियों पर कम दबाव वाले होंगे, जिससे कि हम अपने ग्राहकों की ज्यादा अच्छी सेवा कर सकेंगे।

उपरोक्त विवरण के आधार पर मैं लेखा विभाग में मशीनों के उपयोग का निर्णय लेने से सहमत हूँ। आशा है इस सन्दर्भ में अनुकूल निर्णय लिया जायेगा।

भवदीय

XYZ

लेखा अधिकारी

2.8 मौखिक सम्प्रेषण : आशय, लाभ, दोष एवं ध्यान देने योग्य बातें (Oral Communication : Meaning, Advantages, Disadvantages and Pre-requisites)

मौखिक सम्प्रेषण से आशय : (Meaning of Oral Communication)

जब सन्देश शब्दों को मुख से उच्चारण करके प्रेषित किया जाता है तो ऐसे सन्देश वाहन को मौखिक सम्प्रेषण कहते हैं। मौखिक सम्प्रेषण अत्यन्त प्रभावशाली सम्प्रेषण माना जाता है। प्रबन्ध-क्षेत्र के प्रसिद्ध विद्वान लारेन्स एप्पले का मत है, "मौखिक शब्दों द्वारा पारस्परिक सम्प्रेषण, सम्प्रेषण की सर्वोच्च कला है। (Interpersonal Communication through the spoken words is the highest art of Communication)। वाइले तथा हार्टी (Wylie and Harty) ने कारण सहित मौखिक सन्देशवाहन का महत्व इस प्रकार स्पष्ट किया है— "उच्चारित शब्द सम्प्रेषण की सर्वोत्तम विधि है, क्योंकि इसमें संकेत (Gestures), वाणी का रूप भी साथ होता है, साथ ही साथ प्राप्तकर्ता प्रश्न भी कर लेता है। इसके अतिरिक्त मौखिक सम्प्रेषण अन्य माध्यमों की अपेक्षा अधिक प्रभावपूर्ण माने जाते हैं। इसमें कर्मचारियों को हिस्सेदारी (Participation) की भावना का आभास मिलता है तथा उनको संस्था में मान्यता प्राप्त होती है। मौखिक सम्प्रेषण से कर्मचारियों में संस्था के प्रति अपनत्व की भावना का भी विकास होता है।

आज व्यवसाय में अनेक कर्मचारी ऐसे हैं जो मौखिक सम्प्रेषण का ही प्रयोग करते हैं। विक्रयकर्ता, टेलीफोन आपरेटर, स्वागतकर्ता आदि का कार्य मौखिक सम्प्रेषण पर ही चलता है। मौखिक सन्देशवाहन में अनेक साधनों का प्रयोग किया जाता है, जैसे— साक्षात्कार, मीटिंग्स, कॉन्फ्रेंस, रेडियो,

टेलीफोन, टेलीविजन वार्ता इत्यादि।

प्रभावशाली मौखिक संप्रेषण के सम्बन्ध में आवश्यक बातें :

(Requirements for Effective Verbal Communication)

1. स्पष्ट उच्चारण (Clear pronunciation) : मौखिक संप्रेषण प्रायः इस कारण प्रभावहीन हो जाते हैं कि प्रेषक स्पष्ट रूप से शब्दों का उच्चारण नहीं कर पाता है। जब प्रेषक जबड़े, जबान अथवा होठों को ठीक प्रकार से हिला-डुला नहीं पाता है, तो शब्दों का उच्चारण अस्पष्ट हो जाता है। अधिक तीव्रगति से बोलने से भी शब्दों का उच्चारण अस्पष्ट हो जाता है। अतः शब्दों के बीच आवश्यक समयान्तर देकर शब्दों का उच्चारण करना चाहिये। मौखिक संप्रेषण की सफलता के लिये शब्दों का स्पष्ट उच्चारण प्राथमिक आवश्यकता है।

2. उचित शब्दों का चयन (Selecting Right Words) : कभी-कभी प्रेषक भाषा का पूरा ज्ञान न होने के कारण शब्दों के चयन में गलती कर देता है तथा शब्दों का प्रयोग यथोचित रूप से नहीं कर पाता है। इससे श्रोता गलत अर्थ लगा बैठते हैं। अतः शब्दों का यथोचित प्रयोग करना आवश्यक है। व्यावसायिक एवं तकनीकी भाषा का प्रयोग तभी करना चाहिये जबकि श्रोता भी पूर्णरूप से उस भाषा का ज्ञान रखते हों।

3. मधुरता (Sweetness) : प्रेषक को मधुर भाषा का प्रयोग करना चाहिये। निर्देश देते समय मधुरता का विशेष ध्यान रखना चाहिये परन्तु इसमें कृत्रिमता नहीं आनी चाहिये, अन्यथा सन्देश प्रभावहीन हो जायेगा।

मौखिक संप्रेषण के लाभ (Advantages of Oral Communication) :

1. समय, श्रम एवं धन की बचत : (Saves Time, Labour and Money) मौखिक संप्रेषण में शब्दों के उच्चारण मात्र से ही कार्य चल जाता है। उनको लिपिबद्ध करने की आवश्यकता नहीं रहती है। परिणामस्वरूप इसमें लिखने में लगने वाला समय एवं श्रम तथा कागज, स्याही तथा स्टेशनरी की बचत हो जाती है।

2. प्रभावपूर्ण (Effective) : मौखिक सन्देश बहुत अधिक प्रभावशाली होते हैं, क्योंकि इसमें व्यक्तिगत सम्पर्क होता है। प्रेषक अपनी वाणी के प्रवाह तथा मुखमण्डल द्वारा श्रोता को प्रभावित कर देता है। साथ ही इसमें अन्य शारीरिक हावभाव द्वारा श्रोता को प्रभावित किया जा सकता है।

शीघ्रता (Promptness) : मौखिक सन्देश शीघ्र पहुँचाये जा सकते हैं।

इसके विपरीत लिखित सम्प्रेषण को लिखने में तथा लिखित सूचनाओं को पहुँचाने में अपेक्षाकृत अधिक समय लगता है। मौखिक सम्प्रेषण में समय की बचत होती है। प्रत्येक बात को स्पष्ट रूप से समझने में भी समय अधिक नहीं लगता है, क्योंकि आमने-सामने आसानी से प्रश्नोत्तर किये जा सकते हैं।

4. **सन्देश की प्रतिक्रिया का ज्ञान (Knowledge of Reaction) :** मौखिक सन्देश देने का एक महत्वपूर्ण लाभ यह है कि प्रेषक को सन्देश की प्रतिक्रिया का शीघ्र ज्ञान हो जाता है। प्रेषक को यह तुरन्त ज्ञात हो जाता है कि सन्देश प्राप्तकर्ता सन्देश को समझ पाया है अथवा नहीं? यदि समझ पा रहा है तो क्या उसके अनुरूप वह कार्य कर रहा है, अथवा नहीं इत्यादि बातों का ज्ञान हो जाता है। सन्देश को गहनता से प्राप्तकर्ता को भली प्रकार समझाया जा सकता है।

5. **तत्काल भ्रम निवारण (Avoids Misunderstanding at the Spot) :** मौखिक सन्देशों में भ्रम का निवारण तत्काल हो जाता है। वास्तव में, कोई भी सन्देश तभी पूर्ण माना जाता है जबकि सन्देश प्राप्तकर्ता सन्देश को ठीक उसी रूप में समझे जिस रूप में वह प्रेषक द्वारा किया गया है। यदि प्रेषक अपनी बात ठीक प्रकार से नहीं समझ पाता है तो वह प्रश्नोत्तर करके भ्रम का तत्काल निवारण कर सकता है।

6. **परस्पर सद्भावना एवं सहयोग (Mutual Goodfaith and Cooperation):** जब सन्देश का प्राप्तकर्ता अपने भ्रम का निवारण कर लेता है और प्रेषक को प्रतिक्रिया का निरन्तर ज्ञान होता रहता है तो इससे प्रेषक एवं प्राप्तकर्ता के बीच सद्भाव एवं सहयोग की भावना का स्वतः विकास हो जाता है।

7. **लोचपूर्ण (Elastic) :** मौखिक सम्प्रेषण लिखित सम्प्रेषण की अपेक्षा अधिक लोचपूर्ण है। इसमें विचारों की स्पष्टता के साथ अधिक विस्तृत रूप से समझाया जा सकता है। सम्प्रेषण में प्रश्नोत्तर की सुविधा प्राप्त होने से इसमें लोच और बढ़ जाती है। इसी प्रकार मौखिक रूप से दिये गये आदेशों को आसानी से परिवर्तित किया जा सकता है जबकि लिखित आदेशों में परिवर्तन करना इतना सरल नहीं होता है।

8. **शीघ्र एवं ठोस निर्णय (Quick and Sound Decisions) :** मौखिक सम्प्रेषण के प्रयोग में जो निर्णय लिये जाते हैं वे शीघ्र एवं ठोस निर्णय होते हैं। उदाहरणार्थ, एक मीटिंग में निर्णय लेना है तो इस मीटिंग में उपस्थित सभी अथवा अधिकांश सदस्य अपने-अपने तर्क द्वारा प्रत्येक बात को सही

अथवा गलत ठहराने का प्रयास करेंगे। इन विभिन्न तर्कों को ध्यान में रख कर ही निर्णय लिया जायेगा। अतः इससे ठोस निर्णय होने की ही सम्भावना है। इस प्रकार विभिन्न तर्कों की उपलब्धता से तत्काल निर्णय में सहायता मिलेगी।

9. **उत्पादकता में वृद्धि (Increases Productivity)**: मौखिक सम्प्रेषण सन्देशों को तत्परता से प्राप्तकर्ता के पास पहुँचाता है। समझने में समय भी नहीं लगता है। परिणामस्वरूप, क्रियान्वयन भी शीघ्र हो जाता है जिसके कारण उत्पादकता में वृद्धि होती है।

10. **प्रबन्धकीय योग्यता का विकास (Development of Managerial Skill)**: मौखिक रूप से सन्देशों के आदान-प्रदान से निम्न वर्ग के कर्मचारियों में भी प्रबन्धकीय योग्यता का विकास होने लगता है। भविष्य में आवश्यकता पड़ने पर इनकी उच्च सूझबूझ में संस्था को लाभ मिलता है।

मौखिक सम्प्रेषण के दोष (Disadvantages of Oral Communication) :

यद्यपि मौखिक सम्प्रेषण से व्यवसाय का कार्य सुगम हो जाता है और सभी कार्य सरल रूप से पूरे हो जाते हैं, परन्तु अनेक ऐसे अवसर आते हैं जब मौखिक सम्प्रेषण अनुपयुक्त हो जाते हैं, क्योंकि इसके कुछ दोष हैं, जिनका विवेचन निम्न प्रकार है :

1. **सन्देश प्राप्तकर्ता की उपस्थिति आवश्यक (It Requires presence of the Receiver)** : मौखिक सम्प्रेषण से सन्देश तभी प्रेषित किये जा सकते हैं जबकि सन्देश प्राप्तकर्ता सन्देश प्राप्त करने के लिये उपलब्ध हों यदि वह उस समय उपलब्ध न हों तो मौखिक सम्प्रेषण सम्भव नहीं होता है।

2. **खर्चीला (Expensive)** : मौखिक सम्प्रेषण अन्य सम्प्रेषण की विधियों की तुलना में अधिक खर्चीला होता है। टेलीफोन पर बात करने में अथवा अन्य साधनों के माध्यम से बात करने पर काफी खर्चा पड़ता है। प्रेषक एवं प्राप्तकर्ता के मध्य अधिक दूरी होने पर आपस में मिलना भी अधिक व्ययशील हो जाता है। इसके विपरीत, लिखित सम्प्रेषण में अधिक खर्च नहीं पड़ता है।

3. **अस्पष्टता का भय (Fear of Ambiguity)** : मौखिक सम्प्रेषण से अस्पष्टता का भय बढ़ जाता है। कभी-कभी यह सम्भव है कि प्रेषक शब्दों के उच्चारण में गलती कर दे अथवा यथोचित शब्दों का प्रयोग न कर सके। ऐसी स्थिति में सन्देश अस्पष्ट हो जायेगा। कभी-कभी ऐसा भी हो सकता है कि प्रेषक एवं प्राप्तकर्ता के बौद्धिक स्तर में अन्तर के कारण प्राप्तकर्ता प्रेषक के समान अर्थ नहीं लगा पाता है। परिणामस्वरूप, प्राप्तकर्ता सन्देश को अस्पष्ट रूप

से समझ लेता है और संप्रेषण का उद्देश्य ही पूरा नहीं होता है।

4. **लिखित साक्ष्य का अभाव (Lack of Written Evidence) :** मौखिक संप्रेषण का एक प्रमुख दोष यह है कि इसमें लिखित साक्ष्य का अभाव पाया जाता है। लिखित साक्ष्य के अभाव में आवश्यकता पड़ने पर किसी भी बात को प्रमाणित करना कठिन हो जाता है, जबकि लिखित संप्रेषणों को प्रमाण के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

5. **लम्बे संवादों के लिये अनुपयुक्त (Unfit for Lengthy Communications) :** कुछ सन्देश बहुत लम्बे होते हैं और उनको स्थायी रूप से रखने की भी आवश्यकता होती है, जैसे— संस्था की नीतियाँ, अध्यक्षीय भाषण, संचालकों का प्रतिवेदन, किसी कार्यवाही की रिपोर्ट इत्यादि। इनके लिये मौखिक संप्रेषण का प्रयोग उचित नहीं होता है। ये इतने लम्बे होते हैं कि उन्हें एक साथ सुनकर ध्यान में रखना भी कठिन होता है।

6. **टालम-टोली की भावना का विकास (Buck-Passing) :** प्रायः देखा जाता है कि मौखिक रूप से सन्देश देने पर टालम-टोली की भावना बढ़ जाती है। उदाहरणार्थ एक अधिकारी किसी कर्मचारी को मौखिक संप्रेषण से कार्य सौंपता है और यदि वह उस कार्य को नहीं कर पाता है तो वह यह बहाना बना सकता है कि उसे वह कार्य सौंपा ही नहीं गया था। इस प्रकार कार्यों का निष्पादन यथा समय नहीं हो पाता है।

7. **भावी सन्दर्भ का अभाव (Lack of Future Reference) :** मौखिक सन्देश अस्थायी होते हैं उनका रिकार्ड नहीं रहता है। अतः भविष्य में उचित रूप से सन्दर्भ नहीं दिया जा सकता है।

8. **कार्य में बाधाएँ (Obstacles in the Work) :** यदि एक व्यक्ति संस्था छोड़कर अन्यत्र चला जाता है तो मौखिक सन्देश भी उसी के साथ चला जाता है। ऐसी स्थिति में कार्य में बाधा उत्पन्न हो जाती है। भविष्य में यदि उसके स्थान पर कोई अन्य व्यक्ति आता है तो उस नये व्यक्ति को सभी सन्देश पुनः देने पड़ते हैं। अतः कार्यों के यथा समय होने तथा निष्पादन में बाधा पड़ती है।

9. **सोचने का अपर्याप्त समय (Lack of Time for Thinking) :** मौखिक संप्रेषण में सोचने का कम समय मिलता है, जबकि लिखित सन्देशवाहनों में सोचने का पूर्ण समय मिल जाता है। कभी-कभी जल्दी-जल्दी में आवेशवश कुछ कटु शब्द निकल सकते हैं उसका आपसी सम्बन्धों पर बुरा प्रभाव पड़ सकता है। इसी प्रकार सन्देश प्राप्तकर्ता को भी सोचने विचारने का पर्याप्त समय नहीं मिल पाता है।, फलतः वह पर्याप्त पूरक प्रश्न भी नहीं कर पाता है।

लिखित सम्प्रेषण की अपेक्षा मौखिक सम्प्रेषण श्रेष्ठ है (Oral Communication is better than written communication) :

लिखित सम्प्रेषण की अपेक्षा मौखिक सम्प्रेषण अधिक प्रभावशाली, प्रेरक तथा उपयोगी सिद्ध होता है। यदि प्रबन्ध किसी विचार को भली प्रकार समझना चाहता है, कर्मचारियों को प्रभावित करना चाहता है तो इसका श्रेष्ठ उपाय कर्मचारियों से व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करना है। ऐसे सम्प्रेषण में द्विपक्षीय सम्प्रेषण की सभी विशेषतायें विद्यमान रहती हैं। इसमें सन्देश प्रेषक तथा सन्देश प्राप्त दोनों की अभिवृत्तियों, मनः स्थिति तथा प्रतिक्रियाओं का सुआयोजन सम्भव होता है। यह विधि इस बात की गारण्टी देती है कि सन्देश प्राप्त ने सन्देश को भली प्रकार समझ लिया है। मौखिक सम्प्रेषण में कुछ ऐसी विशेषतायें होती हैं जो लिखित सम्प्रेषण में बिल्कुल ही नहीं पायी जातीं, जैसे— ध्वनि का उतार—चढ़ाव, चेहरे के भावों का दर्शन और शारीरिक हाव—भाव का प्रदर्शन आदि। शोभना खण्डवाला के शब्दों में, “किसी व्यक्ति के मुखारविन्दु पर पड़े हुये बल अस्वीकृत को इतनी स्पष्ट भाषा में प्रकट करते हैं जो हजार शब्दों द्वारा भी उतने प्रभावशाली ढंग से प्रकट नहीं की जा सकती। इसी प्रकार कहने का ढंग या मनुष्य की वाणी भी कभी—कभी शब्दों से अधिक प्रभावशाली सिद्ध होती है।” हावभाव के माध्यम से सन्देश—प्रापक प्रेषक के हार्दिक मनोभावों का अधिक अच्छा अनुमान लगा सकता है। इसीलिये तो उेल बीच ने लिखा है कि, “मनुष्य हृदय से अधिक सोचते हैं और हृदय से ही अधिक ग्रहण करते हैं, शब्दों से उतना नहीं।”

संक्षेप में इन दोनों की तुलना पीछे दी गयी विशेषताओं के आधार पर उचित ढंग से की जा सकती है :

विशेषता	मौखिक सम्प्रेषण	लिखित सम्प्रेषण
1. शारीरिक हाव—भावों की अभिव्यक्ति	है	नहीं है
2. उत्तर—प्रत्युत्तर किये जाने की सुविधा	है	नहीं है
3. संवाद प्रेषक के हार्दिक भावों का अध्ययन करने की क्षमता एवं सुविधा	है	नहीं है
4. व्यक्तित्व का प्रभाव डालने की क्षमता	है	नहीं है
5. संवाद प्राप्त का ध्यान आकर्षित और केन्द्रित रखने की क्षमता	कम है	है
6. सम्प्रेषण में समय	अधिक लगता है	कम लगता है

7. अधिक व्यक्तियों को एक साथ सम्प्रेषण	किया जा सकता है (सभा के रूप में)	किया जाता सकता है (लिखित प्रपत्र वितरित करके)
8. स्पष्टता	विद्यमान रहती है	विद्यमान रहती है
9. सम्प्रेषण की प्रभाविकता	(वक्तृता शक्ति पर निर्भर है) कम स्थायी रहती है	(लेखन शक्ति पर निर्भर है) अधिक स्थायी है
10. अनौपचारिकता	इसमें अधिक बरती जा सकती है	अधिक सम्भव नहीं है
11. प्रतिपुष्टि	इसमें शीघ्र और अधिक सम्भव है	इसमें प्रतिपुष्टि में समय भी अधिक लगता है और कम सम्भव है।

मौखिक एवं लिखित सम्प्रेषणों के पारस्परिक गुण दोषों की तुलना से यह स्पष्ट है कि दोनों ही में अपनी-अपनी आधारभूत विशेषतायें हैं, तो कुछ विचारणीय खामियाँ भी हैं। यही कारण है कि एक ही प्रकार के सम्प्रेषण पर निर्भर नहीं रहा जा सकता। व्यवहार में प्रायः दोनों ही प्रकार के सम्प्रेषण अपनाये जाते हैं। मौखिक सम्प्रेषण वहाँ उपयोगी हैं जहाँ विषय जटिल और विवादपूर्ण हो, जिसे अन्तिम निर्णय से पूर्व विचार-विमर्श किया जाना आवश्यक हो, दी जाने वाली सूचना नैतिक प्रकृति की हो। अतः जब दोनों में से एक के चयन की स्थिति हो तो सन्देश की प्रकृति (गोपनीयता) तथा अपेक्षित समय आदि पर विचार कर लेना उचित होगा।

2.9 सारांश (Summary) :

वर्तमान व्यावसायिक वातावरण में अनेक ऐसे अवसर आते हैं जब नियमों, नीतियों, कार्यविधियों, उद्देश्यों, रिपोर्ट, प्रतिवेदनों, एजेण्डा एवं सूक्ष्म कर्मचारी समझौतों, वैधानिक दावों आदि का लिखित होना अतिआवश्यक होता है क्योंकि लिखित दस्तावेज पर एक अधिकृत व्यक्ति हस्ताक्षर करता है तो वह उसकी सत्यता एवं परिशुद्धता के प्रति जबाबदेह होता है। व्यावसायिक लेखन इन्हीं सब दस्तावेजों से सम्बन्धित होता है। व्यावसायिक लेखन में अनेक लाभ हैं वही इसके कुछ दोष भी हैं।

कीथ डेविस के अनुसार व्यावसायिक लेखन में सरल छोटे तथा प्रचलित शब्दों का प्रयोग करना चाहिये। व्यक्तिगत सर्वनामों का प्रयोग करना चाहिये। उदाहरणों चार्टों, सारिणी का प्रयोग करना चाहिये। वाक्य छोटे तथा एक्टिव वाइस में होने चाहिये। सार्थक शब्दों तथा तर्कपूर्ण विचारों को लिखना चाहिये।

जहां तक संभव हो विशेषणों एवं अलंकारों का प्रयोग नहीं करना चाहिये।

व्यावसायिक लेखन से अनेक तरह के लाभ भी हैं जैसे संदेश भेजने में कम खर्च, स्पष्टता, भविष्य के लिये सन्दर्भ, लिखित प्रमाण, कुछ विशेष दशाओं में आवश्यक लेकिन कुछ हानियां भी हैं जैसे—समय, श्रम एवं धन का अपव्यय, गोपनीयता भंग होने का भय, औपचारिकता के कारण विलम्ब, लाल फीताशाही, प्रभाव एवं भावना का तत्काल ज्ञान नहीं हो पाता। इतना होते हुये भी व्यावसायिक लेखन का बहुत महत्व है। लिखित व्यावसायिक सन्देश मात्र विक्रय के लिये, खोये हुये ग्राहकों को वापस लाने, नये ग्राहक बनाने विक्रेताओं को प्रोत्साहित करने, ख्याति का निर्माण करने, शिकायतों का समाधान करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

व्यवसाय छोटा हो या बड़ा, सभी में व्यापारिक पत्रों की आवश्यकता पड़ती ही है। प्रत्येक व्यावसायिक संस्था को अपने ग्राहकों, सप्लायर्स, सरकारी विभागों, से समय समय पर सूचनाओं का आदान प्रदान करना पड़ता है। व्यापारिक पत्र पूछताछ के लिये, आदेश भेजने के लिये, व्यापारिक सन्दर्भ के लिये, तकादे के लिये, शिकायतों एवं उनके समाधान आदि के लिये लिखे जाते हैं। व्यापारिक पत्र के बारे में कहा गया है कि यह व्यापार के लिये नये नये अवसर प्रस्तुत करता है। व्यापारिक पत्रों के बारे में डा० राबर्ट आर्नर के कथन हैं कि एक अच्छे व्यापारिक पत्र में सत्यता होना आवश्यक है। व्यापारिक पत्र को स्पष्ट, सम्पूर्ण, संक्षिप्त, विनम्र तथा प्रभावपूर्ण होना चाहिये। प्रसिद्ध विद्वान एल०ई० फ्रेली ने व्यापारिक पत्र के ढांचे के बारे में बताया है एक व्यापारिक पत्र का क्या स्वरूप होना चाहिये। इसका शीर्षक मुद्रित होना चाहिये, इस पर तिथि और सन्दर्भ क्रमांक अंकित होना चाहिये। इसमें पता भी मुद्रित होना चाहिये। अभिवादन के पश्चात विषय का शीर्षक देते हुये प्रारम्भिक अनुच्छेद में प्राप्तकर्ता का ध्यान आकर्षित करते हुये पत्र के मुख्य भाग में पत्र की मुख्य विषय वस्तु का उल्लेख करते हुये अन्तिम भाग में Finishing Touch दिया जाता है। अन्त में आदर के साथ प्रेषक को अपना हस्ताक्षर करना चाहिये। हस्ताक्षर के नीचे अपना नाम स्पष्ट रूप से लिखना चाहिये।

आधुनिक व्यावसायिक संगठनों के आकार एवं गतिविधियों में वृद्धि के साथ ही शीर्ष प्रबन्धन विभिन्न विषय विशेषज्ञों की रिपोर्ट पर निर्भर रहने लगा है। एक व्यावसायिक रिपोर्ट वास्तव में किसी कार्य की प्रगति, व्यावसायिक गतिविधि, घटना, परिणाम आदि का व्यवस्थित प्रस्तुतिकरण है। यह एक आधिकारिक दस्तावेज होता है जिसमें विश्लेषण के साथ ही सारांश एवं संस्तुति भी दी जाती है। व्यावसायिक रिपोर्ट औपचारिक एवं अनौपचारिक दोनों प्रकार की हो सकती है। व्यावसायिक रिपोर्ट सूचनात्मक एवं विश्लेषणात्मक भी हो

सकती है। रिपोर्ट लिखित संक्षिप्त एवं स्पष्ट शीर्षक की होनी चाहिये। यह नियोजित तर्क संगत तथा पैरा ग्राफ में बँटी होनी चाहिये इसमें आंकड़े विश्वसनीय एवं सत्य दिये जाने चाहिये। व्यावसायिक रिपोर्ट का व्यावसायिक निर्णयन में, नियोजन में, विश्लेषण में सभी बड़े व्यावसायिक संस्थानों के लिये बड़ी महत्वपूर्ण होती है।

मौखिक सम्प्रेषण अत्यन्त प्रभावशाली माना जाता है। लारेन्स एप्पले का मत है कि मौखिक सम्प्रेषण शब्दों द्वारा पारस्परिक सन्देशवाहन की सर्वोच्च कला है। मौखिक सम्प्रेषण में संकेत, वाणी एवं भावना का तुरन्त प्रभाव पड़ता है साथ ही प्रतिपुष्टि भी मालूम पड़ जाती है। इसीलिये मौखिक सम्प्रेषण तीव्रतम सम्प्रेषण का तरीका माना जाता है। मौखिक सम्प्रेषण में स्पष्ट उच्चारण, मधुरता एवं उचित शब्दों का चयन आवश्यक है। मौखिक सम्प्रेषण से अनेक लाभ भी प्राप्त होते हैं जैसे— समय, श्रम एवं धन की बचत, प्रभावपूर्ण, शीघ्र, प्रतिक्रिया का ज्ञान, तत्काल भ्रम निवारण, प्रबन्धन में शीघ्र निर्णयन तथा लोच पूर्ण होता है। इसीलिये आजकल व्यावसायिक जगत में अनेक क्रिया कलाप मौखिक सम्प्रेषण से सम्पन्न किये जाने लगे हैं। फिर भी मौखिक सम्प्रेषण की कुछ कमियाँ भी हैं जैसे— संदेश प्राप्तकर्ता की उपस्थिति आवश्यक है, शब्दों के गलत उच्चारण से भ्रम की स्थिति उत्पन्न हो जाती है, लिखित साक्ष्य का आभाव, लम्बे संवादों के लिये अनुपयुक्त, सोचने और निर्णय लेने के लिये अपर्याप्त समय आदि। फिर भी लिखित सम्प्रेषण की अपेक्षा मौखिक सम्प्रेषण को श्रेष्ठ माना गया है।

2.10 शब्दावली (Key Words) :

व्यावसायिक लेखन : व्यवसाय में लिखित सम्प्रेषण को व्यावसायिक लेखन कहते हैं। इसके अन्तर्गत नियम, नीतियाँ, बुलेटिन, हैण्डबुक, वार्षिक रिपोर्ट, एजेण्डा, मिनट्स आदि आते हैं।

व्यापारिक पत्र : विभिन्न व्यावसायिक संस्थाओं के मध्य होने वाले पत्र व्यवहार को व्यापारिक पत्र कहते हैं। इसके अन्तर्गत पूछताछ, आदेश, शिकायत, तकादे, भुगतान तथा सन्दर्भ में सम्बन्धित पत्र आते हैं।

व्यावसायिक रिपोर्ट : व्यावसायिक रिपोर्ट व्यवसाय की किसी घटना, कार्य की प्रगति, गुणवत्ता, प्रगति या रिकार्ड के विश्लेषण का लिखित विवरण होती है।

मौखिक सम्प्रेषण : सन्देश मुख से प्रेषित करने को मौखिक सम्प्रेषण कहते हैं। यह साक्षात्कार, मीटिंग्स, कान्फ्रेंस, रेडियो, टेलीविजन के द्वारा सम्पन्न होता है।

2.11 अभ्यास के लिये प्रश्न (Questions for Exercise) :

1. व्यावसायिक लेखन से आप क्या समझते हैं? इस का महत्व बताइये।
What do you mean by Business Writing? Discuss its importance.
2. व्यावसायिक लेखन में ध्यान देने योग्य बातों को बताइये।
Discuss the Pre requisites of Business Writing.
3. वाणिज्यक पत्रों का आशय एवं उनकी आवश्यकता समझाइये।
Discuss the meaning and need of Commercial letters.
4. वाणिज्यक पत्रों के प्रकार की विवेचना कीजिए तथा इनके स्वरूप को समझाइये।
Discuss the kinds of commercial letters and explain their format.
5. व्यावसायिक रिपोर्ट क्या होती है। इसके उद्देश्य एवं महत्व पर प्रकाश डालिये।
What is a Business Report? Throw light on its objectives and importance.
6. मौखिक सम्प्रेषण क्या है? इसके लाभ एवं मौखिक सम्प्रेषण में ध्यान देने योग्य बातों को बताइये।
What is an oral communication? Explain its advantages and pre requisites.

2.12 संदर्भ-ग्रन्थ (Reference Books) :

1. Majumdar M. : Commercial Correspondence.
2. Rustam J. Mehta : Effective Business letters
3. Sachdeva S : Business Communication, Lakshmi Narain Agrawal, Agra.
4. Gupta N. and Mahajan P. : Salvitya Bhawan Publication, Agra.
5. कुमार दिनेश एवं गोस्वामी संजय : व्यावसायिक संचार एवं कम्प्यूटर, आस्था पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
6. Singhal A : Business Communication Kalyani Publication, New Delhi.
7. पासी आर. एल. : व्यावसायिक संचार; संजीव प्रकाशन, मेरठ।

इकाई : 3 रिपोर्ट प्रस्तुतीकरण, सार्वजनिक भाषण एवं विचार-विनिमय द्वारा निर्णयन (Presentation of Report, Public Speaking and Negotiation)

इकाई की रूपरेखा : (Structure)

- 3.0 उद्देश्य
- 3.1 रिपोर्ट प्रस्तुतीकरण : आशय, महत्व एवं आवश्यक गुण
- 3.2 रिपोर्ट लेखन के कदम, एवं प्रारूप
- 3.3 रिपोर्ट प्रस्तुतिकरण के नमूने
- 3.4 सार्वजनिक भाषण : आशय एवं उद्देश्य
- 3.5 सफल सार्वजनिक भाषण के कदम
- 3.6 विचार-विनिमय द्वारा निर्णयन: आशय, उपागम एवं तैयारी के बिन्दु
- 3.7 सारांश
- 3.8 शब्दावली
- 3.9 अभ्यास के लिये प्रश्न
- 3.10 उपयोगी पुस्तकें

3.0 उद्देश्य : (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- रिपोर्ट प्रस्तुतिकरण का आशय, महत्व एवं उसके आवश्यक गुणों के जान सकें;
- रिपोर्ट लेखन के कदम, प्रारूप एवं नमूने को बता सकें;
- सार्वजनिक भाषण का अर्थ, उद्देश्य एवं सफल प्रस्तुतिकरण के कदम को बता सकें; तथा
- विचार-विनिमय द्वारा निर्णयन का आशय, तरीके और तैयारी को जान सकें।

3.1 : रिपोर्ट प्रस्तुतीकरण : आशय, महत्व एवं आवश्यक गुण (Meaning, Importance and Pre-Requisites of Report Presentation)

आशय : रिपोर्ट प्रस्तुतीकरण 'रिपोर्टिंग' अथवा रिपोर्ट लिखना एक विधि है,

जिसके द्वारा किसी भी प्रकार के विचार-विमर्श, बैठक आदि का ब्यौरा दिया जाता है। दूसरे शब्दों में, रिपोर्ट-लेखन/प्रस्तुतीकरण एक कला है, जिसके द्वारा किसी भी प्रकार के सर्वेक्षण या प्रेक्षण के उपरान्त व्यक्तिगत अथवा सामूहिक विचारों को व्यक्त किया जाता है अर्थात् किसी मामले की छानबीन अथवा पूछताछ के उपरान्त जो भी निष्कर्ष निकालते हैं, उन्हें रिपोर्ट की शकल में अपनी भाषा में लिखा जाता है। इस प्रकार 'रिपोर्ट' एक लेख है, जो कि किसी एक या उससे अधिक मामलों की पूछताछ अथवा छानबीन करने के उपरान्त लिखने वाले की अपनी भाषा में लिखा जाता है। इसके लिये किसी एक व्यक्ति अथवा एक से अधिक व्यक्तियों की कमेटी बनाकर मामला सौंप दिया जाता है और वे सुपुर्द किये गये मामले की पूरी छानबीन करते हैं तथा उसके उपरान्त वे जो भी निष्कर्ष निकालते हैं उन सभी तथ्यों को एक रिपोर्ट की शकल में लिख दिया जाता है। प्रायः सभी जटिल मामलों को निपटाने के लिये वरिष्ठ अधिकारियों अथवा विशेषज्ञों की नियुक्ति की जाती है, जिन्हें सौंपे गये मामले की छानबीन करके अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करनी पड़ती है।

प्रतिवेदन या रिपोर्ट का महत्व (Importance of Report) :

किसी भी संगठन के लिये प्रतिवेदन एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है, जो कि केवल महत्वपूर्ण सूचना ही नहीं देता, वरन् सिफारिश भी करता है और इस प्रकार महत्वपूर्ण निर्णय लेने में सहायता करता है। निर्णयन (Decision Making) में प्रबन्धक के लिये प्रतिवेदन एक आवश्यक औजार है। अतः यह बहुत ही महत्वपूर्ण है। जब एक व्यक्ति व्यवसाय करता है, तो उसी के पास प्रतिवेदन का कार्य और निर्णय लेने का कार्य होता है। वह अपने व्यवसाय को आन्तरिक व बाह्य रूप से अच्छी तरह समझता है और त्वरित निर्णय ले सकता है। अतः उसे किसी प्रतिवेदन की आवश्यकता नहीं होती, परन्तु एक बड़े संगठन में जहाँ अनेक गतिविधियाँ चलती रहती हैं और जो विभिन्न विभागों द्वारा संचालित की जाती हैं वहाँ उच्च प्रबन्धक व्यक्तिगत रूप से इन सभी गतिविधियों की न तो जानकारी रख सकता है और न ही उन पर नियन्त्रण। ऐसी स्थिति में उन्हें अपने निर्णयों के लिये प्रतिवेदनों पर निर्भर रहना पड़ता है, जो कि विभिन्न विभागों के प्रमुखों द्वारा दिये जाते हैं। इस प्रकार प्रतिवेदन बड़े संगठनों के लिये अति आवश्यक है।

इतना ही नहीं विभिन्न पक्षकारों, जनसाधारण, शासन, ग्राहक अंशधारी आदि सभी के लिये भी प्रतिवेदन का महत्व है।

अच्छी रिपोर्ट के आवश्यक गुण (Pre-requisites of a Good Report):

एक अच्छी रिपोर्ट में निम्नलिखित गुण होने चाहियें :

(1) सत्यता (Accuracy) : सभी सूचनायें अथवा विचार बिल्कुल सत्य

होने चाहिये अर्थात् उनमें त्रुटि नहीं होनी चाहिये, क्योंकि त्रुटिपूर्ण तथ्यों के आधार पर गलत निर्णय लिये जा सकते हैं। अतः रिपोर्ट लिखने वाले को यह चाहिये कि उसने जो भी जैसा भी देखा है, वैसा ही लिखा।

(2) स्पष्टता (Clarity) : एक अच्छी रिपोर्ट का यह आवश्यक गुण है कि लिखे गये मसौदे का अर्थ पाठक द्वारा ठीक प्रकार से समझा जा सके। इसके लिये रिपोर्ट के अन्तर्गत व्याकरण सम्बन्धी चिन्हों तथा शब्द संकेतों का प्रयोग आवश्यक है तथा घुमावदार भाषा का प्रयोग अनावश्यक है।

(3) सूक्ष्मता (Preciseness) : जहाँ तक संभव हो, रिपोर्ट के अन्तर्गत सभी मामले सूक्ष्मता से लिखे जाने चाहिये। यदि कोई रिपोर्ट अनावश्यक रूप से लम्बी है, तो उसमें त्रुटियों की संभावना बढ़ जाती है। सूक्ष्मता के साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि कोई तथ्य छूट न जाये, ऐसी सावधानी भी बरतनी चाहिये।

(4) विषयानुसार (Relevancy) : एक अच्छी रिपोर्ट के अन्तर्गत यह आवश्यक है कि सभी तथ्य सम्मिलित किये जाये अर्थात् अनावश्यक मसौदे को रिपोर्ट में नहीं लिखना चाहिये। वे सभी बातें जो निष्कर्ष लेने के लिये आवश्यक हैं, उन्हें तो रिपोर्ट में अवश्य ही लिखना चाहिये, बाकी को नहीं।

(5) उद्देश्य की पूर्ति (Must Fulfill the Objects) : रिपोर्ट किसी निश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिये तैयार की जाती है। एक श्रेष्ठ रिपोर्ट को उस उद्देश्य की पूर्ति करनी चाहिये। उदाहरण के लिये किसी कार्यालय की फैंक्स मशीन चोरी हो और उसकी जिम्मेदारी निश्चित करने के लिये रिपोर्ट मांगी जाये तो यदि उस रिपोर्ट में चोरी के लिये जिम्मेदारी निश्चित करने के स्थान पर चोरी को रोकने के प्रयत्नों की चर्चा की जाती है, तो वह रिपोर्ट बेकार होगी।

(6) उचित प्रारूप (Suitably Formated) : रिपोर्ट को उचित रूप में लिखा जाना चाहिये, व्याख्या के लिये रिपोर्ट में विवरणात्मक, शीर्षक व उपशीर्षक दिये जाना चाहिये। प्रत्येक नये विचार अथवा तथ्य को नये अनुच्छेद में दिया जाना चाहिये। निष्कर्ष तथा सुझावों को रिपोर्ट के अन्त में दिया जाना चाहिये। रिपोर्ट पर प्रस्तुतिकरण की तिथि अंकित होनी चाहिये तथा उस पर प्रस्तुतकर्ता के हस्ताक्षर भी होने चाहिये।

3.2 रिपोर्ट लेखन के कदम एवं प्रारूप : (Steps of Writing a Report and its Proforma)

किसी भी रिपोर्ट को लिखने अथवा तैयार करने के लिये कई कदम उठाये जाते हैं, जिनमें से मुख्य अग्र प्रकार हैं :

(1) तथ्यों/आँकड़ों का संग्रहण : रिपोर्ट के अन्दर जो भी सामग्री देनी

आवश्यक है, उसको सबसे पहले जुटाया जाता है। सूचना प्राप्त करने के लिये जो भी स्रोत उपलब्ध है, उन पर पहुँच कर विभिन्न प्रकार की जानकारियाँ ली जाती है तथा उन्हें एक कागज पर एकत्रित करके लिख लिया जाता है। यह ध्यान रहे कि सभी तथ्य अधिकृत अथवा पुष्टिकृत होने चाहिये अन्यथा व्यक्तिगत सम्प्रेक्षण के आधार पर होने चाहिये।

(2) विधिकरण : जितने भी विवरण रिपोर्ट तैयार करने के लिये इकट्ठे किये गये हो, उनमें से वरीयता के आधार पर आवश्यक तथ्य रखे जाये और अनावश्यक तथ्यों को छोड़ दिया जाये, इसे विधिकरण कहते हैं। इसमें तथ्यों का विश्लेषण भी शामिल है, जो कि विषय के आधार पर किया जाता है।

(4) क्रम-व्यवस्था : सभी तथ्यों को क्रमवार लिखकर व्यवस्थित रूप से सुधार किया जाता है। इसमें यह देखना होता है कि कौन-सी बात सबसे पहले लिखी जाये तथा उसके बाद में क्या लिखा जाये।

(5) रिपोर्ट तैयार करना : अन्त में रिपोर्ट, का शीर्षक देकर तथा विषय-सूची बनाकर अनुच्छेदवार तथ्यों को लिखना शुरू करना चाहिये। प्रायः सभी रिपोर्ट कागज पर टाईप कराई जाती है अथवा उन्हें मुद्रित भी कराया जा सकता है। पूरी रिपोर्ट लिखने के बाद उसका परीक्षण करके वरीयता प्राप्त व्यक्ति उस पर अपने हस्ताक्षर करते हैं।

रिपोर्ट का प्रारूप ले-आउट :

रिपोर्ट को कई भागों में बाँटा जा सकता है। उसके मुख्य भाग निम्न प्रकार हैं:

(1) शीर्षक : (Title) सबसे पहले रिपोर्ट का शीर्षक बड़े-बड़े शब्दों में लिखा जाता है। इसका एक उदाहरण नीचे गये गया है:

‘बैंको में ग्राहक सेवा’

(अन्तिम रिपोर्ट)

(2) तिथि : रिपोर्ट का दूसरा महत्वपूर्ण भाग तिथि होती है अर्थात् शीर्षक के तुरन्त बाद वह तिथि लिखी जाती है, जिस दिन कोई रिपोर्ट बनायी या प्रस्तुत की जाती है।

(3) विषय-प्रवेश : मुख्य रिपोर्ट से पहले संक्षेप में भूमिका देनी पड़ती है। इसके अन्तर्गत सभी आवश्यक सूचनायें जैसे रिपोर्ट देने वाली समिति का नाम, नियुक्तकर्ता का नाम, अध्यक्ष तथा समिति के सदस्यों के आवश्यक विवरण, मुख्य उद्देश्य आदि शामिल हैं।

(4) मसौदा : संक्षिप्त भूमिका देने के पश्चात् रिपोर्ट में लिखे जाने वाली समस्त सूचना को यथायोग्य शीर्षकों तथा अनुच्छेदों में विभाजित करके पूरी

रिपोर्ट लिखी जाती है। सभी सूचना सारणीबद्ध ढंग से दी जानी चाहिये, ताकि शीघ्र समझ में आ जानी चाहिये।

(5) निष्कर्ष या सुझाव : रिपोर्ट के मसौदे के आधार पर कई बार सुझाव भी देने पड़ते हैं जिन्हें अन्त में निष्कर्ष लिखकर अलग से लिखा जाता है। यदि आवश्यक न हो तो ऐसा नहीं किया जाता।

(6) हस्ताक्षर : पूरी रिपोर्ट तैयार होने के पश्चात् उसे टाईप कर लिया जाता है और अन्त में रिपोर्ट देने वाला उस पर अपने हस्ताक्षर करता है। बिना हस्ताक्षर की रिपोर्ट का कोई महत्व नहीं है, क्योंकि उसे अनाधिकृत समझा जाता है।

(7) अनुक्रमणिकाये (Appendices) : जिन दस्तावेजों अथवा सबूतों के आधार पर रिपोर्ट लिखी गयी है, उन सभी आवश्यक कागजातों को रिपोर्ट के साथ नत्थी कर दिया जाता है अन्यथा उन्हें अनुक्रमणिकाये बनाकर रिपोर्ट के साथ संलग्न किया जाता है।

3.3 रिपोर्ट प्रस्तुतिकरण के नमूने : (Specimen of Presentation of Report)

शीर्षक : छात्र संघ (Students Union) की रिपोर्ट जिसमें विद्यालय में सहकारी भण्डार खोलने के बारे में लिखा गया है।

भूमिका : छात्र संघ की 1 जनवरी, 20..... को बुलायी गयी विशेष बैठक में निम्नलिखित सदस्यों की नियुक्ति की गयी थी, ताकि विद्यालय में एक सहकारी भण्डार खोलने की सम्भावनाओं पर रिपोर्ट प्राप्त की जा सके। इस सम्बन्ध में हमने पूर्ण सर्वेक्षण कर लिया है तथा आवश्यक सूचनाये भी एकत्रित की हैं। सभी तथ्यों के आधार पर हमें कहना है :

- (1) विद्यालय में एक सहकारी भण्डार खोला तथा चलाया जा सकता है, जिसके लिये हमने सहकारी समितियों के पंजीकार (रजिस्ट्रार) से आवश्यक अनुमति प्राप्त कर ली है।
- (2) हमने समस्त मामले पर विद्यालय के प्रधानाचार्य से विचार-विमर्श कर लिया है तथा उन्होंने भण्डार बनाने के लिये नीचे की मंजिल में एक कमरा देने की स्वीकृति प्रदान की है तथा उसके लिये विद्यालय कोई भी किराया वसूल न करने के लिये तैयार है। यह कमरा विद्यालय की कैंटीन के साथ ही बना हुआ है इससे विद्यार्थियों को पढ़ाई में किसी भी प्रकार की बाधा उत्पन्न नहीं होगी।
- (3) विद्यालय में लगभग 3,000 विद्यार्थी पढ़ते हैं तथा छात्र संघ 10 रु० प्रति विद्यार्थी के हिसाब से प्रत्येक विद्यार्थी को अंश-पत्र बेच सकती है। इस प्रकार जो पैसा एकत्रित होगा उससे सहकारी भण्डार की

प्रारम्भिक कार्यशील पूँजी प्राप्त हो सकेगी।

- (4) हम इस रिपोर्ट के साथ अनुमानित आय तथा व्यय का ब्यौरा बनाकर संलग्न कर रहे हैं, जिसमें विभिन्न प्रकार की स्टेशनरी, सामग्री, पुस्तकें, फर्नीचर आदि के बारे में पूरी जानकारी दी गयी है।

निष्कर्ष : उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए हमारे विचार से विद्यालय में सहकारी भण्डार आसानी से शुरू किया जा सकता है।

भवदीय

संलग्न-उपरोक्त के अनुसार.

(अवैतनिक सचिव)

कोषाध्यक्ष

(छात्र संघ)

बैठक की रिपोर्ट

बैंकों में कम्प्यूटरीकरण पर रिपोर्ट :

नवभारत बैंकर्स संस्थान द्वारा 1 जनवरी, 2009 को बुलायी गयी विशेष बैठक जिसकी अध्यक्षता श्री.....ने की, उक्त बैठक में सभी बैंकों द्वारा कम्प्यूटरीकृत करने हेतु मामले पर विचार-विमर्श किया गया।

उपस्थित

- | | | |
|----|----|----|
| 1. | 4. | 7. |
| 2. | 5. | 8. |
| 3. | 6. | 9. |

बैठक में निम्न प्रस्ताव पारित किये गये:

सभी सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में बढ़ते हुए कार्यभार तथा कर्मचारियों की विभिन्न समस्याओं को ध्यान में रखते हुये यह बताया गया कि शाखा स्तर पर कम्प्यूटरीकृत करना अत्यन्त आवश्यक है। उक्त प्रस्ताव का अनुमोदन अध्यक्ष ने किया तथा सभी सदस्यों ने उसे स्वीकार किया। सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव पारित किया गया कि प्रत्येक बैंक से एक-एक वरिष्ठ अधिकारी लेकर विशेष समिति का गठन किया जाये, जिसकी देखभाल में कम्प्यूटरीकरण का कार्य-तीन माह की अवधि में पूर्ण किया जा सके।

बैठक में अन्य किसी मामले पर विचार-विमर्श नहीं किया गया तथा अध्यक्ष को धन्यवाद देते हुए बैठक समाप्त हुयी।

दिनांक.....

(अध्यक्ष)

वैधानिक रिपोर्ट या प्रतिवेदन का आशय

वैधानिक प्रतिवेदन कम्पनी का एक महत्वपूर्ण प्रपत्र है। इसका उद्देश्य कम्पनी के निर्माण के सम्बन्ध में सदस्यों को विस्तृत जानकारी कराना होता है। वैधानिक रिपोर्ट की शुद्धता को कम्पनी के कम से कम दो संचालकों, जिसमें एक प्रबन्ध संचालक हो (यदि उस कम्पनी में प्रबन्ध संचालक हो) द्वारा प्रमाणित किया जाना चाहिये। इसके अतिरिक्त, कम्पनी के अंकेक्षकों द्वारा इस रिपोर्ट में उल्लिखित अंशों के आवंटन, अंशों पर प्राप्त राशि तथा कम्पनी के आय-व्यय को प्रमाणित किया जाना अनिवार्य है। इसी प्रकार प्रमाणित वैधानिक रिपोर्ट की एक प्रति रजिस्ट्रार के पास भेजना आवश्यक है।

किसी भी कम्पनी की वैधानिक रिपोर्ट में निम्नलिखित बातों का समावेश होना ही चाहिये :

- (1) आवंटित अंशों की कुल संख्या जिसमें नकदी के अतिरिक्त अन्य प्रतिफल के बदले में आवंटित पूर्णदत्त अथवा आंशिक दत्त (Partly paid) अंशों तथा आंशिक दत्त अंशों पर प्राप्त राशि और प्राप्त प्रतिफल का वर्णन जिसके बदले में अंश निर्गमित किये गये हैं।
- (2) कम्पनी द्वारा आवंटित अंशों पर प्राप्त कुल नकद राशि।
- (3) रिपोर्ट की तिथि से सात दिन पूर्व तक के कम्पनी के आय-व्यय का संक्षिप्त लेखा।
- (4) प्रारम्भिक व्ययों की राशि जिसमें अंशों तथा ऋण-पत्रों की बिक्री या निर्गमन के सम्बन्ध में भुगतान किये गये अथवा किये जाने वाले कमीशन या बट्टे का अलग से विवरण दिया जाना चाहिये।
- (5) कम्पनी के संचालकों, अंकेक्षकों तथा प्रबन्ध अभिकर्ताओं, सचिव तथा कोषाध्यक्ष अथवा प्रबन्धक (यदि कोई हो) के नाम, पते तथा पेशे। यदि कम्पनी के समामेलन के पश्चात् इसमें कोई परिवर्तन हुये हों तो उनका वर्णन।
- (6) ऐसे अनुबन्धों या अनुबन्धों के संशोधनों का वर्णन, जो कि सभा से अनुमोदनार्थ प्रस्तुत किये जाने हों।
- (7) यदि कोई अभिगोपन अनुबन्ध पूरा नहीं हुआ तो उसकी सीमा तथा उसके पूर्ण न होने के कारण।
- (8) किसी भी संचालक, प्रबन्ध अभिकर्ता, सचिव एवं कोषाध्यक्ष अथवा प्रबन्धक द्वारा भुगतान न की गयी याचना राशि।
- (9) किसी भी संचालक, प्रबन्धक, अभिकर्ता, सचिव, कोषाध्यक्ष या प्रबन्धक को अंश अथवा ऋण-पत्रों के बिक्री के सम्बन्ध में एक दिये गये अथवा दिये जाने वाले कमीशन या दलाली का विवरण।

वैधानिक रिपोर्ट का नमूना :

कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 165 के अन्तर्गत

कम्पनी का क्रमांक.....5 रुपये मुद्राक

कम्पनी का नाम.....लिमिटेड.....कम्पनी लिमिटेड की वैधानिक रिपोर्ट धारा 165 (5) के अन्तर्गत प्रमाणित तथा जमा की गयी।

उपरिस्थितकर्ता.....

वैधानिक सभा की तिथि तथा स्थान.....

(1) दिनांक.....तक अंशों का आवंटन तथा रोकड़ की प्राप्ति.....

विवरण	अंशों की संख्या	प्रत्येक अंश का मूल्य रु०	रोकड़ प्राप्त हुई रु०
(I) अंशों का रोकड़ के बदले आवंटन (1) सामान्य अंश (2) शोध्य पूर्वाधिकार (3) पूर्वाधिकार			
(II) रोकड़ के अतिरिक्त अन्य प्रतिफल के लिये पूर्णदत्त अंशों का आवंटन तथा पूर्ण विवरण— (1) सामान्य अंश (2) शोध्य पूर्वाधिकार अंश (3) अन्य पूर्वाधिकार अंश			
(III)रु० प्रति अंश के हिसाब से आंशिक दत्त अंशों का आवंटन तथा उनका प्रतिलफ..... (1) सामान्य अंश (2) शोध्य पूर्वाधिकार अंश (3) अन्य पूर्वाधिकार अंश			
(III)रु० प्रति अंश के हिसाब से बट्टे पर निर्गमित किये— (1) सामान्य अंश (2) शोध्य पूर्वाधिकार अंश (3) अन्य शोध्य पूर्वाधिकार अंशों को छोड़कर			

(2) प्राप्तियों और भुगतानों का विवरण दिनांक.....

रिपोर्ट प्रस्तुतिकरण,
सार्वजनिक भाषण एवं
विचार-विनिमय द्वारा
निर्णयन

प्राप्तियाँ	रु०	पैसे	भुगतान	रु०	पैसे
अंशों से— (1) सामान्य अंश (2) शोध्य पूर्वाधिकार (3) अन्य पूर्वाधिकार अंशों पर प्राप्त की गयी अग्रिम राशि ऋण-पत्र ऋण जमा राशि			प्रारम्भिक खर्च अंशों के निर्गमन तथा बेचने पर कमीशन— अंशों पर कटौती— पूँजी व्यय— भूमि इमारत प्लाण्ट मशीनरी शेष— हस्तरथ डाकखाने में सेविंग बैंक		
कुल योग			कुल योग		

(3) 'प्रविवरण' अथवा 'स्थानापन्न' के अनुमानित प्रारम्भिक व्यय

विवरण	किये गये प्रारम्भिक व्यय	किये जाने वाले प्रारम्भिक व्यय
कानूनी खर्च सीमा नियम और अन्तर्नियमों को तैयार कराने के खर्च छपवाने के खर्च रजिस्ट्रेशन खर्च विज्ञापन खर्च अंश निर्गमन खर्च अंश निर्गमन पर कमीशन अन्य प्रारम्भिक खर्च		
कुल योग		

(4) कम्पनी के संचालकों, अंकेक्षकों, प्रबन्ध अधिकर्ताओं, सचिव एवं कोषाध्यक्ष तथा मैनेजर के नाम, पते तथा विवरण—

नाम	पता	पेशा	परिवर्तन का विवरण	परिवर्तन की तिथि
संचालक (अ) (ब) (स) (द)				
अंकेक्षक प्रबन्ध अधिकर्ता सचिव कोषाध्यक्ष				

(5) उन अनुबन्धों के विवरण परिवर्तन या प्रस्तावित परिवर्तन जो वैधानिक सभा में स्वीकृति के लिये प्रस्तुत किये जायेंगे।

(6) अभिगोपन अनुबन्धों का संक्षिप्त विवरण तथा किस सीमा तक उनका पालन किया गया इसके कारणों का विवेचन।

(7) संचालकों, प्रबन्ध अभिकर्ताओं, सचिव एवं प्रबन्धक आदि से (या के यहाँ) पर बकाया।

(8) किसी संचालक, प्रबन्ध अभिकर्ता, प्रबन्धक, कोई फर्म हो तो उसका साझेदार यदि कोई प्राइवेट कं० हो तो उसका संचालक, को अंशों के निर्गमन अथवा विक्रय पर दिया गया कमीशन अथवा दलाली।

नाम	दी गयी अथवा दी जाने वाली कमीशन या दलाली की राशि	
संचालक	अंशों पर	ऋण पर
अभिकर्ता		
प्रबन्धक		

हम यह प्रमाणित करते हैं कि आय रिपोर्ट ठीक है।

दिनांक.....

हस्ताक्षर.....

संचालक

हम यह प्रमाणित करते हैं कि उक्त रिपोर्ट का वह भाग जो अंशों के आंवटन से तथा उन पर राशि से तथा प्राप्तियों और भुगतान से सम्बन्धित है, ठीक है।

दिनांक

संचालकों की रिपोर्ट :

कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 217 के अनुसार, कम्पनी की व्यापक सभा में प्रस्तुत किये गये प्रत्येक स्थिति विवरण के साथ उसके संचालक मण्डल की निम्नलिखित बातों के सम्बन्ध में एक रिपोर्ट संलग्न होगी :

- (i) कम्पनी के मामलों की स्थिति।
 - (ii) ऐसी धनराशियाँ जो कि वह ऐसे स्थिति विवरण में किन्हीं कोषों में से जाना प्रस्तावित करती हैं।
 - (iii) वह धनराशि, यदि कोई हो, जिसके लिये वह लाभांश का भुगतान किये जाने की सिफारिश करता है।
 - (iv) ऐसे महत्वपूर्ण परिवर्तन तथा कार्य, यदि कोई हों, जो कि कम्पनी की आर्थिक स्थिति को प्रभावित करते हैं और जो कि सम्बन्धित स्थिति विवरण में आर्थिक वर्ष से रिपोर्ट की तिथि के समय में हुये हैं।
- संचालक मण्डल की रिपोर्ट में निम्नलिखित बातों के सम्बन्ध में आर्थिक वर्ष में हुये परिवर्तनों का विवरण भी होना चाहिये, जहाँ तक वह

कम्पनी के सदस्यों द्वारा कम्पनी के मामलों की जानकारी करने के लिये महत्वपूर्ण है तथा संचालक मण्डल की अनुमति में कम्पनी के व्यापार के लिये हानिकारक न होंगे :

- (1) कम्पनी के व्यापार के स्वभाव में,
- (2) कम्पनी को गौण कम्पनियों में अथवा उनके द्वारा किये जाने वाले व्यापार के स्वभाव में, तथा
- (3) सामान्यतया व्यापार के उन वर्गों में जिनमें कम्पनी का कोई हित है।

संचालक मण्डल रिपोर्ट में वैधानिक सूचनाओं के अतिरिक्त अन्य सूचनायें :

धारा 217 की उपयुक्त वैधानिक सूचनाओं के अतिरिक्त संचालक मण्डल की रिपोर्ट में प्रायः निम्नलिखित सूचनायें और दी जाती हैं :

(1) भावी तरक्की : अगले वर्ष के लिये कम्पनी की क्या तरक्की होने की सम्भावना है, जैसे—उत्पादन, विक्रय, लाभ यन्त्र तथा मशीनों के आधुनिकीकरण की योजनायें, कम्पनी के व्यापार के विस्तार की योजनाये आदि।

(2) संचालकगण : पारी (Rotation) द्वारा अवकाश ग्रहण करने वाले संचालकों के नाम और यह कि वे नियुक्ति या पुनः नियुक्ति के लिये अपने आपको प्रस्तावित करते हैं और आकस्मिक रिक्त स्थान, यदि कोई हुआ है, तो उसकी पूर्ति के विषय में उल्लेख।

(3) अंकेक्षक : अवकाश प्राप्त करने वाले अंकेक्षकों के नाम और यह कि वे अपने आपको पुनर्नियुक्त के लिये प्रस्तावित करते हैं और यदि कोई आकस्मिक स्थान रिक्त हुआ है, तो उसकी पूर्ति के विषय में उल्लेख।

(4) अतिरिक्त सूचनायें : सामान्य सभा में सम्पादित किये जाने वाले विशेष अन्य कार्यों की सूचनायें, जैसे—अंश-पूँजी में वृद्धि, लाभों का पूँजीकरण, अधिलाभांश (Bonus), अंशों का निर्गमन इत्यादि।

संचालकीय रिपोर्ट का नमूना (Specimen of Director's Report)

अहमदाबाद रेयान मैन्यूफैक्चरिंग कम्पनी लिमिटेड, अहमदाबाद,
सेवा में,

अंशधारीगण,

.....लिमिटेड।

सज्जनों,

आपके संचालकों को यह हार्दिक प्रसन्नता होती है कि वे आपके समक्ष

31 मार्च, 2010 को समाप्त होने वाले वर्ष में कम्पनी की अंकेक्षित स्थिति विवरण तथा लाभालाभ लेखा प्रस्तुत कर रहे हैं।

लेखा : इस वर्ष आपकी कम्पनी को प्रबन्ध अभिकर्ता का कमीशन, मशीनों पर अवक्षयण, डेवलपमेंट रिबेट व टैक्स आदि देने के पश्चात् रुपये 4,92,83,004 का लाभ प्राप्त हुआ है। इस लाभ को संचालकों ने निम्न मदों में डालने का प्रस्ताव किया है—

	Amount (Rs.)
(1) General Reserve	3,70,00,000
(2) Dividend Equalisation Reserve	20,00,000
(3) Preference Share Redemption	20,00,000
(4) Dividend on Preference Share Series A and B at the rate of 8.57 Per annum (Subject to deduction of tax under Sec. 194 I.T. Act, 1961)	12,92,056
(5) Proposed dividend on ordinary Share at the rate of Rs. 2.50 per Share (Subject to deduction of tax under Sec. 194 I.T. Act, 1961)	60,50,000
(6) Carried forward to next year	9,40,948
Total	4,92,83,004

कार्य : कम्पनी की कार्यक्षमता सन्तोषप्रद रही। स्टेपल फायबर से सम्बन्धित शोध कार्य एवं परीक्षण भी प्रगति पर है। देश में कपास की कमी को ध्यान में रखते हुए कम्पनी ने औद्योगिक कानून के अन्तर्गत एक प्रार्थना-पत्र शासन को इस आशय का दिया है कि वह स्टेपल फायबर के उत्पादन को 250 टन बढ़ायें, क्योंकि कपास की कमी को कुछ सीमा तक पूरा किया जा सकता है। वीविंग विभाग का कार्य भी सन्तोषजनक है। रेयन मशीन के उत्पादन के लिये सरकार ने उस अनुबन्ध को भी अपनी मंजूरी दे दी है जो विदेशी फर्म के साथ किया गया है। कम्पनी ने विदेशों से कुछ मशीनरी आदि क्रय करने के विषय में जो प्रार्थना-पत्र दिया था वह अब भी शासन के विचाराधीन है। जैसे ही शासन की स्वीकृति इस विषय में प्राप्त की जायेगी, वैसे ही मशीनरी का आर्डर भेज दिया जायेगा। इसी बीच में कम्पनी ने वर्कशाप का निर्माण शुरू कर दिया है।

संचालक : श्री पी० के० जैन श्री जे० पी० सोनी एवं श्री आर० डी० जैन, जो कि कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा के अनुसार निवृत्त हो रहे हैं, किन्तु फिर से अपने पद पर बने रहने का प्रस्ताव किया है।

कम्पनी की वार्षिक रिपोर्ट : (Annual Report of Company)

वार्षिक रिपोर्ट से आशय :

रिपोर्ट प्रस्तुतिकरण,
सार्वजनिक भाषण एवं
विचार-विनिमय द्वारा
निर्णयन

कम्पनी की वार्षिक रिपोर्ट से आशय इसके प्रकाशित लेखों से है। प्रकाशित लेखों का आशय कम्पनी के लाभ-हानि खाते, चिट्ठे, संचालकों की रिपोर्ट, अंकेषकों की रिपोर्ट आदि को भी प्रकाशित लेखों के साथ नत्थी किया जाता है, ताकि कम्पनी की वित्तीय स्थिति अच्छी तरह से समझी जा सके।

वार्षिक रिपोर्ट तैयार करना :

वार्षिक रिपोर्ट के अन्तर्गत निम्न तैयार किये जाते हैं :

- (1) लाभ-हानि खाता,
- (2) चिट्ठा,
- (3) संचालकों व अंकेषकों की रिपोर्ट तथा
- (4) अध्यक्ष का भाषण।

लाभ-हानि खाता (Profit and Loss Account) :

एक कम्पनी का लाभ-हानि खाता कम्पनी अधिनियम की अनुसूची VI के द्वितीय भाग के अनुसार बनाया जाता है। इसको बनाते समय यह ध्यान रखा जाता है कि कम्पनी की उस अवधि के लाभ का सत्य एवं उचित चित्र प्रस्तुत करे जिसके लिये यह बनाया गया है। लाभ-हानि खाते में पिछले वर्ष की आय व व्यय से सम्बन्धित राशियाँ भी दिखायी जानी चाहिये ताकि इनकी तुलना में कम्पनी की कार्य सम्बन्धी आय का सही ज्ञान हो सके।

लाभ-हानि नियोजन खाता (Profit and Loss Appointment Account) :

लाभ-हानि खाते के दो भागों में बाँटा जा सकता है, ऊपर का भाग लाभ या हानि प्रकट करता है और नीचे का भाग लाभ को किस प्रकार कम्पनी ने प्रयोग किया है, इसका वर्णन करता है।

चिट्ठा (Balance Sheet) :

धारा (1) के अनुसार, प्रत्येक वित्तीय वर्ष के अन्त में चिट्ठा बनाया जाता है, जिसके द्वारा कम्पनी की सच्ची एवं उचित वित्तीय स्थिति प्रकट होती है। कम्पनी का चिट्ठा अनुसूची VI के भाग 1 में दिये गये नमूने के अनुसार होना चाहिये। चिट्ठे का आशय केवल चिट्ठे से ही नहीं होता वरन् उन सब टिप्पणियों से भी होता है जो इसके बाद दी जाती हैं तथा उन प्रपत्रों से भी होता है जो इसमें नत्थी किये जाते हैं।

चिट्ठे पर कम्पनी के मैनेजर या सचिव, यदि कोई हो, के द्वारा और अधिक से अधिक दो संचालकों के द्वारा जिसमें एक प्रबन्ध संचालक होना चाहिये, के हस्ताक्षर होते हैं।

लाभ-हानि खाता एवं अंकेक्षण की रिपोर्ट को चिट्ठे के साथ जोड़ना:

कम्पनी अधिनियम की धारा 216 के अनुसार, चिट्ठे के साथ लाभ-हानि खाता एवं अंकेक्षक की रिपोर्ट जोड़ी जाती है।

रजिस्ट्रार के पास चिट्ठा और लाभ-हानि खाते की प्रतियाँ भेजना:

कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा में चिट्ठे और लाभ-हानि खाते को रखे जाने के बाद 30 दिन के भीतर इनकी तीन प्रतियाँ रजिस्ट्रार के यहाँ भेजी जाती हैं।

संचालक की रिपोर्ट :

चिट्ठे के साथ संचालकों की रिपोर्ट भी नत्थी की जाती है जिसमें कम्पनी की वित्तीय स्थिति, संचय में ले जाने वाली राशियाँ, लाभांश की प्रस्तावित दर, शक्ति की बचत, विदेशी विनियम का अर्जन आदि का उल्लेख किया जाता है।

अध्यक्ष का भाषण :

कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा में अध्यक्ष का भाषण भी होता है, जिसमें निम्न बातें होती हैं :

- (i) सम्बन्धित अवधि में कम्पनी की प्रगति।
- (ii) कम्पनी के व्यवसाय या उद्योग का भविष्य।
- (iii) भविष्य की कठिनाइयाँ।
- (iv) कम्पनी के व्यवसाय पर सरकारी नीति का प्रभाव।
- (v) कम्पनी के भविष्य के बारे में अध्यक्ष के विचार।

वार्षिक रिपोर्ट के सम्बन्ध में सचिव के कर्तव्य :

- (i) चिट्ठे एवं लाभ-हानि खाते पर हस्ताक्षर करना।
- (ii) कम्पनी की वार्षिक रिपोर्ट का प्रकाशन करना।
- (iii) कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा में वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करना।
- (iv) रजिस्ट्रार के पास वार्षिक खातों की तीन प्रतियाँ भेजना।
- (v) संचालकों के निर्देश पर संचालकों की रिपोर्ट तैयार कर उस पर अध्यक्ष के हस्ताक्षर करवाना।

कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत अग्र रिपोर्टों का बनाया जाना आवश्यक है :

रिपोर्ट प्रस्तुतिकरण,
सार्वजनिक भाषण एवं
विचार-विनिमय द्वारा
निर्णयन

- (1) कम्पनी के वार्षिक खातों के सम्बन्ध में संचालकों द्वारा दी जाने वाली रिपोर्ट।
- (2) वार्षिक खातों के अंकेक्षण करने वाले अंकेक्षण की रिपोर्ट।
- (3) पब्लिक कम्पनी की दशा में वैधानिक सभा करने के 21 दिन पहले सदस्यों के पास भेजी जाने वाली वैधानिक रिपोर्ट।
- (4) केन्द्रीय सरकार द्वारा कम्पनी का अनुसन्धान कराये जाने पर इन्सपेक्टर द्वारा दी जाने वाली रिपोर्ट।

उपर्युक्त वर्णित रिपोर्टों के अतिरिक्त और भी अनेक प्रकार की रिपोर्टें बनायी जाती हैं, जैसे :

- (i) संचालन समिति की रिपोर्ट्स जो कि उन विषयों के सम्बन्ध में होती हैं जो समिति के निर्णय के लिये इनके पास भेजे जाते हैं और जिन पर इनकी रिपोर्ट मांगी जाती है।
- (ii) जब कभी कोई विशेष प्रस्ताव होते हैं तो उन प्रस्तावों के सम्बन्ध में भी कम्पनी की ओर से सचिव या संचालक अंशधारियों की रिपोर्टें देते हैं।
- (iii) बहुत से ऐसे विषय हैं जिनके बारे में अंशधारियों को सूचनायें प्राप्त करनी होती हैं। वे सचिव से उन विषयों के सम्बन्ध में रिपोर्ट प्राप्त कर सकते हैं।
- (iv) बहुधा संचालक कम्पनी की वित्तीय एवं व्यापारिक स्थिति के सम्बन्ध में रिपोर्ट प्राप्त करते हैं।

प्रतिवेदन या रिपोर्ट लिखते समय ध्यान में रखी जाने वाली बातें

रिपोर्ट के सम्बन्ध में निम्नांकित बातों को ध्यान में रखना चाहिये—

- (1) रिपोर्ट पर शीर्षक डालना चाहिये।
- (2) रिपोर्ट का पैराग्राफ में होना चाहिये।
- (3) रिपोर्ट स्पष्ट एवं प्रभावशाली होनी चाहिये।
- (4) ऐसी भाषा का प्रयोग रिपोर्ट में होना चाहिये जिससे वांछित अर्थ के अतिरिक्त दूसरा अर्थ न लगाया जा सके।
- (5) रिपोर्ट का पूर्ण होना : रिपोर्ट लिखते समय सम्बन्धित विषय की कोई भी विषय—सामग्री नहीं छूटनी चाहिये। यह रिपोर्ट हर प्रकार से पूर्ण होनी चाहिये।

- (6) रिपोर्ट का संक्षिप्त होना : उपर्युक्त विवरण के आधार पर रिपोर्ट को पूर्ण होना चाहिये, लेकिन पूर्णता का यह आशय नहीं है कि रिपोर्ट बहुत बड़ी कर दी जाय। सभी विषय—सामग्री को संक्षेप में प्रकट करने में रिपोर्ट अच्छी मानी जाती है।
- (7) रिपोर्ट निर्धारित अवधि में तैयार की जानी चाहिये। यदि कोई अवधि निर्धारित न हो तो उचित अवधि के अन्दर इसे तैयार किया जाना चाहिये। उस रिपोर्ट का कोई प्रभाव नहीं होता है, जो अत्यधिक समय के बाद दी जाती है।
- (8) यदि वैधानिक तौर पर रिपोर्ट में कुछ सूचनायें दी जानी हों, तो रिपोर्ट के सम्बन्ध में वैधानिक प्रावधानों का पूर्ण रूप से पालन किया जाना चाहिये।
- (9) जहां तक सम्भव हो, रिपोर्ट में तकनीकी शब्दों का प्रयोग उस समय तक नहीं किया जाना चाहिये जब तक कि वह रिपोर्ट ऐसे व्यक्तियों के लिये न हो जो कि इन्हें समझते हैं।
- (10) यदि रिपोर्ट किसी सभा के सम्बन्ध में देनी है, तो सभा के अध्यक्ष के भाषण के अंश उन्हीं शब्दों में लिखे जाने चाहिये जो अध्यक्ष ने प्रयोग किये हैं। शेष कार्यवाही का सूक्ष्म दिया जाना चाहिये।
- (11) रिपोर्ट के अन्त में सचिव को अपने हस्ताक्षर करने चाहिये एवं तारीख डालनी चाहिये।

3.4 सार्वजनिक भाषण : आशय एवं उद्देश्य (Public Speaking Meaning and Objectives)

अधिकारपूर्ण, विवेसिहित, न्याययुक्त, तर्कसंगत एवं सुसंस्कृत वाक् शक्ति किसी भी व्यक्ति को पर्याप्त सफलता, बुलन्द ऊंचाईयों एवं यथोचित सम्मान प्रदान करती है। बोलना ही सम्प्रेषण की स्वाभाविक एवं सशक्त अभिव्यक्ति है। अधिकांश सम्प्रेषण शाब्दिक एवं मौखिक होते हैं। व्यक्ति अपनी दिनचर्या का सबसे अधिक समय बोलने में व्यतीत करता है। वाक्पटुता व्यक्ति का विशिष्ट कौशल होता है। बोलने को ढंग से व्यक्ति की पारिवारिक, सामाजिक, निवासीय, धार्मिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक पृष्ठभूमि का परिचय मिलता है। विभिन्न व्यक्तियों, समूहों, अथवा श्रोताओं, के मध्य सार्वजनिक रूप से बोलना एक विशिष्ट कला है जो अध्ययन, चिन्तन एवं मनन, अनुभव गंभीर, प्रयासों एवं लगन से सीखी जाती है। लगातार अभ्यास एवं प्रदर्शन से बोलने की कला में निखार आता है। वाक्शक्ति मात्रात्मक (Quantitative) न होकर गुणात्मक (Qualitative) होनी चाहिए। सशक्त वाक्शक्ति (Powerful Speaking) अथवा प्रभावी

वाक्शक्ति (Effective Speaking) अथवा सार्वजनिक वाक्शक्ति की कला (The art of Public Speaking) व्यावसायिक सम्प्रेषण का महत्वपूर्ण एवं अनिवार्य माध्यम है।

उद्योग, व्यापार एवं वाणिज्य जगत् में सार्वजनिक प्रस्तुतीकरण को सार्वजनिक मौखिक अभिव्यक्ति अथवा सार्वजनिक वाक्शक्ति के संदर्भ में प्रयोग किया गया है। व्यावसायिक जगत् में अनेक ऐसे अवसर आते हैं जिसमें सार्वजनिक भाषण दिया जाता है। प्रमुख अवसर निम्नलिखित हैं :

- i). नवीन उत्पाद अथवा सेवा प्रारम्भ करने पर;
- (ii) प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरू करने पर;
- (iii) नवीन व्यावसायिक रूपरेखा की व्याख्या;
- (iv) विपणन अथवा विक्रय लक्ष्यों को प्रस्ताव;
- (v) विचारगोष्ठी, सेमिनार, अथवा कान्फ्रेंस;
- (vi) व्यवसाय क्रियाओं के परिवर्तन की जानकारी।

सार्वजनिक भाषण के उद्देश्य : (Purpose of Public Speaking)

श्रोताओं, दर्शकों अथवा सहयोगियों के मध्य प्रभावपूर्ण भाषण महत्वपूर्ण सम्प्रेषण दायित्व है जो सतत कोशिश एवं तैयारी से सीखी जाती है। सार्वजनिक भाषण केवल व्यक्तिगत प्रयास नहीं है बल्कि समूह (Team) का सामूहिक प्रदर्शन है। प्रभावी सार्वजनिक भाषण जहां एक ओर वक्ता की वाक्पटुता पर आधारित है, वहीं दूसरी ओर पर्याप्त, श्रव्य, दृश्य, संसाधनों एवं टीमवर्क पर निर्भर है। संक्षेप में, सार्वजनिक भाषण की सफलता के लिए आवश्यक पद निम्नलिखित हैं :

(1) सूचना देना (To give Information) : प्रभावी सार्वजनिक अभिव्यक्ति व्यावसायिक संगठन के लक्ष्यों, सन्देशों, विचाराधारा, नवीन तथ्यों एवं महत्वपूर्ण परिवर्तनों की व्याख्या करती है। नवीन उत्पादों अनुसन्धानों, सुधारों, प्रयोग के ढंग, उपभोक्ताओं के हितों एवं अन्य महत्वपूर्ण सूचनाओं को इसके द्वारा प्रकट किया जाता है।

(2) मूल्यांकन (Evaluation): अधिकृत सार्वजनिक भाषण का सम्बन्धित श्रोताओं, दर्शकों अथवा व्यक्तियों द्वारा मूल्यांकन, विश्लेषण एवं निर्वचन किया जाता है।

(3) अनुनय (Persuasion) : सार्वजनिक भाषण का मूल उद्देश्य श्रोताओं एवं दर्शकों के विचारों, संदेशों, एवं दृष्टिकोणों को प्रभावित करना होता है। प्रभावी भाषण दर्शकों को निर्धारित नजरिया, निश्चित परिणामों एवं वांछित प्रतिक्रियाओं के लिए प्रेरित करता है जिसमें संस्था के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों

की सफलता निहित होती है।

(4) निर्देश एवं तकनीकी ज्ञान (Direction and Technical Knowledge): भाषण का उद्देश्य संस्था के कर्मचारियों के कार्यक्रमों का सामूहिक रूप से निर्देश, शिक्षा एवं प्रशिक्षण भी प्रदान करना होता है। नवीन तकनीकी ज्ञान भी भाषण द्वारा दिया जाता है। नए व्यक्तियों एवं नए कर्मचारियों को संगठनात्मक कार्यप्रणाली एवं कार्यपद्धति से भाषण द्वारा सामूहिक रूप से परिचित कराया जाता है एवं आवश्यक निर्देश भी दिए जाते हैं।

(5) औपचारिक कार्यक्रम (Formal Programme) : उद्घाटन, समापन, अभिनन्दन, प्रेरणा, सम्मान, विदाई, शपथ समारोह या अन्य औपचारिक कार्यक्रमों के आयोजन संगठन में होते रहते हैं। उक्त समारोहों एवं कार्यक्रमों में सहभागिता तथा कार्यक्रम को सार्थक स्वरूप प्रदान करने के लिए भी सार्वजनिक भाषण किया जाता है।

3.5 सफल सार्वजनिक भाषण के कदम (Steps for a successful public speaking) :

सफल सार्वजनिक भाषण एक सामूहिक प्रयास होता है जिसके लिए आवश्यक है कि समूह का प्रत्येक सहयोगी अपने आंवाटित उत्तरदायित्व का पूर्ण कूशलता, लगन, कौशल एवं चातुर्थ्य से निर्वाहन करे। प्रस्तुति में वक्ता की केन्द्रीय भूमिका होती है। प्रस्तुतीकरण को सफल बनाने वाले आवश्यक पग निम्नलिखित हैं:

(1) वैयक्तिक गुण (Personal Qualities) :- सफल प्रस्तुति के वक्ता में आत्मविश्वास, आकर्षक, व्यक्तित्व, सहजता, सकारात्मकता, दृष्टिकोण, विनम्रता, उदारता, तीव्र, स्मरण शक्ति, निर्णयन क्षमता, वाक्पटुता तथा प्रभावी सम्प्रेषण कौशल का होना आवश्यक है।

(2) भाषण के अवसर व उद्देश्य का स्पष्ट होना (Be clear about the Occasion and Object of Speaking)

वक्ता को भाषण के सदर्भ, कारणों तथा लक्ष्य स्पष्ट होना चाहिए। उसको प्रस्तुति के समय घटित होने वाली घटनाओं की सम्पूर्ण रूपरेखा बिन्दुवार विवरण मालूम होना चाहिए। वक्ता का दायित्व है कि प्रस्तुति में प्रयोग किए जाने वाले तथ्यों, सांख्यिकी का व्यवस्थित क्रम से संग्रह, अवलोकन एवं अध्ययन कर ले तभी प्रस्तुति प्रभावशाली हो सकती हैं। नवीन उत्पाद को बाजार में उतारते समय वक्ता को उत्पाद के समस्त गुणों, कमियों, तकनीकों, प्रयोग के ढंग, मूल्य, उपयोगिता एवं प्रतियोगी उत्पादों से अपने उत्पाद की गुणवत्ता आदि की जानकारी होना आवश्यक है।

(3) श्रोता विश्लेषण (Audience Analysis) : वक्ता से पूर्व वक्ता को यह

अवश्य ज्ञात होना चाहिए कि भाषण किस वर्ग एवं प्रकार के श्रोताओं के मध्य की जानी है। श्रोता केवल एक जगह विशेष पर एकत्रित व्यक्तियों की भीड़ नहीं होती बल्कि उनका एक मिश्रित एवं सामूहिक व्यक्तित्व होता है। श्रोताओं की संख्या एवं भाषण का औपचारिक अथवा अनौपचारिक स्वरूप भाषण को प्रभावित करता है। श्रोताओं का आयु वर्ग (Age Group), लिंग (Sex), शैक्षिक पृष्ठभूमि (Educational Background), अनुभव (Experience) राष्ट्रियता (Nationality) आदि का वक्ता को पूर्व ज्ञान होना आवश्यक है, क्योंकि तदनुरूप शब्दों का चयन, वाक्य विन्यास स्तर, उदाहरण, प्रसंग, व्याख्या आदि का प्रयोग किया जाना चाहिए।

यदि वक्ता अधिकांश श्रोताओं से पूर्व परिचित है, तो प्रस्तुति अधिक प्रभावी रहती है। इसलिए अपरिचित वक्ता कभी-कभी भाषण से पूर्व श्रोताओं से मिलता है।

वक्ता द्वारा श्रोताओं के विश्लेषण की प्रक्रिया भाषण काल में भी सतत रूप से की जानी चाहिए। वक्ता को सदैव अपने आंख और कान श्रोताओं पर केन्द्रित रखने चाहिए। श्रोताओं की प्रतिक्रिया वक्ता द्वारा अविलम्ब महसूस की जानी चाहिए। श्रोताओं की दैहिक भाषा, मुखाभिव्यक्ति वक्ता को तुरन्त पर्याप्त— फीडबैक प्रदान करती है। श्रोताओं की उत्तेजना, कानाफूसी, खामोशी आदि भी वक्ता को भाव सम्प्रेषित करती है।

(4) भाषण स्थल का विचार (Have an Idea of the Location) : सफल प्रस्तुति के लिए स्थल (जगह) एक महत्वपूर्ण घटक है। भाषण में श्रोताओं की संख्या के अनुरूप आरामपूर्वक बैठने की पर्याप्त जगह, अनुकूल वातावरण एवं तापमान, ध्वनि, प्रकाश की सन्तोषजनक व्यवस्था है, श्रव्य-दृश्य यन्त्रों एवं अन्य सहायक सामग्री का व्यवस्थित संचालन भाषण को पर्याप्त रूप से प्रभावित करते हैं। अतः आयोजकों तथा वक्ता को भाषण के पूर्व आयोजन स्थल का निरीक्षण कर आवश्यक पूर्वानुमान लगा लेने चाहिए अन्यथा वक्ता चाहे जितना सार्थक प्रयास करे प्रस्तुति सफल नहीं हो पाती, जैसे—आयोजन स्थल पर ध्वनि इको (पुनरावृत्ति) करती है तो श्रोताओं में सन्तोषजनक ढंग से सुनायी नहीं देगा या यदि स्थल का तापमान काफी गर्म है, तो लोग घुटन महसूस करेंगे, उक्त दशाओं में वक्ता द्वारा प्रभावी प्रस्तुति को नीरस एवं बकवास समझेंगे।

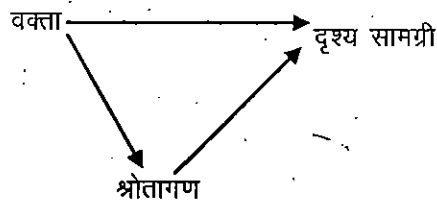
(5) भाषण की विधि का निर्धारण (Determination of the Method of Speaking) : यद्यपि भाषण का ढंग प्रस्तुत किए जाने वाले कथनों की पूर्ति एवं प्रस्तुति अवसर पर निर्भर करता है, लेकिन सफल भाषण के लिए प्रस्तुति करने का ढंग पूर्व-निर्धारित कर लेना चाहिए। सामान्य रूप से सार्वजनिक भाषण की तीन प्रमुख विधियां हैं:

देने में सक्षम हो जाता है। घबराहट से उबरने के लिए निम्न तत्वों को ध्यान में रखना चाहिए :

- (i) पूर्व अभ्यास बार-बार करना चाहिए।
- (ii) भाषण पर विचार केन्द्रित करना।
- (iii) भाषण से पूर्व स्वयं को तरोताजा बनाना तथा मानसिक दबाव को कम करना।
- (iv) भाषण के समय सीधे सभी श्रोताओं की ओर नजर घुमाना।
- (v) सामान्य स्वर में कम गति से बोलना।
- (vi) क्षणिक विराम पर आवाज रहित गहरी सांस लेना चाहिए।

(10) सहायक दृश्य सामग्री का प्रयोग (Use of Visual Aids) : प्रस्तुति की सूचनाओं, कथनों, विचारों के प्रभावी सम्प्रेषण के लिए दृश्य सहायक सामग्री जैसे—चार्ट, ब्लैकबोर्ड, चित्र, नक्शा, पिक्चर, स्लाइड, पारदर्शी स्लाइड, कम्पैक्ट डिस्क (C.D.) आदि का उपयोग महत्वपूर्ण होता है। प्रस्तुति में प्रयोग की जा सकने वाली दृश्य सामग्री की एक लम्बी श्रृंखला है, किन्तु वक्ता को प्रस्तुति के लिए सर्वाधिक उपयुक्त व उपलब्ध सामग्री का पूर्व चयन कर लेना चाहिए। दृश्य सहायक सामग्री का प्रस्तुति के समय प्रयोग भी एक कौशल है। अतः इसको प्रयोग करते समय निम्न तत्वों को ध्यान में रखना चाहिए :

- (i) दृश्य सहायक सामग्री का प्रयोग कथन/सन्देश की मुख्य विषय वस्तु (Key part) के लिए किया जाना चाहिए।
- (ii) दृश्य सहायक सामग्री ऐसे स्थान पर लगाई जानी चाहिए जिससे सभी श्रोता सुविधा से देख सकें तथा वक्ता भी बिना अवरोध के उस तक प्रस्तुति करते समय पहुंच सकें।
- (iii) दृश्य सहायक सामग्री इस ऊंचाई अथवा कार्नर पर हो जिसमें दृश्य सामग्री की व्यवस्था करते समय वक्ता श्रोताओं के लिए स्वयं बाधा न बने। दृश्य सामग्री का स्थान लगभग इस प्रकार होना चाहिए:



- (iv) कोई भी दृश्य सामग्री लम्बे समय तक श्रोताओं के मध्य न रहे। इससे श्रोताओं का ध्यान बटता है।
- (v) स्लाइड्स तथा पारदर्शी स्लाइड का प्रदर्शन क्रम ढंग से पूर्व नियोजित

कर लेना चाहिए।

(vi) छड़ी अथवा स्टीकर द्वारा पिक्चर समझाते समय वक्ता की नजर श्रोताओं पर होनी चाहिए।

(vii) नवीन उत्पाद पर नवीन शोध वस्तु को सम्पूर्ण प्रस्तुति काल में ऐसे स्थान पर रखना चाहिए जिसे दर्शक सुविधापूर्वक देख सके।

(11) **प्रश्नोत्तर काल (Question-Answer Session)** : भाषण के उपरान्त आवश्यकतानुसार प्रश्नोत्तर काल का भी अपना विशिष्ट महत्व है। प्रश्नोत्तर काल में प्रस्तुतिकर्ता का उत्तरदायित्व है कि वह श्रोताओं की जिज्ञासाओं को शान्त करे एवं सन्तोषजनक उत्तर अवश्य दे। प्रश्नों की पुनरावृत्ति पर उत्तेजित न होकर विनम्रतापूर्वक उस बिन्दु की सापेक्षिक प्रश्न के संदर्भ में व्याख्या करें। अग्रिम पंक्ति व अन्तिम पंक्ति के मध्य सभी श्रोताओं के प्रश्नों का उत्तर देना चाहिए। वक्ता प्रस्तुति से थका हुआ होता है एवं प्रतिपुष्टि (Feedback) प्राप्त करना चाहता है। अतः वह प्रश्नोत्तरकाल जल्दबाजी में निपटाने का प्रयास करता है। ऐसा न करके वक्ता को धैर्य रखना चाहिए, क्योंकि प्रस्तुति का वास्तविक समापन प्रश्नोत्तरकाल के बाद ही होता है।

3.6 विचार-विनिमय द्वारा निर्णयन : आशय, उपागम एवं तैयारी के बिन्दु : (Negotiation Meaning, Approaches and Steps for Preparation)

आधुनिक व्यवसाय में विचार-विनिमय द्वारा निर्णयन (Negotiation) व्यवसाय की श्रमिक समस्याओं को सुलझाने से लेकर, संविलयन को संभव बनाने तथा एक नये व्यवसाय की स्थापना तक अपनी विशेष एवं महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जब भी दो पक्ष किसी विवाद/संघर्ष में फंस जाते हैं और उसका सर्वमान्य निपटारा चाहते हैं तो बातचीत का रास्ता ही अपनाया जाता है। इस प्रकार विवाद में फंसे लोग यह चाहते हैं कि बातचीत से एक ऐसा रास्ता निकल आये जो सभी पक्षों को स्वीकार्य हो। विचार-विनिमय द्वारा निर्णयन एक बहुत ही नाजुक क्रिया है और इसे करने के पूर्व एवं इसके बाद अनेक बिन्दुओं पर विचार आवश्यक है जो इसे वार्तालाप को सफल बनाता है।

विचार-विनिमय द्वारा निर्णयन के उपागम (Approaches of Negotiation):

संघर्ष प्रबन्धन में विचार-विनिमय विभिन्न तरीकों से किया जाता है। किसी भी विचार-विनिमय का परिणाम निम्नलिखित तरीकों पर निर्भर करता है:

सद्भाव और व्यवहार कुशलता पर निर्भर करती है। दोनों पक्षों का एक दूसरे की बातों का सम्मान करना भी विचार-विनिमय की सफलता का मुख्य बिन्दु होना चाहिये।

3.7 सारांश (Summary) :

किसी भी संगठन के लिये 'रिपोर्ट' एक महत्वपूर्ण दस्तावेज होता है। निर्णयन प्रक्रिया में रिपोर्ट की बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। व्यवसाय प्रमुख के साथ-साथ उससे जुड़े विभिन्न पक्षों जैसे : शासन, ग्राहक, अंशधारी, आपूर्तिकर्ता, लेनदार एवं जनसाधारण आदि सभी के लिये रिपोर्ट का महत्व है।

रिपोर्ट को प्रस्तुत करते समय व्यापक विचार-विमर्श एवं सर्वेक्षण किया जाता है और इन्हीं सूचनाओं के आधार पर रिपोर्ट तैयार की जाती है। रिपोर्ट तैयार करना और इसका प्रस्तुतीकरण एक कला है। एक अच्छी रिपोर्ट में सत्यता, स्पष्टता, सूक्ष्मता, विषयानुसार होना, एवं उचित प्रारूप में होना आवश्यक है। रिपोर्ट का प्रारूप इस प्रकार होता है : सबसे पहले रिपोर्ट का शीर्षक दिया जाता है फिर उसकी तिथि तथा विषय की भूमिका देनी होती है। रिपोर्ट के मुख्य भाग को विभिन्न अनुच्छेदों में बांटकर समस्त सूचना एवं आंकड़े दिये जाते हैं। अन्त में निष्कर्ष एवं सुझाव दिया जाता है और उसके नीचे रिपोर्ट प्रस्तुत करने वाले का हस्ताक्षर होता है। बिना हस्ताक्षर के रिपोर्ट का कोई महत्व नहीं है। रिपोर्ट के साथ आवश्यक दस्तावेज प्रमाण के रूप में नत्थी किये जाते हैं। कम्पनी संगठन में वैधानिक रिपोर्ट, संचालकों की रिपोर्ट, वार्षिक रिपोर्ट, आदि महत्वपूर्ण हैं।

उद्योग, व्यापार एवं वाणिज्य जगत में सार्वजनिक भाषण (Public Speaking) को सार्वजनिक मौखिक अभिव्यक्ति या मौखिक सम्प्रेषण के रूप में जाना जाता है। व्यावसायिक जगत में अनेक ऐसे अवसर आते हैं जिसमें सार्वजनिक भाषण दिया जाता है जैसे : नये उत्पाद या सेवा प्रारम्भ करने पर, प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरू करने पर, विचारगोष्ठी, सेमिनार अथवा कान्फ्रेंस आयोजित करने पर, व्यावसायिक क्रियाओं की जानकारी देने के लिये आदि। सार्वजनिक भाषण का उद्देश्य : सूचना देना, मूल्यांकन एवं विश्लेषण करना, श्रोताओं/दर्शकों को प्रभावित करना, निर्देश देना, तकनीकी ज्ञान देना अथवा कुछ औपचारिक अवसर जैसे अभिनन्दन, उद्घाटन, समापन, विदाई, शपथ ग्रहण समारोह आयोजित करना होता है। अच्छे सार्वजनिक भाषण में वक्ता के कुछ व्यक्तिगत गुण जैसे : आत्मविश्वास, व्यक्तित्व, सहजता, विनम्रता, स्मरण शक्ति, वाक्पटुता एवं निर्णयन क्षमता आदि महत्वपूर्ण होते हैं। वक्ता को भाषण के उद्देश्य, श्रोताओं का विश्लेषण, प्रस्तुति स्थल, प्रस्तुति की विधि, प्रस्तुति की रूपरेखा, सहायक सामग्री, दैहिक भाषा (Body Language) तथा प्रश्नोत्तर काल की पर्याप्त जानकारी एवं पूर्वाभ्यास कर लेना चाहिये। तभी सार्वजनिक भाषण अच्छी तरह

से सम्पन्न हो पाता है।

विचार-विनिमय द्वारा निर्णयन (Negotiation) का व्यावसायिक जगत में विशेष महत्व है। विचार-विनिमय व्यवसाय का प्राण कहा जाता है। बिना इस के अच्छे व्यवसाय की कल्पना ही नहीं की जा सकती है। व्यवसाय में चाहे श्रमिक समस्याओं को सुलझाना हो, संविलयन का मामला हो या नये व्यवसाय की स्थापना करना हो विचार-विनिमय महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जब भी किसी प्रकार के विवाद या संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है तो विचार-विनिमय वार्तालाप के माध्यम से सभी पक्षों को शान्त किया जाता है। वार्तालाप में निम्नलिखित तरीके अपनाये जाते हैं: सौदेबाजी तरीका, जीत-जीत तरीका, समझौतावादी तरीका एवं हार-हार तरीका। कब कौन सा उपागम (Approach) उपयुक्त होगा यह परिस्थितियों पर निर्भर करता है फिर भी विचार-विनिमय की तैयारी में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिये : वार्तालाप में शामिल होने वाले व्यक्तियों के बारे में जानकारी पहले से कर लेना, वार्तालाप के उद्देश्यों, अपनी वरीयता, और विकल्पों की जानकारी रखना, वार्तालाप के दौरान परस्पर व्यवहार को शालीन एवं मर्यादित रखना, वार्तालाप के दौरान भावुकता तथा अतार्किकता पर नियंत्रण रखना। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि विचार-विनिमय द्वारा निर्णयन (Negotiation) पूर्व निर्धारित सिद्धान्तों के आधार पर नहीं हो सकता। यह परिस्थिति एवं समय को देखकर तत्काल निर्णय लेकर सम्पादित करना होता है।

3.8 शब्दावली (Key Words)

- रिपोर्ट :** यह एक लेखा है जो किसी एक या अधिक मामलों की छानबीन के पश्चात् सुझाव एवं निष्कर्ष बताती है।
- वैधानिक रिपोर्ट :** कम्पनी का एक महत्वपूर्ण प्रपत्र है जो कम्पनी के निर्माण के सम्बन्ध में सदस्यों को जानकारी देती है।
- वार्षिक रिपोर्ट :** कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा में रखी जाने वाली रिपोर्ट जिसमें लाभ-हानि खाता, चिट्ठा, संचालकों की रिपोर्ट, अंकेक्षक की रिपोर्ट एवं अध्यक्ष का भाषण शामिल होता है।
- अनुक्रमणिकायें :** जिन दस्तावेजों/प्रमाणों के आधार पर रिपोर्ट लिखी जाती है वह सभी कागजात रिपोर्ट के साथ नत्थी किये जाते हैं।
- सार्वजनिक भाषण :** विभिन्न व्यक्तियों, समूहों, श्रोताओं के मध्य सार्वजनिक

- रूप से बोलना—व्यावसायिक सम्प्रेषण का महत्वपूर्ण माध्यम है।
- दैहिक भाषा : प्रस्तुति करते समय वक्ता की भावमंगिमा, मुद्रा, मुखाभिव्यक्ति आदि।
- प्रश्नोत्तर काल : प्रस्तुति के उपरान्त श्रोताओं की जिज्ञासा को शान्त करने के लिये उनके प्रश्नों का उत्तर देना या प्रतिपुष्टि (Feedback) लेना।
- विचार—विनिमय : व्यावसायिक कार्यों / समस्याओं के सर्वमान्य निबटारों के लिये किया गया विचार—विनिमय (Negotiation) एक प्रकार का मौखिक सम्प्रेषण (Oral Communication) है।

3.9 अभ्यास के लिये प्रश्न : (Question for Exercise)

- 1— रिपोर्ट प्रस्तुतिकरण से क्या आशय है? रिपोर्ट का महत्व बताते हुए एक अच्छी रिपोर्ट के आवश्यक गुण बताइये।
What is Presentation of Report? Stating the importance of report explain element of a good report.
- 2— रिपोर्ट का प्रारूप दीजिये और एक रिपोर्ट लिखने की प्रक्रिया बताइये।
Give a proforma of a Report and state its Writing process.
- 3— रिपोर्ट के नमूने दीजिये।
Give specimen of Reports.
- 4— वैधानिक रिपोर्ट क्या है? इसका नमूना दीजिये।
What is a Statutory Report? Give its specimen.
- 5 — एक कम्पनी के संचालक मण्डल का काल्पनिक वार्षिक प्रतिवेदन तैयार कीजिये।
Prepare an imaginary annual report of the Board Of Director of a company.
- 6 — संचालक रिपोर्ट क्या है? एक कॉटन टैक्सटाइल्स कम्पनी के अंशधारियों के लिये इस प्रकार की रिपोर्ट लिखिये।
What is a Director's Report? Draft such a report for the shareholders of a Cotton Textile Company.
- 7— सार्वजनिक भाषण क्या है? इसके उद्देश्य एवं सफल प्रस्तुतिकरण के कदम बताइये।

What is Public Speaking? Discuss its Objectives and Steps for Successful Presentation.

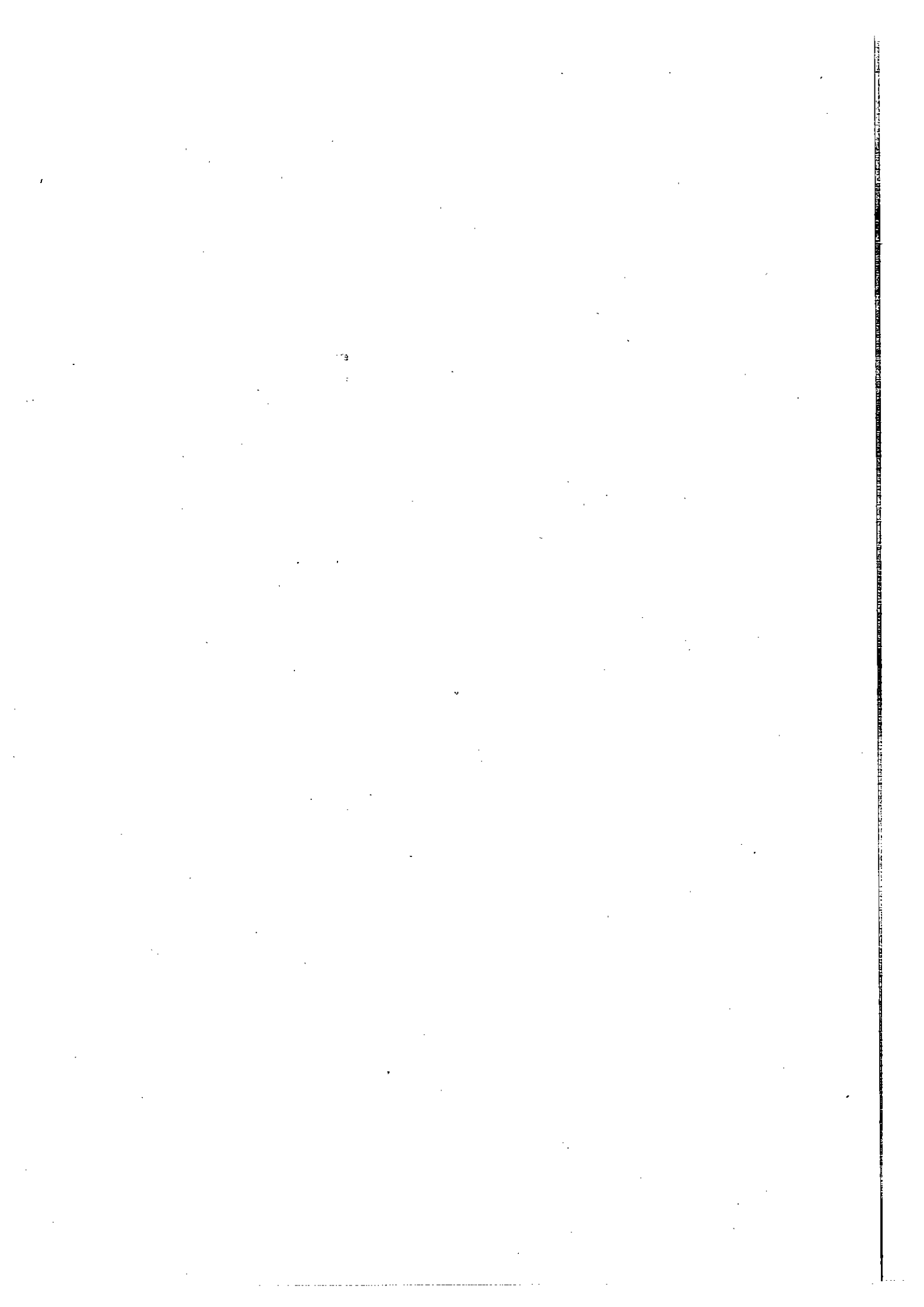
- 8— विचार-विनिमय द्वारा निर्णयन से आप क्या समझते हैं? इस के उपागमों एवं तैयारी के बिन्दुओं की विवेचना कीजिये।

What do you mean by Negotiation? Discuss its Approaches and Steps for Preparation.

रिपोर्ट प्रस्तुतिकरण,
सार्वजनिक भाषण एवं
विचार-विनिमय द्वारा
निर्णयन

3.10 उपयोगी पुस्तकें : (Useful Books)

- कुमार दिनेश : व्यावसायिक संचार एवं कम्प्यूटर, आस्था पाब्लिकेशन, इलाहाबाद।
- Gupta N and Mahajan P : Business Communication, Sahitya Bhawan Publication, Agra.
- पाटनी आर०एल० : व्यावसायिक संचार, संजीव प्रकाशन, मेरठ
- अग्रवाल पी० के० एवं मिश्रा ए०के० : व्यावसायिक संचार, साहित्य भवन पाब्लिकेशन्स आगरा।
- Sachdeva S : Business Communication, Lakshami Narain Agrawal, Agra.
- Keith Devis : Human Retation in Businees.
- Newman and Summer: The Process of Management
- Rustam J Mehta: Effective Business Letters
- Majumdar M.: Commercial Correspondence.





उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

M.Com-04 (N)
संचार कौशल एवं
शोध विधि

खण्ड

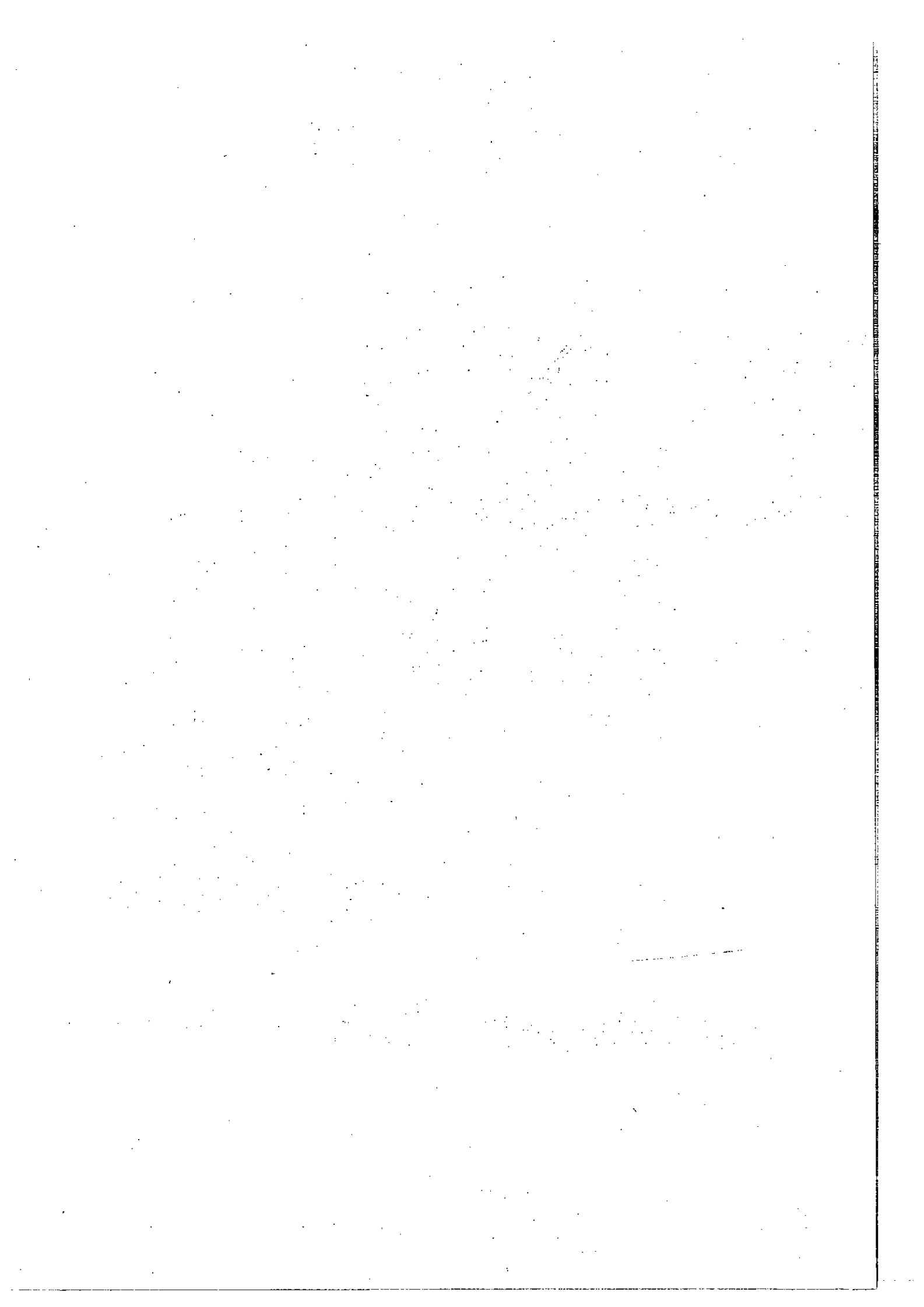
2

सम्प्रेषण कुशलताएँ

इकाई-1	5
व्यावसायिक लेखन कौशल	
इकाई-2	21
श्रवण कौशल	
इकाई-3	35
गैर शाब्दिक सम्प्रेषण	
इकाई-4	55
साक्षात्कार एवं बायोडाटा निर्माण	

खण्ड-2 (परिचय)

इस खण्ड में विशेषतः सम्प्रेषण कुशलताओं के बारे में चर्चा की गयी है। प्रथम इकाई व्यावसायिक लेखन कौशल में मुख्यतः व्यावसायिक लेखन के प्रकार एवं लेखन की प्रक्रिया की चर्चा की गयी है। चूँकि व्यावसायिक लेखन सदैव से ही व्यावसायिक गतिविधियों की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा है तथा यह व्यवसाय की सफलता एवं असफलता के मापदण्डों को भी प्रत्यक्षाया अप्रत्यक्षरूप से प्रभावित कर सकता है। द्वितीय इकाई में सम्प्रेषण प्रक्रिया के सापेक्ष श्रवण कुशलताओं की चर्चा की गयी है। श्रवण प्रक्रिया प्रभावी बनाने के लिए हमें इसके विभिन्न पहलुओं को जानना अतिआवश्यक है। इसको ध्यान में रखते हुए श्रवण रणनीतियाँ तथा श्रवण बाधाओं की चर्चा इस इकाई में की गयी है। तृतीय इकाई में सम्प्रेषण के अन्तर्गत आने वाले गैर शाब्दिक सम्प्रेषण की चर्चा विभिन्न मुद्राओं तथा भाव भंगिमाओं की सहायता से की है तथा यह बताने का प्रयास किया है कि गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का शब्दिक सम्प्रेषण के साथ अत्यधिक महत्वपूर्ण है। अन्तिम, चतुर्थ इकाई में साक्षात्कार के लिए महत्वपूर्ण तथ्यों को बताया गया है। तथा बायोडाटा निर्माण हेतु महत्वपूर्ण बातों का उल्लेख किया है।



इकाई - 1 : व्यावसायिक लेखन कौशल

इकाई की रूपरेखा-

- 1.0 उद्देश्य
- 1.1 प्रस्तावना
- 1.2 व्यावसायिक सन्देश एवं उनके प्रकार
- 1.3 व्यावसायिक सन्देश लेखन की प्रक्रिया
- 1.4 व्यावसायिक पत्र के सामान्य भाग
- 1.5 व्यावसायिक पत्रों के प्रकार
- 1.6 सारांश
- 1.7 महत्वपूर्ण शब्द
- 1.8 स्वपरख प्रश्न
- 1.9 अन्य महत्वपूर्ण पाठन स्रोत

1.0 : उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात आप निम्नांकित उद्देश्यों की पूर्ति करने में सक्षम होंगे:

- व्यवसाय में लिखित कौशल के महत्व को समझने एवं सीखने में,
- विभिन्न प्रकार के व्यावसायिक संदेशों को लिखने में,
- व्यावसायिक संदेशों को सीधी एवं गैर सीधी विधाओं को जानने में, तथा
- व्यावसायिक संदेशों की प्रक्रिया को समझने में।

1.1 प्रस्तावना

आज के युग में व्यावसायिक गतिविधियों में लेखन का अत्यधिक महत्व है। आपके सोचने की, विचारों की क्षमता कितनी भी मजबूत क्यों न हो परन्तु यदि आप अपने विचारों को सही प्रकार से लिखने में असमर्थ हैं तो आपकी सफलता पर अवश्य ही प्रतिकूल असर पड़ता है। लेखन का महत्व व्यावसायिक गतिविधियों में इसलिए भी अधिक है क्योंकि लिखित पत्रों को या फाइलों को भविष्य में अभिलेखों के रूप में सन्दर्भ

या जाँच आदि विभिन्न विषयों के लिए प्रयोग किया जाता है। रिपोर्ट, मैनुअल, निर्देशिका, व्यावसायिक योजनाएं, मेमोरेण्डम, पत्र, ई-मेल आदि विभिन्न प्रकार के लिखित अभिलेख न केवल व्यावसायिक क्रियाकलापों के बारे में सूचनाएं प्रदान करते हैं अपितु पाठकों को सन्तुष्ट करने में, बल प्रदान करने में, सम्बन्ध विकसित करने में एवं सूचनाओं के संग्रह करने आदि में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आजके सूचना प्रौद्योगिकी के युग में भी लेखन कुशलता का महत्व कम नहीं हुआ है। आज के नियोक्ता ऐसे अभ्यर्थियों की खोज में रहते हैं जो कुशल रूप से लिखित एवं मौखिक सम्प्रेषण जानते हों। यदि सहायक गण अपने अधिकारी द्वारा दिये गये निर्देशों को सही रूप से संदेश में परिवर्तित करने में सफल नहीं हो पाते हैं तो इसका बहुत ही व्यापक रूप से प्रतिकूल असर उनके व्यवसाय पर पड़ सकता है। इसका तात्पर्य यह है कि आप चाहे किसी भी नौकरी या व्यवसाय में हो परन्तु आपको प्रायः अपने व्यावसायिक संदेशों के द्वारा अपने उच्चाधिकारी के साथ, कनिष्ठ सहायक अधिकारी के साथ, अंकेक्षक के साथ, बैंक के साथ, उपभोक्ता आदि के साथ सम्प्रेषण करना अत्यन्त आवश्यक होता है। इसके अतिरिक्त लिखित सम्प्रेषण की आवश्यकता आपको अपने दैनिक मामलों के लिए, शुभकामना संदेशों के लिए, ऋणात्मक संदेशों के लिए या सन्तुष्टि संदेशों आदि के लिए अपनी व्यावसायिक भूमिकाओं के निर्वहन के लिए करना पड़ सकता है। इस इकाई में लिखित संदेशों के द्वारा एक प्रभावी लिखित सम्प्रेषण के बारे में आपको बताया जाएगा।

1.2 लिखित व्यावसायिक संदेश एवं उनके प्रकार

लिखित व्यावसायिक संदेशों का महत्व हमेशा से ही रहा है तथा आगे भी बना रहेगा भले ही इसको प्रयोग करने के माध्यम बदल गये हों। ऐसा इसलिए है क्योंकि किसी भी भूतकाल की घटना को सिद्ध करने के लिए लिखित अभिलेख ही सबसे प्रभावशाली तथा सबसे आसानी से प्रयोग किये जाने वाला अभिलेख माना जाता है। चाहे आप सरकारी विभाग में हों या गैर सरकारी, या निजी क्षेत्र की कम्पनी में, लिखित संदेशों/लिखित सम्प्रेषण के बिना किसी भी प्रकार के व्यावसायिक संगठन को चलाया जाना असंभव है। लिखित सम्प्रेषण पर ही सभी संगठनों के आश्रित होने का एक मुख्य कारण यह भी है कि इसको एक स्थिर या सदैव के लिए प्रमाण के रूप में रखा जा सकता है। आज के युग में जब कभी कोई कानूनी प्रक्रिया होती है तो लिखित अभिलेखों की सहायता से ही मामले का निस्तारण किया जाता है। लिखित अभिलेखों के द्वारा ही हम

अपने विचारों को व्यक्त कर सकते हैं तथा अत्यन्त ही सरलता एवं सुगमता से प्रयोग में ला सकते हैं। इसी के साथ साथ लिखित सम्प्रेषण की कुछ कमजोरियाँ भी हो सकती हैं जैसे कि इनको लिखते समय अत्यन्त सावधानी बरतनी चाहिए। उचित शब्दों का प्रयोग, सरल मुहावरों का प्रयोग सरल भाषा का प्रयोग इत्यादि कुछ ऐसी सावधानियाँ हैं जिनको नहीं बरतने पर पाठक गण पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। प्रायः व्यावसायिक संदेश निम्नांकित प्रकार के हो सकते हैं

(क) धनात्मक संदेश या अच्छी खबर वाले संदेश

धनात्मक संदेश से हमारा तात्पर्य उन संदेशों से होता है जो किसी व्यक्ति विशेष के बारे में अच्छी खबर देते हैं या किसी को धनात्मक रूप में प्रतिबिम्बित करते हैं। उदाहरणार्थ धन्यवाद संदेश, बधाई संदेश, समायोजन संदेश, तारीफ, गुणगान करने वाले संदेश आदि। प्रायः उच्चाधिकारी अपने कार्यालय के अधीनस्थ या समकक्ष कर्मचारियों के या उनके सम्बन्धियों के विवाह आदि के अवसर पर बधाई संदेश भेजते हैं या किसी सदस्य की मृत्यु के अवसर शोक संदेश भेजते हैं, उन्नति होने पर बधाई संदेश भेजते हैं आदि। ये सभी धनात्मक संदेश के उदाहरण हैं।

(ख) ऋणात्मक या बुरी खबर देने वाले संदेश

ये वे संदेश होते हैं जो पाठक पर ऋणात्मक प्रभाव डालते हैं या उनको दुःखी कर देते हैं। प्रायः इस प्रकार के संदेशों का प्रयोग कर्मचारियों को दण्डात्मक कार्यवाही के फलस्वरूप दिया जाता है। उदाहरणार्थ, यदि कोई मानव संसाधन प्रबन्धक अपने किसी कर्मचारी को कार्य के पूरा न करने पर कम्पनी से निकालने का आदेश दे या कोई बैंक किसी व्यक्ति के ऋण के अस्वीकार कर दे आदि।

(ग) उदासीन या दैनिक प्रयोग के संदेश

इस प्रकार के संदेशों का महत्व धनात्मक संदेशों के ही लगभग समतुल्य या अधिक भी हो सकता है। परन्तु प्रायः इन संदेशों में भावनात्मकता की कमी होती है। उदाहरणार्थ, किसी प्रार्थना पत्र के लिए प्राप्ति का संदेश, पूछताछ संदेश, क्रेडिट सूचना का संदेश, व्यक्तिगत परीक्षण इत्यादि के संदेश इस श्रेणी में आते हैं। अर्थात् हम कह सकते हैं कि किसी भी व्यावसायिक गतिविधि को संचालित करने में जो भी दैनिक संदेश साधारण रूप में प्रयोग किये जाते हैं उन्हें उदासीन संदेशों की श्रेणी में रखा जाता है।

1.3 व्यावसायिक सन्देश लेखन की प्रक्रिया

व्यावसायिक सन्देश को लिखने से पूर्व यह आवश्यक है कि हम इसको लिखने की सोच या विधा के बारे में चर्चा कर लें। प्रायः व्यावसायिक सन्देश को हम सीधे तौर पर या गैर सीधे तौर पर लिख सकते हैं। अधिकांश व्यावसायिक सन्देश सीधे तौर पर लिखे जाते हैं। यदि आपको किसी को किसी विषय के बारे में सूचित करना है तो आप सीधे तौर पर सन्देश लिखेंगे। इस प्रकार की विधा में लेखक एवं पाठक दोनों के ही उद्देश्य समान होते हैं। सीधे तौर पर लिखे गये सन्देशों में, सन्देश एक दम साफ तथा स्पष्ट होता है तथा किसी भी प्रकार के भ्रम की स्थिति नहीं होती है।

उदाहरणार्थ, “विश्वविद्यालय में राष्ट्रपति महोदया के आने के उपलक्ष्य में तैयारियों को दृष्टिगत रखते हुए 20 जून 2010 तक विश्वविद्यालय के सभी अवकाश निरस्त किये जाते हैं तथा सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों को यह निर्देश दिया जाता है कि वे उक्त दिनांक तक कोई भी छुट्टी नहीं लेंगे।”

उपरोक्त सन्देश में सीधे तौर पर यह स्पष्ट किया गया है कि राष्ट्रपति महोदया के विश्वविद्यालय में आगमन के उपलक्ष्य में सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों का विश्वविद्यालय में रहना अनिवार्य है।

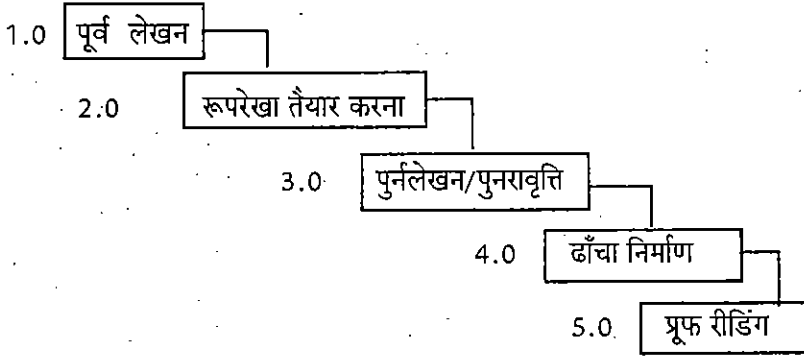
इसके अतिरिक्त हम गैर सीधे तौर पर भी सन्देश लिख सकते हैं इसका प्रयोग प्रायः इन परिस्थितियों में किया जाता है जब श्रोता या पाठक सन्देश सुनने के लिए तैयार न हों या रूचि न ले रहे हों या अन्य कोई बाधा हो। इस प्रकार के सन्देशों को एकदम से व्यक्त नहीं किया जाता है अपितु पहले भूमिका बनाकर श्रोताओं में रूचि पैदा करते हैं तथा उसके बाद मुख्य सन्देश की चर्चा करते हैं। लेखन में भी इस प्रकार की विधा को प्रयोग में लाने के लिए पहले हम परिस्थिति को ध्यान में रखकर गैर सीधी बात लिखते हैं। उसके पश्चात इससे जोड़ते हुए अपने मुख्य विषय की बात लिखते हैं।

उदाहरणार्थ, जब हम पहले विषय से सम्बन्धित कोई घटना क्रम का वर्णन करते हैं तथा उसके बाद उस घटना के मुख्य विषय की चर्चा करें जैसे कि, आपने कल के समाचारों में देखा या सुना होगा कि एक 16 वर्ष की छात्रा ने आत्मदाह कर लिया। क्या आपने इसके कारणों को जानने का प्रयत्न किया। वह बालिका अपने भविष्य के प्रति आशंकित थी तथा उसे लगता था कि उसके कम अंक आने के कारण वह एक अच्छा

भविष्य सुनिश्चित नहीं कर सकेगी। क्या हम लोगों ने कभी इस बात की चर्चा अपने परिवार में की है कि एक अच्छे भविष्य से हमारा तात्पर्य क्या है। क्या समाज में फैली भौतिकतावादी सोच एक अच्छे भविष्य के निर्माण पर हावी हो रही है और उसी को हम अपने बच्चों पर थोप रहे हैं। तो हमें आवश्यकता इस बात की है कि एक अच्छे भविष्य के निर्माण में आने वाले सभी कारकों का खुल कर वर्णन तथा उनकी प्रासंगिकता की हम चर्चा करें जो हमारा आपका मुख्य विषय है।

इस प्रकार आपने देखा कि मुख्य विषय की चर्चा करने से पूर्व हम श्रोताओं या पाठकों का ध्यान आकर्षण करने के लिए एक अन्य वास्तविक घटना का वर्णन करते हैं जो कि गैर सीधे तौर पर संदेश निर्माण का एक उदाहरण है।

व्यावसायिक संदेश लेखन के मुख्यतः पाँच पद हो सकते हैं जिसको हम निम्नांकित रेखाचित्र के द्वारा प्रदर्शित कर सकते हैं।



1.0 पूर्वलेखन - पूर्वलेखन एक प्रकार की नियोजन प्रक्रिया होती है जिसके अन्तर्गत हम लिखने वाले विषय के बारे में सोच विचार करते हैं या इस मुख्य विषय से सम्बन्धित अन्य उपविषयों की प्रासंगिकता के बारे में विचार करते हैं। पूर्व लेखन के दौरान हमें निम्नांकित बातों का ध्यान रखना चाहिए :

- अपने लेखन के उद्देश्य का निर्धारण करो
- अपने पाठक को जानों तथा पहचानो
- अपने संदेश के लिए सूचना/डाटा की खोज करो एवं उसे एकत्रित करो
- संदेश को संगठित करो तथा एक खाका तैयार करो।

प्रथमतया, हम अपने व्यावसायिक संदेश को लिखने से पूर्व उसके उद्देश्यों के बारे में सोचते हैं। आपने पिछले एक सप्ताह में अपने आफिस में जितने भी व्यावसायिक संदेशों

का निर्माण किया उसके बारे में मनन करें तथा इन व्यावसायिक संदेशों के लेखन के द्वारा आप इन संदेशों के उद्देश्यों की कितनी पूर्ति कर पाए यह भी एक आवश्यक बिन्दु है।

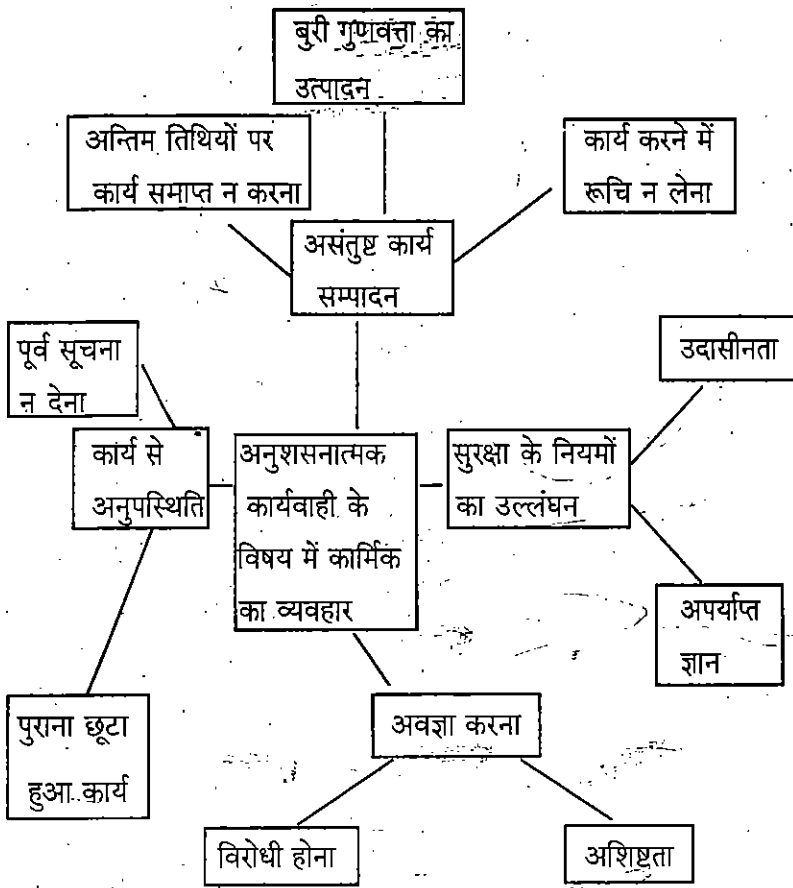
इसके अतिरिक्त जब आप अपने लेखन उद्देश्य को बखूबी चिन्हित कर लेते हैं तो उसके पश्चात वे कौन से व्यक्ति है जो इस संदेश को पढ़ेंगे उन्हें ध्यान में रखकर अपने संदेश की रूपरेखा, भाषा, माध्यम इत्यादि को चयनित करनी चाहिए।

जब तक आप अपने संदेश को पाठकों या श्रोताओं से जोड़ पाने में सक्षम नहीं होंगे तब तक सम्प्रेषण के पूर्ण होने में संदेह हो सकता है। इसके लिए आवश्यक है कि आप अपने पाठकों के समझने वाली भाषा, माध्यम आदि का प्रयोग करें। यदि आप अपने संदेश के उद्देश्यों को पाठक के उद्देश्यों से मिला कर लिखें तो आपके उद्देश्यों की पूर्ति आसानी से हो सकती है। अर्थात् संदेश लिखने के पूर्व हमें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि हम "मैं" से "आप" की सोच सुनिश्चित करें अर्थात् मैं क्या लिख सकता हूँ से मेरा पाठक या आप क्या समझ सकते हैं की सोच रखके संदेश का निर्माण करें। जब भी आप किसी व्यावसायिक संदेश को लिखें तो इसके पूर्व आपको मुख्य विषय के बिन्दुओं को उल्लिखित कर लेना चाहिए। उदाहरण के रूप में हम अपने व्यावसायिक संदेश को पहले 4 बिन्दुओं में विभाजित कर सकते हैं।

- 1) असंतुष्ट कार्य सम्पादन
- 2) सुरक्षा विषयों का उल्लंघन
- 3) अवज्ञाकारी होना
- 4) कार्य से अनुपस्थित होना ।

हम उपरोक्त उदाहरण में मुख्य चार बिन्दुओं को पुनः उप बिन्दुओं में विभाजित कर सकते हैं। अर्थात् असंतुष्ट कार्य सम्पादन के अन्तर्गत समयानुसार कार्य न करने की प्रवृत्ति, बुरी गुणवत्ता का उत्पादन, कार्य में रूचि न लेना आदि हो सकता है। इसी प्रकार सुरक्षा नियमों के उल्लंघन, अवज्ञाकारी होना तथा कार्य से अनुपस्थित होने को भी संगठन के अनुसार उपबिन्दुओं में विभक्त कर सकते हैं।

निम्नांकित रेखाचित्र के अनुसार हम किसी कार्मिक के व्यवहार को किसी संगठन के अनुसार अनुशासनात्मक कार्यवाही के हेतु दर्शा सकते हैं :



- किसी संगठन के अन्तर्गत अनुशासनात्मक कार्यवाही से सम्बन्धित कार्मिक व्यवहार का सम्भावित दृष्टिकोण।

2.0 रूपरेखा तैयार करना - आपके संदेश को कितनी अच्छी प्रकार से समझा जाता है, यह आपके संदेश की रूपरेखा पर निर्भर करता है। प्रायः संदेश लिखते समय व्यक्ति जब लिखना प्रारम्भ करता है तो लिखने में बह जाता है। अर्थात् अनवरत लिखते जाता है। जिसके कारण ऐसे बिगड़े हुए संदेश की रूपरेखा को पढ़ने में पाठक भ्रमित हो जाते हैं। इसके लिए आवश्यक है कि आप संदेश निर्माण में उचित शब्दों का प्रयोग करें तथा शब्दों को सही प्रकार से प्रयोग करें जिससे कि उसका अर्थ सही रूप में जाना जा सके। एक अच्छा व्यापारिक संदेश वही होता है जिसके द्वारा सरलता से बिन्दुवार सूचना प्राप्त हो जाए। जब कोई संदेश ज्यादा लम्बा हो जाता है उसका अर्थ कहीं न कहीं क्षीण हो जाता है तथा सम्प्रेषण की प्रक्रिया अपूर्ण रह जाती है। एक अच्छे संदेश के निर्माण में यह आवश्यक है कि सही शब्दों का प्रयोग हो तथा शब्दों का सही रूप से प्रयोग हो तथा संदेश बहुत ज्यादा लम्बा न हो। यदि संदेश में शब्दों का बहुत अधिक प्रयोग किया जाए तो यह पाठक को भ्रमित कर सकता है। शब्दों की संख्या के आधार पर संदेश की समझ को निम्नांकित श्रेणी के द्वारा दर्शाया जा सकता है :

वाक्य लम्बाई	समझने की क्षमता की दर (प्रतिशत)
8 शब्द / वाक्य	100 प्रतिशत
15 शब्द / वाक्य	90 प्रतिशत
19 शब्द / वाक्य	80 प्रतिशत
28 शब्द / वाक्य	50 प्रतिशत

प्रायः सीधे एवं सरल वाक्यों को बनाने के स्थान पर कुछ अनावश्यक शब्दों के प्रयोग से वाक्यों को लम्बा कर देते हैं जो कि वाक्य को समझने की योग्यता पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। हम निम्नांकित वाक्यों को सरल करने का तरीका निम्नांकित उदाहरणों की सहायता से करेंगे :

- लम्बा वाक्य : अधिक मात्रा में उत्पादित उत्पादों की बिक्री हमारी एक प्राथमिक आवश्यकता है। (12 शब्द)
- छोटा वाक्य : हमें अधिक मात्रा में उत्पादित उत्पादों को बेचना चाहिए। (9 शब्द)
- लम्बा वाक्य : यह हमारे उत्पादन विभाग की जिम्मेदारी है कि वह यह देखे कि हमारे विक्रय विभाग की आवश्यकताओं की पूर्ति करे। (20 शब्द)
- छोटा वाक्य : हमारे उत्पादन विभाग को, विक्रय विभाग की आवश्यकताओं को पूरा करना चाहिए। (12 शब्द)

इस प्रकार हम कम शब्दों का प्रयोग करके वाक्य को और अधिक सरल एवं सुगम बना सकते हैं।

3.0 पुनर्लेखन - प्रायः हम लोग समय के अभाव में या आलस्य के फलस्वरूप लिखे गये संदेश को दोबारा नहीं पढ़ते हैं तथा उसमें प्रयुक्त शब्दों या वाक्यों का पुनः परीक्षण नहीं करते हैं जिससे कि संदेश में गलतियों के बने रहने का पूर्ण अवसर रहता है जो कि संदेश के अर्थ को प्रभावित कर सकता है। आप अपने द्वारा लिखे गये किसी भी पत्र, ऑफिस पत्र, संदेश आदि को यदि दोबारा पढ़ेंगे तो स्वतः ही कुछ कमियाँ या

गलतियाँ दूर करने में सक्षम होंगे या कम से कम पहले वाले लिखित से अधिक प्रभावी संदेश को लिखने में सक्षम हो सकते हैं। यदि आप किसी वाक्य या शब्द को दोहराएंगे तो आपको समझ में आएगा कि इस शब्द या वाक्य से अधिक प्रभावी शब्द या वाक्य आप प्रयोग कर सकते हैं। इसके साथ ही हमें पुनर्लेखन के लिए स्वयं का आलोचक होना आवश्यक है। क्या हम अपने ही लिखे संदेश की आलोचना कर उसे एक नया रूप दे सकते हैं। हो सकता है कि हमने जो वाक्य लिखा है उसमें कुछ और शालीनता की आवश्यकता है या पाठक की समझ के अनुरूप कुछ और अधिक समझाने की आवश्यकता है। इस प्रकार से हमने जो कुछ भी लिखा है उसके विकल्प ढूँढते हुए उस संदेश का एक आलोचनात्मक अध्ययन करना चाहिए तथा इसमें अधिक गुणवत्ता लाने हेतु आवश्यकतानुसार बलदाव लाना चाहिए।

4.0 ढाँचा निर्माण - व्यावसायिक संदेशों के लेखन में किसी भी प्रकार के ढाँचे या संरचना को एक आदर्श संरचना के रूप में नहीं माना गया है। प्रायः कुछ न कुछ बदलाव हर संदेश में कहीं न कहीं अपेक्षित होते हैं। परन्तु आपने जो भी सार अपने संदेश में लिखा है, उसे जिस संरचना के अन्तर्गत प्रस्तुत किया है, यह सम्प्रेषण को प्रभावित करता है। सबसे पहले पाठक किसी भी संदेश या लेख की संरचना या ढाँचे को देखते हैं। यदि दिखने में यह संरचना/ढाँचा अच्छा होता है तो मुख्य रूप से अति व्यस्त पाठकों पर यह एक प्रभावी सम्प्रेषण करने में सहायता करता है।

आज के सूचना प्रौद्योगिकी युग में विभिन्न माध्यमों ने कहीं न कहीं संदेश/लेख की संरचना को प्रभावित किया है। यदि हम किसी संदेश को प्रिण्ट माध्यम से सम्प्रेषित करते हैं तो उसका ढाँचा / संरचना, इण्टरनेट माध्यम से भेजे गये संदेश से प्रायः भिन्न होता है तथा यदि मोबाइल फोन के द्वारा हम संदेश भेजते हैं तो ये और भी अधिक भिन्न होता है। कम्प्यूटर में लेख संरचना के जितने विकल्प मिलते हैं उतने मोबाइल सेट पर नहीं मिलते हैं तथा हाथ से लिखे संदेशों में तो यह केवल लेखक के कला ज्ञान पर ही निर्भर करता है कि कितनी आकर्षक संरचना के द्वारा वह संदेश को लिख सकता है।

जब भी आप किसी व्यावसायिक संदेश को हस्ताक्षरित करते हैं तो इसका तात्पर्य यह होता है कि उस संदेश की संरचना, शब्दों आदि के जिम्मेदार आप ही हैं, न कि पत्र/संदेश लिखने वाला या टाइप करने वाला व्यक्ति जिम्मेदार होता है। अतः यह आपकी जिम्मेदारी है कि आप किसी संदेश को हस्ताक्षरित करने से पूर्व उसे पढ़ लें तथा यथोचित

संशोधन करके ही उसे अप्रस्तारित करें।

5.0 प्रूफ रीडिंग - किसी भी लेख/संदेश की प्रूफ रीडिंग करने के लिए महत्वपूर्ण बिन्दु नीचे दिये जा रहे हैं :

- प्रूफ रीडिंग सदैव प्रिन्ट कॉपी के द्वारा करना चाहिए न कि कम्प्यूटर स्क्रीन पर सीधे तौर पर करना चाहिए।
- अपने पहले ड्राफ्ट को लिखने के पश्चात ही प्रूफ रीडिंग करना चाहिए।
- प्रूफ रीडिंग हेतु प्रिन्ट कॉपी को दोहरे स्पेस में निकालना चाहिए जिससे कि शब्द आसानी से पढ़ने में आ सकें तथा दोहरे स्पेस में गलतियों के सुधार को लिखने के लिए आवश्यक स्थान मिल जाता है।
- प्रूफ रीडिंग के लिए पर्याप्त समय देना आवश्यक है। जल्दबाजी में की गयी प्रूफ रीडिंग अप्रभावी एवं त्रुटिपूर्ण सम्प्रेषण का कारण बन सकती है।
- प्रूफ रीडिंग करते समय संदेश को जोर से पढ़ने पर गलतियों का एहसास जल्दी होता है।
- प्रूफ रीडिंग में अन्तिम पद में इस बात पर जोर दिया जाना चाहिये कि जो भी शीर्षक, नाम या अंक लेख या संदेश में प्रयोग किये गये हों वे सही हों। नामों को विशेषतः दोबारा चेक कर लेना चाहिए ताकि नाम गलत न हो।

यद्यपि व्यावसायिक संदेश की प्रूफ रीडिंग में समय तो लगता है परन्तु इसका अपना महत्व है। आप जो भी संदेश किसी व्यक्ति या संगठन को अपनी तरफ से भेजते हैं वह आपकी कम्पनी की प्रतिष्ठा को बना या बिगाड़ सकता है। अतः प्रूफ रीडिंग एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रक्रिया होती है।

1.4 व्यावसायिक पत्र के सामान्य भाग

एक व्यावसायिक पत्र के लेखन में पूर्णता लाने के लिए यथास्थिति निम्नांकित भागों का होना आवश्यक होता है

(क) शीर्षक - शीर्षक के अन्तर्गत प्रेषक/लेखक का पता तथा पत्र लिखने की दिनांक आ सकते हैं। शीर्षक में लेटर हेड के मुख्य भाग/ संरचना के अतिरिक्त केवल दिनांक ही शामिल करना चाहिए तथा लेखक का नाम नहीं आना चाहिए।

- (ख) **आन्तरिक पता** - आन्तरिक पते में ग्राही का नाम तथा पता लिखा जाता है। जिससे कि यह साफ हो जाए कि पत्र किसके लिए लिखा गया है तथा ग्राही को प्राप्त न होने की दशा में उस पत्र का क्या करना है। ग्राही के नाम तथा पते को लिखने में बहुत सावधानी बरतनी चाहिए ताकि कोई गलती न हो सके।
- (ग) **सम्बोधन शब्द** :- जब हम पत्र में किसी व्यक्ति को किसी शब्द के द्वारा सम्बोधित करते हैं जैसे कि 'प्रिय श्रीमान जी' या 'आदरणीय ग्राहक' या 'आदरणीय' आदि तो इस प्रकार के सम्बोधन शब्दों को उल्टे कामा का प्रयोग करना चाहिए। यदि आप अपने मित्र को पत्र लिखते हैं तो कॉमा का प्रयोग नहीं भी कर सकते हैं। ग्राही के लिंग के बारे में पता न होने पर 'आदरणीय/अदरणीया' या 'प्रिय मित्रों' आदि सम्बोधनों का प्रयोग कर सकते हैं।
- (घ) **विषय अथवा सन्दर्भ** - विषय के अन्तर्गत पत्र का मुख्य विषय एक या दो पंक्तियों में लिखा जाता है। सन्दर्भ के अन्तर्गत यदि पहले भी कोई पत्राचार हुआ हो तो उस पत्रांक संख्या या विषय का उल्लेख करते हैं। कभी कभी पत्र में विषय एवं सन्दर्भ दोनों भी यथास्थिति प्रयोग किये जा सकते हैं।
- (ङ) **पत्र का मुख्य भाग** - किसी भी पत्र के मुख्य भाग में पत्र का मुख्य विषय लिखा जाता है। अर्थात् यह पत्र का सबसे अर्थपूर्ण और आवश्यक भाग होता है। प्रायः यह भाग सम्बोधन शब्द एवं पूरक समाप्ति के मध्य होता है।
- (च) **पूरक समापन** - पूरक समापन वे शब्द होते हैं जो किसी व्यावसायिक पत्र में अन्त होने का सूचक है तथा लेखक को दर्शाते हैं। जैसे कि 'तुम्हारा', 'आपका आज्ञाकारी', 'भवदीय' आदि। इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग अवश्य करना चाहिए।
- (छ) **संलग्नक** - यदि व्यावसायिक पत्र के साथ कुछ आवश्यक पत्र या दस्तावेज भेजने हों तो उनको संलग्नक में उल्लिखित कर देते हैं। इसके द्वारा पाठक को आवश्यक संलग्नक के बारे में ज्ञान हो जाता है।
- (ज) **प्रतिलिपि** - जब पत्र की प्रतिलिपि किसी अन्य अधिकारी या व्यक्ति को भेजनी हो तो प्रतिलिपि के अन्तर्गत उस व्यक्ति विशेष का पद एवं विभाग लिखा जाता है ताकि पाठक को पता रहे कि अन्य आवश्यक विभाग या व्यक्ति को इस पत्र की प्रतिलिपि प्रेषित की गई है या नहीं।

20 जून 2010
388 एल्लिन सड़क
इलाहाबाद, उ.प्र.
अनन्त नारायण
चीफ एक्जीक्यूटिव ऑफिसर
पैनारोमा इण्डिया
मुम्बई, भारत
'प्रिय उपभोक्ता'
विषय- आपके शिकायती पत्र दिनांक 1 मई 2010 के
सन्दर्भ में,

शीर्षक - दिनांक एवं
प्रेषक का पता

आन्तरिक पता-
ग्राही का पता एवं
नाम

सम्बोधन शब्द

विषय/सन्दर्भ

आपको सूचित करना चाहूँगा कि हमारी कम्पनी के उत्पाद के प्रयोग करने में आपको जो परेशानी हुई उसके लिए हम क्षमा चाहते हैं परन्तु आपको एक दूसरा नया उत्पाद एक माह के अन्दर आपके पते पर भेज दिया जाएगा। आशा है आप हमारी कम्पनी से भविष्य में भी जुड़े रहेंगे।

पत्र का मुख्य भाग

धन्यवाद !

भवदीय,
हस्ताक्षर

पूरक बन्द

संलग्नक:

- (1) शिकायती पत्र
- (2) नये उत्पाद सम्बन्धी सूचना

संलग्नक

प्रतिलिपि

- (1) मानव संसाधन प्रबन्धक - पैनारोमा इण्डिया
- (2) उत्पादन प्रबन्धक पैनारोमा इण्डिया

प्रतिलिपि

1.6 व्यावसायिक पत्रों के प्रकार

निम्न प्रकार के व्यावसायिक पत्र हो सकते हैं :

1.6.1 दैनिक पत्र

दैनिक पत्र वे होते हैं जो किसी भी संगठन में प्रायः रोजमर्रा के कार्य को करने में प्रयोग किये जाते हैं। इस प्रकार के पत्रों में प्रायः तीन भाग- प्रारम्भिक भाग, मध्य भाग तथा अन्तिम भाग हो सकते हैं।

प्रारम्भिक भाग में जो सम्प्रेषण हमें हो चुका होता है उसके बारे में सन्दर्भ उल्लिखित होता है। अधिकांश दैनिक पत्र पूर्व में किये गये सम्प्रेषण का सन्दर्भ रखते हैं। उदाहरणार्थ, आपके 12 नवम्बर 2009 के पत्र में पूछी गयी सूचना के सन्दर्भ में निम्नांकित तथ्य प्रस्तुत हैं -

मध्य भाग में पत्र का पूर्ण विवरण दिया जाता है तथा अन्त भाग में कुछ पूरक शब्दों के अतिरिक्त कुछ भावनात्मक वाक्यों का प्रयोग किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, आपका भविष्य उज्ज्वल हो, कम्पनी के साथ आप खुश रहेंगे ऐसी हमारी कामना है, आदि।

1.6.2 नौकरी के आवेदन के लिए कवरिंग पत्र

किसी भी नौकरी में चयन के लिए आवेदन करने पर कवरिंग पत्र पहला चरण होता है। क्योंकि इसी के द्वारा कोई भी अभ्यर्थी किसी कार्य या नौकरी के लिए न केवल अपना आवेदन प्रस्तुत करता है अपितु अपनी योग्यता को भी प्रार्थना के रूप में प्रदर्शित करता है। चूँकि आवेदन पत्र के द्वारा ही अभ्यर्थी नियोक्ता पर अपना प्रथम प्रभाव डालता है अतः इसे अत्यन्त सावधानी से लिखना चाहिए। प्रायः इस प्रार्थना पत्र / आवेदन के साथ अभ्यर्थी का बायोडाटा भी संलग्न रहता है।

1.6.3 धन्यवाद/अनुवर्तन पत्र

प्रायः कम्पनियाँ उत्पाद या सेवा को प्रयोग के लिए उपभोक्ताओं को धन्यवाद पत्र लिखती है। या नौकरी में सफलता पाने पर अभ्यर्थी भी नियोक्ता को धन्यवाद पत्र लिख सकता है। इसी प्रकार जब किसी संगठन में कोई अधिकारी या कर्मचारी किसी विशिष्ट कार्य या प्रोजेक्ट में सम्मिलित होते हैं तो एक चरण का कार्य सम्पादन होने पर उस कार्य के अनुवर्तन हेतु भी पत्र लिखा जाता है। जिससे कि कार्य को पूर्ण होने तक व्यक्ति की जिम्मेदारी बनी रहे।

1.6.4 साक्षात्कार अनुवर्तन पत्र

साक्षात्कार अनुवर्तन पत्र के द्वारा अभ्यर्थी अपनी स्थिति के बारे में नियोक्ता को अवगत कराता है। उदाहरणार्थ, "मैं आपकी कम्पनी में नौकरी का अवसर मिलने पर अत्यन्त प्रसन्नता प्रकट करते हुए यह कहना चाहता हूँ कि मैं 1 जून 2010 से अपना कार्य प्रारम्भ करना चाहूँगा तथा मैं आपसे रू. 50,000/- (पचास हजार मात्र) प्रतिमाह तथा 5 प्रतिशत के कमीशन की अपेक्षा रखता हूँ। मैं अपने कार्यक्षेत्र जो कि सम्पूर्ण उत्तर

प्रदेश है, को आपके निर्देशन में अच्छे से प्रबन्ध करने का प्रयत्न करूँगा। आपके द्वारा मुझे अवसर दिये जाने पर मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।”

1.6.5 त्याग पत्र

प्रायः लोग त्याग पत्र को बिना अच्छी भाषा का प्रयोग करते हुए लिखते हैं। त्याग पत्र को लिखने में भी उसमें प्रयुक्त होने वाले शब्दों का अत्यन्त महत्व होता है।

उदाहरणार्थ, “आपसे अनुरोध है कि मैं अपने पद (-----) से आज दिनांक 30 अप्रैल 2010 को त्याग रहा हूँ। कृपया मेरा त्याग पत्र स्वीकार करें। मेरा यह त्याग पत्र अगले 2 सप्ताह का नोटिस है। मैं अपने इस नोटिस काल में नवागन्तुक को प्रशिक्षण देने को सहर्षता से स्वीकार करूँगा।

आपके संगठन में मैंने आज तक जो भी उन्नति तथा कार्य करने के अवसर प्राप्त किये उसके लिए मैं प्रबन्धन का सदैव अभारी रहूँगा। धन्यवाद !”

1.6.6 पूछताछ, शिकायती या समायोजन पत्र

प्रायः जब कभी हमें किसी विभाग या संगठन से कोई जानकारी चाहिए होती है तो हम पूछ ताछ पत्र के माध्यम से जानकारी प्राप्त करते हैं। पूछताछ पत्रों को प्रयोग करने से पूर्व हमें यह ध्यान रखना आवश्यक है कि हम उचित मात्र में ही जानकारी प्राप्त करें तथा यह जानकारी ऐसी हो जो कि विभाग/संगठन आसानी से उपलब्ध करा पाए।

इसी प्रकार प्रायः कभी कभी किसी उत्पाद या सेवा के उपभोग से यदि हमें असन्तुष्टि होती है तो हम शिकायती पत्र के माध्यम से उस संगठन/विभाग में अपनी असन्तुष्टि को व्यक्त कर सकते हैं। इसी प्रकार से कभी कभी यदि हम किसी सरकारी या गैर सरकारी या निजी संगठन में कार्य करते हैं तो विभिन्न प्रकार के आर्थिक या सामान्य लेन देन को समायोजन पत्रों के द्वारा समायोजित कर सकते हैं।

1.6.7 स्वीकृति पत्र

ये वे पत्र होते हैं जिनके द्वारा हम किसी व्यक्ति को किसी बात के लिए राजी करते हैं। यह पत्र दो प्रकार के हो सकते हैं। एक तो वे जिसमें पाठक के द्वारा प्रार्थना को स्वीकार कर लिया जाता है तथा दूसरे वे जिसमें पाठक के द्वारा प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया जाता है।

अवगत है कि दूसरी श्रेणी वाले पत्र अत्यन्त कठिन होते हैं जिसमें पाठक आपकी प्रार्थना को अस्वीकार कर देते हैं। यदि आपको लगता है कि पाठक आपकी प्रार्थना को स्वीकार कर लेंगे तो नीचे की पंक्ति में प्रार्थना करते हुए पत्र में अन्य विवरणों का उल्लेख

करना चाहिए। इस प्रकार के पत्रों को हम सिफारिशी पत्रों के द्वारा उदाहरण दे सकते हैं। इस प्रकार के पत्रों में आप सिफारिश करने वाले व्यक्ति / पाठक को कम्पनी का नाम, कम्पनी में व्यक्ति का नाम तथा पद लिखने के साथ जिस कार्य को करने के लिए सिफारिश करनी होती उसको विषय में इंगित करते हैं। इस प्रकार के पत्रों में लेखक तथा लेखक के संगठन की एक अच्छी छवि के साथ साथ अच्छे सम्बन्धों का प्रतीक होना भी आवश्यक है।

जब आपको यह भय हो कि पाठक आपकी प्रार्थना को नकार देंगे तो आपके लिए यह आवश्यक है कि आप संयम रखें तथा उसे एक निश्चित अन्तराल के बाद प्रेषित करते रहें।

1.6 सारांश

यद्यपि आज के युग में लिखित सम्प्रेषण सूचना प्रौद्योगिकी पर बहुत ही ज्यादा निर्भर है परन्तु फिर भी उसमें लिखा जाने वाला सार पारम्परिक लेखन पर ही निर्भर करता है। जब हम विभिन्न व्यावसायिक संदेशों को लिखते हैं तो हमारी सोच तथा विधाएं उन अन्देशों के अनुरूप भिन्न होती हैं।

सकारात्मक या उदासीन व्यावसायिक संदेशों के लिए जहाँ हम सीधी भाषा का प्रयोग करते हैं, वहीं ऋणात्मक व्यावसायिक संदेशों के लिए गैर सीधी भाषा का प्रयोग करना चाहिए।

व्यावसायिक संदेश को लिखने के लिए पाँचों चरणों का विशिष्ट ध्यान रखना चाहिए।

व्यावसायिक क्रिया कलापों में हमें विभिन्न प्रकार के आशय के पत्रों को लिखना होता है जो कि साधारण जीवन में भी कहीं न कहीं कार्य में आ सकते हैं। अतः उनका ज्ञान हमारे सम्प्रेषण को अत्यन्त प्रभावी बनाता है।

1.7 महत्वपूर्ण शब्द

व्यावसायिक संदेश, सकारात्मक संदेश, नकारात्मक संदेश, उदासीन संदेश, सीधी विधा, गैर सीधी विधा, पूर्वलेखन, रूपरेखा तैयार करना, पुनर्लेखन, ढाँचा निर्माण, प्रूफ रीडिंग आदि।

1.8 स्वपरख प्रश्न

प्र.1 लिखित सम्प्रेषण की व्यावसायिक संगठनों में क्या आवश्यकता है? कृपया उल्लेख करें।

- प्र.2 व्यवसायिक संदेश को लिखने की प्रक्रिया का सोदाहरण वर्णन करें।
- प्र.3 व्यावसायिक पत्र कितने प्रकार के हो सकते हैं? कृपया उदाहरण सहित वर्णन करें।

1.9 अन्य महत्वपूर्ण पाठन स्रोत

- लीशकर, रेमण्ड वी., जॉन डी. पेटिट एण्ड मैरी ई. फ्लैटली, लीशकरस बेसिक बिजनेस कम्यूनिकेशन, आठवां एडिशन, टाटा मैग्राहिल, नई दिल्ली।
- पी. प्रसाद, कम्यूनिकेशन स्किल्स, एस.के.कटारिया एण्ड सन्स।
- मीनाक्षी रमन, प्रकाश सिंह, बिजनेस कम्यूनिकेशन्स, आक्सफोर्ड पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
- मधुकर आर.के. बिजनेस कम्यूनिकेशन्स एण्ड कस्टमर रिलेशन्स, विकास पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।

इकाई - 2 : श्रवण कौशल

इकाई की रूपरेखा-

- 2.0 उद्देश्य
- 2.1 प्रस्तावना
- 2.2 श्रवण की प्रकृति
- 2.3 श्रवण के प्रकार
- 2.4 प्रभावी श्रवण की रणनीतियाँ
- 2.5 श्रवण में बाधाएँ
- 2.6 सारांश
- 2.7 महत्वपूर्ण शब्द
- 2.8 स्व-परख प्रश्न
- 2.9 अन्य महत्वपूर्ण पाठन स्रोत

2.0 : उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात आप निम्न उद्देश्यों की प्राप्ति में सफल होंगे :

- सम्प्रेषण में श्रवण कौशल के महत्व को परखने में,
- श्रवण प्रकृतियों के अनुसार श्रवण क्षमता विकसित करने में, तथा
- श्रवण क्षमता को विकसित करने हेतु प्रभावी तकनीकों को समझने में।

2.1 प्रस्तावना

किसी भी संस्था में एक व्यक्ति को लिखने पढ़ने से ज्यादा कहने एवं सुनने के द्वारा सम्प्रेषण करना पड़ता है। एक व्यापारिक प्रतिष्ठान में किसी भी व्यक्ति को अधिकांशतः अनौपचारिक सम्प्रेषण में ही लिप्त होना है तथा इस अनौपचारिक सम्प्रेषण में श्रवण एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रक्रिया है तथा एक कौशल भी है। यदि श्रवण कौशल को हम समझने का प्रयत्न करें तो यह व्यक्ति की श्रवण कुशलता पर ही निर्भर करेगा कि उसने किसी बात को अथवा संदेश को सही रूप में समझा है या नहीं। और यदि संदेश को सही प्रकार से नहीं समझा गया तो वह व्यक्ति गलत निर्णय का शिकार हो सकता है।

साथ ही इससे संगठन की कुशलता एवं सफलता दोनों पर ही विपरीत प्रभाव पड़ सकता है। श्रवण कुशलता के महत्व को हम तीन प्रकार से परिभाषित कर सकते हैं। सर्वप्रथम तथ्य यह है कि हम मौखिक सम्प्रेषण की कुशलता को बोलने, पढ़ने एवं लिखने के द्वारा ही अर्जित कर सकते हैं और शब्दों के उच्चारण, उनके उचित अर्थ को समझने में श्रवण कुशलता की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका है। द्वितीयतः हमारी श्रवण क्षमता 45 प्रतिशत तक हमारी मौखिक सम्प्रेषण समय को प्रभावित करती है। तृतीयतः किसी भी व्यापार में श्रवण का एक महत्वपूर्ण योगदान होता है। हम सुनकर ही बड़े-बड़े उद्यमियों अथवा प्रबन्धन गुरुओं की बातों को समझने के अगले चरण में ले जाने में सक्षम होते हैं तथा यही हमें नयी एवं धनात्मक सोच पैदा करने में सहायक होते हैं। एक और महत्वपूर्ण बात जो किसी भी संगठन के कर्मचारियों को भाती है वह यह भी है कि उनके प्रबन्धक या सुपरवाइजर उनकी बातों को सुनते हैं। परन्तु श्रवण क्रिया दिखने या प्रतीत होने में जितनी आसान लगती है। उतनी है नहीं। क्यों जब कभी हम सुनते हैं तो उसी समय हमारे मस्तिष्क में एक समानान्तर विचार प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। इसी समय हम भी अपने अपने प्रकार से बोलने वाले की बातों को अपने परिपेक्ष में सोचने लगते हैं जो हमको एक नयी दुनिया में या अपनी दुनिया में सोचने पर मजबूर कर देती है तथा तुरन्त ही हमारे सुनने की प्रक्रिया प्रभावित होती है और जब तक हमें ध्यान आता है तब तक एक अच्छा अन्तराल आ चुका होता है। अर्थात् श्रवण एक ध्यान लगाने की भी प्रक्रिया है अर्थात् जब भी हम सुन रहे होते हैं तो हमें अपने ध्यान को न केवल श्रवण के लिए केन्द्रित करना होता है अपितु एक समानान्तर सोच विचार की प्रक्रिया को भी नियन्त्रित ढंग से चलने देते रहना होता है ताकि बोलने वाले की बातों का हम विश्लेषण भी कर सकें। यदि हम चाहें कि पहले केवल श्रवण ही करेंगे तथा बाद में उन बातों का विश्लेषण, तो इसके लिए श्रवण कर्ता का एक अच्छा साधक होना आवश्यक हो जो कुछ समय पूर्व में सुनी गयी बातों को संग्रहीत कर सके तथा तत्पश्चात् उनका विश्लेषण कर सके और उनको किसी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में रिकार्ड भी कर सके जो कि उसके स्वयं के विचारों को बनाने में सक्षम हों।

2.2 श्रवण की प्रकृति

प्रायः हम यह सोचते हैं कि श्रवण शायद केवल ध्वनि को सुनने या महसूस करने की एक साधारण प्रक्रिया होती है। परन्तु श्रवण प्रक्रिया में केवल शब्दों या ध्वनियों को कानों के द्वारा महसूस नहीं किया जाता है अपितु श्रवण प्रक्रिया के अन्तर्गत हम किसी व्यक्ति के द्वारा बोले गये शब्दों के अर्थ को एक निश्चित परिस्थिति के अनुसार समझते

हैं तथा उसी के अनुसार व्यक्ति को सीख मिलती है। उदाहरणार्थ, यदि हम कक्षा में बैठकर ध्यान पूर्वक अपने शिक्षक के द्वारा दिये गये व्याख्यान को सुनते हैं तो हम तुरन्त ही उस वक्तव्य के मुख्य शब्दों को सुनकर उसके बारे में एक समानान्तर सोचने की प्रक्रिया को प्रारम्भ करते हैं तथा यदि हमें शिक्षक के द्वारा दिये गये व्याख्यान में तथा हमारी समानान्तर सोच में कुछ प्रासांगिकता समझ आती है तो हमारे अन्दर उस विषय की अच्छी पकड़ हो जाती है। और यदि कहीं पर कुछ अन्तर या विरोधाभास होता है तो तुरन्त हमारे मन में कुछ प्रश्न उत्पन्न होते हैं जिनका समाधान हम अपने शिक्षक से पूछ कर करते हैं। अर्थात् कहने का तात्पर्य यह है कि श्रवण प्रक्रिया के अन्तर्गत केवल भौतिक प्रक्रिया ही नहीं होती है धरन यह एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है, जिसमें हमारा मस्तिष्क अपने पूर्व के अनुभवों तथा नयी सुनी गयी बातों को एक दूसरे के सापेक्ष रखकर एक निर्णय लेने में सक्षम होता है जो पुनः हमें नयी सीखने की क्षमता को बढ़ाने में सहायक होता है। इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि श्रवण प्रक्रिया में छानने, महसूस करने एवं याद रखने की प्रक्रिया भी शामिल होती है।

श्रवण = महसूस करना + छानना + याद रखना

(Listening)= Sensing + filtering + (remembering)

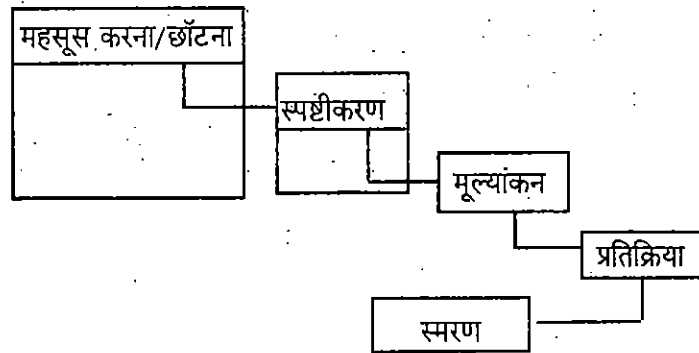
महसूस करना (Sensing): - अपने आस पास के वातावरण में शब्दों को महसूस करने में दो मुख्य कारक होते हैं। प्रथमतया, ध्वनि को सुनने में हमारी क्षमता अर्थात् हमारे कान किसी ध्वनि को कितनी अच्छी तरह से सुन सकते हैं। हम सभी को विदित है कि हमारी सुनने की क्षमताएं अलग अलग होती हैं, यद्यपि आज के युग में मशीनों के माध्यम से सुनने की क्षमता को बढ़ाया जा सकता है। द्वितीयतः हमारे सुनने की तत्परता अथवा सावधानी। यह प्रायः हमारे मानसिक ध्यान पर निर्भर करता है। उदाहरणार्थ, यदि हम किसी कार्यशाला में किसी प्रवक्ता को सुनते हैं और हम अपनी निजी जिन्दगी में किसी बात को लेकर परेशान होते हैं तो वक्ता के द्वारा कितनी भी अच्छी बात क्यों न बताई-जा रही हो परन्तु हमारी मानसिक स्थिति उस बात को समझने के लिए बिलकुल भी उपयुक्त नहीं होती है या हम चाह कर भी उस ओर ध्यान नहीं लगा पाते हैं।

इसी प्रकार यदि हम किसी व्याख्यान को सुन रहे हैं तो एक निश्चित अवधि में शब्दों को महसूस करने की हमारी क्षमता भिन्न भिन्न समय पर भिन्न भिन्न होगी। यह इस पर भी निर्भर करेगा कि हम अपने मस्तिष्क को कितनी सावधानी से शब्दों को महसूस करने के लिए केन्द्रित कर पाते हैं। यदि अपनी कक्षा में आप अपने शिक्षक के द्वारा समझाए जा रहे व्याख्यान को बहुत ही ध्यान लगाकर एवं मस्तिष्क केन्द्रित करके सुनते

हैं तो वो अध्याय आपको एक बार पढ़ने पर ही कंठस्थ हो जाता है क्योंकि आपके द्वारा श्रवण प्रक्रिया के शब्द, पठन प्रक्रिया के शब्दों को महसूस करने में समानता रखते हैं।

छानना (Filtering) : - श्रवण में छानने का तात्पर्य सुने गये शब्दों के अर्थ अथवा मतलब को समझने से होता है। छानने की प्रक्रिया मूल रूप से हमारे ज्ञान कोष में उपलब्ध शब्दों पर निर्भर करता है। उदाहरण के रूप में अंग्रेजी के तीन शब्दों, Adapt, adept एवं Adopt का अर्थ अलग अलग होता है। Adapt का अर्थ वातावरण के अनुसार बदलने या अनुकूलन से है, adept का अर्थ कुशलता या निपुणता से है तथा Adopt का तात्पर्य किसी को ग्रहण या अपनाने से होता है। परन्तु यदि हमें इन तीनों के अर्थ नहीं पता हों तो वक्ता के द्वारा बोले गये किसी भी शब्द का हमें एक ही अर्थ प्रतीत होगा। अर्थात् शब्दों को छानने की प्रक्रिया पर प्रभाव पड़ेगा। और यदि हमें तीनों शब्दों के अर्थ पता भी हों तो प्रभावी श्रवण के लिए हमें बहुत ध्यान लगाकर सुनने पर जोर देना चाहिए।

3. याद रखना (Remembering): - श्रवणोपरान्त हम किसी भी बात को याद रख पाते हैं या नहीं यह एक तीसरी महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। दुर्भाग्य से हम प्रायः सुनी हुयी बातों में से बहुत कम याद रख पाते हैं। प्रायः हम कुछ बातों को तो सुनने के तुरन्त बाद ही भूल जाते हैं और कुछ बातों को कुछ समय पश्चात्। बहुत कम बातें ऐसी होती हैं जिन्हें हम दीर्घकाल तक याद रख पाते हैं। कुछ शोध के द्वारा यह पाया गया है कि दो दिनों के बाद हम किसी वक्तव्य का एक चौथाई भाग ही याद रख पाते हैं। यदि हमने कभी इस बात पर गौर किया हो तो हम सहमत होंगे कि हमारी स्मरण शक्ति केवल उन्हीं बातों की अधिक होती है जिनके प्रति हम समानान्तर सोच प्रक्रिया में सम्मिलित होते हैं। यदि हम वक्ता के वक्तव्य को अपनी सोच से मिला कर सोचते हैं तो शब्दों एवं विचारों का विश्लेषण उसी दाम से होने लगता है और इस प्रकार की बातों को हम अधिक समय तक स्मरण कर सकते हैं अन्यथा नहीं। इस प्रकार श्रवण की प्रक्रिया को हम उसकी प्रकृति के आधार पर निम्न प्रकार से परिभाषित कर सकते हैं :



2.3 श्रवण के प्रकार

श्रवण की प्रकृति के अनुसार श्रवण के सभी प्रकारों को समझने के लिए कुछ विशिष्ट कुशलताओं को जानने की आवश्यकता होती है। इसके द्वारा हम अपने श्रवण व्यवहार को बेहतर करने के लिए कुछ मुख्य श्रवण कुशलताओं का अध्ययन करेंगे। इन निर्देशों को समझने से पूर्व यह आवश्यक है कि हम विभिन्न प्रकार के श्रवण कलाओं को जाने।

(क) सूचनात्मक श्रवण - सूचनात्मक श्रवण से हमारा तात्पर्य उस श्रवण से है जिसके द्वारा हम अधिकतम सूचनाओं का संग्रह करने के लिए संदेश को सुनते हैं। प्रायः हम जीवन के हर क्षेत्र में श्रवण के द्वारा सम्बन्धित जानकारी हासिल करने का प्रयत्न करते हैं। यदि हम समाचार सुनते हैं तो अपने आसपास के वातावरण के बारे में तथा सामाजिक गतिविधियों के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं। जब हम अपने शिक्षक का व्याख्यान कक्षा में सुनते हैं तो हम उस विषय से सम्बन्धित सूचनाएं तथा जानकारी हासिल करने का प्रयास करते हैं। कुछ विद्यार्थी एक बार में ही सब कुछ समझ पाते हैं क्योंकि वे बड़े एकाग्र मन से श्रवण करते हैं जबकि कुछ व्यक्ति ध्यान से कुछ सुन नहीं पाते हैं। किसी भी स्थिति में श्रोता के लिए यह आवश्यक है कि वह संदेश पर अत्यधिक ध्यान दें तथा संदेश दाता के स्रोत को पहचानें। सूचनात्मक श्रवण से सम्बन्धित निम्नांकित तीन मुख्य घटक होते हैं:

- (1) शब्द कोश
- (2) ध्यान/एकाग्रता
- (3) स्मरण शक्ति

यद्यपि शब्दकोश एवं समझने की कुशलता के मध्य सम्बन्ध को बहुत प्रभावी रूप से दर्शाया नहीं जा सका है फिर भी यह बात तय है कि यदि आपके शब्द कोष की क्षमता बढ़ती है तो आपके समझने की शक्ति भी बढ़ती है। क्योंकि प्रायः लोग एक शब्द के स्थान पर दूसरे समान अर्थ परन्तु भिन्न भाव वाले शब्द का प्रयोग करते हैं। उदाहरणार्थ अंग्रेजी में adjust एवं Accomodate दो ऐसे शब्द हैं जिनका अर्थ समायोजित करने से होता है। परन्तु Accomodate शब्द का सही अर्थ स्थान को सामन्जस्य के लिए किया जाता है जबकि Adjust का प्रयोग साधारणतया किया जाता है। अर्थात् कभी कभी आप के शब्द कोष के ज्ञान में कमी होने पर आपकी श्रवण क्षमता में कमी आ सकती

है। एकाग्रता की भी श्रवण कुशलता की वृद्धि में एक अहम भूमिका होती है। यदि आप सुनते समय अपने मन को एकाग्र नहीं करते हैं तो धीरे धीरे आपका ध्यान उस विषय से भटक कर कहीं और चला जाता है और स्वाभाविक रूप से आप गहन रूप से इस अलग विषय में खो जाते हैं। इस कारण इस बीच जो भी संवाद होता है वह आप किसी भी तरह सुन नहीं पाते हैं तथा आपके श्रवण में कमी आती है। यदि आपको अपने श्रवण की क्षमता एवं कुशलता को बढ़ाना है तो उस विषय को सुनने के लिए आपको अपने मन में एकाग्रता लानी ही होगी तथा अपने मन को दूसरे विषय पर भटकने से बचना होगा तथा नियन्त्रण रखना होगा। अतः श्रवण कुशलता को बढ़ाने के लिए एकाग्रता की आवश्यकता होती है तथा एकाग्रता के लिए अभिप्रेरण, स्वीकृति तथा जिम्मेदारी की आवश्यकता होती है। श्रवण कुशलता को बढ़ाने के लिए स्मरण शक्ति की भी अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका है। प्रायः जब कोई भी बात या विषय सुनते हैं तो उस विषय की स्वीकृति हमारे पूर्व में स्मरित बातों के आधार पर ही होती है। अर्थात् यदि हमें, हमारे द्वारा पूर्व में ज्ञानार्पित बातों में तथा श्रवण की जा रही बातों के बीच समानता मिलती है तो हमारी समझ उस विषय के लिए बढ़ जाती है। परन्तु यदि हमारी कमजोर स्मरण शक्ति के कारण स्मरित बातों/ज्ञान के आधार पर विषमता मिलती है या बात नयी लगती है तो इसका हमारी श्रवण कुशलता पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। स्मरण शक्ति हमारी श्रवण क्षमताओं को निम्न तीन प्रकार से प्रभावित करती है।

1. स्मरण के बिना हम किसी प्रकार के ज्ञानकोश को विकसित नहीं कर सकते हैं तथा यह हमारा ज्ञान कोश ही होता है जिसके आधार पर हम नये विचारों की पुष्टि करते हुए अपने श्रवण कुशलता में वृद्धि कर सकते हैं। यदि हमारे पास पूर्व के अनुभव या ज्ञानकोश न हो तो विषय की समझ हमारे लिए कठिन हो सकती है।

2. जब तक आपके पास अपने पुराने अनुभव नहीं होंगे तब तक आप नये विषयों की सार्थकता को सिद्ध नहीं कर पायेंगे अर्थात् जीवन में आने वाली समस्याओं का कोई भी व्यक्ति अपने पूर्व में अर्जित किये गये ज्ञान एवं अनुभवों को द्वारा ही निवारण कर सकता है जिसके लिए स्मरण शक्ति का होना अत्यन्त आवश्यक होता है।

3. यदि आपके स्मरण में कोई भी सिद्धान्त या विचार नहीं है तो आप किसी भी विषय को विश्लेषित नहीं कर सकते हैं, यह आपको समझने की कुशलता को प्रभावित करेगा।

(ख) एकाग्र श्रवण - एकाग्र श्रवण के अन्तर्गत व्यक्ति बहुत ध्यान पूर्वक बातों को

सुनता है तथा उनको याद करने का भी प्रयास करता है। इसके अतिरिक्त एकाग्र श्रोताओं का एक निर्धारित लक्ष्य होता है जिसके अन्तर्गत वे समूह में या संवाद के द्वारा एक धनात्मक प्रभाव छोड़ना चाहते हैं, अपने सम्बन्धों को बढ़ाना चाहते हैं या वे ये प्रदर्शित करते हैं कि वे जो भी सुन रहे हैं इसकी परवाह उनको है। सम्प्रेषण शोध कर्ताओं के द्वारा निम्नांकित तीन श्रवण कुशलताओं को पहचाना गया है जिनका विवरण निम्न प्रकार है:

(1) एकाग्र कुशलताएं

(क) सम्मिलित होने की शारीरिक भंगिमा - जब हम वक्ता को ध्यानपूर्वक सुनते हैं तो नैसर्गिक रूप से हमारी शारीरिक भंगिमा इस प्रकार होगी कि हमारे शरीर का झुकाव उस वक्ता की ओर होगा।

(ख) उपयुक्त शारीरिक गति या इशारा - समय समय पर हम वक्ता के विचारों के प्रति अपना सिर हिला कर या अपने चेहरे के भावों से स्वीकृति या समानता या असमानता प्रकट करते हैं।

(ग) आँखों का सम्पर्क - हमारी आँखों का सम्पर्क सदैव ही वक्ता की आँखों से बना रहेगा या हम सदैव ही वक्ता के चेहरे की ओर देखते रहेंगे तथा हमारी आँखों के भाव वक्ता के विचारों के समान या विपरीत प्रतिक्रिया व्यक्त करेंगे।

(घ) विचलित न करने वाली गतिविधियाँ - एकाग्र श्रोता को किसी भी ऐसी गतिविधि से बचना चाहिए जो कि वक्ता का ध्यान विचलित करे या ध्यान हटाए।

(2) अनुसरण कुशलताएँ

अनुसरण कुशलताओं से हमारा तात्पर्य उस व्यवहार से है जो कि वक्ता को अपना वक्तव्य देने के लिए प्रोत्साहित करे तथा साथ ही श्रोता एवं वक्ता की रूचि बनी रहे। जैसे कि हामी भरना या अन्य सम्बोधन शब्दों का प्रयोग करना। इसके अतिरिक्त कभी कभी खुले प्रश्न पूछना तथा एक समय पर एक ही प्रश्न पूछना परन्तु इतने ज्यादा प्रश्न न पूछना कि वक्ता का ध्यान मुख्य विषय से भंग हो जाए। अच्छी श्रवण कुशलता को विकसित करने के लिए यह आवश्यक है कि शान्त रहते हुए अधिक से अधिक एकाग्रता पूर्वक विचारों को सुना जाये।

(3) परावर्तित कुशलताएँ

एक अच्छे श्रोता के लिए यह आवश्यक है कि हम मन ही मन में वक्ता के द्वारा दिये गये विचार के समानान्तर वाक्य बना कर उसे उदाहरण के रूप में स्थापित करें।

उदाहरणार्थ “हाँ इस स्थिति में एक बार मेरे साथ भी ऐसा हुआ था।”

इसके अतिरिक्त यदि हम वक्ता के विचारों से सहमत होते हैं तो अपने भावों के द्वारा उसे व्यक्त करना चाहिए। इस प्रकार एक अच्छे श्रोता के लिए आवश्यक होता है कि प्रत्येक विचार रूपी क्रिया के सापेक्ष उसकी अपनी समानान्तर विचार रूपी प्रतिक्रिया होनी चाहिए।

(4) सम्बन्ध श्रवण

सम्बन्ध श्रवण का उद्देश्य प्रायः या तो व्यक्तियों की सहायता के लिए होता है या दो व्यक्तियों के मध्य सम्बन्धों को सुधारने में होता है। उपचारिक श्रवण भी एक विशिष्ट प्रकार की श्रवण कुशलता होती है जो एक प्रकार का सम्बन्ध श्रवण होता है। उपचारिक श्रवण का प्रयोग प्रायः परामर्शदाताओं के द्वारा, या चिकित्सकीय व्यक्तियों के द्वारा किसी व्यक्ति या परेशान व्यक्ति के उपचार के लिए किया जाता है। सम्बन्ध श्रवण की विशेषता यह होती है कि यह दूसरे व्यक्ति के समझने की शक्ति एवं सूचनाओं पर निर्भर करती है। सम्बन्ध श्रवण के लिए तीन प्रकार की अभिवृत्तियों का होना आवश्यक होता है - उपस्थिति या ध्यान देना, समर्थन करना एवं सहानुभूति।

सम्बन्ध श्रवण में उपस्थिति/ ध्यान देने का अर्थ यह है कि श्रोता वक्ता पर पूर्ण रूप से ध्यान केन्द्रित करता है तथा इसके अन्तर्गत गैर शाब्दिक संकेत अत्यन्त महत्वपूर्ण होते हैं। चक्षु सम्पर्क इनमें एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अवयव है। चक्षु सम्पर्क एवं शारीरिक भंगिमाओं के द्वारा सम्बन्ध श्रवण कुशलता है कि श्रोता, वक्ता के प्रति ध्यान देता है या नहीं। वक्ता के वक्तव्य के दौरान की गयी बहुत सी प्रतिक्रियाएँ ऋणात्मक या असमर्थन करती प्रतीत होती हैं। उदाहरणार्थ यदि कोई व्यक्ति वक्ता से बहुत अधिक प्रश्न करता है या विषय को बदलने का प्रयास करता है या बात चीत को अपने अनुसार बदलने का प्रयत्न करता है तो ये सारी गतिविधियाँ वक्ता के असमर्थन को दर्शाती हैं। सम्बन्ध श्रवण में एक अच्छे श्रोता को यह अच्छी तरह पता होता है कि वक्तव्य के दौरान कहाँ बोलना है और कहाँ नहीं बोलना है। एक समर्थन करने वाले श्रोता की पहचान तीन बातों से की जा सकती है अर्थात् वह इस बात में विभेद कर पाता है कि कहाँ पर क्या कहना है और क्या नहीं, वक्ता की योग्यता पर पूर्ण विश्वास होता है तथा इतना धैर्य होता है कि और लोग भी अपनी बातों को वक्तव्य के दौरान रख पाएँ तथा सन्तुष्ट हो पाएँ।

सम्बन्ध श्रवण के अन्तर्गत वक्ता के प्रति सहानुभूति होना भी आवश्यक होता है। इसका तात्पर्य यह है कि श्रोता, वक्ता के हर दृष्टिकोण को न केवल भली-भाँति समझता

है अपितु उस दृष्टिकोण को यथासम्भव अपनाता भी है।

(5) प्रशंसनीय श्रवण

प्रशंसनीय श्रवण का तात्पर्य उस श्रवण से होता है जो हम अपने आनन्द की अनुभूति के लिए करते हैं। जैसे कि संगीत सुनना, विभिन्न कलाकारों को सुनना, पिक्चर या नाटक देखना एवं सुनना आदि। प्रशंसनीय श्रवण की गुणवत्ता मुख्य रूप से तीन कारकों पर निर्भर करती है यथा प्रस्तुतीकरण, दृष्टिकोण एवं पूर्व अनुभव। प्रशंसनीय गुणवत्ता के लिए प्रस्तुतीकरण इस लिए आवश्यक होता है क्योंकि प्रत्येक श्रोता की अपनी पसंद होती है तथा इसके अन्तर्गत वक्ता की वेषभूषा, माध्यम, भाषा इत्यादि आते हैं। इसके अतिरिक्त श्रोता या दर्शक का दृष्टिकोण भी प्रस्तुतीकरण पर ही निर्भर करता है। हमारी जो भी आशाएं होती हैं वे हमारे दृष्टिकोण पर ही निर्भर होती है तथा हमारा दृष्टिकोण ही हमारी अभिवृत्ति को निर्धारित करता है और कोई भी व्यक्ति किसी भी कार्यक्रम को अपने दृष्टिकोण एवं अभिवृत्ति के अनुरूप ही पसन्द करता है। यदि हमने अपने पूर्व के अनुभव में किसी संगीत, कार्यक्रम या नाटक आदि को पसन्द नहीं किया है तो पुनः इन कार्यक्रमों को देखने से पहले वे कई बार सोचेंगे और प्रस्तुतकर्ता को इन परिस्थितियों के लिए तैयार रहना होगा।

(6) आलोचनात्मक श्रवण

प्रायः हम अपनी कई सारी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आलोचनात्मक श्रवण को पसंद करते हैं। राजनीतिज्ञ, मीडिया, वकील, विक्रेता, हमारी अपनी आर्थिक भावनात्मक, बौद्धिक, भौतिक एवं आध्यात्मिक आवश्यकताएँ हमें आलोचनात्मक श्रवण के लिए प्रेरित करती हैं।

(7) विभेदात्मक श्रवण

विभेदात्मक श्रवण बाकी की श्रवण श्रेणियों के लिए आधार का कार्य करता है क्योंकि इसके द्वारा ही हम श्रवण के परिणामों में विभेद कर पाते हैं। यदि कोई वक्ता अपने वक्तव्य के दौरान अपने बोलने के गति, या तीव्रता या पिच आदि में अन्तर लाता है तो एक सूचनात्मक श्रोता उसको बड़ी आसानी से विभेद कर लेता है। विभेदात्मक श्रवण के लिए सुनने की योग्यता, आवाज की पहचान तथा शाब्दिक एवं गैर शाब्दिक संकेतों के मिश्रण का ज्ञान होना अति आवश्यक है क्योंकि इसी के बल पर श्रोता, श्रवण के परिणामों एवं गुणवत्ता में विभेद करने में सक्षम हो पाते हैं।

2.4 प्रभावी श्रवण की रणनीतियाँ

मानव मस्तिष्क के विकसित होने में श्रवण एवं दृश्य की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका है एवं एक साधारण मनुष्य बातचीत के द्वारा ही अपने विचारों को एवं दृष्टिकोण को विकसित करता है। अतः यदि हम श्रवण प्रक्रिया से पूर्व ही स्वयं को सीखने की रणनीति के अनुसार नियन्त्रित करके बैठते हैं तो हम अधिकतम लाभ उठा सकते हैं। यदि आप सुनने में अत्यन्त कुशल हैं तो आपको आपकी नेतृत्व क्षमता के विकास में, टीम को संगठित करने में, सम्बन्ध बनाने आदि में महत्वपूर्ण सफलता अर्जित हो सकती है।

यदि आप निम्नांकित रणनीतिक सुझावों पर अमल करें तो श्रवण क्षमता एवं कुशलता में वृद्धि की अपेक्षा की जा सकती है:

2.4.1 बातचीत के लिए अपने लक्ष्य को निर्धारित करना

एक कुशल श्रोता बातचीत की प्रक्रिया हेतु अपनी भूमिका के बारे में अपना लक्ष्य निर्धारित कर लेते हैं तथा अपने बोलने एवं सुनने की पसंद को इन लक्ष्यों के आधार पर ही चुनते हैं। किसी व्यापारिक बातचीत के लिए निम्नांकित रणनीतियाँ हो सकती हैं :

- (1) प्रायः हम बातचीत के दौरान कुछ सूचनाओं के आदान प्रदान में ज्यादा इच्छुक होते हैं। अतएव बातचीत के दौरान हमें किस प्रकार की सूचनाओं की आवश्यकता है इसका पूर्व आंकलन हमारे लिए लाभदायक सिद्ध हो सकता है ताकि हम उन बिन्दुओं को अवश्य शामिल कर लें।
- (2) व्यापारिक बातचीत के दौरान हम यदि कार्यकारी सम्बन्धों को बनाने में सक्षम होते हैं तो ये सम्बन्ध भविष्य में हमारी व्यापारिक गतिविधियों के लिए लाभप्रद हो सकते हैं। उदाहरणार्थ, एक विक्रेता को अपने उपभोक्ताओं से अच्छे सम्बन्ध विकसित कर लेने चाहिए ताकि भविष्य में उनकी सहायता से व्यापार को बढ़ाया जा सके।
- (3) जब कभी हम व्यापारिक बातचीत करें तो यह ध्यान रखें कि जो भी प्रस्ताव हम इस बात चीत में रखें वे अच्छा महसूस करने वाले हों तथा दूसरे की भावना एवं सम्मान का पूरा ध्यान रहे।

2.4.2 अपने विकल्पों का ज्ञान होना

जब कभी भी आप बात चीत का एक हिस्सा होते हैं तो आपके पास बोलने एवं सुनने की ही भूमिकाएँ हो सकती हैं। आपको अपने विकल्पों के बारे में पता होना चाहिए

अर्थात् किस समय आपको बोलना है तथा किस समय आपको ध्यानपूर्वक सुनना है। यदि आप बात चीत के दौरान तीव्रता से अपने बोलने या सुनने के विकल्प को कार्यान्वित कर लेते हैं तो आप निश्चित ही इसका लाभ उठा सकते हैं।

जब कभी आप किसी व्यापारिक उद्देश्य से बात चीत के लिए या उपभोक्ता सम्बन्ध विकसित करने के लिए या किसी सौदेबाजी के लिए वार्तालाप में प्रतिभाग करते हैं तो याद रखिए कि एक कुशल श्रोता होने का लाभ आपको सदैव मिलेगा। यद्यपि आप अधिकारी के रूप में हों तो इसका तात्पर्य यह कदापि नहीं निकालना चाहिए कि आपका अधिक बोलना ही आपके लिए हितकर होगा अपितु ज्यादा से ज्यादा सूचनाओं को एकत्र करने के लिए आपका ज्यादा श्रवण करना अधिक लाभदायक हो सकता है। यदि आप साक्षात्कार में जाएं तो भी आप यह सुनिश्चित कर लें कि साक्षात्कार बोर्ड के सदस्यों को भली भाँति सुनकर ही आपको उनके उचित उत्तर देने हैं ताकि अपने हिसाब से ज्यादा बोलना और कम सुनना कि आप दोषी न रहें। यदि अनवरत रूप से वार्तालाप चल रहा हो तो आप आज्ञा लेकर बोलने का प्रयत्न करें।

2.4.3 अपने बोलने को केन्द्रित एवं स्पष्ट करना

प्रायः ऐसा होता है कि हम श्रवणोपरान्त प्रश्न पूछते समय कहना कुछ और चाहते हैं तथा कह कुछ और जाते हैं। ऐसा इसलिए होता है कि बहुत अधीरता दिखाने पर हम बात पूरी तरह से सुनते नहीं हैं। तथा परिणाम स्वरूप अपने प्रश्न को भी बहुत स्पष्ट एवं केन्द्रित नहीं कर पाते हैं। यदि आपको कुछ प्रस्तुतीकरण करना है तो आपको चाहिए कि जो मुख्य श्रोत्र आप बोलना चाहते हैं उनको भली भाँति तैयार कर लें ताकि आपके श्रोता गण उस विषय को अच्छे से समझ जाएं तथा आप एक कुशल श्रवण में मदद कर सकें।

2.5 श्रवण में बाधाएँ

श्रवण कभी भी आसान नहीं होता है क्योंकि यह आस पास के वातावरण पर अत्यधिक निर्भर होता है।

- एक साधारण व्यक्ति अपने जगे हुए काल के 70 प्रतिशत समय में सम्प्रेषण करता है तथा उसमें से 45 प्रतिशत केवल श्रवण करता है।
- एक 10 मिनट के प्रस्तुतीकरण में केवल 50 प्रतिशत ही रह जाता है तथा दो दिनों में यह 25 प्रतिशत रह जाता है।

- यदि आपको अपनी श्रवण कुशलताएं बढ़ानी है तो आपके लिए यह आवश्यक है कि आप श्रवण के वातावरण के कारकों जैसे कि विषय सार, वक्ता, प्रलोभन, मस्तिष्क की अवस्था, भाषा, श्रवण गति आदि को समझें।

इस प्रकार श्रवण में निम्न प्रकार की बाधाएं हो सकती हैं।

(क) विषय सार - यदि श्रोता को विषय सार के बारे में अधिक ज्ञान है तो उसकी श्रवण में रूचि कम हो जाती है। यदि श्रोता को विषय के बारे में बहुत कम पता है तो भी वह उसको समझने के लिए अधिक प्रयास नहीं करता है और इस प्रकार से श्रवण अप्रभावी रह जाता है।

इससे छुटकारा पाने के लिए एक श्रोता को मूर्ति रूप में नहीं बैठना चाहिए तथा वक्ता एवं वक्तव्य के प्रति आस्थावान रहना चाहिए ताकि कुछ नये विषय या नये आयाम उस वक्ता के द्वारा सीखने को मिल सके। यदि आपको किसी विषय में बहुत अधिक ज्ञान भी हो तो भी आप ध्यान से श्रवण करने पर कुछ न कुछ नया विषय या उसके बारे में नये आयाम सीख सकते हैं।

(ख) माध्यम - श्रवण प्रक्रिया में माध्यम अति आवश्यक होता है। यदि वक्ता की दूरी बहुत अधिक हो तथा वह श्रोता को नजर नही आये तो भी श्रवण में रूचि कम हो जाती है। यदि वक्ता एवं श्रोता में सीधे तौर पर नजरों के मिलने का अवसर होता है तो श्रवण अधिक प्रभावी होता है। इसके अतिरिक्त माध्यम के रूप में जिस भी भाषा का तथा अन्य साधनों का प्रयोग किया जाता है वह भी श्रवण प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाते हैं।

(ग) अन्य प्रलोभन - यदि वक्तव्य के स्थान पर अत्यधिक साज सज्जा, इधर उधर घूमने वाली वस्तुएं, आवाज में परिवर्तन आदि हों तो श्रोता का ध्यान इससे भंग होता है तथा यह श्रवण को अप्रभावी बनाता है। श्रोता के लिए यह आवश्यक है कि इस प्रकार के प्रलोभन होने की स्थिति में वह इन प्रलोभनों पर ध्यान न दे, अपने ध्यान को श्रवण में स्थापित करे।

(घ) मस्तिष्क अवस्था - किसी व्यक्ति की मस्तिष्क अवस्था श्रवण में सबसे अधिक महत्वपूर्ण होती है। यदि व्यक्ति का मस्तिष्क शान्त नहीं है, पूर्व से ही श्रवण के लिए तैयार नहीं है या किसी अन्य व्यक्तिगत समस्या से परेशान है तो ऐसी अवस्था में श्रवण का प्रभावी होना अत्यन्त मुश्किल हो पाता है।

ऐसे में श्रोता को चाहिए कि वह अपनी व्यक्तिगत समस्याओं को श्रवण प्रक्रिया से अलग रखें, दूसरे व्यक्ति के मूल्यों एवं विश्वास को आदर दें, यदि दूसरे के दृष्टिकोण

से सहमत न हो तो उसे समझने का प्रयास करें।

(ड) भाषा - जब भी कोई व्यक्ति किसी भी स्थान पर बोलने जाता है तो उस प्रान्त या क्षेत्र की भाषा का अत्यधिक ध्यान रखना चाहिए क्योंकि उस क्षेत्र के लोग अपनी भाषा को ही अच्छी तरह समझ सकते हैं तथा भाषा के सरल एवं सुगम होने पर श्रवण पूर्ण प्रभावी हो सकता है तथा कम से कम बाधाओं को उत्पन्न करता है। श्रोता के लिए भी यह आवश्यक है कि वह बोले जाने वाले शब्दों के अर्थ तथा परिस्थितियों के अनुसार शब्दों के अर्थ को समझे तथा उसके अनुसार ही विश्लेषण करें।

(च) श्रवण गति - साधारणतया किसी व्यक्ति की बोलने की गति 125-150 शब्द प्रति मिनट होती है तथा श्रवण गति 500 शब्द प्रति मिनट होती है जिसमें से सोचने के समय को सम्मिलित नहीं किया गया है।

जब कभी श्रोता, श्रवण करते समय अन्यत्र कहीं सोचने लगता है तो श्रवण प्रक्रिया प्रभावी होती है तथा श्रोता को समानान्तर रूप में तो सोचना आवश्यक है परन्तु उसे इतना नियन्त्रण रखना होगा कि वह विषय वस्तु से बहुत अधिक दूर न हो जाए।

(छ) प्रत्युत्तर / पुनर्भरण - यदि वक्ता बोले गये वक्तव्य को प्रत्युत्तर या पुनर्भरण के द्वारा स्पष्ट न करे तो श्रवण में भ्रांतियाँ पैदा हो सकती हैं। इसी प्रकार श्रोता का भी यह कर्तव्य है कि यदि कोई विषय उसे समझ में नहीं आ रहा हो तो वह वक्ता से पूछ कर अपनी समस्या या संशय को स्पष्ट कर ले। इस प्रकार सम्प्रेषण हेतु श्रवण में भी प्रत्युत्तर या पुनर्भरण की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

2.6 सारांश

अब तक के पाठन से हम यह समझ चुके हैं कि श्रवण एक सक्रिय प्रक्रिया है इसको प्रभावी बनाने के लिए किसी भी व्यक्ति का सक्रिय होना अति आवश्यक होता है तथा साथ ही विषय को समझने के लिए अपना ध्यान भी जागृत रखना आवश्यक होता है। यदि कोई व्यक्ति अपने श्रवण की क्षमता को अत्यन्त प्रभावी बना लेता है तो यह उसको अत्यन्त ही सफल व्यक्ति बना सकती है। जो हम सुनते हैं उससे ही हमारी सोचने तथा विश्लेषण करने की क्षमता का विकास होता है।

2.7 महत्वपूर्ण शब्द

प्रभावी श्रवण, श्रवण बाधाएँ, विभेदात्मक श्रवण, संबंध श्रवण, प्रशंसनीय श्रवण, आलोचनात्मक श्रवण, परावर्तित कुशलताएँ, अनुसरण कुशलताएँ, एकाग्र कुशलताएँ,

सूचनात्मक श्रवण, महसूस करना, छानना, याद करना आदि ।

2.8 स्वपरख प्रश्न

- प्र.1 सम्प्रेषण में श्रवण के महत्व की व्याख्या उदाहरणों की सहायता से कीजिए।
- प्र.2 किसी संगठन में श्रवण की सहायता से एक नियोक्ता तथा कार्मिक के मध्य सम्बन्ध किस प्रकार अच्छे हो सकते हैं?
- प्र.3 श्रवण में क्या क्या बाधाएँ आ सकती हैं? कृपया उल्लेख करें।
- प्र.4 श्रवण कितने प्रकार का हो सकता है? सोदाहरण विवेचना करें।

2.9 अन्य महत्वपूर्ण पाठन स्रोत

- लीशकर, रेमण्ड वी. जैन, डी. पेरिट एण्ड मैरी ई. फ्लैटली, लीशकरस बेसिक बिजनेस कम्यूनिकेशन, आठवाँ एडिशन, टाटा मैकग्राहिल नई दिल्ली।
- पी. प्रसाद कम्यूनिकेशन स्किल्स, एस. के. कटारिया एण्ड सन्स।
- मीनाक्षी रमन प्रकाश सिंह, बिजनेस कम्यूनिकेशन्स, ऑक्सफोर्ड पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
- मधुकर आर. के, बिजनेस कम्यूनिकेशन एण्ड कस्टमर रिलेशन्स, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा. लिमिटेड, नई दिल्ली।

इकाई - 3 : गैर शाब्दिक सम्प्रेषण

इकाई की रूपरेखा-

- 3.0 उद्देश्य
- 3.1 प्रस्तावना
- 3.2 व्यावसायिक संगठनों में गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का महत्व
- 3.3 गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के प्रकार
- 3.4 गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के लिए महत्वपूर्ण बातें
- 3.5 सारांश
- 3.6 महत्वपूर्ण शब्द
- 3.7 स्व-परख प्रश्न
- 3.8 अन्य महत्वपूर्ण पाठन स्रोत

3.0 : उद्देश्य

इस इकाई को समग्र रूप से पढ़ने के पश्चात आप निम्न उद्देश्यों की प्राप्ति में सक्षम होंगे:

- गैर शाब्दिक सम्प्रेषण को परिभाषित करने में,
- व्यापारिक संगठनों में गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के महत्व को समझने में,
- विभिन्न गैर शाब्दिक संकेतों को विस्तृत रूप से समझने में, तथा
- गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के आंकलन में।

3.1 प्रस्तावना

हमारे शाब्दिक सम्प्रेषण के अतिरिक्त हमारे चेहरे के भाव, हाथों का प्रयोग, आँखों की गतिविधियाँ आदि भी एक प्रकार से सम्प्रेषण का ही भाग होते हैं तथा इनको हम गैर शाब्दिक सम्प्रेषण कहते हैं। आज के युग में संगठनों में प्रबन्धन की प्रक्रिया के दौरान इन गैर शाब्दिक सम्प्रेषण संकेतों का भी अत्यधिक महत्व होता है। यदि देखा जाए तो गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का महत्व शाब्दिक सम्प्रेषण से भी अधिक होता है। आपका व्यक्तिगत आविर्भाव, चेहरे का भाव, शारीरिक गतिविधियाँ, आँखों का प्रभाव, आवाज की पिच

इत्यादि सभी गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के मुख्य स्रोत होते हैं। इस प्रकार के सभी गैर शाब्दिक सम्प्रेषण अन्तरवैयक्तिक संचार के समय एक-दूसरे की भावनाओं को और मजबूती से व्यक्त करते हैं। आपने प्रायः महसूस किया होगा कि यदि व्यक्ति आपसे जाते हुए कुछ भी नहीं कहता है तो इस शान्ति का मतलब नाराजगी होता है या फिर यदि व्यक्ति प्रेम एवं मीठी वाणी में नमस्ते कहता है तो आपको उसके सौहार्दपूर्ण व्यवहार की अनुभूति होती है परन्तु यदि व्यक्ति बहुत तेज आवाज में आक्रोश के साथ नमस्ते कहता है तो इसका तात्पर्य यही होता है कि वह दोबारा आपसे मिलने में बिलकुल भी रूचि नहीं रखता है। गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के तरीके जानबूझ कर या अनजाने में भी व्यक्त होते हैं। प्रायः यदि आपको कोई प्रश्न या स्थिति समझ में नहीं आती है तो स्वतः ही आपकी भवें सिकुड़ जाती हैं तथा आँखें भी संकुचित हो जाती हैं अर्थात् यह आपके द्वारा अनजाने में किया गया गैर शाब्दिक सम्प्रेषण है जो कि किसी विषय वस्तु की कम समझ को प्रदर्शित करता है। इस इकाई में हम विभिन्न प्रकार के गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के प्रकार को तथा उनके विश्लेषण आदि को भली भाँति समझने का प्रयास करेंगे।

3.2 व्यावसायिक संगठनों में गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का महत्व

यदि हम सम्प्रेषण के सबसे पुराने स्वरूप को जानने की कोशिश करें तो शाब्दिक सम्प्रेषण से अधिक महत्वपूर्ण गैर शाब्दिक सम्प्रेषण है। इस काल में इशारों तथा शारीरिक गतिविधियों के द्वारा ही एक-दूसरे को समझने का प्रयत्न करते थे। आज भी एक छोटा शिशु बिना बोले अपने भावों को सफलतापूर्वक व्यक्त करता है तथा जिन शब्दों को हम बोलते हैं वे शिशु के लिए जाने पहचाने नहीं होते हैं तथा फिर भी वह उनको भली भाँति समझता है। जैसे ही हम अपनी व्यावसायिक जिन्दगी को जीने के लिए किसी संगठन में प्रवेश करते हैं तो हम शाब्दिक एवं गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के मध्य विरोधाभास के बीच तालमेल बैठाने की ही कोशिशों में लगे रहते हैं। हमारे लिए यह अति आवश्यक है कि अपने संगठन में अपने से नीचे तथा ऊपर दोनों ही कर्मियों के द्वारा प्रयुक्त गैर शाब्दिक सम्प्रेषण को समझने का प्रयास करें क्योंकि इस प्रकार के आभास हमें प्रायः भविष्य की अच्छी या बुरी स्थिति को नियन्त्रित करने में सहायक होता है। जब कभी शब्दों एवं क्रियाओं के मध्य विरोधाभास होता है तो प्रायः हम क्रियाओं या भावों पर ज्यादा विश्वास करते हैं। और शब्दों के प्रभाव को भावों की तुलना में ही विश्लेषित करते हैं। विशेषकर मौखिक सम्प्रेषण में हमारे लिए यह जानना अधिक आवश्यक है कि बातों को हम कैसे कहते हैं, बजाय क्या कहते हैं। वास्तविकता में सम्प्रेषण मौखिक या शाब्दिक रूप से कहीं अधिक होता है। शोध के परिणामों से पता चलता है कि सम्प्रेषण के कुल भाग का 70

से 90 प्रतिशत भाग गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के द्वारा ही निर्धारित होता है। परन्तु इस परिणाम का एक पहलू यह भी है कि हमें यह ज्ञात होना चाहिए कि किसी भी कार्यशाला या संगोष्ठी या जन उद्बोधन के दौरान किन किन क्रियाओं या भावों के रूप में गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का क्या विश्लेषण हो सकता है। यदि आपको प्रेषक या वक्ता के शाब्दिक सम्प्रेषण या संदेश के बारे में ही जानकारी है तो आप अधिकांश सम्प्रेषण को समझने में नाकाम हो सकते हैं। परन्तु यदि आपको शाब्दिक एवं गैर शाब्दिक दोनों ही प्रकार के सम्प्रेषण के बारे में जानकारी है तो यह आपको एक प्रभावी समझ में मदद करेगा। यदि आपको गैर शाब्दिक भावों/क्रियाओं को समझने में कुशलता प्राप्त है तो आप दूसरे के द्वारा व्यक्त किये गये विचारों को अधिक प्रभावी रूप से समझ सकते हैं परन्तु कभी कभी यह आपके लिए हानिकारक भी सिद्ध हो सकता है। उदाहरणार्थ, यदि आप किसी सभा को सम्बोधित कर रहे हैं तथा श्रोतागण के कुछ व्यक्ति जाने या अनजाने कुछ न कुछ विरोधाभासी भावों या क्रियाओं को व्यक्त करते हैं तो आपका स्वयं का विश्वास कमजोर पड़ सकता है। कभी कभी यदि हम पूर्ण वक्तव्य को अत्यन्त ध्यान से भी सुनते हैं तथा यदि हमें जवाँई आ जाए तो हम इसे रोक नहीं पाते हैं और वक्ता यह समझेगा कि हमारा ध्यान उसके वक्तव्य में नहीं है या हमें वह अरुचिकर लग रहा है।

यदि हम व्यावहारिक संगठनों में प्रबन्धकों के लिए गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के महत्व की बात करें तो चूँकि वे एक समूह का नेतृत्व करते हैं इसलिए निम्नांकित कारणों से यह उनके लिए अति आवश्यक होता है:

प्रथमतः एक प्रबन्धक को एक अच्छा नेता बनने के लिए अपने समूह के कर्मचारियों तथा साधियों से अधिकतम संवाद करना होता है तथा इस संवाद में शाब्दिक एवं गैर शाब्दिक दोनों ही सम्प्रेषण का प्रयोग होता है जिनको समझना अति आवश्यक है। जब गैर शाब्दिक सम्प्रेषण को अथवा भावों को भली भाँति समझ लिया जाता है तो यह किसी प्रबन्धक को एक उपयोगी माध्यम प्रदान करता है। एक समूह के विभिन्न सदस्य अपने भावों को तथा अभिवृत्ति को प्रायः गैर शाब्दिक क्रिया कलापों के द्वारा ही सम्प्रेषित करते हैं तथा ऐसी स्थिति में इसकी प्रभावी समझ अत्यन्त आवश्यक है। किसी टीम की कुछ व्यक्तिगत आवश्यकताएं स्वीकृति/अनुमोदन, वृद्धि, उपलब्धि एवं पहचान आदि हो सकती हैं। इन व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति में इस बात का अत्यन्त महत्व होता है कि किस प्रकार से तथा किस सीमा तक समूह के सदस्य आपस में एक दूसरे के गैर शाब्दिक भावों एवं क्रिया कलापों को समझते हैं। यदि टीम/समूह के सदस्य आपस में गैर शाब्दिक इशारों को अच्छी तरह से समझते हैं तो संगठन की वृद्धि एवं विकास के

अच्छे आसार नजर आते हैं क्योंकि ऐसे में यह इकाई/समूह एक मुक्त, ईमानदार एवं प्रतिस्पर्धात्मक होता है।

द्वितीय चरण में, कोई बात किस ढंग से कही गयी है उसका ज्यादा महत्व होता है, बजाय क्या बात कही गयी है अर्थात् किन शब्दों का प्रयोग किया गया है। कही गयी बात का दृष्टिकोण इस पर निर्भर करता है कि बात शब्दों को मुस्कराहट के साथ कहा गया है या माथा चढ़ाकर, जोर से डाँटने वाली आवाज में कहा गया है या धीमी एवं मासूम वाणी में कहा गया है अर्थात् शब्दों के शाब्दिक अर्थ से ज्यादा महत्वपूर्ण गैर शाब्दिक भाव होते हैं। बोलने वाले व्यक्ति को यह जानना अत्यन्त आवश्यक है कि जिस समूह के समक्ष इसे बोलना है वहाँ उसके बात करने का ढंग, गैर शाब्दिक भावों का दृष्टिकोण श्रोताओं के लिए क्या होगा? गैर शाब्दिक सम्प्रेषण केवल अन्तर वैयक्तिक ही नहीं होता है वरन् व्यक्ति में आन्तरिक रूप से भी होता है। कभी कभी व्यक्ति के हाव भाव या प्रतिक्रियाएँ उसके विचारों से विरोधाभास या समानाभास रखती है। लोग कभी कभी घृणात्मक या दुःखी भाव बनाते हैं या किसी विशेष स्थिति में खड़े होते हैं या इस प्रकार से व्यवहार करते हैं कि वे स्वयं के दृष्टिकोण का या छिपे हुए विश्वास को सुदृढ़ करते हैं। अनजाने में वे स्वयं को ही सलाह देते हैं कि जो भूमिका वे निभा रहे हैं वे सही या इन्हें उन भूमिकाओं को निभाने में कुछ बदलाव की आवश्यकता है जैसे कि विनम्र या दबंग, विश्वसनीय या सतर्क, नियन्त्रित या सहज आदि।

ऐसे व्यक्ति जो समूह में कार्य करते हैं या समूह के लिए कार्य करते हैं (जैसे कि प्रबन्धक या शिक्षक आदि) तो उनके लिए गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का समझना अति आवश्यक होता है। सामाजिक वैज्ञानिक प्रारम्भ से गैर शाब्दिक भाषाओं के रहस्य को जानने में शोध करते रहे हैं परन्तु पिछले कुछ समय से व्यापार जगत ने गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के प्रभाव एवं महत्वप को जाना है तथा इसकी शक्ति को एक प्रभावी सम्प्रेषण हेतु पहचाना है। खामोश भाषा या गैर शाब्दिक भाषाओं में पिछले कुछ वर्षों में प्रबन्धन से जुड़े क्षेत्रों में सीधे तौर पर अपनी महत्वपूर्ण भूमिका को प्रभावी रूप से मनवाया है। पहले तो किस प्रकार से प्रबन्धक अपने कर्मियों को प्रोत्साहित करते हैं तथा दूसरा वे किस प्रकार से व्यवस्थापाके या प्रबन्धकों को निर्णय लेने की क्षमता के स्टाइल को एवं नेतृत्व को सम्प्रेषित करते हैं। प्रायः नौकरी के लिए साक्षात्कार देते समय तथा विज्ञापनों में गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का महत्व हमको देखने को मिलता है।

3.3 गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के प्रकार

गैर शाब्दिक सम्प्रेषण में चेतन या अचेतन संदेश शामिल हो सकते हैं।

3.3.1 चेतन गैर शाब्दिक सम्प्रेषण

चेतन गैर शाब्दिक सम्प्रेषण को करने वाले प्रेषक या संचारकर्ता अपने द्वारा भेजे जा रहे संदेश के प्रति संजग एवं जागरूक होते हैं तथा उनको इस संदेश का तात्पर्य अथवा अर्थ भी ज्ञात होता है।

यदि आप किसी व्यक्ति को अपनी बाहों में भरते हैं तो आपको पता होता है कि इस प्रकार का संदेश (गैर शाब्दिक) केवल उन्हीं व्यक्तियों के लिए है जिनको आप बहुत प्यार करते हैं तथा ऐसा करके आप उससे गहन प्यार की अभिव्यक्ति करते हैं। इसी प्रकार चेतन गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के ग्राही भी इस संदेश के अर्थ को समझने में सक्षम होते हैं। अर्थात् यदि आपको कोई अपनी बाहों में भर लेता है तो आपको पता होता है कि वह व्यक्ति आपसे गहन प्यार का इजहार कर रहा है तथा उसके लिए आपके मन में अपार स्वीकृति है।

3.3.2 अचेतन गैर शाब्दिक सम्प्रेषण

अचेतन संदेशों का सम्प्रेषण प्रायः ग्राही के अचेतन मस्तिष्क में होता है। अचेतन संदेशों के ग्राही इस प्रकार के संदेशों के प्रति जागरूक नहीं होते हैं, यद्यपि ये संदेश उनके लिए महत्वपूर्ण होते हैं।

- उसकी अन्तर्क्रियाओं (उदाहरणार्थ हृदयगति, कंपन आदि) का होना आपके गैर चेतन पाठन के अचेतन गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के कारण होता है।
- पोलिस एवं मिलिट्री बल की वेशभूषा उनकी शक्तियों एवं अधिकारों को परिभाषित करती हैं।
- यदि कोई व्यक्ति अत्यन्त मँहगी वेशभूषा एवं आभूषण धारण किये हो तथा मँहगी गाड़ी में हो तो उस व्यक्ति की पृष्ठभूमि को आप आसानी से परिभाषित कर सकते हैं।
- विज्ञापनों में अधिकाधिक जवान महिलाओं का प्रयोग जवान पुरुषों के समूह में उनकी स्वीकृति एवं प्रभाव को दृष्टिगत रखते हुए ही किया जाता है।

अचेतन संदेश यद्यपि चेतन स्तर पर कोई जागरूकता उत्पन्न नहीं करते हैं परन्तु फिर भी वे ग्राही को प्रभावित करते हैं। वास्तविकता में तो अचेतन संदेश, चेतन संदेशों से ज्यादा प्रभावी प्रतीत होते हैं।

विज्ञापन की दुनिया में अचेतन गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का अधिकाधिक प्रयोग होता है।

3.3.3 स्वैच्छिक एवं अस्वैच्छिक संदेश

चेतन एवं अचेतन संदेशों को स्वैच्छिक एवं अस्वैच्छिक दोनों ही प्रकार से भेजा जा सकता है।

अधिकांश गैर शाब्दिक संदेश अस्वैच्छिक होते हैं। वास्तविक रूप में अधिकांश सम्प्रेषण कर्ताओं को यह नहीं पता होता है कि वे गैर शाब्दिक सम्प्रेषण करते हैं।

शारीरिक भाषा एक ऐसा क्षेत्र है जो गैर शाब्दिक सम्प्रेषण की अस्वैच्छिक प्रकृति को दर्शाता है। प्रति दिन व्यक्ति अपने हाव भावों के द्वारा, चेहरे के भाव के द्वारा या अन्य शारीरिक गतिविधियों के द्वारा गैर शाब्दिक सम्प्रेषण को अंजाम देते हैं।

चूँकि अस्वैच्छिक गैर शाब्दिक सम्प्रेषण एक अनियोजित शारीरिक प्रतिक्रिया को प्रदर्शित करते हैं अतः सम्प्रेषण का यह प्रकार, शाब्दिक अथवा मौखिक सम्प्रेषण से अधिक ईमानदार प्रतीत होता है। गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का नियन्त्रण एक ज्ञानी व्यक्ति के द्वारा भी हो सकता है अर्थात् सचेत व्यक्ति के द्वारा भी हो सकता है। यदि किसी व्यक्ति को पता हो कि झूठ बोलने वाला व्यक्ति कभी आँखों में आँखें डालकर बात नहीं कर सकता है तो वह अपने आपको नियन्त्रित करके झूठ बोलने पर भी आँखों में आँखें डालकर बात कर सकता है।

यदि किसी व्यक्ति को पता हो कि बाहों में भरने का मतलब किसी व्यक्ति से अत्यन्त अपनापन दिखाने से होता है तो वह अपने शत्रु को भ्रमित करने के लिए भी ऐसा दिखावा कर सकता है।

उपर्युक्त वर्णित वर्गों के द्वारा गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का एक ढाँचा सैद्धान्तिक रूप से प्रस्तुत किया जा सकता है जो कि वास्तव में संकेतों का एक यौगिक होता है जो सम्मिलित रूप से कुछ अर्थ को व्यक्त करते हैं संकेत, निश्चित एवं संगठित अभिव्यक्ति के माध्यम होते हैं जो प्रतीकों/चिन्हों एवं नियमों के संयोग से बने होते हैं तथा प्रयोग

में आते हैं। यद्यपि ये संकेत एक निश्चित वर्ग में प्रस्तुत किये जाते हैं तथा वे एक साथ होते हैं और नैसर्गिक रूप से शाब्दिक सम्प्रेषण के साथ एकीकृत होते हैं। यदि किसी सम्प्रेषण के अर्थ के लिए हम केवल शाब्दिक या गैर शाब्दिक संकेत पर ही ध्यान देंगे तो ऐसे में सम्प्रेषण अप्रभावी एवं अपूर्ण होगा। यदि हम गैर शाब्दिक संकेतों के एकीकरण को समझना चाहते हैं तो हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम इनके कार्यों को समझें। साधारणतया गैर शाब्दिक संकेत/सम्प्रेषण व्यक्तियों के बहुत से उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं।

(क) प्रभाव छोड़ने में - गैर शाब्दिक संकेतों को सम्प्रेषण में प्रयोग करने पर समूह या अन्य व्यक्ति एक अच्छा प्रभाव पर होता है। यदि किसी बात को बिना गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के कहते हैं तो वह इतना प्रभावी नहीं होता है।

(ख) आपसी मेल-जोल को प्रबन्धित करने में - गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का प्रयोग चूँकि व्यक्ति को मनोभाव को भी प्रदर्शित करता है। अतः आपसी मेल जोल के बढ़ाने में गैर शाब्दिक संकेतों की एक अहम भूमिका होती है। उदाहरणार्थ, व्यक्ति के कन्धे पर हाथ रखना, व्यक्ति को बाहों में भरना आदि।

(ग) अन्तर्सम्बन्धों को प्रबन्धित करने में - यदि हम किसी व्यक्ति के पास अपना कोई प्रस्तुतीकरण करने जाते हैं या किसी समूह के सामने व्यावसायिक प्रस्तुतीकरण करते हैं तो गैर शाब्दिक संकेत जैसे कि चेहरे के भाव, आवाज का उतार चढ़ाव आदि का प्रयोग हमारे प्रभाव को इन अन्तर्सम्बन्धों में काफी बढ़ा देता है।

(घ) धोखेबाजी को पहचानने में - गैर शाब्दिक संकेतों के द्वारा ही हम धोखेबाजी के व्यवहार को आसानी से पढ़ लेते हैं। जैसे कि यदि कोई व्यक्ति आँखों के सम्पर्क से बचकर बात करता है तो वह सत्य नहीं बोल रहा होता है।

(ङ) शक्ति एवं राजी करने के संदेश को देना - नेतृत्व में लोगों को मना लेने का एवं शक्ति / अधिकार का संदेश प्रायः गैर शाब्दिक संकेतों के द्वारा ही दिया जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विभिन्न प्रकार के लोग गैर शाब्दिक संकेतों एवं सम्प्रेषण का प्रयोग भिन्न भिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए करते हैं।

गैर शाब्दिक सम्प्रेषण की विधियों का वर्णन हम निम्नलिखित सारणी की सहायता से कर सकते हैं।

गैर शाब्दिक सम्प्रेषण विधि	उदाहरण
काइनेसिक्स	चेहरे के भाव, शारीरिक भंगिमा, भाव प्रदर्शन क्रिया
ऑक्ज्यूलेसिक्स	नेत्र सम्पर्क
हैप्टिक्स	स्पर्श सम्प्रेषण
प्राक्सेमिक्स	दूरी एवं स्थान का सम्प्रेषण
आविर्भाव एवं आभूषण	शारीरिक लक्षण, वेशभूषा एवं उपसाधन जैसे कि सुगन्धित इत्र, मेकअप, आभूषण आदि।
पैरालिंग्विस्टिक्स /वोकालिक्स	पिच में विविधता, चाल, आयतन एवं रूकने का अर्थ
क्रोनेमिक्स	सम्प्रेषण पर समय का प्रभाव

(1) काइनेसिक्स (Kinesics) - किसी भी व्यक्ति की प्रबन्धकीय क्षमताओं को जानने के लिए यह सुनना आवश्यक नहीं है कि वह क्या कह रहा है अपितु यह आवश्यक होता है कि उनके बोलते समय हम उनका परिपेक्षण करें। शारीरिक भाषा एक ऐसी प्रक्रिया है जो कि किसी भी व्यक्ति को बोलते समय विभिन्न बातों के लिए भिन्न भिन्न होती है तथा व्यक्ति के चेहरे के हाव भाव भी बात के साथ साथ बदलते रहते हैं और चेहरे के हाव भाव एवं शारीरिक भाषा किसी बात के वजन को घटाने या बढ़ाने में सक्षम होते हैं। गैर शाब्दिक भाषा बोलने वाले के भावों की सच्चाई को प्रकट करती है तथा ग्राही की क्षमता भी एक हद तक इस प्रकार के गैर शाब्दिक संकेतों पर निर्भर करती है। शोध के द्वारा यह ज्ञात होता है कि लगभग 70 प्रतिशत से 90 प्रतिशत संदेश का सम्प्रेषण हमारी शारीरिक भाषा के द्वारा ही सफल होता है, तथा केवल लगभग 10 प्रतिशत भाग शाब्दिक अर्थ के द्वारा सफल होता है।

काइनेसिक्स का अर्थ शरीर की विभिन्न मुद्राओं से है या बात चीत के दौरान हमारी माँस पेशियों के संकुचन के द्वारा उत्पन्न शारीरिक मुद्रा या हमारे शारीरिक संरचना के झुकाव आदि द्वारा बनी मुद्रा से होता है। काइनेसिक्स के अन्तर्गत सभी प्रकार के शारीरिक, शारीरिक अन्तःक्रियाओं, स्वजनित परावर्तन क्रियाएं, शारीरिक भंगिमा, चेहरे के हाव भाव, एवं अन्य शारीरिक अंगों की गतिविधियां आदि आती हैं। शारीरिक भाषा, शारीरिक मुहावरे, अंग भाषा एवं काइनेसिक्स ऐसे ही कुछ शब्द हैं जिनका प्रयोग हम काइनेसिक्स में करते हैं।

(अ) चेहरे के भाव - यदि आपके उच्चाधिकारी के चेहरे पर मुस्कराहट हो तो आप

सहज महसूस करते हैं परन्तु यदि उच्चधिकारी के चेहरे की भवें तन जाएं तो आप असहज महसूस करते हैं। इसी प्रकार से यदि आपके अधीन साथी के चेहरे पर कुछ भ्रम के भाव आएं या आँखें संकुचित हो जाएं तो आप उसे ज्यादा समझाकर सन्तुष्ट करना चाहते हैं। इसी प्रकार से चेहरे के भाव सम्प्रेषण को सम्पन्न करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। निम्नांकित चित्रों में चेहरे के भावों को परिभाषित करने का प्रयास किया जा सकता है :



अभिरूचि



अरूचिकर



पाठन या श्रवण के लिए
स्वीकृति



पाठन या श्रवण के लिए
अस्वीकृति

चेहरे का भाव

उपरोक्त चित्रों में हम चेहरे के भावों के द्वारा रूचिकर, अरूचिकर, स्वीकृति एवं अस्वीकृति की अवस्थाओं को स्पष्ट रूप से ज्ञात कर सकते हैं तथा इनका प्रयोग प्रायः हमने वक्तव्य को श्रोता की प्रतिक्रिया के अनुसार बदल सकते हैं जो कि हमारे सम्प्रेषण की प्रक्रिया को पूर्ण करने में सहायक होते हैं ।

(ब) शारीरिक भंगिमा (Posture) - प्रायः आपने कुछ विशिष्ट व्यक्तियों को स्टेज पर बोलते देखा एवं सुना होगा। वे अपनी शारीरिक भंगिमाओं के साथ साथ आपको

हँसाते हैं, रूलाते हैं तथा भाव विभोर करते हैं। यदि आप उनको गौर से देखेंगे तो वे कभी सीधी अवस्था में खड़े नहीं होते हैं। उनके शरीर की भाषा शरीर के झुकाव आदि के कारण बदलती है। क्योंकि उनके शब्दों को अर्थपूर्ण बनाने में, इस प्रकार की शारीरिक भंगिमाओं की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यदि आपकी शारीरिक भंगिमा सही है तो आप स्वतः ही आत्मविश्वास से भरे नजर आएंगे इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि जब भी आप किसी समूह को व्याख्यान देने जायें या अपने संगठन के उच्चाधिकारियों के सामने प्रस्तुतीकरण करें तो आपकी शारीरिक भंगिमा उचित अवस्था में होनी चाहिए। यदि आप बोलते समय स्वयं को असहज महसूस कर रहे हैं तो जरा अपनी शारीरिक भंगिमा पर ध्यान देने का प्रयत्न करें, हो सकता है कि आप के कंधे झुके हुए हों, सीना अन्दर की ओर हो, इस कारण आप स्वस्थ श्वास क्रिया नहीं कर पायेंगे और इसी कारण बोलने में असहजता महसूस करेंगे। नीचे दिये गये चित्रों में विभिन्न शारीरिक भंगिमाएं किसी व्यक्ति के व्यवहार को परिभाषित करती हैं।

अन्तरवैयक्तिक सम्प्रेषण में शारीरिक भंगिमाएं

अन्तरवैयक्तिक सम्प्रेषण में शारीरिक भंगिमाएं



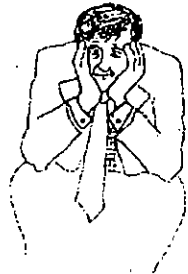
RESENTFUL



DEFENSIVE



CONFIDENCE
आत्मविश्वास



आपके प्रस्ताव से असन्तुष्ट
होना या अस्वीकार करना



(छोड़कर जाने की अवस्था)



स्फूर्तिवान एवं खुले दिमाग से
ऑफर के लिए स्वीकृति।

यदि हम एक सही शारीरिक भंगिमा को पहचानने का प्रयत्न करें तो हम पाएंगे कि इसके लिए हमारे सिर, पैर, शरीर के झुकाव आदि की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

यदि आप विश्वास से परिपूर्ण नजर आना चाहते हैं तो आपको अपने सिर को क्षैतिज एवं ऊर्ध्वाकार दोनों ही दिशाओं में सीधा एवं ऊँचा रखने की आवश्यकता होती है। इससे आपकी अधिकारिता का प्रमाण प्रतीत होगा।

यदि हम अपने पैरों पर ध्यान दें तो हमारे विश्वास में कमी के कारण कभी कभी पैर कम्पन करने लगते हैं या कभी कभी हम बिल्कुल भी हिलना या चलना बन्द कर देते हैं तथा एक ही स्थान पर खड़े रहते हैं। जबकि हमारी चाल हमारे आत्म विश्वास को दर्शाती है परन्तु आत्मविश्वास को दर्शाने के लिए ऐसा भी न हो कि हम बहुत तेज चलना प्रारम्भ कर दें। यदि हम बैठे हों तो भी हमारे पैरों की स्थिति सामान्य होनी चाहिए अर्थात् दोनों पैर एक दूसरे से अलग अलग तथा समान दूरी पर हों और पीठ न तो बहुत ज्यादा सीधी एवं तनाव में हो और न ही बहुत ज्यादा झुकी होनी चाहिए।

हमारे शरीर का दूसरे व्यक्ति के प्रति झुकाव हमारी अभिवृत्ति एवं भाव को प्रदर्शित करता है। यदि हमारा झुकाव किसी व्यक्ति के प्रति अधिक है तो यह उस व्यक्ति के प्रति हमारा आकर्षण, मित्रता एवं रूचि को प्रदर्शित करता है।

निम्नांकित शारीरिक भंगिमाओं के द्वारा हम कुछ भावों/संदेशों को जानने का प्रयत्न कर सकते हैं।

- | | |
|--------------------------------|------------------------------|
| (1) झुका हुआ एवं ढीला शरीर | ऊर्जा में कमी |
| (2) सीधा, खड़ा शरीर | ऊर्जा एवं विश्वास में अधिकता |
| (3) आगे झुका शरीर | मुक्त एवं रूचि का प्रदर्शन |
| (4) पीछे हटा हुआ शरीर | अरूचिकर एवं विरोधाभास |
| (5) दोनों बाहों का क्रॉस करना | विरोधाभास |
| (6) सीधे बिना क्रॉस किये बाहें | सुनने के लिए तैयार |
| (7) एकदम तनकर कुर्सी पर बैठना | तनाव महसूस करना |
| (8) एकदम झुककर कुर्सी पर बैठना | अतिआराममय, अरूचिकर प्रदर्शन |

(ग) शरीर के भाव प्रदर्शन - शरीर के भाव प्रदर्शन हमारे द्वारा परिवेक्षित क्रियाएं होती हैं। कुछ भावप्रदर्शन तो हमारे जीवन का एक अभिन्न अंग बन गये हैं। उदाहरणार्थ, यदि हम जाते हुए हाथ हिलाते हैं तो इसका तात्पर्य जाते हुए अभिवादन करना होता है। भाव प्रदर्शन भ्रमित एवं स्पष्ट हो सकते हैं। यदि कोई व्यक्ति पानी की तरफ इशारा करके

अपने मुँह की ओर इशारा करता है तो यह एक स्पष्ट भाव प्रदर्शन है और कोई भी इसको समझने में सक्षम होगा। परन्तु कभी कभी किसी के सिर हिलाने से आपको यह स्पष्ट रूप से समझ में नहीं आता है कि सामने वाला आपकी बात को समझ गया या नहीं तो इसे अस्पष्ट भाव प्रदर्शन कहते हैं। कभी कभी हम कुछ अप्राकृतिक भाव प्रदर्शन करते हैं। जो कि हमारे सम्प्रेषण के अर्थ को दिशाविहीन या कमजोर कर सकता है। उदाहरणार्थ, यदि हम बात करते समय अपने शरीर को छुएं; कपड़ों से खेलें या चेन आदि से खेलें तो उससे हमारे व्यक्तित्व के प्रभाव पर कमजोर असर पड़ सकता है। इसी प्रकार उँगलियों को चटकाना या बजाना, होठों को जीभ से चबाना, बिना बात के मुस्कराना आदि कुछ ऐसे भाव प्रदर्शन हैं जो कि हमारे व्यक्तित्व को कमजोर करते हैं। अतः इनसे हमें बचना चाहिए। लाभकारी भाव प्रदर्शन वे होते हैं जिनको प्रायः हम हाथ, बाँह या सिर के द्वारा व्यक्त करते हैं तथा इनका प्रयोग किसी बिन्दु को समर्थन करने के लिए करना चाहिए। सम्प्रेषण कर्ता को अपनी बाँह तथा कोहनी को शरीर से दूर रखना चाहिए ताकि इसके भाव में आत्मविश्वास की कमी नहीं दिख पाए। हमारी हथेलियों की विभिन्न मुद्राएँ भी प्रायः विभिन्न गैर शाब्दिक संकेतों को प्रदर्शित करती हैं। उदाहरणार्थ, यदि हम दो उँगलियों को दिखाते हैं तो इसका अर्थ जीत के रूप में प्रदर्शित होता है। इसी प्रकार यदि हम मुट्टी को बाँधकर बाँह मोड़कर दिखाएंगे तो यह शक्ति प्रदर्शन का तरीका होता है। इसी प्रकार यदि हम अपना अंगूठा ऊपर की ओर कर लें तथा मुट्टी बंद रख कर दिखाएँ तो इसका अर्थ किसी को अच्छे कार्य सम्पन्न होने के लिए शुभकामना करना होता है तथा यदि अंगूठा नीचे की दिशा में दिखाया जाए तो इसका तात्पर्य कुछ खराब होने से या किसी को नीचा दिखाने से होता है। इस प्रकार जब हम किसी से बात कर रहे होते हैं तो हम विभिन्न प्रकार की मुद्राओं का प्रयोग करते हैं। या कभी जान कर अपनी बातों के प्रभाव को प्रदर्शित करने के लिए हम विभिन्न मुद्राओं का प्रयोग करते हैं। निम्नांकित चित्र में इसी प्रकार से कुछ शारीरिक भाव प्रदर्शन की मुद्राएँ दी गयी हैं:

(2) आक्यूलेसिक्स - आक्यूलेसिक्स का तात्पर्य सम्प्रेषण के दौरान हमारी आँखों के भाव एवं प्रतिक्रिया से होता है। इसमें आँखों को मिलाकर बात करना, आँखों को चुराकर बात करना आदि भी शामिल है जो क्रमशः आत्मविश्वास में अधिकता एवं आत्मविश्वास में कमी को प्रदर्शित करते हैं।

आक्यूलेसिक्स प्रायः काइनेसिक्स के साथ ही प्रभावी होता है। उदाहरणार्थ, जब हम चेहरे पर भवों को ऊपर उठाते हैं तो हमारी आँख की प्रतिक्रिया भी एक आवश्यक गतिविधि होती है जो कि सम्प्रेषण में पूर्णता लाती है।

Figure 11 : Position of the hand and its gestures : Placement on the face



चक्षुसम्पर्क गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण अवयव है तथा प्रायः यह देखा गया है कि संगठन में उच्चाधिकारियों का चक्षुसम्पर्क अपने अधीनस्थ कर्मचारियों से अधिक होता है। आँखों की भाषा को साहित्य में भी एक महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। प्रायः जब कभी हम किसी समूह को सम्बोधित करते हैं तो समूह में उपस्थित व्यक्ति की आँखों में आँखे डालकर यदि बात की जाये तो हम अपने प्रति समूह का विश्वास हासिल करने में सफल होते हैं। यदि आप किसी साक्षात्कार के लिए भी जाएं तो आपको यह जानना आवश्यक है कि समूह साक्षात्कार में आप सभी साक्षात्कार कर्ताओं से व्यक्तिगत रूप से समान समय तथा समानता से आँखों का सम्पर्क अपने उत्तर देते हुए स्थापित करें इससे आपके आत्मविश्वास तथा सत्यता की परख होती है। चक्षुसम्पर्क के लिए निम्नांकित निर्देशों का पालन किया जा सकता है:

- यदि आप किसी व्यक्ति की आँखों में देखने में परेशानी महसूस करते हैं तो कम से कम उसके चेहरे पर ही किसी अंश/ भाग को देखते हुए बात की जा सकती है।
- यदि आप समूह को सम्बोधित कर रहे हों तो समूह में उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति की आँखों में देखने का प्रयत्न करें।
- जो व्यक्ति निर्णय क्षमता रखते हों तथा अधिकारिक शक्तियों को रखते हों उनकी आँखों में आँखें डाल कर ही बात करें।
- ऐसे किसी भी वस्तु पर अपनी नजर नहीं टिकाएं जो आपके श्रोता या ग्राही से आपका ध्यान हटा दे।

- उदासीन तथा बुरे श्रोताओं को समूह में ध्यान नहीं देना चाहिए क्योंकि वे आपके वक्तव्य या प्रदर्शन को बुरे अर्थ में प्रभावित कर सकते हैं।

(3) हैप्टिक्स

हैप्टिक्स का तात्पर्य छूकर सम्प्रेषण करने से होता है। प्रायः हमारा एक स्पर्श सामने वाले को बहुत प्रभावित कर सकता है। यदि आपका उच्चाधिकारी आपके गाल को स्पर्श करके या पीठ पर हाथ रख दे तो आपको जिस अपनत्व का आभास होता है वह अवर्णनीय है और इस प्रकार की स्थिति में आप अपने अधिकारी के लिए पूर्ण रूप से समर्पित हो जाते हैं। स्पर्श सम्प्रेषण को प्रायः जन्तुओं में भी देखा गया। जन्तु अपनी भावनाओं को प्रायः जीभ के द्वारा चाट कर या अपना सिर रगड़कर प्रकट करते हैं। जब कभी कोई व्यक्ति किसी को अपने गले से लगाता है तो हम समझ जाते हैं कि दोनों में असीम अपनत्व की भावना है। स्पर्श का इतना महत्व है कि यदि कोई व्यक्ति उदास होता है तथा अपनी भावनाओं को नियन्त्रित किये हुआ है और ऐसी स्थिति में यदि हम उसको स्पर्श कर दें या बाहों में भर लें तो वह रोने लगता है अर्थात् अपने दुःख को आपके सामने प्रकट करने से रोक नहीं पाता है जो कि बहुत ही अपने लोगों के सामने किया जाता है। हैप्टिक व्यवहार को हम निम्नांकित श्रेणियों में विभक्त कर सकते हैं :

- (क) कार्य के अनुसार एवं व्यवसाय के अनुसार
- (ख) सामाजिक एवं नम्रता के अनुसार
- (ग) मित्रता एवं गर्मजोशी के अनुसार
- (घ) प्रेम एवं अन्नरंगता के अनुसार

विभिन्न देशों में स्पर्श करने की संस्कृति को भिन्न भिन्न अर्थों में लिया जाता है। जहाँ भारतीय दर्शन के अनुसार चरणस्पर्श को आदर एवं सम्मान के दृष्टिकोण से देखा जाता है वहीं अन्य देशों में उसका प्रचलन नहीं है। स्पर्श सम्प्रेषण स्वयं के लिए भी होता है तथा दूसरे के लिए भी होता है परन्तु दूसरों को स्पर्श करने से यह एक सम्प्रेषण क्रिया को व्यक्त करता है परन्तु स्वयं को स्पर्श करने से सम्प्रेषण तो नहीं होता है परन्तु हमारी अवस्था का पता चल सकता है। उदाहरणार्थ, यदि कोई व्यक्ति स्वयं के माथे को बार बार स्पर्श करे तो यह इंगित करता है कि व्यक्ति किसी समस्या से परेशान है। स्पर्श के द्वारा हम विभिन्न भावों को व्यक्त करते हैं जो गैर शाब्दिक सम्प्रेषण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

(4) प्रोक्सेमिक्स

वर्षों से मनोवैज्ञानिक प्रोक्सेमिक्स अर्थात् नजदीक आने के सिद्धान्त पर शोध करते आ रहे हैं। प्रोक्सेमिक्स व्यक्तियों को बीच की दूरी की प्रकृति एवं प्रभाव का अध्ययन होता है। अर्थात् दो व्यक्तियों के बीच की दूरी उनके सम्बन्धों को परिभाषित करती है। प्रायः हम देखते हैं कि यदि व्यक्तियों में बहुत ही अधिक मैत्री पूर्ण सम्बन्ध होते हैं तो उनके बीच के खड़े होने की दूरी बहुत कम होती है। तथा जब सामन्जस्यता में कमी होती है तो बीच की दूरी अधिक होती है नीचे दी गयी सारणी में हम लोगों के बीच सम्बन्धों के आधार पर दूरी के प्रभाव को दर्शाने का प्रयत्न करेंगे:

दूरी	सम्बन्ध
1) अत्यन्त निकट (8 इंच से 12 इंच)	अत्यन्त व्यक्तिगत लोगों के सामने कम ही प्रदर्शित होता है।
2) निकट (12 इंच से 36 इंच)	सामाजिक सम्बन्ध
3) उदासीन (4.5 फिट से 5.0 फिट)	सामाजिक समारोह तथा व्यावसायिक मीटिंग
4) जब दूरी (5.5 फिट से 8.0 फिट)	व्यावसायिक एवं सामाजिक भाषण, ऑफिस में मेजों को इस प्रकार व्यवस्थित करना कि बाहरी लोग दूर से बात करें।
5) कमरे के आर पार (8 फिट से 20 फिट)	शिक्षकों एवं वक्ताओं के द्वारा जन सभा को सम्बोधित करने पर।
6) अत्यधिक दूरी (20 फिट एवं अधिक)	जन नेताओं द्वारा जनसभा को सम्बोधित करना।

एक व्यावसायिक संगठन में व्यक्तिगत दूरी को विभिन्न प्रकार के सम्बन्धों की श्रेणी को तीन सिद्धान्तों की मदद से समझा जा सकता है। आपके संगठन में आपकी जितनी ऊँची स्थिति होगी -

- आपके पास उतना ही अधिक स्थान होगा।
- आपकी सीमा उतनी ही ज्यादा बची रहेगी।
- अपने नीचे के कर्मियों की सीमाओं को भेदना उतना ही आसान होगा।

(5) आविर्भाव एवं आभूषण

एक कहावत है कि प्रथम प्रभाव ही अन्तिम प्रभाव होता है अर्थात् सम्प्रेषण के प्रारम्भ होने से पूर्व ही व्यक्ति के बारे में उसकी वेशभूषा आदि के द्वारा आभास हो जाता है। प्रायः व्यावसायिक जगत में अच्छे एवं सौष्ठवित शरीर वाले, अच्छी वेशभूषा वाले

व्यक्तियों को पसन्द किया जाता है। प्रायः आपने नौकरियों के विज्ञापन में पढ़ा होगा कि डिग्री के साथ साथ आकर्षक व्यक्तित्व के जवान लड़के / लड़कियों की आवश्यकता है अर्थात् नौकरी में व्यक्तित्व के दिखने की भी एक अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अतः यह ध्यान देने योग्य बात है कि जब भी आप किसी साक्षात्कार या समूह को सम्बोधित करने के लिए जायें तो आप यह सुनिश्चित कर लें कि आपका पहनावा या वेश भूषा, अन्य आभूषण जैसे कि घड़ी, चश्मा आदि समूह पर आपके व्यक्तित्व के बारे में एक अच्छा प्रभाव डालते हैं। आज के युग में कई व्यवसायिक व्यक्ति अपनी शारीरिक देख दिखाव के लिए परामर्शदाताओं की भी मदद लेते हैं। अपने आविर्भाव के लिए आप निम्नांकित बातों का ध्यान रख सकते हैं:

- (1) किसी भी मीटिंग या साक्षात्कार या सम्बोधन के लिए जाने से पूर्व स्वयं को अच्छी प्रकार से तैयार करना चाहिए जिसके अन्तर्गत अपनी शारीरिक संरचना के अनुसार कपड़ों का चयन, चेहरे के अनुसार बालों का स्टाइल तथा स्वच्छता आदि का ध्यान रखना चाहिए।
- (2) अपने शरीर के रख रखाव एवं तन को ढकने के लिए कपड़ों में निवेश करना आवश्यक है।
- (3) व्यावसायिक कार्यों के दौरान या साक्षात्कार के लिए जाते समय कभी भी बहुत ही दिखावटी कपड़ों का प्रयोग नहीं करना चाहिए तथा तीखी सुगन्ध का प्रयोग भी नहीं करना चाहिए।
- (4) आप यह सुनिश्चित कर लें कि जो भी वेशभूषा आप पहने वह आपके व्यक्तित्व में निखार लाए तथा आप उसमें सहजता का अनुभव करें।
- (6) समतुल्य भाषाएँ एवं मौखिक अभिव्यक्ति (पैराबैंडवेज एवं वोक्लिक्स) का प्रयोग करें।

शाब्दिक सम्प्रेषण में भी बोलने का अन्दाज अर्थात् आवाज में भारीपन, तेज आवाज, मुलायम आवाज, रूंधी हुयी आवाज आदि व्यक्ति के कहे गये वाक्यों को एक अलग अर्थ प्रदान कर सकती है अर्थात् शाब्दिक सम्प्रेषण में भी मौखिक अभिव्यक्ति या समतुल्य भाषाओं के रूप में गैर शाब्दिक सम्प्रेषण हो सकता है।

समतुल्य भाषाओं से हमारा तात्पर्य उन सभी आवाजों से होता है जो मौखिक रूप से उत्पन्न की गयी हों तथा वे भाषा सम्प्रेषण का सीधे तौर पर भाग नहीं होती है। इस प्रकार समतुल्य भाषाएँ (Paralanguage) शब्दों के उच्चारण के अतिरिक्त उनके

उच्चारण के तरीके पर ज्यादा निर्भर करती है। उदाहरणार्थ, हम किसी से अत्यन्त सौम्य आवाज में धन्यवाद कहें तो इसका अर्थ धनात्मक होता है परन्तु यही धन्यवाद शब्द किसी से गुस्से में खीझकर कहें तो इसका ऋणात्मक अर्थ निकलता है। अर्थात् भाषा या शब्द तो वही है परन्तु उसका अर्थ अलग अलग है।

इसको हम निम्नांकित उपश्रेणियों की सहायता से और अधिक अच्छी तरह समझ सकते हैं:

- आवाज की तीव्रता (सीधी/स्पष्ट, आज्ञाकारक, तेज, कठोर, सौम्य, आरामदायक, उग्र, क्रोधित, आदि)
- आवाज का उतार चढ़ाव (फैलती हुयी या दबती हुयी)
- पिच (ऊँची या नीची)
- तीव्रता (तेज या सौम्य)
- अभिव्यक्ति/उच्चारण (ऋतिहीन/सावधानीपूर्ण या त्रुटीपूर्ण /असावधानीपूर्ण)
- लय (मधुर या टूटी फूटी)

(7) क्रोनेमिक्स

क्रोनेमिक्स से हमारा तात्पर्य समय से होता है अर्थात् हम अपने संदेश को समय के अनुरूप प्रभावी बना सकते हैं। अर्थात् किसी व्यक्ति को संदेश देने में या सम्प्रेषण करने में कितना समय दिया गया, उसको कितना इन्तजार कराया गया था, सही समय पर कोई कार्य किया गया आदि। प्रायः जब आप साक्षात्कार के लिए जाते हैं तो आप अपनी कुशलता अथवा योग्यता का आंकलन इस बात से भी करते हैं कि अन्दर साक्षात्कार बोर्ड ने आपको कितना समय दिया। यदि अधिक समय तक आप साक्षात्कार बोर्ड का सामना करते हैं तो आपको संतुष्टि की अनुभूति होती है। अर्थात् समय भी गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का एक द्योतक होता है। इसी प्रकार यदि संगठन में अधिकारी गण समय से आते हैं तथा अनुशासन का अत्यधिक ध्यान रखते हैं तो यह भी संगठन को बारे में धनात्मक संदेश देता है।

3.4 गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के लिए महत्वपूर्ण बातें

यदि आपकी संवाद/सम्प्रेषण कुशलताएं अच्छी हैं तो आपको व्यक्तिगत एवं व्यावसायिक जीवन में अच्छी सफलता का अनुभव हो सकता है। आज के युग में यदि

आप अपने सम्प्रेषण को अत्यधिक सफल बनाना चाहते हैं तो गैर शाब्दिक सम्प्रेषण/ संकेतों का ज्ञान आपकी सफलता के लिए अति आवश्यक है। यहाँ हम आपको इसके सन्दर्भ में कुछ महत्वपूर्ण बातें बता रहे हैं।

- (1) यदि किसी व्यक्ति से आप संवाद की स्थिति में हैं या सम्प्रेषण की प्रक्रिया में है तो दूसरे व्यक्ति द्वारा भेजे जा रहे गैर शाब्दिक संकेतों को आपको प्रतिक्षण जानना एवं समझना आवश्यक है। इसके द्वारा न केवल आप समूह में या व्यक्ति के द्वारा अपनी स्वीकृति बना सकते हैं अपितु अगली बार इन गैर शाब्दिक संकेतों का अच्छे से प्रयोग कर सकते हैं।
- (2) सदैव लोगों से बात करते हुए आँखों का सम्पर्क बनाए रखिए।
- (3) यदि आपको अपने सामने वाले व्यक्ति की आँखों में आप के द्वारा कहे जा रहे वक्तव्य के प्रति उदासीनता दिखे तो या तो आप बात को बदल कर कहें या उस क्षण संवाद समाप्त करते हुए अन्य किसी समय का निर्धारण करना चाहिए।
- (4) अपने आवाज की लय एवं ध्वनि को व्यक्ति के अनुसार, स्थिति के अनुसार तथा समय के अनुसार बदल कर बोलना चाहिए।
- (5) संवाद करते समय शारीरिक भंगिमाओं तथा भाव प्रदर्शन का सही ताल मेल रखना चाहिए जिससे कि आप अपनी बात को प्रभावी रूप से सिद्ध कर सकें।
- (6) अपने श्रोतागण आदि को सदैव सम्मिलित महसूस कराते रहना चाहिए अर्थात् उनको यह लगना चाहिए कि आप उनसे मुखातिब हैं तथा श्रोताओं के द्वारा आपके वक्तव्य को समय देने पर तथा रूचि दिखाने पर उन्हें धन्यवाद देना भूलना नहीं चाहिए तथा अपना आभार अवश्य प्रकट करना चाहिए।
- (7) यदि आप अपने अधीनस्थों का नेतृत्व कर रहे हों तो स्पर्श संकेतों का प्रयोग करने पर आप उनमें अपनी स्वीकृति को बढ़ा सकते हैं अर्थात् उनके कन्धे पर हाथ रखना आदि ऐसे स्पर्श संकेत हैं जो उनको एक खुशी प्रदान करते हैं।
- (8) जब कभी भी आप शारीरिक भंगिमाओं या भावप्रदर्शन जैसे गैर शाब्दिक संकेतों का प्रयोग करें तो समूह को संस्कृति के अनुसार उन संकेतों की प्रासंगिकता को अवश्य ही पहचान लें अन्यथा उनके विपरीत अर्थ भी निकल सकते हैं।
- (9) यदि आप किसी व्यक्ति से संवाद की स्थिति में हैं तथा आप उसके द्वारा शाब्दिक एवं गैर शाब्दिक संदेशों के मध्य कुछ विरोधाभास महसूस करते हैं तो आप इसको गैर शाब्दिक संकेतों के द्वारा हल करने का प्रयास कर सकते हैं।

3.5 सारांश

पिछले कुछ दशकों में गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का महत्व अत्यधिक बढ़ा है। उसका एक मुख्य कारण व्यावसायिक संस्कृति का बढ़ता प्रभाव भी है। आज भारत में जहाँ मुख्यतः व्यापार जगत में ही नौकरियों के अवसर अधिकांशतः प्रतीत होते हैं वहीं तीन दशक पूर्व सरकारी नौकरियों का ही प्रचलन अधिक था तथा सरकारी तन्त्र की संस्कृति में औपचारिकताएं ज्यादा थीं। अतः गैर शाब्दिक सम्प्रेषण की उपयोगिता भी इतनी नहीं थी परन्तु आज के युग में खुले आर्थिक तन्त्र के वातावरण में व्यापारिक/व्यावसायिक संगठनों में कार्य को सम्पादित करने का दबाव अधिक है तथा बात को हर प्रकार से सम्प्रेषित करना अत्यन्त महत्वपूर्ण आवश्यकता हो गयी है। इस कारण इस प्रकार के वातावरण में शाब्दिक सम्प्रेषण के साथ साथ गैर शाब्दिक सम्प्रेषण की भी भूमिका और बढ़ गयी है। पुराने समय में जब शिक्षक केवल श्यामपट एवं चॉक का प्रयोग करके शिक्षा प्रदान करते थे तथा भारतीय वेशभूषा अर्थात् धोती कुर्ता एवं कुर्ता पायजामा को भी लोग सरल भाव से देखते थे। परन्तु आज के युग में प्राइवेट संस्कृति के बढ़ते प्रभाव के कारण आज शिक्षक को न केवल अन्तर्राष्ट्रीय मानक की वेशभूषा का प्रयोग करना पड़ता है अपितु सूचना प्रौद्योगिकी के विभिन्न यन्त्रों का प्रयोग करते हुए शाब्दिक संकेतों के अतिरिक्त गैर शाब्दिक संकेतों का भी प्रयोग करना पड़ता है। अतः आज के युवाओं को निजी संगठनों में प्राप्त अवसरों का लाभ लेने के लिए यह अति आवश्यक है कि वे उचित शाब्दिक सम्प्रेषण प्रक्रिया के साथ साथ उचित गैर शाब्दिक सम्प्रेषण की पूर्ण जानकारी रखें तथा उसके अनुसार उनका प्रयोग भी करें।

3.6 महत्वपूर्ण शब्द

गैरशाब्दिक सम्प्रेषण/ संकेत, काइनेसिक्स, शारीरिक भंगिमा, शारीरिक भाव प्रदर्शन, आक्यूलेसिक्स, हैप्टिक्स, प्राक्सीमिक्स, व्यक्तिगत आविर्भाव, समतुल्यभाषा, क्रोनेमिक्स आदि।

3.7 स्व परख प्रश्न

- प्र.1 गैर शाब्दिक सम्प्रेषण से आपका क्या तात्पर्य है तथा सम्प्रेषण को प्रभावी बनाने में इसकी क्या उपयोगिता है? विस्तार से वर्णन करें।
- प्र.2 गैर शाब्दिक सम्प्रेषण की कौन सी मुख्य विधियाँ हैं? विस्तार में वर्णन कीजिए।

- प्र.3 गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के प्रयोग में किन किन मुख्य बातों का ध्यान रखना चाहिए? वर्णन कीजिए।
- प्र.4 शारीरिक भंगिमा एवं शारीरिक भाव प्रदर्शन का गैर शाब्दिक सम्प्रेषण में क्या महत्व है? उदाहरण सहित वर्णन कीजिये।

3.8 अन्य महत्वपूर्ण पाठन स्रोत

1. लीशकर, रेमण्ड वी., जॉन डी. पेटिट एण्ड मैरी ई. फ्लैटली, लीशकरस बेसिक बिजनेस कम्यूनिकेशन्स, आठवां एडिशन, टाटा मैकग्राहिल, नई दिल्ली।
2. पी. प्रसाद, कम्यूनिकेशन्स स्किल्स, एस. के. कटारिया एण्ड सन्स
3. मीनाक्षी रमनू प्रकाश सिंह, बिजनेस कम्यूनिकेशन्स, आक्सफोर्ड पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
4. मधुकर आर. के. बिजनेस कम्यूनिकेशन्स एण्ड कस्टमर रिलेशन्स, विकास पब्लिशिंग हाऊस प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।

इकाई - 4 : साक्षात्कार एवं बायोडाटा निर्माण

इकाई की रूपरेखा-

- 4.0 उद्देश्य
- 4.1 प्रस्तावना
- 4.2 साक्षात्कार के मूलभूत सिद्धान्त
- 4.3 साक्षात्कार के लिए महत्वपूर्ण निर्देश
- 4.4 साक्षात्कार के प्रश्नों के प्रकार
- 4.5 साक्षात्कार के प्रकार
- 4.6 प्रार्थना पत्र दस्तावेज का निर्माण
- 4.7 परम्परागत बायोडाटा का निर्माण
- 4.8 इलेक्ट्रॉनिक बायोडाटा का निर्माण
- 4.9 सारांश
- 4.10 महत्वपूर्ण शब्द
- 4.11 स्व परख प्रश्न
- 4.12 अन्य महत्वपूर्ण पाठन स्रोत
- 4.13 सन्दर्भ पुस्तकें

4.0 : उद्देश्य

इस इकाई के समुचित पाठन के पश्चात विद्यार्थियों को निम्नांकित उद्देश्यों की प्राप्ति होगी:

- साक्षात्कार के सिद्धान्तों के समझने में,
- साक्षात्कार के लिए स्वयं को व्यवस्थित एवं तैयार करने में,
- साक्षात्कार के प्रश्नों को समझने एवं उत्तरों को तैयार करने में,
- बायोडाटा के महत्व को समझने में, तथा
- परम्परागत एवं इलेक्ट्रॉनिक बायोडाटा का निर्माण करने में।

4.1 प्रस्तावना

सम्प्रेषण कुशलताओं को विकसित करने के अन्तर्गत दो अत्यन्त महत्वपूर्ण पहलू -साक्षात्कार एवं बायोडाटा निर्माण - हैं। किसी व्यक्ति को नौकरी या व्यवसाय में सफलता प्राप्त के लिए प्रथमतः स्वयं के बारे में प्रार्थना पत्र एवं बायोडाटा के द्वारा प्रस्तुत करना होता है तथा तत्पश्चात् स्वयं को साक्षात्कार बोर्ड के समक्ष प्रस्तुत करके स्वयं सफलतापूर्ण आंकलन एवं सिद्ध करना होता है। इस इकाई में आप साक्षात्कार के दौरान पूछे जाने वाले प्रश्नों के लिए स्वयं को तैयार करने हेतु जानकारी प्राप्त करेंगे। साक्षात्कार हेतु स्वयं को तैयार करने के लिए प्रथमतः कम्पनी के बारे में कुछ जानकारी प्राप्त करना आवश्यक होता है, द्वितीयतः साक्षात्कार में पूछे जाने वाले प्रश्नों की जानकारी तथा साक्षात्कार के प्रकार को जानना आवश्यक होता है तथा तृतीय चरण में साक्षात्कार में अभ्यर्थी के सम्मिलित होने की कुशलता महत्वपूर्ण होती है जिसका वर्णन इस इकाई में किया जाएगा। दूसरे महत्वपूर्ण अवयव, बायोडाटा निर्माण में इसमें उल्लेख करने वाली महत्वपूर्ण सूचनाओं की जानकारी तथा पारम्परिक बायोडाटा एवं आधुनिक युग में ई-बायोडाटा के निर्माण में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त करना आवश्यक है।

4.2 साक्षात्कार के मूलभूत सिद्धान्त

प्रायः कम्पनियों के रोजगार निर्णय अभ्यर्थियों के साक्षात्कार पर ही आधारित होते हैं। साक्षात्कार के द्वारा कभी कभी हमें अभ्यर्थियों के बारे में जानकारी प्राप्त नहीं हो पाती है। इसी कारण ज्यादातर नौकरी देने के निर्णय साक्षात्कार कर्ता के निर्णय पर ही निर्भर होते हैं। अधिक कुशल साक्षात्कार को संगठित करने के लिए निम्नांकित सिद्धान्तों को अपनाया जा सकता है :

- (1) इस प्रकार के प्रश्नों को तैयार करें जिसमें 70 प्रतिशत बातचीत अभ्यर्थी करें तथा केवल 'हाँ' एवं 'नहीं' वाले प्रश्नों को प्रयोग करने से बचना चाहिए। जो प्रश्न अभ्यर्थी को उसके भूतकालीन अनुभवों को वर्णन करने में सहायक हों, उनका प्रयोग करना चाहिए।
- (2) जिन प्रश्नों का अपेक्षित उत्तर अभ्यर्थी समझ ले इस प्रकार के प्रश्नों को नहीं पूछना चाहिए।
- (3) अभ्यर्थी से प्रारम्भ में आसान प्रश्न पूछें जिससे कि वह सहज महसूस कर सके तथा एक बार में एक विषय से सम्बन्धित एक ही प्रश्न पूछें तथा प्रश्नों को बहुत

कठिन बनाने से बचें।

- (4) ज्यादातर प्रश्न ऐसे होने चाहिए जो कि अभ्यर्थी को उस नौकरी करने के सम्बन्ध में उसकी कार्य कुशलता को जानने में सहायक हों। कभी कभी नौकरी में आने वाली विभिन्न परिस्थितियों से सम्बन्धित प्रश्नों का भी प्रयोग किया जा सकता है।
- (5) यदि अभ्यर्थी को प्रश्नों का उत्तर देने में कुछ असहजता महसूस हो तो उसे कुछ समय देना चाहिए। यदि आप साक्षात्कार के दौरान कुछ लिख रहे हैं तो अभ्यर्थी को उत्तर के प्रति उदासीन न रहें अपितु 'हाँ' कह कर इस पर अपना ध्यान केन्द्रित रखें।
- (6) कठिन परन्तु सीधे एवं आसान तथा बिना डराने वाले प्रश्नों के मध्य समान्तर करना चाहिए।
- (7) यदि आपने अभ्यर्थी से सारे प्रश्न पूछ लिए हो तो उनको भी कम्पनी के बारे में या नौकरी के बारे में या अन्य कोई प्रश्न पूछने के लिए समय देना चाहिए।
- (8) साक्षात्कार का अन्त करने से पूर्व अभ्यर्थी को एक मौका देना चाहिए यदि वह अपने किसी उत्तर को बदलना चाहता है या उसके सम्बन्ध में कुछ और कहना चाहता है।
- (9) साक्षात्कार के पश्चात अभ्यर्थी के सही आंकलन के लिए साक्षात्कार के दौरान अभ्यर्थी के बारे में लिखे गये महत्वपूर्ण बिन्दुओं को उचित समय लेते हुए उसके मुख्य गुणों को ध्यान में रखकर निर्णय लेना चाहिए।

4.3 साक्षात्कार के लिए महत्वपूर्ण निर्देश

यदि आप साक्षात्कार देने जा रहे हों तो साक्षात्कार में सफलता पाने के लिए आप निम्नलिखित निर्देशों का पालन कर सकते हैं :

4.3.1 साक्षात्कार के लिए तैयारी

यदि आपको साक्षात्कार की प्रकृति के बारे में पता हो तो इसके आधार पर आप अपने आप को तैयार कर सकते हैं। आपका ध्यान मुख्यतया इस साक्षात्कार के अन्तर्गत अपेक्षित प्रश्नों के विचार करने में तथा उनके उत्तर तैयार करने में होना चाहिए। इसके लिए आपको यदि अन्य जानकारी या सूचनाएं प्राप्त करनी हों तो करना चाहिए। यदि आप किसी निजी कम्पनी में किसी नौकरी के लिए आवेदन करते हैं तो आपसे यह

अपेक्षित होगा कि आप उस कम्पनी के इतिहास, कार्यशैली, उत्पादन, सेवाएं इत्यादि के बारे में जानकारी प्राप्त करें तथा कम्पनी के कार्यकलापों में स्वयं के योगदान को साबित करने के बारे में तैयार कर सकते हैं। ऐसा करने पर साक्षात्कार बोर्ड को आप प्रभावित करने में सफल हो सकते हैं।

4.3.2 एक उचित उपस्थिति दर्ज कराना

कहते हैं कि प्रथम प्रभाव ही अन्तिम प्रभाव को बनाता है तथा जब व्यक्ति किसी भी साक्षात्कार के लिए जाता है तो प्रथम दृष्टया ही वह अपनी उपस्थिति के द्वारा अपने व्यक्तित्व के बारे में परिभाषा देने का प्रयत्न करता है। अक्सर हम स्मार्टनेस शब्द का प्रयोग करते हैं तथा हमारी उपस्थिति में यह स्मार्टनेस झलकनी चाहिए। उचित उपस्थिति दर्ज कराने के लिए यह आवश्यक है कि हम जिन वस्त्रों को पहने वे कापरेट संस्कृति को प्रदर्शित करें तथा वस्त्रों का चयन इस प्रकार हो कि वह साक्षात्कार बोर्ड को कापरेट संस्कृति के अनुरूप प्रभावित करें तथा भड़कीले रंगों के वस्त्रों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। साथ ही साक्षात्कार के लिए जाते समय सुगन्ध अथवा इत्र का प्रयोग नहीं करना चाहिए। वेशभूषा के अतिरिक्त आपकी चाल तथा बात करने के ढंग में एक अनुशासन तथा विश्वास झलकना चाहिए। यदि हम पूरा का पूरा साक्षात्कार बिना शारीरिक भाषा (बॉडी लैंग्वेज) के देते हैं तो हमारा साक्षात्कार प्रभावी नहीं हो सकेगा। किसी भी हालत में अभ्यर्थी को संकोची तथा विश्वास रहित नहीं दिखना चाहिए।

4.3.3 रूचि दिखाना

अभ्यर्थी को साक्षात्कार के पूर्ण समय अपनी रूचि जाहिर करनी चाहिए अन्यथा साक्षात्कार कर्ता आपको चयन करने में उदासीनता दिखा सकता है। कभी कभी अभ्यर्थी में विश्वास में कमी होने के कारण भी साक्षात्कार में उसकी रूचि का प्रदर्शन नहीं हो पाता है। यदि आप साक्षात्कार कक्ष में कुर्सी पर बहुत ही लचीली एवं आराम दायक मुद्रा में बैठ जाते हैं तो यह भी आपकी अरूचि का प्रदर्शन करती है। इसके अतिरिक्त यदि किसी फार्म को भरने में आप स्वच्छता एवं पूर्ण जानकारी देने का अभाव रखते हैं तो यह भी इस साक्षात्कार के प्रति आपकी उदासीनता को दिखाता है। यह भी आवश्यक है आप साक्षात्कार बोर्ड के सभी सदस्यों को समान प्राथमिकता या ध्यान दें। यह आपके आत्मविश्वास को प्रदर्शित करता है। इसके अतिरिक्त यदि आप एक पूर्ण प्रोफेशनल व्यवहार को प्रदर्शित करने में सक्षम होते हैं तो यह न केवल आपकी रूचि को सुदृढ़ करता है वरन् आपके आत्मविश्वास को भी दर्शाता है।

4.3.4 सही एवं पूर्ण उत्तर देना

अभ्यर्थी को यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि वह किसी भी प्रश्न का सही एवं पूर्ण उत्तर दे। यदि उत्तर न पता हो तो मना कर देना ज्यादा अच्छा होता बजाय गलत उत्तर देने के। कभी कभी अभ्यर्थी यह सोचकर अपूर्ण उत्तर देते हैं कि साक्षात्कारकर्ता उतने में ही समझ जाएगा परन्तु ऐसा करना अभ्यर्थी की अपूर्ण सोच को प्रदर्शित कर सकता है।

4.3.5 अपनी उपलब्धियों को बताना

जिस प्रकार एक उत्पाद के सफलतम विक्रय के लिए उसमें उपस्थित विशिष्ट गुणों तथा उसकी उपयोगिता को बताना आवश्यक होता है उसी प्रकार साक्षात्कार के दौरान अभ्यर्थी को यह आवश्यक है कि अपने व्यक्तित्व की विशिष्टताएं एवं पूर्व की नौकरी में किये गये अच्छे कार्यों को साक्षात्कार बोर्ड को अवश्य अवगत करा दें।

4.4 साक्षात्कार के प्रश्नों के प्रकार

एक कुशल साक्षात्कारकर्ता विभिन्न प्रकार के प्रश्नों का प्रयोग अभ्यर्थी से जानकारी प्राप्त करने के लिए करता है। इनकी विवेचना हम निम्न प्रकार के वर्गीकरण द्वारा कर सकते हैं :

4.4.1 अनुमति प्रश्न

अनुमति प्रश्न वे प्रश्न होते हैं जो कि अभ्यर्थी को साक्षात्कार विषय में रूचि को प्रदर्शित करते हैं। इस प्रकार के प्रश्नों को साक्षात्कार के प्रारम्भ में ही पूछा जाता है तथा इसका उद्देश्य अभ्यर्थी को साक्षात्कार के दौरान सहायता प्रदान करना होता है।

उदाहरणार्थ - इससे पहले कि हम साक्षात्कार प्रारम्भ करें क्या आपके मन में कोई प्रश्न उठ रहा है ? क्या आप सहज महसूस कर रहे हैं ? या हम आपकी इसमें कोई मदद कर सकते हैं ? आदि।

4.4.2 वास्तविक प्रश्न

वास्तविक प्रश्न वे होते हैं जिनके द्वारा अभ्यर्थी के बारे में सूचनाएं या जानकारी प्राप्त की जाती है तथा इसमें कोई भी जोखिम नहीं होता है या बहुत कम जोखिम होता है। इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर देने में अभ्यर्थी सहजता का अनुभव करते हैं तथा उनके आत्म विश्वास में भी दृढ़ता आती है। इस प्रकार के प्रश्नों को प्रायः साक्षात्कार के प्रारम्भ

में ही पूछा जाता है या किसी कठिन एवं भयपूर्ण प्रश्न के पश्चात अभ्यर्थी को पुनः सहजता की स्थिति में लाने के लिए भी ऐसे प्रश्नों का प्रयोग किया जाता है।

उदाहरणार्थ - आपकी वर्तमान नौकरी में आपके क्या क्या कर्तव्य हैं? आपको हमारी कम्पनी ने क्यों आकर्षित किया? आदि।

4.4.3 "मुझे बताओ" प्रश्न

इस प्रकार के प्रश्न नौकरी पर अभ्यर्थी के चयन करने में अत्यन्त महत्वपूर्ण होते हैं तथा इनके अन्तर्गत प्रश्नकर्ता अभ्यर्थी से उसकी पूर्व अथवा वर्तमान नौकरी के बारे में तथा अन्य अनुभवों के बारे में पूछता है।

उदाहरणार्थ - मुझे किसी ऐसी घटना के बारे में बताओ जब आपके निर्णय से आपकी कम्पनी को फायदा हुआ था? यदि हमारी कम्पनी में अमुक समस्या चल रही है तो आप इसका निवारण कैसे करेंगे? आदि।

4.4.4 अनुभव प्रश्न

अनुभव प्रश्नों से तात्पर्य उन प्रश्नों से है जिनके द्वारा अभ्यर्थी के वैयक्तिक डाटा को उसके मूल्यों एवं विश्वास आदि के प्रति अनुभवों के हेतु एकत्रित किया जाता है। इन प्रश्नों की प्रासंगिता आजके प्रतिस्पर्धात्मक युग में और अधिक हो जाती है क्योंकि केवल अधिक तनख्वाह देकर कर्मियों को कम्पनी में रोकना एक स्तर के बाद असम्भव सा हो जाता है साथ ही कम्पनी के द्वारा दिये गये लक्ष्य की पूर्ति के लिए अभ्यर्थी किस प्रकार के प्रयास करेगा, यह अब जानना कम्पनी के लिए अति आवश्यक होता है।

उदाहरणार्थ - यदि दूसरी कम्पनी आपको हमसे ज्यादा तनख्वाह दे तो किस स्तर पर आप हमारी कम्पनी छोड़ेंगे? आदि।

4.4.5 जाँच प्रश्न

जाँच प्रश्न वे होते हैं जो किसी भी व्यक्ति के द्वारा दिये गये उत्तरों के आधार पर उसको समझने में मदद करते हैं। इस प्रकार के प्रश्न किसी भी स्तर पर अभ्यर्थी को जाँचने परखने में आवश्यक होते हैं परन्तु प्रायः इस प्रकार के प्रश्नों को हम अन्त में ही प्रयोग करते हैं।

उदाहरणार्थ

क्या आपका मतजब यह था?

यदि मैं आपके उत्तर को इस प्रकार से कहूँ तो आप इस समस्या का समाधान इस प्रकार से निकालेंगे। क्या यह ठीक है? आदि।

4.5 साक्षात्कार के प्रकार

साक्षात्कार के वर्गीकरण को हम निम्न प्रकार से वर्णित कर सकते हैं :

4.5.1 छँटनी साक्षात्कार

इस प्रकार के साक्षात्कार के द्वारा प्रायः अभ्यर्थी के बायोडाटा में दी गयी सूचनाओं को प्रमाणित करते हैं तथा उसके ही आधार पर चयन प्रक्रिया में अभ्यर्थी को आगे जाने का मौका मिलता है। आज के युग में कई कम्पनियाँ टेलीफोन के द्वारा भी इस प्रकार के साक्षात्कार का प्रयोग करती हैं।

4.5.2 चयन साक्षात्कार

इस प्रकार के साक्षात्कार में चयनकर्ता को अभ्यर्थी की योग्यता के बारे में पूर्व से ही पता होता है परन्तु साक्षात्कार के दौरान वह उसकी योग्यता को प्रमाणित करता है तथा अभ्यर्थी के सफल होने पर उसे चयनित कर लिया जाता है। प्रायः चयन साक्षात्कार अन्तिम चरण में लिया जाता है।

4.5.3 समूह साक्षात्कार

इस प्रकार के साक्षात्कार में कई सारे अभ्यर्थी एक साथ होते हैं तथ्य इसका उद्देश्य नेतृत्व क्षमता को पहचानने में किया जाता है। इसके अतिरिक्त एक समूह में चर्चा के दौरान विभिन्न अभ्यर्थियों की क्या भूमिका रहती है उसके द्वारा अभ्यर्थी में टीम वर्क तथा टीम व्यवहार का आंकलन भी किया जाता है।

4.5.4 पैनल साक्षात्कार

इस प्रकार के साक्षात्कार में एक ही अभ्यर्थी का साक्षात्कार एक पैनल में उपस्थित बहुत से व्यक्ति लेते हैं। ये व्यक्ति विभिन्न विषयों के विशेषज्ञ होते हैं तथा इस प्रकार अभ्यर्थी में उपस्थित विभिन्न गुणों का अवलोकन करते हैं जो कि उस पद या नौकरी में आवश्यक रूप से होनी चाहिए। उदाहरणार्थ आई.ए.एस. या पी.सी.एस. का साक्षात्कार।

4.5.5 तनाव साक्षात्कार

इस प्रकार के साक्षात्कार का मुख्य उद्देश्य अभ्यर्थी में तनाव वाली परिस्थितियों

में उसकी क्षमता को जानने के लिए होता है तथा जो लोग इस प्रकार के तनाव साक्षात्कार में असफल होते हैं वे उस पद या नौकरी को करने में अक्षम सिद्ध होते हैं। प्रायः प्रश्नकर्ता बहुत जल्दी जल्दी प्रश्नों को पूछता है तथा जल्दी ही एक विषय से दूसरे विषय पर चले जाते हैं जिससे कि अभ्यर्थी को तनावपूर्ण स्थिति का आभास होता है तथा इस दौरान उसके व्यवहार का आंकलन किया जाता है। कभी कभी ऐसे प्रश्न भी पूछे जाते हैं जो विषय से सम्बन्धित नहीं होते हैं।

4.6 प्रार्थनापत्र दस्तावेज का निर्माण

नौकरी की खोज के पश्चात सबसे अधिक महत्वपूर्ण कार्य प्रार्थना पत्र दस्तावेज के निर्माण का होता है। चाहे आपको कम्पनी में व्यक्तिगत रूप मिलना हो या प्रार्थना पत्र देना हो, दोनों ही दशा में प्रार्थना पत्र दस्तावेज की आवश्यकता होती है।

प्रार्थनापत्र दस्तावेज के साधारणतया तीन मुख्य अंग होते हैं - प्रथम बायोडाटा, द्वितीय प्रार्थना पत्र, तृतीय सन्दर्भ पत्र। प्रायः सभी प्रकार के रोजगार अवसरों में इन तीनों का प्रयोग होता है। इन तीनों प्रकार के दस्तावेजों को बनाने में यह आवश्यक है कि आप विक्रय / विपणन नीति को अपनाएं अर्थात् आपके इन दस्तावेजों से आपके धनात्मक गुणों का प्रदर्शन होना आवश्यक है ताकि चयनकर्ता का ध्यान आकर्षित हो सके। अर्थात् जब आप किसी नौकरी के लिए आवेदन करते हैं तो आपको अपनी क्षमताओं को इस प्रकार लिखने की आवश्यकता होती है जैसी कि नौकरी के विज्ञापन में माँग हो। वास्तविक रूप से हमारे प्रार्थना पत्र के द्वारा हमें स्वयं की क्षमताओं की सहायता से स्वयं को कम्पनी को बेचना होता है।

ऐसा करने के लिए पहले आप यह सुनिश्चित करें कि विज्ञापित पद एवं कम्पनी के अनुसार किस प्रकार की कार्य क्षमताओं की आवश्यकता है? तत्पश्चात् आप इन सारी सूचनाओं को एकत्रित करके प्रार्थना पत्र को तैयार करें। आपको यह भी ध्यान रखना होगा कि आप के प्रार्थना पत्र में क्या मुख्य अवयव होंगे अर्थात् यह एक साधारण पत्र होगा या बायोडाटा के प्रारूप में होगा या प्रार्थना पत्र एवं बायोडाटा का सम्मिलित रूप होगा। प्रार्थना पत्र की संरचना को निर्धारित करने के पश्चात् यह आवश्यक होता है कि किस माध्यम से आप अपने प्रार्थना पत्र को भेजेंगे। क्या यह पारम्परिक तरीका होगा या इलेक्ट्रॉनिक माध्यम के द्वारा पारम्परिक माध्यम का प्रयोग प्रायः सीधे साक्षात्कार के लिए होता है जबकि यदि कम्पनी बायोडाटा को संरक्षित करती है तो इलेक्ट्रॉनिक माध्यम में प्रार्थना पत्र भेजना उपयोगी होता है।

4.7 परम्परागत बायोडाटा का निर्माण

इसके पूर्व के अंश में आपने पढ़ा कि किस प्रकार आप अपने प्रार्थना पत्र का निर्धारण करेंगे। अब आपके लिए यह आवश्यक है कि आप किस प्रकार से अपने बायोडाटा के विभिन्न भागों का निर्माण करेंगे। आपकी इच्छा तो यही होगी कि आप अपने बारे में अधिक से अधिक जानकारी सामने वाले को अपने बायोडाटा के माध्यम से, परन्तु आवश्यकता इस बात की अधिक होती है कि किस प्रकार कम से कम बिन्दुओं के द्वारा हम अपने बारे में अधिक से अधिक जानकारी कम्पनी को दे सकें।

बायोडाटा को तैयार करने के लिए बहुत प्रकार की संरचनायें हैं परन्तु नीचे दिये गये तरीकों को हम अपना सकते हैं :

(क) सर्वप्रथम अपनी शिक्षा के बारे में सूचनाओं को तर्कसंगत रूप से व्यवस्थित करना चाहिए। (कॉलेज/संस्थान, वर्ष, उपलब्धियाँ, मुख्य विशेषताएं/क्षेत्र), अपने रोजगार की सूचनाएं को भी व्यवस्थित रूप से उल्लिखित करना चाहिए। (वर्ष, स्थान, कम्पनी/संस्थान, कर्तव्य, उपलब्धियाँ), व्यक्तिगत विवरण (सदस्यता, रुचियाँ, उपलब्धियाँ, आदि), इसके अतिरिक्त अन्य सूचनाओं पर भी आधारित सूचनाएँ (उपलब्धियाँ, योग्यताएं, क्षमताएं आदि)। इसके अतिरिक्त सन्दर्भ के लिए एक अलग पत्र का भी प्रयोग कर सकते हैं।

(ख) पूरे बायोडाटा के लिए एक शीर्षक तथा अन्य भागों के लिए उप शीर्षक का प्रयोग करना चाहिए।

(ग) इसके अतिरिक्त अपने बायोडाटा या जीवनवृत्त में अन्य महत्वपूर्ण सूचनाएं जैसे कि जीवन के उद्देश्य एवं सम्पर्क सूचनाएं भी उल्लिखित करनी चाहिए।

(घ) इसके अतिरिक्त सूचनाओं को इस प्रकार व्यवस्थित करना चाहिए कि ये ध्यान आकर्षित करें, सूचनाएं सन्तुलित हों, अव्यवस्थित एवं बेढंगी न हों।

एक आदर्श बायोडाटा को निम्नांकित रूप से प्रदर्शित कर सकते हैं परन्तु हम पहले भी पढ़ चुके हैं कि बायोडाटा के विभिन्न प्रारूप हो सकते हैं :

पारम्परिक बायोडाटा/जीवनवृत्त का आदर्श उदाहरण :

दिव्यांक यदुवंशी	वर्तमान
378 वसन्त विहार	सम्पर्क
ग्रेटर नोएडा, फेज- III	सूचना
पिन कोड:	
उत्तर प्रदेश, भारत	

श्रम सम्बन्धों में एक ऐसा स्थान पाना जो कि मुझे एक श्रम सम्बन्ध विशेषज्ञ के रूप में कार्य करने के लिए प्रेरित करें।

शिक्षा

एम.बी.ए. 75 प्रतिशत	उ.प्र.राजर्षि टण्डन मुक्त - 2001 - मेजर- मानव संसाधन विश्वविद्यालय, इलाहाबाद	माइनर-श्रम सम्बन्ध	शैक्षिक विवरण एवं योग्यताएं
बी.बी.ए. 78 प्रतिशत	उ.प्र.राजर्षि टण्डन मुक्त - 1999 विश्वविद्यालय, इलाहाबाद		

सम्बन्धित विषय

- | | | |
|-------------------------|---------------------------|------------------|
| - मानव संसाधन विकास | - सांख्यिकी विश्लेषण | महत्वपूर्ण एवं |
| - श्रम प्रबन्धन सम्बन्ध | - नेतृत्व मनोविज्ञान | एवं प्रासंगिक |
| - मानव संसाधन नियोजन | - सामान्य प्रबन्ध नीतियाँ | विषयों का उल्लेख |
| - संगठनात्मक व्यवहार | | |
- शोध प्रोजेक्ट - टाटा स्टील, दुर्गापुर में कर्मियों का वेतन, कार्य निष्पादन, योग्यता एवं श्रम प्रबन्धन संबंध का तुलनात्मक अध्ययन।

अनुभव -

- श्रम सम्बन्ध अधिकारी, टाटा स्टील दुर्गापुर, 2006 से वर्तमान तक
 - श्रम सम्बन्ध कार्यकर्ता, ओसबाल फर्टिलाइजर, शाहजहाँपुर 2001 से 2006 तक
- व्यक्तिगत विशेषताएं -
- व्यक्तिगत प्रारम्भिक सूचना - रूचि - क्रिकेट, फुटबाल, गायन, पाठन
- सदस्यता - भारतीय प्रबन्धन संघ (आई.एम.ए.), श्रम प्रबन्धन संघ
उत्तर प्रदेश
सचिव - जन उत्थान संघ, दुर्गापुर

सन्दर्भ -

व्यक्तिगत एवं व्यावसायिक सन्दर्भों को प्रसन्नता से प्रार्थी के अनुरोध पर देने

पाठक को बताना कि अमुख व्यक्ति सूचना देने के लिए सहर्ष तैयार है।

को स्वीकृति ।
दिव्यांक यदुवंशी
378 वसन्त विहार
ग्रेटर नोएडा, फीज-III
पिन कोड :
उत्तर प्रदेश, भारत

श्रीमती प्रमिला श्रीवास्तव
महा प्रबन्धक-मानव संसाधन
टाटा स्टील, दुर्गापुर,
मो. 09789391100
ई-मेल pramilasri@tatasteel.com

श्री जयवर्धन गोखले
ओखला फर्टिलाइजर
शाहजहाँपुर, उ.प्र.
मो. 07989931010
jayawardhan@oswal.com

साक्षात्कार एवं बायोडाटा
निर्माण

उपर्युक्त दिये गये उदाहरणार्थ बायोडाटा को हम पुनः एक दूसरे रूप में भी व्यक्त कर सकते हैं।

दिव्यांक यदुवंशी
378 वसन्त विहार
ग्रेटर नोएडा, फेज-III
पिन कोड :
उत्तर प्रदेश, भारत

- उद्देश्य : श्रम सम्बन्धों में एक ऐसा स्थान पाना जो कि मुझे एक श्रम सम्बन्ध विशेषज्ञ के रूप में कार्य करने के लिए प्रेरित करें।

- शिक्षा : उपाधि (1) एम.बी.ए., उ.प्र.रा.ट.मु.वि., इलाहाबाद - 2001
(2) बी.बी.ए., उ.प्र.रा.ट.मु.वि., इलाहाबाद - 1999

मेजर : मानव संसाधन एवं श्रम सम्बन्ध

प्रतिशत अंक : एम.बी.ए. 75 प्रतिशत बी.बी.ए. 78 प्रतिशत

सम्बन्धित विषय : मानव संसाधन विकास, श्रम प्रबन्धन सम्बन्ध, मानव संसाधन नियोजन, संगठनात्मक व्यवहार, सांख्यिकी विश्लेषण, नेतृत्व मनोविज्ञान

शोध प्रोजेक्ट : टाटा स्टील, दुर्गापुर में कर्मियों का वेतन, कार्य निष्पादन योग्यता एवं श्रम प्रबन्धन संबंध का तुलनात्मक अध्ययन।

- कार्य अनुभव : श्रम सम्बन्ध अधिकारी, टाटा स्टील दुर्गापुर, 2006 से वर्तमान तक
श्रम सम्बन्ध कार्यकर्ता, ओसवाल फर्टिलाइजर, शाहजहाँपुर, 2001 से 2006

- व्यक्तिगत विशेषताएँ :

रूचि - क्रिकेट, फुटबाल, गायन, पाठन

सदस्यता - भारतीय प्रबन्ध संघ (आई.एम.ए.), श्रम प्रबन्ध संघ, उ.प्र.

सचिव, जन उत्थान संघ, दुर्गापुर

- सन्दर्भ (अनुरोध पर उपलब्ध)

श्रीमती प्रमिला श्रीवास्तव

महा प्रबन्धक टाटा स्टील

दुर्गापुर

मो. 09789391100

ई-मेल pramilasri@tatasteel.com

श्री जयवर्धन गोखले

महा प्रबन्धक, वित्त

ओसवाल फर्टिलाइजर, शाहजहाँपुर, उ.प्र.

मो. 07989931010

jayawardhan@oswal.com

4.8 इलेक्ट्रानिक बायोडाटा का निर्माण

यद्यपि पेपर बायोडाटा प्रचलन समाप्त नहीं हुआ है परन्तु आज के सूचना तकनीकी युग में इलेक्ट्रानिक बायोडाटा की अतिरिक्त माँग इस कारण बढ़ी है कि कम्पनी इस प्रकार के बायोडाटा को स्कैन कर डाटावेस में रूपान्तरित कर लेती है तथा आवश्यकता पड़ने पर पुनः आसानी से उसका प्रयोग कर लेती है। अपने बायोडाटा/जीवन वृत्त के निर्माण में, साक्षात्कार के लिए चयनित होने के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए निम्नांकित रणनीतियों का पालन करना आवश्यक है :

(क) प्रभावी शब्दों का उपयोग - इलेक्ट्रानिक स्कैनिंग साफ्टवेयर के अन्तर्गत प्रभावी शब्दों के प्रयोग एक रणनीति के रूप में किया जाता है ये प्रभावी शब्द एक प्रकार की संज्ञा या सकारात्मक ((निश्चित)शब्द होते हैं जो व्यक्ति की विशेषताओं या कुशलताओं आदि का वर्णन करते हैं। इस प्रकार के बायोडाटा के निर्माण में आप दिजुअल बेसिक, सी ++ या जावा आदि कम्प्यूटर भाषाओं का प्रयोग कर सकते हैं। यदि आप अपने जॉब /नौकरी की रूचि को यह लिख कर स्पष्ट करना चाहते हैं जैसे कि मुझे सूचना तंत्र में नौकरी करना पसन्द है तो आपको अपनी कुशलता/रूचि को विशिष्ट शब्दावली का प्रयोग करके उल्लेख करना हितकर होगा, उदाहरणार्थ : तन्त्र विश्लेषक, नेटवर्क विशेषज्ञ, एप्लीकेशन विशेषज्ञ आदि। इस प्रकार नौकरियों में आवेदन करते समय हमें उस उद्योग /क्षेत्र से सम्बन्धित विशिष्ट शब्दावली का प्रयोग करना चाहिए। यदि आपको अपने क्षेत्र / उद्योग से सम्बन्धित शब्दों को खोजना हो तो विभिन्न रोजगार समाचारों के विज्ञापनों, भर्तीकर्ताओं की बातचीत तथा विषय सम्बन्धित शिक्षकों के वार्तालाप आदि के द्वारा प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार इन शब्दों को संग्रहित करके, इन शब्दों को तकनीकी शब्दों में स्थान्तरित करके अपने बायोडाटा में प्रयोग करना चाहिए।

(ख) शब्दों का ध्यानपूर्वक प्रयोग - पारम्परिक बायोडाटा/जीवन वृत्त के विपरीत इलेक्ट्रानिक बायोडाटा /जीवन वृत्त में क्रिया शब्दों के स्थान पर संज्ञा शब्दों का प्रयोग करना उचित होता है। यदि आपको मिश्रित शब्दावली (क्रिया एवं संज्ञा शब्दों का प्रयोग) का प्रयोग करना हो तो ध्यानपूर्वक क्रिया शब्दों के साथ ही साथ उपयुक्त तकनीकी शब्दों/संज्ञा का प्रयोग करना चाहिए क्योंकि संज्ञा शब्दों के द्वारा आपकी अभिरूचि/कुशलता के आधार पर बायोडाटा को ढूँढने में या चयनित करने में सफलता मिलती है तथा क्रिया शब्दों के द्वारा सीधे तौर पर साक्षात्कार करने हेतु साक्षात्कारकर्ता को आपके गुणों/कुशलताओं को जानने में सहायता मिलती है।

(ग) सूचना का प्रस्तुतीकरण - आपकी प्राथमिकता यही होगी कि जो बायोडाटा आपने कम्पनी में भेजा है उसको भर्तीकर्ता के द्वारा ठीक ढंग से पढ़ा तथा समझा जाये। इसके लिए आप ऐसी लिपि (फॉन्ट) का प्रयोग करना चाहेंगे जो कि किसी स्कैनर के द्वारा आसानी से पढ़ लिया जाए। अधिकांश स्कैनर 10 से 14 के फॉन्ट साइज को आसानी से पढ़ लेते हैं। इटैलिक स्टाइल अधिकांशतः स्कैनर को भ्रमित करता है। अतः इसके प्रयोग से बचना चाहिए। अण्डरलाइन करने से भी बचना चाहिए क्योंकि अंग्रेजी के जो अक्षर लाइन के नीचे आते हैं जैसे कि g, y, f, z इत्यादि, उनके स्कैनिंग में भी भ्रम की स्थिति पैदा होती है। ग्राफिक एवं शेडिंग का प्रयोग भी नहीं करना चाहिए इससे साफ्टवेयर के द्वारा स्कैनिंग करने पर भ्रम की स्थिति बनती है। बायोडाटा को सदैव सफेद कागज पर पोरट्रेट आकार में ही प्रिन्ट करना चाहिए।

आजकल कम्पनियाँ बायोडाटा डाक द्वारा, फैक्स के द्वारा या ई-मेल के द्वारा माँगती हैं। परन्तु आपको उसी माध्यम को अपनाना चाहिए जो आपको बायोडाटा को समर्थित करे। यदि कम्पनी आपसे बायोडाटा केवल फैक्स या ई-मेल के द्वारा माँगे तो इसका तात्पर्य है कि वे इसका प्रयोग इलेक्ट्रानिक्स डाटाबेस बनाने में करेंगी। इसके अतिरिक्त कम्पनी यह भी परीक्षण कर सकती है कि अभ्यर्थी में अपने बारे में सूचनाओं को किस प्रकार संगठित करने की क्षमता है? यदि आप के द्वारा बायोडाटा को फैक्स के द्वारा भेजा जाता है तो गुणवत्ता पर आपका नियंत्रण नहीं रहता है। यदि आपको प्रिण्टेड बायोडाटा को इलेक्ट्रानिक स्कैन हेतु भेजना हो तो उसे मोड़ कर नहीं भेजना चाहिए। इस प्रकार छोटी छोटी बातों को ध्यान रखकर अपने बायोडाटा को ज्यादा से ज्यादा चयन आकर्षक बनाकर सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

4.9 सारांश

इस प्रकार हमने देखा कि साक्षात्कार एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें एक व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह अभ्यर्थी से प्रश्न पूछता है या उसका परीक्षण करता है जो कि नौकरी देने के लिए या अन्य प्रयोजन के लिए उसको चयनित करने में मदद करता है। किसी भी अन्य व्यावसायिक प्रक्रिया की भाँति ही साक्षात्कारकर्ता एवं अभ्यर्थी / प्रत्याशी दोनों को ही साक्षात्कार के लिए तैयारी करना आवश्यक होता है। साक्षात्कार के दौरान आने वाली विभिन्न परिस्थितियों एवं प्रश्नों का अवलोकन एवं तैयारी हम कर सकते हैं। आज के युग में केवल तकनीकी या विषय सम्बन्धी प्रश्नों के अतिरिक्त समाज सम्बन्धी प्रश्न भी साक्षात्कार के दौरान पूछे जाते हैं।

इसी प्रकार बायोडाटा/जीवनवृत्त का भी व्यवसायिक जीवन में अत्यन्त महत्व होता है। इसके द्वारा ही हम भर्तीकर्ता को प्रथम दृष्टया प्रभावित करने में सफल हो सकते हैं। बायोडाटा के विभिन्न अवयवों को समझना तथा उसके अनुरूप सही विवरण को बायोडाटा में उल्लिखित करना अभ्यर्थी का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए जो कि आपकी सफलता के द्वार खोल सकते हैं।

4.10 महत्वपूर्ण शब्द

अनुमति प्रश्न, मुझे बताओ प्रश्न, अनुभव प्रश्न, वास्तविक प्रश्न, जाँच प्रश्न, छँटनी, साक्षात्कार, चयन साक्षात्कार, तनाव साक्षात्कार, समूह साक्षात्कार, प्रार्थना पत्र, परम्परागत बायोडाटा, इलेक्ट्रॉनिक बायोडाटा आदि।

4.11 स्वपरख प्रश्न

- (1) साक्षात्कार से आप क्या समझते हैं। किसी भी संगठन के लिए इसके द्वारा मानव संसाधन के बेहतर उपयोग के लिए इसका प्रयोग कैसे कर सकते हैं?
- (2) साक्षात्कार प्रश्नों का वर्गीकरण कीजिए। इनका किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व को परिभाषित करने में क्या योगदान हो सकता है।
- (3) साक्षात्कार कितने प्रकार के हो सकते हैं तथा इनका उद्देश्य क्या हो सकता है? विवेचना कीजिए।
- (4) परम्परागत बायोडाटा के निर्माता में क्या सावधानियाँ अपेक्षित हैं? वर्णन कीजिए।

- (5) परम्परागत एवं इलेक्ट्रानिक्स बायोडाटा के निर्माण में कौन कौन सी सावधानियाँ अपेक्षित हैं वर्णन करें।

साक्षात्कार एवं बायोडाटा
निर्माण

4.12 अन्य महत्वपूर्ण पाठन स्रोत

- (1) पी. प्रसाद, कम्यूनिकेशन स्किल्स, एस.के.कटारिया एण्ड सन्स
- (2) लीस्कर, रेमण्ड वी., जॉन डी. पेटिट एण्ड मैरी ई. फ्लैटली, लीस्करस बेसिक बिजनेस कम्यूनिकेशन, आठवाँ एडिशन, टाटा मैकग्राहिल, नई दिल्ली।
- (3) मधूकर आर.के., बिजनेस कम्यूनिकेशन एण्ड कस्टमर रिलेशन्स, विकास पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
- (4) मीनाक्षी रमन, प्रकाश सिंह : बिजनेस कम्यूनिकेशन्स, आक्सफोर्ड पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।



उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

M.Com-04 (N)
संचार कौशल एवं
शोध विधि

खण्ड

3

शोध विधियों से परिचय

इकाई- 1	5
शोध विधियों की प्रकृति तथा क्षेत्र एवं शोध समस्याओं का प्रतिपादन	
इकाई- 2	24
अनुसंधान प्रक्रिया एवं अवधारणाओं का निर्माण	
इकाई- 3	31
अनुसंधान प्ररचना	
इकाई- 4	56
निदर्शन अभिकल्प	
इकाई- 5	82
परिकल्पनाओं का निर्माण एवं परीक्षण	

परामर्श-समिति

प्रो० नागेश्वर राव

कुलपति - अध्यक्ष

डॉ० हरीशचन्द्र जायसवाल

वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक

श्री एम० एल० कनौजिया

कुलसचिव - सचिव

संरचनात्मक सम्पादन

डॉ० मंजूलिका श्रीवास्तव

निदेशक, दूरस्थ शिक्षा परिषद, नई दिल्ली

विषयगत सम्पादन

प्रो० एस० ए० अंसारी

निदेशक, मोनिरबा, इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

लेखक

डॉ० सुबोजीत बनर्जी

असिस्टेन्ट प्रोफेसर, डिपार्टमेन्ट आफ बिजनेस
एडमिनिस्ट्रेशन, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल
विश्वविद्यालय, जौनपुर

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के स्वयं के हैं।

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिनियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

खण्ड-3 (परिचय)

प्रस्तुत खण्ड 3 को 5 इकाईयों में विभाजित कर प्रस्तुत किया गया है।

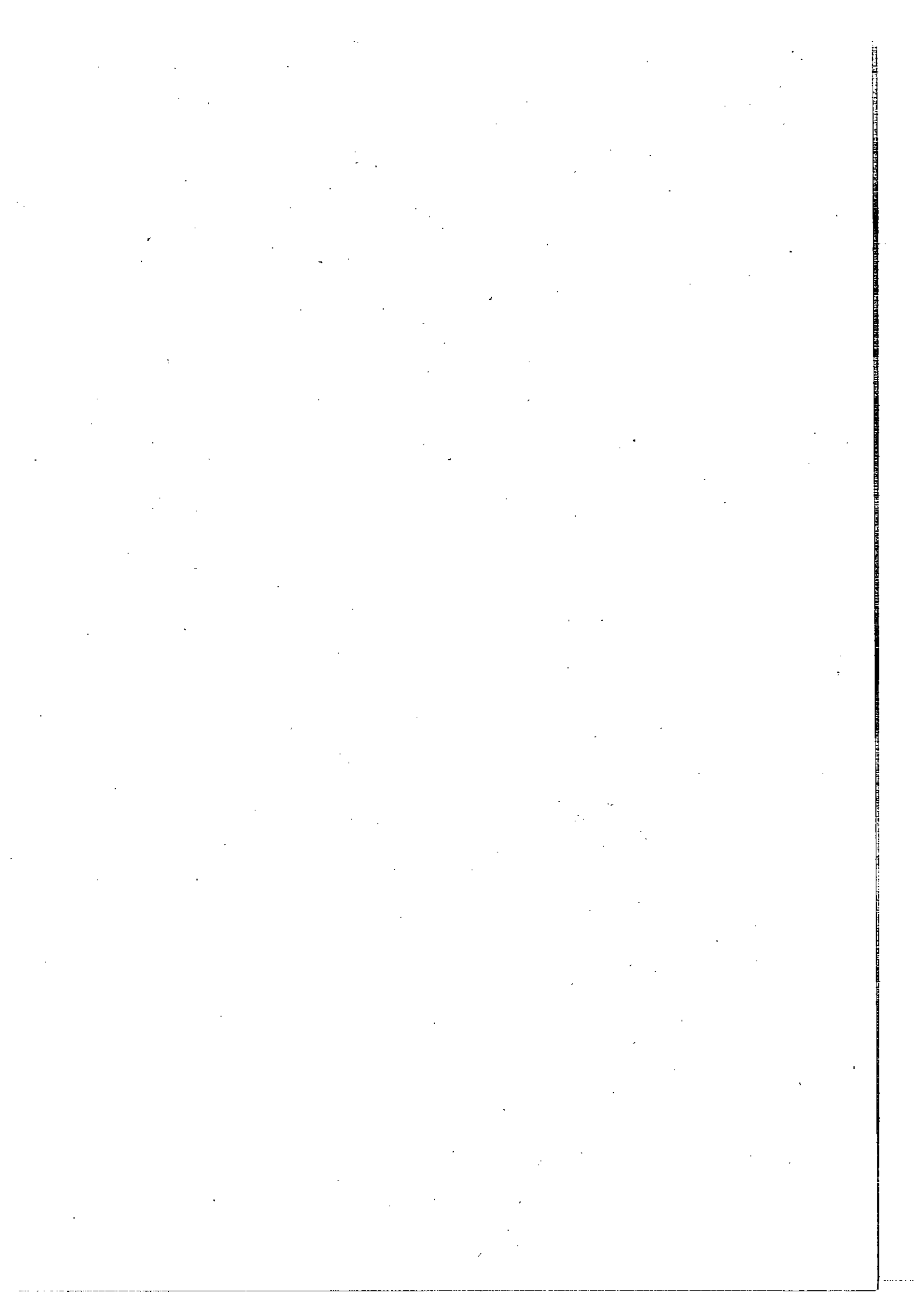
इकाई-01 शोध विधियों की प्रकृति तथा क्षेत्र एवं शोध समस्याओं के प्रतिपादन से सम्बन्धित हैं। इस इकाई में शोध की पद्यति, अनुसंधान के विभिन्न चरणों का विवरण, अनुसंधान समस्या के चयन आदि पर प्रकाश डाला गया है।

इकाई-02 के अन्तर्गत अनुसंधान के विभिन्न चरण, अवधारणा का अर्थ एवं उसके विशेषताओं का वर्णन किया गया है।

इकाई-03 में अनुसंधान प्ररचना की परिभाषा, उद्देश्य, विशेषताओं एवं वर्गीकरण की विस्तृत व्याख्या की गई है।

इकाई-04 निदर्शन की परिभाषा, विशेषतायें, इसके विभिन्न अवयव तथा वर्गीकरण से सम्बन्धित है।

इकाई -05 में परिकल्पना से सम्बन्धित बातों पर प्रकाश डाला गया है। इस इकाई के अन्तर्गत परिकल्पना का अर्थ, उद्देश्य, विशेषतायें, वर्गीकरण आदि की विस्तृत व्याख्या की गयी है।



इकाई - 1 : शोध विधियों की प्रकृति तथा क्षेत्र एवं शोध समस्याओं का प्रतिपादन (Nature and Scope of Research Methodology and Formation of Research Problem)

इकाई की रूपरेखा-

- 1.0 उद्देश्य
- 1.1 प्रस्तावना
- 1.2 अनुसंधान
 - 1.2.1 शोध तथा वैज्ञानिक पद्धति
 - 1.2.2 वैज्ञानिक पद्धति की विशेषताएँ
- 1.3 वैज्ञानिक अनुसंधान की प्रकृति
 - 1.3.1 अनुसंधान के विभिन्न चरण
 - 1.3.2 अनुसंधान का महत्व
 - 1.3.3 अनुसंधान के प्रकार
- 1.4 अनुसंधान समस्या का चयन एवं उसकी परिभाषा
 - 1.4.1 अनुसंधान - समस्याओं के स्रोत
 - 1.4.2 अनुसंधान की समस्याओं के लक्षण
 - 1.4.3 समस्या की पहचान अथवा निर्वचन
- 1.5 परिस्थिति विश्लेषण अथवा क्षेत्र निर्धारण
- 1.6 उद्देश्यों का निर्धारण
- 1.7 सारांश
- 1.8 बोध प्रश्न
- 1.9 संदर्भ पुस्तकें

1.0 : उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात आप जान सकेंगे -

- शोध का अर्थ तथा शोध एवं खोज में अन्तर,

- शोध का ज्ञान सृजन से सम्बन्ध, तथा आज के परिप्रेक्ष में शोध की उपयोगिता,
- शोध की प्रकृति एवं प्रकार
- शोध समस्या का चयन तथा उसकी परिभाषा, तथा
- शोध समस्या के स्रोत, एवं समस्या की पहचान तथा निर्वचन।

1.1 प्रस्तावना

अनुसंधान अथवा शोध, मानव जाति के लिए आग और पानी जितना ही पुराना है। भोजन और आश्रय के लिए उसके द्वारा बार बार किये गये खोज, पूर्वानुमानित घटनाओं को अनुभव द्वारा समझने में उसकी मदद करता रहा है और इस प्रकार प्रकृति के हर चुनौती का सामना उसे प्रकृति के रहस्यों को समझने के और करीब ले आता रहा है। जब भी मनुष्य किसी नई परिस्थिति में आता तो वह पुनः यह खोज की प्रक्रिया शुरू हो जाती। मनुष्य के आगे, उसके अस्तित्व के लिए किये गये संघर्ष के परिणाम ने शोध का रूप ले लिया। 'रिसर्च' शब्द लैटिन भाषा से उद्घृत है, जिसका अर्थ है जानना। तथापि यह विचारणीय है कि खोज एवं शोध में क्या अन्तर है। खोज वह गतिविधि है जिसके माध्यम से हम किसी व्यक्ति अथवा वस्तु विशेष को सुव्यवस्थित विधि द्वारा ढूँढने का प्रयास करते हैं।

खोज दो प्रकार के होते हैं : प्रथम वह खोज है जिसका कि अस्तित्व निर्धारित है, परन्तु उसकी स्थिति का पता लगाना है एवं द्वितीय उस वस्तु अथवा लक्ष्य के लिए खोज है जिसका अस्तित्व अनिश्चित है। यह स्पर्शागम्य व्यवहारों के सन्दर्भ में रूपकालकार प्रयोग में लाया जाता है, उदाहरणार्थ स्मृति तथा मनोभाव। खोज एक पुनरुक्ति क्रिया के स्थान पर, एक स्वाभाविक क्रिया है। खोज के विपरीत, अनुसंधान एक क्रमबद्ध प्रक्रिया है, जो कि एक योजना के अनुरूप व्यवस्थित होती है यद्यपि यह एक सुनियोजित क्रमबद्ध प्रक्रिया है, किन्तु हर परियोजना की अपनी नीति विलक्षण होती है, अनुसंधान का उद्देश्य योजनाबद्ध अन्वेषण के द्वारा तथ्यों को सत्यापित करना है, अनुसंधान ऐसे प्रश्न अथवा समस्याओं के समाधान ढूँढता है जिसके उत्तर पहले से अस्तित्व में न हों।

1.2 अनुसंधान का उद्गम

अनुसंधान का उद्गम एक ऐसे शब्द से हुआ है, जिसका अर्थ 'सब दिशाओं में जाना' होता है। वैसे भी 'रिसर्च' शब्द स्वयं ही दो शब्दों 'री' तथा 'सर्च' से मिलकर

बना है, अतः सम्पूर्ण 'रिसर्च' शब्द से एक ऐसे सम्मिलित अर्थ का बोध होता है जिसका उद्देश्य 'खोज' की पुनरावृत्ति होता है' अथवा एक 'अन्वेषण' होता है, अज्ञात विषयों तथा घटनाओं के प्रति अन्वेषण करना वास्तव में मानव स्वभाव का अभिन्न अंग रहा है।

आदि काल से आश्चर्यजनक प्राकृतिक घटनाओं की व्याख्या मानव ने संभवतः पहले जादू के आधार पर की, क्योंकि उसकी साधारण बुद्धि प्रकृति में घटित होने वाली विषम घटनाओं की व्याख्या इससे अधिक करने में प्रायः असमर्थ रही है। शनैः शनैः नवीन कल्पनाओं तथा धारणाओं से मानव ज्ञान अर्जन की विधि को दार्शनिक विचारधाराएँ मिलीं और चिन्तन में निगमनात्मक तर्क का उदय हुआ। इस प्रकार की विचारधाराओं में तर्क बुद्धिवादी पर्याप्त समय तक प्रधान एवं प्रभावशाली रही। परन्तु आगे चलकर परिवर्तन आया और संशयवाद जागृत हुआ, जिससे परम्परागत धार्मिक शास्त्र-पद्धति तथा ईश्वर परक हठ मतों को बहुत बड़ा धक्का लगा और इसका परिणाम यह हुआ कि मानव चिन्तन में इन्द्रियनुभववाद का युग आया। इस युग ने मानव चिन्तन और अन्वेषण पद्धति को एक नई दिशा प्रदान की और परिकल्पना आधारित निगमनात्मक विधि का विकास हुआ।

इस विचारधारा से प्रभावित होकर अगस्त कामटे ने समाज विज्ञान के अध्ययन में प्रत्यक्षवाद को अपनाया। ईमाइल दुर्खीम ने समाज विज्ञान में विषयपरक अध्ययन पद्धति को प्रधानता प्रदान की। मनोविज्ञान के क्षेत्र में व्यवहारवादी विचारधारा का प्रवेश हुआ। मनोविश्लेषण में नियतत्ववाद के नियम को प्रतिपादित किया। ये सब नवीन तथा प्रबल पद्धतियाँ मानव के चिन्तन, अध्ययन व अनुसंधान के जगत में वैज्ञानिक विचारधारा की प्रतीक थीं और यह विचारधारा इस शताब्दी के आरम्भ में अत्यधिक जोर पकड़ चुकी है।

1.2.1 शोध तथा वैज्ञानिक पद्धति

वैज्ञानिक पद्धति एक सामूहिक शब्द है जो उन अनेक प्रक्रियाओं को स्पष्ट करता है जिनकी सहायता से विज्ञान का निर्माण होता है। व्यापक अर्थों में वैज्ञानिक पद्धति का तात्पर्य अनुसन्धान की किसी ऐसी पद्धति से है जिसके द्वारा निष्पक्ष एवं व्यवस्थित ज्ञान प्राप्त किया जाता है। विस्तृत अर्थों में कोई भी अनुसंधान विधि जिसके द्वारा विज्ञान का विस्तार एवं प्रसार होता है, वैज्ञानिक पद्धति कही जाती है। वैज्ञानिक पद्धति एक ऐसा क्रमबद्ध प्रक्रम है जिसमें एक समस्या पर आधारित परिकल्पना से सम्बन्धित आँकड़ों का संकलन, व्यवस्थापन व विश्लेषण उपयुक्त सांख्यिकीय पद्धति द्वारा इस आशय से किया

जाता है जिससे, परिकल्पना की सत्यता की जाँच कठोरतम तथा वस्तुनिष्ठ मापदण्ड पर की जा सके। वैज्ञानिक पद्धति का स्वरूप स्थायी नहीं होता, बल्कि गतिशील रहता है। इसके स्वरूप में जैसे-जैसे परिशुद्धता व कठोरता की मात्रा में वृद्धि होती जाती है, वैज्ञानिक पद्धति का स्वरूप और अधिक विशुद्ध होता चला जाता है।

1.2.2 वैज्ञानिक पद्धति की विशेषताएँ

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि वैज्ञानिक पद्धति किसी विषय को धरातल पर प्रस्तुत करने का एक सुदृढ़ आधार है। महान सांख्यिकीविद् कार्ल पीयर्सन ने वैज्ञानिक पद्धति की विवेचना तीन प्रमुख विशेषताओं के आधार पर की है -

1. सर्वप्रथम वैज्ञानिक पद्धति तथ्यों का वर्गीकरण करती है तथा विभिन्न तथ्यों के पारस्परिक संबंध और क्रम का निरीक्षण करती है।
2. वैज्ञानिक पद्धति रचनात्मक कल्पना के द्वारा वैज्ञानिक नियमों की खोज करती है।
3. वैज्ञानिक पद्धति किसी विषय की समालोचना करती है तथा सामान्य बुद्धि के सभी व्यक्तियों के लिए समान रूप से उपयोगी होती है।

मूलतः वैज्ञानिक पद्धति की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं -

1. **वस्तुनिष्ठता** - इससे अभिप्राय यह है कि अध्ययन पक्षपातरहित व पूर्वाग्रहरहित होना चाहिए।
2. **निश्चयात्मक** - वैज्ञानिक विधि के अन्तर्गत सम्बन्धित चरों की व्याख्या व उनके प्रकार्यात्मक अध्ययन का प्रक्रम कठोरतम मापदण्ड पर नियन्त्रित, सुव्यवस्थित व सुनिश्चित होता है, तथा प्राप्त परिणामों का वास्तुनिष्ठ आधार पर विश्वसनीयता व वैधता का स्तर भी निर्धारित रहता है।
3. **सत्यापनीयता** - प्राप्त परिणामों की पुनरावृत्ति तथा पुष्टि वैज्ञानिक पद्धति की तीसरी विशेषता है। पुष्टि के लिए एक अनुसंधानकर्ता स्वयं अपने अध्ययन की नवीन स्थिति में पुनरावृत्ति करता है और यह प्रक्रम तब तक चलता रहता है, जब तक कि सुनिश्चित परिणाम उपलब्ध नहीं हो जाते।
4. **सामान्यता** - वैज्ञानिक विधि के द्वारा जो निष्कर्ष उपलब्ध होते हैं, उनके आधार पर उसी प्रकार की अन्य घटनाओं की व्याख्या सरलतापूर्वक की जा सकती है, क्योंकि वैज्ञानिक पद्धति द्वारा प्राप्त सिद्धान्तों, तथ्यों व नियमों की रचना की

जाती है तथा उनकी अनुप्रयुक्ति का स्वरूप सार्वभौमिक होता है।

5. भविष्य कथन की क्षमता - वैज्ञानिक तथ्यों, नियमों व सिद्धान्तों की रचना का आधार वैज्ञानिक पद्धति ही होता है, अतः ज्ञान की ऐसी रचना के आधार पर वैज्ञानिक एक घटना से सम्बन्धित चरों व स्थितियों के उपस्थित होने पर घटित होने वाले परिणामों के सम्बन्ध में सफलतापूर्वक भविष्यवाणी कर सकता है।

1.3 वैज्ञानिक अनुसंधान की प्रकृति

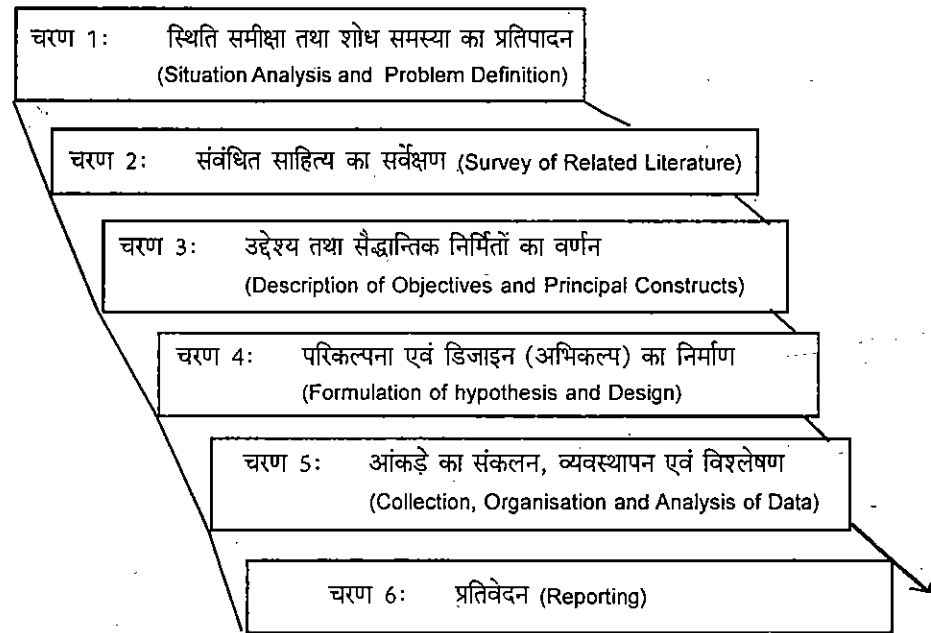
अनुसंधान की प्रकृति को समझने के लिए हमें सर्वप्रथम शोध को परिभाषित करना होगा। विभिन्न विशेषज्ञों ने शोध को भिन्न-भिन्न प्रकार से परिभाषित किया है, पर सभी परिभाषाएँ अनुसंधान को एक ऐसा निरपेक्ष, व्यापक तथा बौद्धिक अन्वेषण मानती है जिसमें एक दी गई समस्या से सम्बन्धित तथ्यों तथा उनमें अर्थों अथवा सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। अनुसंधान चिन्तन की एक ऐसी क्रमबद्ध तथा विशुद्ध प्रविधि है, जिसमें विशिष्ट यन्त्रों, उपकरणों तथा प्रक्रियाओं का उपयोग इस उद्देश्य से किया जाता है कि एक समस्या का अधिक समुचित समाधान उपलब्ध हो सके।

परिभाषाओं के आधार पर शोध की प्रकृति के बारे में हम कह सकते हैं कि -

1. अनुसंधान एक वैज्ञानिक अन्वेषण पद्धति है। इस आधार पर अनुसंधान एक व्यवस्थित, नियन्त्रित, निरपेक्ष, वस्तुनिष्ठ गहन तथा आनुभविक अध्ययन होता है।
2. इसका उद्देश्य एक दी गई स्पष्ट तथा सीमित समस्या से सम्बन्धित नवीन तथ्यों तथा सामान्य नियमों की खोज करना है, तथा साथ ही साथ उस से सम्बन्धित पूर्व स्थापित नियमों का नवीनतम यन्त्रों, उपकरणों तथा प्रविधियों द्वारा सत्यापन करना भी होता है।
3. अनुसंधान से सम्बन्धित समस्या के अध्ययन का आधार ऐसी परिकल्पना अथवा परिकल्पनात्मक तर्क वाक्य होते हैं जिनसे कि आनुभविक तथा मात्रात्मक अध्ययन में सुविधा हो।
4. इसमें सम्बन्धित आँकड़ों का विश्लेषण कठोर वैज्ञानिक तथा सांख्यिकीय पद्धतियों के आधार पर किया जाता है। इस प्रकार अनुसंधान का स्वरूप कुशल, विशिष्ट तथा वस्तुनिष्ठ होता है।

5. इसमें प्राप्त परिणामों तथा सम्बन्धों की पुनरावृत्ति इस उद्देश्य से बार बार की जाती है ताकि सुनिश्चित तथा सुसंगत निष्कर्ष प्राप्त हो सके।
6. अनुसंधान पर आधारित ज्ञान में एक प्रकार की क्रमबद्धता, निरन्तरता तथा एकता अन्तर्निहित रहती है, तथा इस प्रकार का ज्ञान वैज्ञानिक मापदण्ड पर परिशुद्ध वैध तथा विश्वसनीय रहता है।
7. अनुसंधान के प्रक्रम तथा प्राप्त निष्कर्षों को नियमबद्ध रूप से एक प्रतिवेदन के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, ताकि उस क्षेत्र के आगामी अनुसंधानों में उनका सन्दर्भ सहज रूप से उपलब्ध हो सके। इस आधार पर अनुसंधान के प्रतिवेदन का प्रकाशन भी अनुसन्धान प्रक्रम का एक महत्वपूर्ण अंग माना जाता है।

1.3.1 अनुसंधान के विभिन्न चरण



चित्र 1:: अनुसंधान प्रक्रिया (The Research Process)

स्थिति समीक्षा तथा शोध समस्या का प्रतिपादन - इस चरण में सर्वप्रथम शोधकर्ता उस क्षेत्र तथा विषय का चयन करता है, जिसमें वह शोध करना चाहता है। प्रायः यह चरण किसी समस्या का हल ढूँढने से प्रेरित होता है। अतः इस चरण में शोध समस्या का प्रतिपादन होता है।

संबंधित साहित्य का सर्वेक्षण - दूसरे चरण में, अनुसन्धानकर्ता को समस्या सम्बन्धित पूर्व अनुसंधानों का सावधानीपूर्वक सर्वेक्षण करना होता है, ताकि वह यह समझ सके कि पूर्व अनुसंधानों में क्या कमियाँ रही हैं। इसके अलावा साहित्य सर्वेक्षण

से कई महत्वपूर्ण तथ्यों का भी पता चलता है जैसे कि सम्बन्धित शोधों के क्या परिणाम रहे, कहीं ऐसा तो नहीं कि जिस शोध प्रश्न का हल ढूँढने जा रहे हैं, उसका हल पहले से ही मौजूद हो?

उद्देश्य तथा सैद्धान्तिक निर्मितों की व्याख्या - इस चरण में प्रतिपादित शोध समस्या के युक्ति संगत आधार को प्रस्तुत करता है, और इसके साथ ही साथ, उन सैद्धान्तिक निर्मितों तथा संप्रत्ययों की भी स्पष्ट व्याख्या करता है जिनका उपयोग अपने अनुसंधान में किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त इस चरण में समस्या के उद्देश्यों को तथा उसके क्षेत्रों को भी स्पष्ट तथा सीमित करना होता है।

परिकल्पन एवं अभिकल्प का निर्माण - इस चरण में अनुसंधानकर्ता को उठायी गयी समस्या के आधार पर एक ऐसी उपयुक्त परिकल्पना की रचना करनी होती है जिसका कि आनुभाविक (ऐम्पिरिकल) तथा मात्रात्मक (Quantitative) अध्ययन सम्भव हो और जो उठायी गयी समस्या का एक समुचित उत्तर हो। इसी चरण में अनुसंधान से सम्बन्धित एक ऐसे अभिकल्प (Design) का चयन करना होता है जिससे संबंधित समस्या का कठोर वैज्ञानिक नियंत्रण (Control) के आधार पर गहन अध्ययन हो सके।

आंकड़ों का संकलन, व्यवस्थापन एवं विश्लेषण - एक बार परिकल्पना तथा उसके सत्यापन के लिए अभिकल्प का चयन होने के पश्चात, आंकड़ों का व्यवस्थापन एवं विश्लेषण किया जाता है। इन आंकड़ों का उपयुक्त सांख्यिकीय विधियों से सत्यापन किया जाता है।

प्रतिवेदन - अन्तिम चरण में, सम्पूर्ण अनुसंधान प्रक्रम के आधार पर एक नियमबद्ध, संक्षिप्त तथा स्पष्ट प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जाता है, जिससे इस अनुसंधान का सन्दर्भ आगामी अनुसंधानों के लिए सरलतापूर्वक उपलब्ध हो सके।

1.3.2 अनुसंधान का महत्व

मानव जीवन का कोई भी पक्ष शोध के दायरे से अछूता नहीं है। सारे अद्भुत आविष्कार, खोजों और सिद्धान्तों के पीछे अनुसंधान का बहुत बड़ा योगदान है। अनुसंधान का महत्व केवल विज्ञान की खोजों तक ही सीमित नहीं है। अनुसंधान सामाजिक विकास तथा आम आदमी के लिए बेहतर जीवन प्रदान करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। शोध, ज्ञान के विस्तार करने में, तथ्यों की जाँच करने में तथा सिद्धान्तों की खोज करने में महत्वपूर्ण योगदान करता है। अधिकांश स्थितियों में शोध

निर्णय लेने में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अनुसंधान के महत्व हम निम्नलिखित बिन्दुओं से वर्णित कर सकते हैं।

1. अनुसंधान मानव ज्ञान भण्डार को विस्तृत करता है।
2. अनुसंधान हमें भविष्य की अनिश्चितता को कम करने में मदद करता है।
3. अनुसंधान विभिन्न विज्ञानों की प्रगति की शक्तिशाली कुन्जी है।
4. अनुसंधान व्यावहारिक समस्याओं के समाधान का एक प्रबल यन्त्र है।
5. अनुसंधान प्रशासक का मार्ग दर्शक है क्योंकि यह निर्णय लेने में प्रशासक की मदद करता है।
6. अनुसंधान ने अनेक पूर्वाग्रहों के निदान तथा निवारण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।
7. अनुसंधान से मानव व्यक्तित्व का अपार बौद्धिक विकास हुआ है।

1.3.3 अनुसंधान के प्रकार

शोध को विभिन्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है, जैसे कि शोध पद्धति के आधार पर, उपयोगकर्ता समूह के आधार पर, इससे उत्पन्न ज्ञान के आधार पर शोध समस्या के आधार पर इत्यादि।

1. **ऐतिहासिक अनुसंधान (Historical Research)** - इसमें अतीत की घटनाओं, संसाधनों, समूहों, संगठनों, परम्पराओं का विवेचन, अन्वेषण तथा विश्लेषण किया जाता है।

उदाहरणार्थ - व्यक्ति-वृत्त अध्ययन (Biographical) तथा नैदानिक अनुसंधान (Diagnostic Research),

2. **विवरणात्मक अनुसंधान (Descriptive Research)** - इसकी वर्तमान की घटनाओं, तथ्यों तथा सम्बन्धों के महत्व तथा वर्तमान स्वरूप का पता लगाना ही उद्देश्य होता है। उदाहरणार्थ - क्षेत्र-अध्ययन तथा साक्षात्कार।

3. **प्रायोगिक अनुसंधान (Experimental Research)** - इसमें चरों के प्रकर्यात्मक सम्बन्धों का अध्ययन कठोर वैज्ञानिक मापदण्ड पर किया जाता है तथा चरों में सम्बन्धों का पता लगाना इसका उद्देश्य है। उदाहरणार्थ - कार्य-कारण सम्बन्ध शोध।

4. **मूलभूत अनुसंधान (Fundamental of Basic Research)** - वैज्ञानिक तथ्यों, नियमों तथा सिद्धान्तों की खोज, भौतिक विज्ञान में शोध।
5. **अनुप्रयुक्त अनुसन्धान (Applied Research)** - इसका उद्देश्य व्यवहारिक समस्याओं का समाधान वर्तमान समय में ढूँढना होता है। उदाहरणार्थ - क्रियात्मक अनुसंधान, अभिप्रेणात्मक अनुसंधान।
6. **मात्रात्मक शोध (Quantitative Research)** - इसमें संरचित प्रश्नों के प्रयोग, जहाँ प्रतिक्रिया विकल्प और उत्तरदाताओं की संख्या पूर्वनिर्धारित होती है, और एक बड़ी संख्या में उत्तरदाता अपनी प्रतिक्रिया देते हैं जिसका पूर्वनिर्धारित मापों के आधार पर परिमाणन किया जाता है। उदाहरणार्थ - सर्वेक्षण एवं अवलोकनात्मक शोध।
7. **गुणात्मक अनुसंधान Qualitative Research)** - इसमें व्यक्ति, वस्तु, परिस्थिति इत्यादि की गुणात्मक व्याख्या एवं विश्लेषण किया जाता है। उदाहरणार्थ - साहित्यिक शोध, ऐतिहासिक शोध।
8. **अनुभवजन्य अनुसंधान (Impirical Research)** - प्रयोग अथवा अवलोकन पर आधारित एवं इसका उद्देश्य एक विशिष्ट प्रश्न का हल ढूँढने के लिए अथवा एक परिकल्पना का परीक्षण करने के लिए आयोजित किया जाता है।
9. **कारणात्मक अनुसंधान (Causal Research)** - किसी घटना अथवा क्रिया में सम्मिलित चरों में कारण- प्रभाव सम्बन्ध (Cause-effect relation) के अध्ययन से संबन्धित शोध इस श्रेणी में आता है।

बोधात्मक प्रश्न (क)

रिक्त स्थान भरो -

1. अनुसंधान चिन्तन की एक ऐसी क्रमबद्ध तथा विशुद्ध प्रविधि है, जिसमें ----- तथा ----- का उपयोग इस उद्देश्य से किया जाता है, ताकि एक समस्या का अधिक समुचित समाधान उपलब्ध हो सके।
2. ----- अनुसंधान वैज्ञानिक तथ्यों, नियमों तथा सिद्धान्तों की खोज से संबंधित है।
3. अनुसंधानकर्ता को उठायी गयी समस्या के आधार पर एक ऐसी उपयुक्त

परिकल्पना की रचना करनी होती है जिसका कि ----- तथा ----- अध्ययन सम्भव हो और जो उठायी गयी समस्या का एक समुचित संबन्धित है, उत्तर दो।

4. ----- से अभिप्राय यह है कि अध्ययन पक्षपात रहित व पूर्वाग्रह रहित होना चाहिए।
5. अन्तिम चरण में, सम्पूर्ण अनुसंधान प्रक्रम के आधार पर एक नियमबद्ध, संक्षिप्त तथा स्पष्ट ----- प्रस्तुत किया जाता है।

1.4 अनुसंधान समस्या का चयन एवं उसकी परिभाषा

सामाजिक अनुसंधान में समस्या का चयन एवं उसका प्रतिपादन अथवा पहचान सामाजिक अनुसंधान के सफल संचालन के लिए अत्यन्त आवश्यक है। ए. आइन्सटीन तथा एन.इन्फील्ड ने कहा है कि “समस्या का प्रतिपादन प्रायः इसके समाधान से अधिक आवश्यक है।” सामाजिक अनुसंधान की प्रक्रिया में अनुसंधान समस्या का चयन एवं उसका प्रतिपादन अनुसंधान प्रक्रिया का प्रथम महत्वपूर्ण चरण है। समस्या वस्तुतः एक प्रश्नवाची वाक्य अथवा कथन है जो यह पूछता है कि दो अथवा दो से अधिक चरों के बीच क्या सम्बन्ध है।

एक अनुसन्धानकर्ता को अनुसंधान समस्या के चयन से पूर्व स्वयं तो निम्नलिखित प्रश्न पूछने चाहिए :

1. क्या अनुसंधान शीर्षक ऐसा है जिस पर कोई कार्य पहले किया जा चुका है? यदि हाँ, तो क्या इस कार्य का कोई लिखित स्वरूप उपलब्ध है? यदि हाँ, तो क्या यह अनुसंधानकर्ता की पहुँच के अन्तर्गत है?
2. क्या अनुसंधान शीर्षक समाज के लिए उपयोगी है? क्या इसके परिणाम अनुसंधानकर्ता की व्यक्तिगत अभिरूचियों इच्छाओं, मूल्यों एवं मान्यताओं के अनुकूल है?
3. क्या इसके परिणामों से अनुसंधानकर्ता को स्वयं भी आय, यश इत्यादि के रूप में कुछ लाभ प्राप्त हो सकते हैं?
4. क्या अनुसंधान शीर्षक ऐसा है जिसके प्रति समाज द्वारा विरोध व्यक्त किया जा सकता है?

5. क्या अनुसंधान शीर्षक प्रायोगिक है अर्थात् इस शीर्षक पर अनुसंधान कार्य करने के लिए जिस प्रकार के तथ्यों की आवश्यकता है क्या वे उपलब्ध हो सकेंगे?

सामाजिक विज्ञानों में समस्या के चुनाव में सामाजिक अनुसंधानकर्ता के अपने व्यक्तिगत इरादे पर्याप्त प्रभाव डालते हैं। स्वतंत्र विचारधारा, वाले सामाजिक अनुसंधानकर्ता उन समस्याओं पर कार्य करने के विरोध में अपने विचारों को व्यक्त करते हैं जो उनके स्वभाव तथा अभिरूचियों के अनुकूल नहीं होता। यह सत्य है कि अनुसंधान व्यक्तित्व संबंधी पृष्ठभूमि द्वारा प्रभावित होता है फिर भी अनुसंधान समस्या को सामान्य अभिरूचि का विषय बनाने की दिशा में चेतन एवं संगठित रूप से प्रयास करना पड़ता है तथा एक सामान्य पृष्ठभूमि की खोज का कार्य करना पड़ता है क्योंकि इस सामान्यता की पूर्ण अनुपस्थिति में किया गया अनुसंधान इतना अधिक व्यक्तिवादी हो सकता है कि इससे समाज के किसी भी प्रकार से लाभान्वित होने की कोई सम्भावना नहीं रह जाती है। समाज के लिए पूर्णरूपेण अनुपयोगी अनुसंधान कार्य निरर्थक है। यहाँ तक कि विशुद्ध अनुसंधानकर्ता समाज कल्याण के उद्देश्य को अपने ध्यान में रखते हैं तथा समाज के लिए विनाशकारी प्रभाव रखने वाले अनुसंधान कार्य को प्रतिबन्धित करने का प्रयास करते हैं।

विभिन्न मूल्यों से युक्त सामाजिक अनुसंधानकर्ता निश्चय ही विभिन्न प्रकार के अनुसंधान शीर्षकों का चुनाव करते हैं। किन्तु यह कहना भ्रमपूर्ण है कि अनुसंधान शीर्षकों के चुनाव में वैयक्तिक मूल्य एकमात्र निर्धारक हैं।

वस्तुस्थिति यह है कि अनुसंधान के शीर्षक का चुनाव पर्यावरण संबंधी कारकों द्वारा प्रभावित होता है और यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण न होगा कि इन कारकों का योगदान व्यक्तित्व संबंधी कारकों की तुलना में कहीं अधिक है क्योंकि यह सत्य है कि सामाजिक अनुसंधानकर्ता के व्यक्तित्व की संरचना का निर्माण वंशानुक्रम एवं जैविक वातावरण से प्राप्त सामाजिक एवं सांस्कृतिक विरासत का योग है और उसे अनुसंधान करने योग्य परिस्थिति वातावरण द्वारा ही प्रदान की जाती है। इसके अतिरिक्त अनुसंधान की उपादेयता प्रमुख रूप से इस पर निर्भर करती है कि यह अनुसंधान कार्य किस सीमा तक वातावरण को मानव-कल्याण हेतु परिवर्तन करने में सहायक सिद्ध होगा। सामाजिक अनुसंधानकर्ता को समाज के लिए उपयोगी समस्या पर कार्य करने के परिणामस्वरूप विभिन्न प्रकार के लाभ, धन, यश आदि कहीं अधिक मात्रा में प्राप्त हो सकते हैं।

1.4.1 अनुसंधान-समस्याओं के स्रोत

इन समस्याओं के प्रमुख स्रोत निम्नांकित हैं :

1. **संबंधित साहित्य का अध्ययन** - हम जिस क्षेत्र के विशेषज्ञ हैं या जिस क्षेत्र में अनुसंधान कर रहे हैं उस क्षेत्र के साहित्य का गठन अध्ययन करना समस्याओं के चयन हेतु उपयुक्त होगा। संबंधित साहित्य के अध्ययन के दौरान हमें उस क्षेत्र की प्रमुख समस्याओं एवं आवश्यकताओं का आभास हो सकता है। हमें यह पता लग सकता है कि किन समस्याओं पर पहले कार्य हो चुका है, और जिन समस्याओं पर कार्य हो चुका है, उनके कौन से आयामों पर अभी कार्य किया जा सकता है। संबंधित साहित्य के अध्ययन से हमें यह पता लग सकता है कि शोधकर्ता ने किस विधि को अपनाया है। हम चाहें तो अन्य विधि को अपना कर देख सकते हैं कि क्या परिणाम भिन्न आते हैं।
2. **अनुसंधानों से उद्भूत नवीन समस्याएँ** - अनुसंधान कार्य एक निरन्तर चलने वाला प्रक्रम है। एक समस्या सामने आती है उसे हल करने के लिए अनुसंधान किया जाता है और इस अनुसंधान के दौरान नए प्रश्न एवं समस्याएँ उपस्थित हो जाती हैं। इन नए प्रश्नों पर पुनः अनुसंधान किया जा सकता है। वैज्ञानिकों ने अन्तरिक्ष यानों का आविष्कार किया और मानव ने आन्तरिक्ष यात्रा प्रारम्भ की। प्रत्येक अन्तरिक्ष यात्रा ने कई प्रश्न एवं समस्याएँ वैज्ञानिकों के सामने उपस्थित की, जिन पर वैज्ञानिक अनुसंधान कर रहे हैं। इस प्रकार समस्याएँ, अनुसंधान, नई समस्याएँ और फिर अनुसंधान, यह एक निरन्तर चलने वाला प्रक्रम है। अतः शोधकर्ता यदि पूर्ण किये गये अनुसंधान को पढ़ें तो उसे अनेक नई समस्याएँ दिखाई दे सकती हैं।
3. **वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति के फलस्वरूप उत्पन्न समस्याएँ** - विज्ञान एवं तकनीकी प्रगति का प्रभाव शिक्षा जगत पर हुए बिना नहीं रह सकता। शिक्षा जगत में नवीन साधन सुविधाओं का उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है यह एक महत्वपूर्ण शोध का क्षेत्र हो सकता है। अध्यापन मशीनों का आविष्कार, टेलीविजन, चलचित्र, टेपरिकार्डर आदि का विभिन्न शैक्षणिक उद्देश्यों के लिए उपयोग इस बात का प्रमाण है कि विज्ञान एवं तकनीकी प्रगति शिक्षा जगत को प्रभावित किए बिना नहीं रहती।
4. **सिद्धान्त से नई समस्याओं का स्रोत** - जैसा पहले कहा जा चुका है कि प्रत्येक सिद्धान्त नये प्रश्न उत्पन्न करता है। इनको परखने के लिए हम नये अनुसंधान संचालित कर सकते हैं। अतः सिद्धान्त भी अनुसंधान समस्याओं का महत्वपूर्ण स्रोत है। कई बार

एक सिद्धान्त किसी नई घटना को समझाने में असफल हो जाता है। ऐसी परिस्थिति में अनुसंधान के आधार पर नये सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जाता है या उसी में परिवर्तन, परिवर्द्धन किया जाता है।

शोध विधियों की प्रकृति तथा
क्षेत्र एवं शोध समस्याओं का
प्रतिपादन

1.4.2 अनुसंधान की समस्याओं के लक्षण

अनुसंधानकर्ता की समस्या का चयन करने से पूर्व उसके औचित्य एवं उपयोगिता के संबंध में विचार कर लेना चाहिए। केवल अनुसंधान करना न तो अनुसंधानकर्ता के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकता है न ही विषय की समृद्धि के लिए जिसमें कि अनुसंधान किया जा रहा है। समस्या को चुनने के पूर्व यदि कुछ कसौटियों पर उसे परख लें तो उचित होगा। इस प्रयोजन हेतु समस्या की उपयुक्तता को जाँचने की कतिपय निम्नांकित कसौटियों की चर्चा की गई है :

1. **नवीनता** - समस्या का चयन करने के पूर्व हमें संबंधित साहित्य के अध्ययन से यह पता लगा लेना चाहिए कि कहीं इस समस्या का हल पहले से ही निकाला तो नहीं गया। एक समस्या पर पुनः कार्य करने से क्षति होती है। ऐसे कई उदाहरण मिलते हैं जिनमें अनुसंधानकर्ताओं को कार्य समाप्त करने के उपरान्त यह पता लगा कि इस समस्या पर पहले ही पर्याप्त कार्य हो चुका है। संबंधित साहित्य का पूर्ण अध्ययन न करने के कारण उच्चकोटि के वैज्ञानिक ने भी ऐसी भूल कर दी थी। उन्होंने सूक्ष्म जीवाणुओं के संबंध में अनुसंधान कर यह पता लगाया कि ये जीवाणु बिना श्वास क्रिया के जीवित रहते हैं जबकि यह तथ्य दो शताब्दियों पहले ही अन्य वैज्ञानिकों ने पता लगा लिया था। अतएव एक उपयुक्त समस्या का सर्वप्रथम लक्ष्य होना चाहिए नवीनता। यहाँ यह कह देना उपयुक्त होगा कि एक बार किसी समस्या पर शोध किया गया हो और फिर उस पर नए संदर्भ में शोध किया जाये तो समस्या की नवीनता समाप्त नहीं होती।

2. **समस्या की उपयोगिता** - समस्या को चुनते समय यह बात ध्यान रखना चाहिए कि यह समस्या कितनी महत्वपूर्ण है। क्या इस अनुसंधान से प्राप्त तथ्य शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाने में या शिक्षा की समस्या को सुलझाने में मदद कर सकते हैं। कोई अनुसंधान तभी सार्थक माना जा सकता है जब उसके फलस्वरूप वर्तमान परिस्थितियों में सुधार लाने में मदद मिले।

3. **अनुसंधान की रूचि एवं योग्यता** - समस्या अच्छी हो, किन्तु अनुसंधानकर्ता की उसमें रूचि न हो तो ऐसी समस्या लेना व्यर्थ होगा। अनुसंधान तो स्वप्रेरित प्रक्रम है। जब तक इस प्रक्रिया में आन्तरिक प्रेरणा नहीं होगी कार्य उच्च कोटि का नहीं होगा।

पदोन्नति हेतु यदि हम कोई शोध कार्य हाथ में ले लें तो वह इतना प्रभावोत्पादक नहीं होगा। समस्या में रूचि पूर्णतया बौद्धिक प्रेरणा के फलस्वरूप होनी चाहिए। किसी पूर्वाग्रह को सिद्ध करने के लिए बहुत से शोध कार्य हाथ में लिए जाते हैं। उनकी उत्पादकता सीमित ही होती है।

समस्या में रूचि के साथ-साथ समस्या पर कार्य करने के लिए अनुसंधानकर्ता में आवश्यक विशेष योग्यता का होना अनिवार्य है। बालकों में गणित की धारणाओं के विकास के संबंध में शोध कार्य करने वाले अनुसंधानकर्ता में यदि गणित विषय की योग्यता नहीं हो तो उसका शोधकार्य बहुत छिछला होगा।

4. आवश्यक सामग्री एवं अन्य साधनों की उपलब्धि - कई बार समस्यायें अच्छी होते हुए भी आवश्यक सामग्री एवं साधनों के अभाव में हम अनुसंधान कार्य नहीं कर सकते। उदाहरणार्थ यदि हम यह पता लगाना चाहें कि शिक्षकों के स्थानान्तरण में कौन कौन से कारक प्रभावी हैं तो इस समस्या के लिए आवश्यक सामग्री मिलना बहुत कठिन है। कुछ कारक ऐसे हो सकते हैं जिनके संबंध में कोई भी व्यक्ति चर्चा करने में हिचकिचाहट अनुभव कर सकता है। कभी कभी ऊपर देखने में तो एक कारक हो और वास्तव में स्थानान्तरण किसी अन्य कारण से किया गया हो। अतः यह देख लेना चाहिए कि जो तथ्य हमें शोध कार्य के लिए चाहिए क्या वे उपलब्ध हो सकते हैं? जैसे यदि हमें शिक्षकों के गोपनीय अभिलेख देखने की आवश्यकता हो तो क्या हमें यह प्रतिवेदन उपलब्ध हो सकते हैं? फिर यह भी पता लगा लेना चाहिए कि क्या पाठशाला के प्रधानाचार्य हमें आवश्यक परीक्षण की अनुमति दे देंगे। जिन व्यक्तियों से हमें साक्षात्कार करना है क्या वे उसके लिए तैयार हो जायेंगे।

सामग्री एकत्रित करने की समस्या के कारण हमें कुछ समस्यायें छोड़नी पड़ सकती हैं। उसी प्रकार कुछ साधन अथवा कुशलताओं के अभाव में समस्याओं पर शोध कार्य करना सम्भव नहीं होता। कभी कभी साधनों के अभाव में कुछ शोध कार्य नहीं किए जा सकते जैसे किसी शोध कार्य में आवश्यक मनोवैज्ञानिक टेस्ट के अभावों में यह शोध कार्य असम्भव हो जाता है। कई बार सांख्यिकी के कुछ विशिष्ट तरीकों को, जैसे कारक विश्लेषण को काम में लेना, न जानने के कारण हमें कुछ समस्याओं को छोड़ना पड़ता है।

5. समय एवं आर्थिक पक्ष - समस्या चुनते समय हमें यह ध्यान में रखना चाहिए कि हमारे पास उपलब्ध समय कितना है एवं इसमें व्यय कितना होगा? विशेषकर स्नातकोत्तर विद्यार्थियों को तो इसका बहुत ध्यान रखना चाहिए क्योंकि उन्हें एक सीमित

काल में शोध कार्य समाप्त करना होता है और उनके आर्थिक साधन सीमित होते हैं।

शोध विधियों की प्रकृति तथा
क्षेत्र एवं शोध समस्याओं का
प्रतिपादन

1.4.3 समस्या की पहचान अथवा निर्वचन

अनुसंधान समस्या के चयन के बाद उसके निर्वचन या पहचान की समस्या आती है। समस्या की पहचान से हमारा आशय अनुसंधान की समस्या के समस्त पक्षों के स्पष्टीकरण से है। जब तक अनुसंधानकर्ता समस्या का प्रतिपादन नहीं कर लेता तब तक इस बात से अनभिज्ञ होता है कि वस्तुतः उसे क्या करना है एवं किन प्रश्नों को खोजना है। एक अनुसंधानकर्ता को समस्या के प्रतिपादन में निम्नांकित प्रश्न स्वयं से पूछने चाहिए -

1. अनुसंधान समस्या के विषय में उसकी जानकारी कितनी है?
2. इस जानकारी के विभिन्न स्रोत क्या हैं तथा उनकी विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता की सीमा क्या है?
3. हम इस उपलब्ध जानकारी की पृष्ठभूमि में, यदि कोई हो, क्या जानकारी और प्राप्त करना चाहते हैं। तथा क्यों यह जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं?
4. जिस प्रकार की जानकारी हम प्राप्त करना चाहते हैं इसकी प्राप्ति किन किन स्रोतों, साधनों एवं ढंगों का प्रयोग करते हुए हो सकती है?
5. जिस प्रकार की जानकारी हम प्राप्त करना चाहते हैं इसपर कितने समय, धन, एवं प्रयासों के व्यय की आवश्यकता होगी तथा क्या इस व्यय के अनुरूप हमें परिणाम प्राप्त हो सकेंगे?
6. जो जानकारी हम प्राप्त करना चाहते हैं उसकी प्राप्ति के लिए किये जाने वाले प्रयासों का मार्गदर्शन किस प्रकार की मान्यताओं एवं परिकल्पनाओं द्वारा किया जायेगा?
7. क्या इन परिकल्पनाओं के अन्तर्गत प्रयुक्त किए जाने वाले चरों, अवधारणाओं, वाक्य विन्यासों इत्यादि की स्पष्ट परिभाषायें एवं परिकल्पनाओं द्वारा किया जायेगा?
8. इस जानकारी से, जिसे हम प्राप्त करना चाहते हैं, कौन लोग लाभान्वित हो सकते हैं? क्या यह जानकारी प्राप्त करना इस पर होने वाले व्यय की दृष्टि से उचित है?

1.5 परिस्थिति विश्लेषण अथवा क्षेत्र निर्धारण

विषय के चुनाव के बाद हमें अध्ययन के क्षेत्र का निर्णय करना होता है बहुधा अनुसंधान प्रारम्भ करने वाले विद्यार्थी बहुत बड़ा क्षेत्र ले लेना चाहते हैं। वे भूल जाते हैं कि अनुसंधान का अर्थ है अल्प के विषय में अधिक ज्ञान प्राप्त करना अर्थात् गहन अध्ययन करना। यदि बहुत बड़ा क्षेत्र लिया जाये तो हमारा अध्ययन मात्र सतही रह जाने की आशंका है। अध्ययन क्षेत्र में विद्यार्थी को तीन प्रकार की सीमाओं पर सोचना चाहिए - 1, ज्ञान की शाखा विशेष की सीमाएँ, 2. भौगोलिक सीमाएँ, और 3. काल की सीमाएँ।

1. **ज्ञान की शाखा विशेष की सीमाएँ** - ज्ञान की प्रत्येक शाखा का विभाजन एक विशेष ढंग से होता है, जैसे - लोक प्रशासन का विद्यार्थी किसी विभाग को चुन सकता है, राजनीति शास्त्र का विद्यार्थी अध्ययन के लिए किसी दल या प्रभावी गुट को चुन सकता है और समाज विज्ञान का विद्यार्थी किसी समुदाय, जाति या जन-जाति को चुन सकता है। इस प्रकार विषय की अपनी स्वाभावित सीमाओं के अनुसार क्षेत्र का निर्णय करना चाहिए।

2. **भौगोलिक सीमाएँ** - हमें देश की भौगोलिक स्थिति पर भी विचार करना चाहिए। जैसे किसी विभाग के प्रशासन के दो अंग होते हैं - मुख्यालय और क्षेत्र। यदि विद्यार्थी मात्र मुख्यालय का अध्ययन करता है तो उसका कार्यक्षेत्र मुख्यतया राजधानी में होने की सम्भावना है, किन्तु यदि वह क्षेत्र के कार्यालयों का अध्ययन करता है तब उसे जिलों, खण्डों, ग्रामों आदि में जाने की आवश्यकता होगी। उसे चाहिए कि वह प्रारम्भ में ही निश्चित करे के किस अंग का कितना अध्ययन उसे करना है। उदाहरणार्थ, यदि उसे जिले के कार्यालयों का अध्ययन करना हो तो कुछ जिलों का अध्ययन कर सकता है। इन जिलों का चयन किस प्रकार करना चाहिए, यह एक अलग प्रश्न है। यहाँ यह समझ लेना अपने आप में परिपूर्ण है कि कुछ जिलों का गहन अध्ययन सब जिलों के छिछले अध्ययन से अधिक मूल्यवान हो सकता है। इसलिए अपने प्रयत्न और परिश्रम का व्यर्थ प्रसार नहीं करना चाहिए।

3. **काल की सीमाएँ** - सीमा का तीसरा निर्णय काल या समय के संदर्भ में करना चाहिए। समाज परिवर्तनशील है। विभागीय संगठन, लोगों की अभिवृत्तियाँ, परिजनों की अवस्था आदि सभी कुछ बदलते रहते हैं। इसलिए यह बहुत आवश्यक है कि प्रत्येक अध्ययन काल का स्पष्ट संकेत कर दिया जाए। यदि विद्यार्थी परिवर्तन की प्रक्रिया का

ही अध्ययन करना चाहे तब आवश्यक है कि यह स्पष्ट कर दिया जाए कि किस काल में होने वाले परिवर्तन का अध्ययन किया जा रहा है। जैसे यदि हम यह जानना चाहते हैं कि किसी बैंक के प्रशासन पर राष्ट्रीयकरण का क्या प्रभाव पड़ा तो हमें राष्ट्रीयकरण के पहले और बाद के उसके प्रशासन का अध्ययन करना होगा। यदि हमारा अनुमान है कि राष्ट्रीयकरण के पहले और बाद के तीन तीन वर्षों का अध्ययन हमारे उद्देश्य के लिए पर्याप्त होगा तो हमें इसका स्पष्ट संकेत कर देना चाहिए।

विषय के क्षेत्र का स्पष्टीकरण तीन स्थानों में किया जा सकता है - 1. शीर्षक, 2. भूमिका और 3. प्रथम अध्याय। इनमें से जहाँ जिस प्रकार का संकेत देना उपयुक्त हो, दे देना चाहिए। जैसे शीर्षक में काल का संकेत आसानी से दिया जा सकता है किन्तु सम्भव है दूसरे प्रकार की सीमाओं का संकेत यहाँ देना उपयुक्त न हो। तब वह स्पष्टीकरण भूमिका या प्रथम अध्याय में देना चाहिए।

1.6 उद्देश्यों का निर्धारण

विषय और उसके क्षेत्र का निर्णय करने के साथ-साथ शोध के उद्देश्यों पर गहराई से सोचना चाहिए। ज्ञान अथाह है और कोई व्यक्ति सब कुछ नहीं जान सकता, इसलिए प्रारम्भ में यह निर्णय आवश्यक है कि क्या क्या पता लगाना है?

मान लें कि राजनीति शास्त्र का एक विद्यार्थी चुनाव का अध्ययन करना चाहता है। विषय के निर्णय के साथ साथ उसने यह निर्णय कर लिया है कि उसे अगले आम चुनाव के समय किसी चुनाव क्षेत्र में अध्ययन करना है। इस प्रकार विषय और उसके क्षेत्र का निर्णय वह कर चुका है। और अब उसे उद्देश्यों का निर्णय करना है। इस प्रकार प्रश्न यह है कि वह जानना क्या चाहता है? यदि वह यह जानना चाहता है कि उस चुनाव क्षेत्र में किस उम्मीदवार को कितने वोट मिले तो यह जानकारी उसे चुनाव के प्रकाशित परिणाम से मिल सकती है। सम्भव है कि वह यह जानना चाहता है कि विभिन्न राजनीतिक दलों की क्या स्थिति रहीं। तब वह ये देखेगा कि कौन सा उम्मीदवार किस दल से खड़ा हुआ था। यदि वह यह जानना चाहे कि चुनाव की तैयारी और परिणाम में क्या संभव था तो वह विभिन्न दलों और उम्मीदवारों द्वारा किए गये चुनाव प्रचार का अध्ययन करेगा। यदि वह यह सोचता है कि वोट प्राप्त करने में राजनीतिक दल की नीति महत्वपूर्ण थी या दल का संगठन और उसके द्वारा नागरिकों की सेवा कैसी थी, तब वह इनका अध्ययन करना चाहेगा। सम्भव है वह यह जानना चाहे कि लोग अपना वोट देने का निश्चय किस प्रकार करते हैं। इस प्रकार उसका उद्देश्य वोट देने का निश्चय पर

राजनीतिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक प्रभावों का अध्ययन हो सकता है। तब वह यह सब जानना चाहेगा कि उस क्षेत्र में कौन लोग शक्तिशाली थे और उन्होंने किसे और कैसे प्रभावित किया, विभिन्न वर्गों और समूहों ने किसे वोट दिए, मतदाताओं की अभिवृत्तियाँ किस प्रकार की थीं, विभिन्न अभिवृत्तियों और वोट के निर्णय में क्या संबंध था, आदि। विद्यार्थी को चाहिए कि वह प्रारम्भ में निश्चय कर लें कि उसके अध्ययन के उद्देश्य इनमें से कौन से हैं? अपने उद्देश्यों का ब्यौरेवार वर्णन कर देना चाहिए अर्थात् उनकी एक सूची बना देनी चाहिए।

यहाँ यह स्पष्ट रहना चाहिए कि बड़े उद्देश्यों में से छोटे उद्देश्य निकलते हैं। उदाहरणार्थ यदि वह यह जानना चाहता है कि मतदान पर कौन कौन से प्रभाव पड़ते हैं तो उसे स्पष्ट करना चाहिए कि वह राजनीतिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, प्रभावों का अध्ययन करना चाहता है। यहाँ सम्भव है कि वह मतदाताओं के व्यक्तित्व का प्रभाव देखना चाहे या इसके स्थान पर वह मतदाताओं की जानकारी का प्रभाव देखना चाहे। शोधकर्ता के लिए आवश्यक है कि वह प्रारम्भ में ही सोच ले कि इनमें से किसका अध्ययन उसे करना है और वह इसको स्पष्ट कर दें। मान लें कि उसे अभिवृत्तियों का प्रभाव देखना है तो प्रश्न उठता है, कौन कौन सी अभिवृत्तियों का। अभिवृत्तियों की संख्या तो बहुत बड़ी हो सकती है, प्रश्न यह है कि शोधकर्ता इनमें से किनको चुनता है। यह बहुत महत्वपूर्ण है कि वह अध्ययन के लिए चुनी हुई अभिवृत्तियों को प्रारम्भ में ही स्पष्ट कर दें। उक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र का उद्देश्य निर्धारित करना अनिवार्य है।

1.7 सारांश

अनुसंधान अथवा शोध, मानव जाति के लिए आग और पानी जितना ही पुराना है। अनुसंधान सामाजिक विकास तथा आम आदमी के लिए बेहतर जीवन प्रदान करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। विभिन्न विशेषज्ञों ने शोध को भिन्न भिन्न प्रकार से परिभाषित किया है, पर सभी परीक्षाएं अनुसंधान को ऐसा निरपेक्ष, व्यापक तथा बौद्धिक अन्वेषण माननी है जिसमें एक दी गई समस्या से सम्बन्धित तथ्यों तथा उनमें अर्थ अथवा सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। अनुसंधान चिन्तन की एक ऐसी क्रमबद्ध तथा विशुद्ध प्रविधि है, जिसमें विशिष्ट यन्त्रों, उपकरणों तथा प्रक्रियाओं का उपयोग इस उद्देश्य से किया जाता है ताकि एक समस्या का अधिक समुचित समाधान उपलब्ध हो सके।

सामाजिक अनुसंधान में समस्या का चयन एवं उसका प्रतिपादन अथवा पहचान सामाजिक अनुसंधान के सफल संचालन के लिए अत्यन्त आवश्यक है। अनुसंधानकर्ता को समस्या का चयन करने से पूर्व उसके औचित्य एवं उपयोगिता के सम्बन्ध में विचार कर लेना चाहिए। विषय और उसे क्षेत्र का निर्णय करने के साथ-साथ शोध के उद्देश्यों पर गहराई से सोचना चाहिए।

1.8 बोध प्रश्न

1. अनुसंधान किसे कहते हैं? यह कितने प्रकार का होता है?
2. अनुसंधान समस्या की पहचान तथा अनुसंधान उद्देश्यों के निर्धारण पर एक सुबोध लेख लिखिये।

1.9 संदर्भ पुस्तकें

सामाजिक अनुसंधान शोध - एम. एल. गुप्ता, डी.डी. शर्मा

सांख्यिकीय, डा. के. एल. गुप्ता,

सांख्यिकीय विधियाँ - प्रो. एस. पी. गुप्ता

अनुसंधान परिचय - डा. बी.एल. शर्मा

अनुसंधान परिचय - श्री पारसनाथ राय

Fundamental of Statistics - S.P. Singh

Principles of Statistics.

इकाई - 2 : अनुसंधान प्रक्रिया एवं अवधारणाओं का निर्माण (Research Process and Formulation of Concepts)

इकाई की रूपरेखा-

- 2.0 उद्देश्य
- 2.1 प्रस्तावना
- 2.2 अनुसंधान के विभिन्न चरण
- 2.3 अवधारणा का अर्थ एवं परिभाषायें
 - 2.3.1 अवधारणा की विशेषतायें
 - 2.3.2 सामाजिक अनुसंधान में अवधारणा का महत्व
- 2.4 सारांश
- 2.5 बोध प्रश्न
- 2.6 सन्दर्भ पुस्तकें

2.0 : उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात पाठक जान सकेंगे -

- अनुसंधान प्रक्रिया,
- अनुसंधान प्रक्रिया में अवधारणा का महत्व,
- अवधारणा का अर्थ एवं परिभाषाएँ,
- अवधारणा की विशेषताएँ, तथा
- सामाजिक अनुसंधान में अवधारणाओं का महत्व एवं सम्प्रेषण की समस्याएँ ।

2.1 प्रस्तावना

अनुसंधान प्रक्रम का स्वरूप सभी विज्ञानों में एक समान नहीं होता। अनुसंधान प्रक्रिया एक चरणबद्ध एवं आपस में संबंधित क्रियाओं का संयोजन है जो कि शोध प्रश्न का सही उत्तर ढूँढने में सहायक होती है। भौतिक विज्ञान के अनुसंधानों के प्रक्रम सामाजिक विज्ञान में होने वाले अनुसंधानों के प्रक्रम से कुछ भिन्न रहते हैं। अनुसंधान

के प्रक्रम को नियमबद्ध रूप से क्रियान्वित करने के पश्चात् प्राप्त निष्कर्षों का प्रतिवेदन ही अन्ततः अनुसंधान रिपोर्ट के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

किसी भी वैज्ञानिक अनुसंधान में अवधारणाओं का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान होता है। तथ्यों के एक वर्ग या समूह की संक्षिप्त परिभाषा को अवधारणा कहा जाता है। प्रत्येक विज्ञान को अपने ज्ञान का विकास करने के लिए कुछ निश्चित प्रघटनाओं का अध्ययन एवं अवलोकन करना होता है। यह अध्ययन करते हुए जब वह यथार्थ के कुछ निश्चित पक्षों के बारे में सूचनायें प्राप्त करता है तो वे सूचनायें तथ्य कहलाती हैं। लेकिन कोई भी वैज्ञानिक केवल तथ्यों का संकलन मात्र ही नहीं करता बल्कि उन तथ्यों की समानताओं, असमानताओं, विशिष्टताओं, अविशिष्टताओं एवं लक्षणों आदि के आधार पर कुछ प्रस्थापनाओं का निर्माण करता है। ये प्रस्थापनायें तथ्यात्मक अध्ययनों, सामान्यीकरणों आदि की कसौटी पर रखी जाती हैं एवं तथ्यों द्वारा सत्य सिद्ध होने पर ही इन्हें सिद्धान्त का दर्जा दिया जाता है।

2.2 अवधारणा का अर्थ एवं परिभाषायें

अवधारणा को परिभाषित करना अत्यन्त कठिन कार्य है क्योंकि अवधारणा का संबंध एक अमूर्त सामान्य विचार से होता है जो कि किसी घटना, प्रक्रिया, एक प्रकार के अनुरूप तथ्यों के विषय में सोच विचार कर व उसके विभिन्न तत्वों के परस्पर संबंधों को ध्यान में रखकर बनाया जाता है।

साधारण शब्दों में विचरण, जिसका अवलोकन किया जाना है, उसको परिभाषित करते हैं। ये वे चर होते हैं जिनके मध्य आनुसंगिक संबंधों की स्थापना की जाती है। जब इन प्रस्थापनाओं में तार्किक संबंध स्थापित किया जाता है तो सिद्धान्त का जन्म होता है। अवधारणायें घटनाओं को समझने के तरीके हैं। वैज्ञानिक अवधारणायें अमूर्तिकृत होते हैं जो कि चुने हुए व अधिसीमित क्षेत्र रखने वाले होते हैं। अवधारणायें न केवल वैज्ञानिक ढंग के प्रयोग के लिए आवश्यक हैं, बल्कि वे प्रत्येक मानवीय क्रिया के क्षेत्र में संचार तथा विचारों के लिए आवश्यक हैं। वैज्ञानिक अवधारणा अमूर्त होती है जो कि चुने हुए व अतिसीमित क्षेत्र से सम्बन्धित होती है। अवधारणाओं को हम वस्तुओं व घटनाओं को समझने के लिए प्रयुक्त किए जाने वाले पद के नाम से भी संबोधित कर सकते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि अवधारणा एक अमूर्त सामान्य विचार होता है जो कि किसी घटना प्रक्रिया एवं एक प्रकार के अनुरूप तथ्यों के विषय में विचार कर उसके विभिन्न तत्वों के परस्पर संबंधों को ध्यान में रखकर बनाया जाता है।

2.2.1 अवधारणा की विशेषतायें (Characteristics of a Concept)

अवधारणा वैज्ञानिक विश्लेषण की एक इकाई है। इस भूमिका को यह ठीक से पूरा कर सके, इसके लिए इसमें कुछ गुणों या विशेषताओं का होना आवश्यक है।

कार्लो लेरट्रसी ने अवधारणा के निम्नलिखित पांच गुणों का उल्लेख किया है -

1. **उपयुक्तता** - अवधारणा का चयन इस प्रकार होना चाहिए कि वह अपना ध्यान अध्ययन के केन्द्रीय विषय पर केन्द्रित करें। इसमें अनुसंधानकर्ता को देखना होगा कि उसके सिद्धान्त के दृष्टिकोण से निम्न वर्ग या मध्यम वर्ग में किन किन लोगों को रखा जाना उपयुक्त होगा।

2. **स्पष्टता** - अवधारणा की परिभाषा परिशुद्ध एवं स्पष्ट होनी चाहिए जैसे नैतिकता अनैतिकता, अपराध के अलग अलग व अनेक अर्थ लगाए जा सकते हैं। इसलिए अनुसंधानकर्ता को यह स्पष्ट करना चाहिए कि वह क्या अर्थ लगा रहा है?

3. **मापनशीलता** - जिस सीमा तक अवधारणा को मात्रात्मक रूप दिया जा सकेगा उसी सीमा तक वह मापा जा सकेगा और परिशुद्धता की प्राप्ति में सहायक होगा। इसलिए यथासम्भव अवधारणा ऐसी होनी चाहिए कि उसे मापा जा सके।

4. **तुलनात्मकता** - एक ही प्रकार की समस्त घटनायें एक जैसी ही नहीं होती हैं, जैसे अपराध में उठाईगीरी व मारपीट से लेकर हत्या तक सम्मिलित है। अनुसंधानकर्ता को यह प्रयत्न करना चाहिए कि उसकी अवधारणा द्वारा संवर्ग के साथ साथ घटना का स्तर भी निश्चित हो जाए, तभी वह तुलना कर सकेगा।

5. **पुनर्परीक्षण** - वैज्ञानिक सिद्धान्तों के लिए यह आवश्यक है कि उनका परीक्षण व पुनर्परीक्षण हो सकें। अनुसंधानकर्ता को अपनी अवधारणाओं का चुनाव इस प्रकार करना चाहिए कि अन्य अनुसंधानकर्ता भी उनका परीक्षण व पुनर्परीक्षण कर सकें।

लेकिन इनके अतिरिक्त भी अवधारणाओं की निम्न सामान्य विशेषताओं का उल्लेख किया जा सकता है -

1. अवधारणायें या सम्प्रत्य सामान्यतः तथ्यों पर आधारित एक प्रकार के विचार होते हैं। जो तथ्यों के समूह या वर्ग के संबंध में जानकारी प्रदान करते हैं।

2. गुडे एवं हैट्ट लिखते हैं कि अवधारणायें किसी घटना का उल्लेख मात्र नहीं होती बल्कि उससे उत्पन्न होने वाले इन्द्रिय अनुभवों तथा प्रत्यक्ष ज्ञान द्वारा उत्पन्न

ही गई एक तार्किक रचना होती है।

3. अवधारणाएँ सम्पूर्ण घटना का नहीं अपितु उसे एक स्वरूप मात्र का प्रतिनिधित्व करती हैं।
4. यह एक या दो अत्यन्त अर्थपूर्ण शब्दों में ही व्यक्ति किये जाने वाला विचार होता है। एक प्रकार से यह परिभाषा के रूप में व्यक्त किया जा सकने वाला अमूर्तिकरण होता है।
5. प्रत्येक अवधारणा का अपना एक विशिष्ट अर्थ होता है और वह सिद्धान्त के स्तर से निम्न स्तर का अमूर्तिकरण या सामान्यीकरण होता है।
6. वैज्ञानिकों द्वारा प्रयुक्त अवधारणाएँ सामान्यतः जटिल अथवा कठिन होने के कारण उनका उपयोग भी विशेष अर्थ व परिस्थिति में किया जाता है।
7. अवधारणाओं में विकास के साथ परिवर्तन भी होता रहता है। वे अपनी प्रकृति, विशेषताएँ अथवा अध्ययन केन्द्र बिन्दु समय समय पर बदल भी सकते हैं।
8. अवधारणा का उद्देश्य यथार्थ को समझने एवं उसे स्पष्ट करने में सामाजिक वैज्ञानिक की सहायता करना होता है।
9. जब अवधारणाओं को निरीक्षण की इकाइयाँ तथा उनकी विशेषताओं के आधार पर वर्गीकृत करने हेतु प्रयोग में लाते हैं तो उसे हम चर कहते हैं। चर अवधारणा की माध्यम विमति है। उदाहरणार्थ, दुर्खीम के सामाजिक विघटन के सिद्धान्त में मानव जनसंख्या को समानता, एकता व विचलन के विरोध के आधारों पर वर्गीकृत किया गया है।
10. अवधारणाएँ उपकल्पना निर्माण में सहयोगी होती हैं। टी वी बोटोगार के अनुसार नई अवधारणा दो उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक होती है। प्रथम, अब तक पृथक् पृथक् रूप में प्रकट न होने वाली घटनाओं के वर्गों को ये वर्गीकृत अथवा विभाजित करते हैं तथा द्वितीय वे घटनाओं के संक्षिप्त वर्णन व आगे के विश्लेषण में सहायक होती हैं।
11. अवधारणाएँ “सिद्धान्त” का अनिवार्य अंग होती हैं क्योंकि अवधारणाओं के आधार पर ही “सिद्धान्त निर्माण” की नींव रखी जाती है।
12. एक अवधारणा न तो सत्य होती है न असत्य क्योंकि वह तो केवल इन्द्रिय तथ्यों का नामोल्लेख या संकेतीकरण ही होता है। यह मानव इन्द्रियों को प्रभावित करने

ज्ञान के सन्दर्भ में है जो उस कथन के बारे में प्राप्त है, जिससे सम्भावित तथ्य का मूल्यांकन किया जाना है। सम-सम्भावना का इस अवधारणा का निदर्शन प्राप्त करने की प्रविधि से निकट का सम्पर्क है।

3. **वैधता** - सामाजिक विज्ञानों में वैधता की अवधारणा की परिभाषा शोधकर्ता द्वारा परिमाण की वह मात्रा प्राप्त करना है जिसे वह प्राप्त करना चाहता था।

4. **विश्वसनीयता** - सामाजिक विज्ञानों में विश्वसनीयता का अत्यन्त महत्व है। विश्वसनीयता यह होती है। जिन पद्धतियों का प्रयोग अनुसंधानकर्ता द्वारा किया गया है। यदि विभिन्न समयों पर उन्हीं का फिर प्रयोग किया जाय तो वे समान परिणाम प्रस्तुत करेंगी।

यदि आप निम्नांकित रणनीतिक सुझावों का अमल करें तो श्रवण क्षमता एवं कुशलता में वृद्धि की अपेक्षा की जा सकती है।

अतः सामाजिक अनुसंधान में अनेक स्वीकृत अवधारणायें हैं, जिनके प्रयोग के बिना अनुसंधान की कल्पना ही नहीं की जा सकती है। इन अवधारणाओं की स्पष्टता तथा व्यावहारिक उपयोगिता के ज्ञान के अभाव में किसी भी वैज्ञानिक के लिए शोध कार्य सम्भव नहीं हो सकता। प्रत्येक वैज्ञानिक को अपना अनुसंधान कार्य करने से पूर्व अवधारणाओं की स्पष्टता एवं उनके व्यावहारिक उपयोग व प्रयोग का पर्याप्त ज्ञान अपेक्षित होता है।

2.3 सारांश

अनुसंधान प्रक्रिया एक चरणबद्ध एवं आपस में संबंधित क्रियाओं का संयोजन है जो कि शोध प्रश्न का सही उत्तर ढूँढने में सहायक सिद्ध होता है।

किसी भी वैज्ञानिक अनुसंधान में अवधारणाओं का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान होता है। तथ्यों के एक वर्ग या समूह की संक्षिप्त परिभाषा की अवधारणा कहा जाता है। अवधारणा, जिन चरों का अवलोकन किया जाना है, उसको परिभाषित करते हैं। ये वे चर होते हैं जिनके मध्य आनुशंगिक संबंधों की स्थापना की जाती है।

2.4 बोध प्रश्न

1. अवधारणा को परिभाषित कीजिए तथा एक आदर्श अवधारणा के लक्षणों का सोदाहरण वर्णन कीजिए।

2. सामाजिक शोध में अवधारणा के महत्व पर प्रकाश डालिये।

2.5 संदर्भ पुस्तकें

सामाजिक अनुसंधान शोध - एम्. एल. गुप्ता, डी.डी. शर्मा

सांख्यिकीय, डा. के. एल. गुप्ता,

सांख्यिकीय विधियाँ - प्रो. एस. पी. गुप्ता

अनुसंधान परिचय - डा. बी.एल. शर्मा

अनुसंधान परिचय - श्री पारसनाथ राय

Fundamental of Statistics - S.P. Singh

Principles of Statistics.

इकाई - 3 : अनुसंधान प्ररचना (Exploratory, Descriptive and Experimental Research Design)

इकाई की रूपरेखा-

- 3.0 उद्देश्य
- 3.1 प्रस्तावना
- 3.2 अनुसंधान प्ररचना का अर्थ एवं परिभाषा
 - 3.2.1 अनुसंधान प्ररचना के उद्देश्य
 - 3.2.2 अनुसंधान प्ररचना (अभिकल्प) की विशेषताएँ
 - 3.2.3 अनुसंधान प्ररचना की विषय वस्तु
- 3.3 अनुसंधान प्ररचना के चरण
 - 3.3.1 अनुसंधान प्ररचना का वर्गीकरण
- 3.4 प्रतिपादनात्मक अथवा अन्वेषणात्मक अनुसंधान
 - 3.4.1 अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना के उद्देश्य
- 3.5 विवरणात्मक अथवा निदानात्मक अनुसंधान प्ररचना
 - 3.5.1 विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना के उद्देश्य
- 3.6 प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना
 - 3.6.1 प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना के प्रकार
 - 3.6.2 केवल “पश्चात माप” वाले प्रयोग
 - 3.6.3 “पूर्व और पश्चात माप” वाले प्रयोग
 - 3.6.4 प्रयोगात्मक अभिकल्प की आलोचना
- 3.7 अन्वेषणात्मक अथवा निरूपणात्मक शोध प्ररचना
- 3.8 सारांश
- 3.9 बोध प्रश्न
- 3.10 संदर्भ पुस्तकें

3.0 : उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात पाठक जान सकेंगे कि -

अनुसंधान प्ररचना का अर्थ एवं परिभाषायें,

- अनुसंधान प्ररचना का उद्देश्य, विशेषताएं एवं विषयवस्तु,
- अनुसंधान प्ररचना के चरण एवं वर्गीकरण , तथा
- अनुसंधान प्ररचना के प्रकार : अन्वेषणात्मक अनुसंधान रचना, विवरणात्मक अनुसंधान रचनाएं एवं प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना ।

3.1 प्रस्तावना

कोई अनुसंधान या अन्वेषण मनगढंत नहीं हो सकता। अनुसंधान या अन्वेषण को क्रमबद्ध एवं प्रभापूर्ण ढंग से समय, श्रम एवं लागत के न्यूनतम प्रयासों से संचालित करने से एक अभिकल्प या प्ररचना का निर्माण होता है। जहोदा एवं कुक के अनुसार “किसी ढंग के प्रयोग द्वारा अनिश्चितता को पूर्ण रूप से समाप्त नहीं किया जा सकता, किन्तु क्रमबद्ध रूप से वैज्ञानिक ढंग का प्रयोग करते हुए अनिश्चितता के इन तत्वों को कम किया जा सकता है। जो सूचना की कमी से उत्पन्न होती हैं अनुसंधान के लिए प्रस्तावित प्रश्नों के विकल्पीय उत्तरों की उपयुक्तता के विषय में निर्णय लेने के लिए आवश्यक परिणामों का संयोग पर आधारित ढंग का प्रयोग करते हुए क्रमबद्ध रूप से यथासम्भव अधिक से अधिक नियंत्रित ढंग का प्रयोग करते हुए प्राप्त किया जाता है। समस्या प्रतिपादन के अन्तर्गत हम सूचना के इन प्रकारों का विशिष्ट विवरण प्रस्तुत करते हैं जो हमें यह आश्वासन देते हैं कि प्रस्तावित प्रश्नों के उत्तर प्रदान करने के लिए इच्छित एवं आवश्यक प्रमाण उपलब्ध हो जायेंगे जबकि अनुसंधान प्ररचना का निर्माण करते हुए हम आवश्यक एवं इच्छित प्रमाणों के त्रुटियों से यथासम्भव बचना तथा प्रयासों, समय एवं लागत को कम करना चाहते हैं।”

इस प्रकार अनुसंधान कार्य करने की योजना या अनुसंधान प्रक्रिया की रूपरेखा को ही अनुसंधान अभिकल्प कहा जाता है। इसका स्वरूप, समस्या एवं प्राक्कल्पना के निर्धारण के अनुसार ही होता है। शोध अभिकल्प तथ्यों के संकलन एवं विश्लेषण से संबंधित, दशाओं को इस तरह आयोजित करता है कि वे कार्य विधि में चित करती हुई शोध के प्रयोजन के साथ संगतिपूर्ण हो सकें।

3.2 अनुसंधान प्ररचना का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning of Research Design)

अन्वेषण प्रारम्भ करने से पूर्व हम प्रत्येक अनुसंधान समस्या के विषय में सोच विचार करने के पश्चात यह निर्णय लें कि हमें किन ढंगों एवं कार्य विधियों का प्रयोग

करना है तो नियंत्रण को लागू करने की आशा बढ़ जाती है। अनुसंधान व प्ररचना निर्णय की वह प्रक्रिया है जो उन परिस्थितियों के पूर्व किये जाते हैं जिनमें ये निर्णय का रूप लेते हैं। एक अनुसंधान प्ररचना आंकड़ों के एकत्रीकरण एवं विश्लेषण के लिए दशाओं का प्रबन्ध करती है। जो अनुसंधान के उद्देश्यों की संगतता को कार्यरितियों में आर्थिक नियन्त्रण के साथ सम्मिलित करने का उद्देश्य रखती है।

एफ.एन. कर्लिजर लिखते हैं कि “अनुसंधान प्ररचना अन्वेषण की योजना, संरचना एवं एक रणनीति है जिसकी रचना इस प्रकार की जाती है। कि अनुसंधान प्रश्नों के उत्तर प्राप्त हो सकें तथा विविधताओं को नियंत्रित किया जा सके। यह प्ररचना या योजना अनुसंधान को सम्पूर्ण रूपरेखा अथवा कार्यक्रम है, जिसके अन्तर्गत प्रत्येक वस्तु की रूपरेखा सम्मिलित होती है जो अनुसंधानकर्ता उपकल्पनाओं के निर्माण एवं उनके परिचालनात्क अभिप्रायों से लेकर आँकड़ों के अन्तिम विश्लेषण तक करता है।”

निष्कर्षतः अनुसंधान प्ररचना एक ऐसी योजना या रूपरेखा है जो समस्या के प्रतिपादन से लेकर अनुसंधान प्रतिवेदन के अन्तिम चरण तक के विषय में विकल्पों पर ध्यान देकर इस प्रकार से निर्णय लेती है कि न्यूनतम प्रयासों, समय एवं लागत के व्यय से अधिक अनुसंधान उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके।

3.2.1 अनुसंधान प्ररचना के उद्देश्य (Objectives of Research Design)

सामान्यतः किसी भी अनुसंधान में व्यावहारिक अनुसंधान समस्या, वैज्ञानिक अथवा बौद्धिक अनुसंधान समस्या एवं सैद्धान्तिक व्यवस्थाओं को विकसित करने की समस्याएँ हो सकती हैं। व्यावहारिक अनुसंधान समस्याएं, समस्याओं के समाधान एवं सामाजिक नीतियों के निर्धारण में सहायता प्रदान करती हैं, जबकि वैज्ञानिक एवं बौद्धिक अनुसंधान का सम्बन्ध मौलिक वस्तुओं से होता है। इसके अलावा कुछ अनुसंधान ऐसे होते हैं जिनका उद्देश्य केवल सैद्धान्तिक व्यवस्थाओं का विकास करना होता है, जिनके आधार पर विचारों का परीक्षण किया जाता है। सामान्यतः प्ररचना के दो प्रमुख उद्देश्य होते हैं - 1. अनुसंधान समस्या के उत्तर प्रदान करना, एवं 2. विविधताओं का नियन्त्रित करना।

अनुसंधान प्ररचना स्वयं इन उद्देश्यों की पूर्ति नहीं करती वरन् ये उद्देश्य अनुसंधानकर्ता द्वारा ही प्राप्त किए जाते हैं। अनुसंधान प्ररचना अनुसंधानकर्ता की इस बात में अवश्य सहायता करती है कि वह अनुसंधान प्रश्नों के उत्तर प्राप्त कर ले तथा विविध त्रुटियों का पता लगा सके।

1. **अनुसंधान समस्या के उत्तर प्रदान करना** - यह अनुसंधान प्ररचना यथा सम्भव प्रामाणिकता, विषयात्मकता, यथार्थता, निश्चयात्मकता एवं बचत के साथ साथ प्राप्त करने में सहायता पहुँचाती है। ऐसा करने के लिए अनुसंधान प्ररचना यथासम्भव उन समस्त प्रमाणों को एकत्रित करने का प्रयास करते हैं जो समस्या से सम्बन्धित हों। अनुसंधान उपकल्पनाओं के रूप में समस्या को इस तरह प्रस्तुत किया जाता है कि इनका आनुभाविक परीक्षण या जाँच सम्भव हो सके। जितनी सम्भावनाएं परीक्षण की होती है उतने प्रकार की अनुसंधान प्ररचनाएं तैयार की जा सकती हैं। इन उपकल्पनाओं के परीक्षण परिणाम इस बात पर निर्भर करते हैं कि पर्यवेक्षण करने और परिणाम निकालने के लिए किन किन ढंगों या प्रविधियों का प्रयोग किया जा रहा है। विश्वस्तरीय परिणाम प्राप्त करने के लिए चरों के मध्य पाए जाने वाले सम्बन्धों के उपयुक्त सन्दर्भ ढाँचे क स्थापना की जाती है।

2. **विविधताओं को नियन्त्रित करना**- अनुसंधान प्ररचना विविधताओं को नियन्त्रित करने में भी अनुसंधानकर्ता की सहायता करती है। अनुसंधान के समय विविध त्रुटियों की सम्भावना बनी रहती है। जिन्हें कम करने के दो प्रमुख ढंग हैं -

(क) अनुसंधान परिस्थितियों को अधिक से अधिक नियन्त्रित करते हुए परिमाण के कारण उत्पन्न हुई त्रुटियों को यथा सम्भव कम कीजिए।

(ख) मापों की विश्वसनीयता को बढ़ाइये।

वस्तुतः अनुसंधान प्ररचना के नियन्त्रण का कार्य तकनीकी है। इस अर्थ में अनुसंधान प्ररचना एक नियन्त्रणकारी व्यवस्था है। इसके पीछे पाया जाने वाला प्रमुख "सांख्यिकी सिद्धान्त" यह है कि 'क्रमबद्ध विविधताओं को अधिक से अधिक नियन्त्रित कीजिए तथा विविध त्रुटियों को कम से कम कीजिए।' अनुसंधान प्ररचना के प्रथम उद्देश्य में अनुसंधानकर्ता अपने अनुसंधान के लिए चयनित समस्या से सम्बन्धित प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करता है और अनुसंधान प्ररचना उसे ये उत्तर प्रामाणिक, वैश्वयिक एवं यथार्थ रूप में प्रस्तुत करती है। इसी प्रकार दूसरे उद्देश्य के द्वारा अनुसंधानकर्ता अनुसंधान के दौरान उपस्थित विविधताओं को नियन्त्रित करता है। यह नियन्त्रण भी उसे अनुसंधान प्ररचना से प्राप्त होता है।

3.2.2 अनुसंधान प्ररचना (अभिकल्प) की विशेषताएँ (Characteristics of Research)

अनुसंधान प्ररचना की अनिवार्य एवं आधारभूत विशेषताओं का निम्नांकित प्रकार

से उल्लेख किया जा सकता है -

1. अनुसंधान प्ररचना का सम्बन्ध सामाजिक अनुसंधान से होता है।
2. अनुसंधान प्ररचना अनुसंधानकर्ता को अनुसंधान की एक निश्चित दिशा का बोध कराती है। इस अर्थ में अनुसंधान प्ररचनाएं एक प्रकार की दिग्दर्शक हैं।
3. अनुसंधान प्ररचना की मुख्य विशेषता सामाजिक घटनाओं की जटिल प्रकृति को सरल रूप में प्रस्तुत करना है।
4. अनुसंधान प्ररचना अनुसंधान की वह रूपरेखा है जिसकी रचना अनुसंधान कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व की जाती है।
5. अनुसंधान प्ररचना की एक और विशेषता अनुसंधान प्रक्रिया के दौरान आगे आने वाली परिस्थितियों को नियंत्रित करना एवं अनुसंधान कार्य को सरल बनाना है।
6. अनुसंधान प्ररचना न केवल मानवीय श्रम को कम करती है बल्कि वह समय एवं लागत को भी कम कर के अनुसंधान के अधिकतम उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायता करती है।
7. अनुसंधान प्ररचना अनुसंधान के दौरान आने वाली कठिनाइयों को भी कम करने में अनुसंधानकर्ता की सहायता करती है।
8. अनुसंधान प्ररचना का चयन सामाजिक अनुसंधान की समस्या एवं उपकल्पना की प्रकृति के आधार पर किया जाता है।
9. अनुसंधान प्ररचना समस्या की प्रतिस्थापना से लेकर अनुसंधान प्रतिवेदन के अन्तिम चरण तक के विषय में सभी उपलब्ध विकल्पों के बारे में व्यवस्थित रूप में श्रेष्ठ निर्णय लेने में सहायता करती हैं।

3.2.3 अनुसंधान प्ररचना की विषयवस्तु (Components of Research Design)

एक सामान्य अनुसंधान अभिकल्प में निम्नलिखित विषयों का उल्लेख किया जाता है।

1. **शोध का विषय** - ऐसा करने से अध्ययन के विषय का स्पष्ट ज्ञान हो जाता है। तथा उसके क्षेत्र एवं सीमाओं का पता चल पाता है। इसके स्वरूप निर्धारण के लिए सरकारी, गैर-सरकारी, व्यक्तिगत पुस्तकालयों या परिवेश सम्बन्धी उपलब्ध अध्ययन के

स्रोतों का अध्ययन करते हैं।

2. **अध्ययन की प्रकृति** - इसमें शोध का प्रकार एवं स्वरूप निर्धारित करना पड़ता है। यह सांख्यिकीय, व्यक्तिगत, तुलनात्मक, प्रयोगात्मक, विश्लेषणात्मक, अन्वेषणात्मक या मिश्रित प्रकार का हो सकता है।

3. **प्रस्तावना एवं पृष्ठभूमि** - इसमें उस विषय को चुनने की पृष्ठभूमि बतानी पड़ती है तथा उसकी शुरूआत करनी पड़ती है। इससे पता चल जाता है कि शोधकर्ता की उक्त विषय में रूचि, समस्या एवं स्थिति क्या है? अब तक प्राप्त परिणामों में व्याप्त कमियों एवं त्रुटियों को दूर किया जाना किस प्रकार सम्भव एवं वांछनीय है? आदि बातों का भी इसमें समावेश होता है।

4. **उद्देश्य** - इसमें अनुसंधानकर्ता अपने उद्देश्य बताता है, उप-उद्देश्य या लक्ष्य भी प्रकट करता है अर्थात् प्रमुख एवं सहायक उद्देश्यों का उल्लेख करता है। ये प्रायः चार या पाँच वाक्यों में स्पष्ट किए जाते हैं।

5. **अध्ययन का सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं भौगोलिक सन्दर्भ** - इसमें शोधकर्ता स्पष्ट करता है कि वह किस प्रकार के समाज एवं संस्कृति के पर्यावरण में रह रहा है तथा उसके प्रमुख मूल्य, परम्पराएँ, मान्यताएँ आदि क्या हैं? इसके सन्दर्भ में राजनीतिक व्यवस्था, व्यवहार एवं मूल्य, भौगोलिक सन्दर्भ में मानव व्यवहार को प्रभावित करने वाले तथ्य, स्थिति, जलवायु, प्राकृतिक बनावट, प्रकृति, उत्पादन आदि आते हैं। यदि सम्भव हो तो आर्थिक परिवेश का भी परिचय दे दिया जाना चाहिए। राजनीतिक शोध को सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं औद्योगिक आयामों में समायोजित करना चाहिए।

6. **अवधारणा, चर एवं प्राक्कल्पना**- इस क्षेत्र में सबसे पहले यदि कोई सिद्धान्त या अवधारणात्मक रूपरेखा के आधार बनाया गया है तो उसका उल्लेख कर प्रमुख अवधारणाओं को स्पष्ट किया जाना चाहिए। जैसे यदि 'भ्रष्टाचार' की अवधारणा को प्रयुक्त किया गया है तो यह बताया जाना चाहिए कि उसे किन अर्थों के प्रयोग किया गया है। इसी तरह यह बताया जा सकता है कि किन किन चरों को केन्द्रीय विषय बनाया जा रहा है तथा उनसे संबंधित कौन कौन सी प्राक्कल्पनाओं का निर्माण किया गया है।

7. **काल निर्देश** - इसमें यह बताया जाता है कि शोध किस समय, काल या परिवेश से संबंधित है। समय राजनीतिक अनुसंधान में एक अतिशय महत्वपूर्ण कारक होता है।

8. **तथ्य-सामग्री के चयन के आधार एवं संकलन प्रविधियाँ** - इसमें तथ्य सामग्री के चयन के आधार बताए एवं निश्चित किए जाते हैं। यहाँ उनका औचित्य भी स्पष्ट किया जाना चाहिए। ये आधार प्रलेखीय, भौतिक अथवा वैचारिक प्रेक्षणीय आदि हो सकते हैं। तथ्य संकलन की प्रविधियाँ मानवीय या मशीनी हो सकती हैं। अवलोकन, प्रश्नावली, साक्षात्कार, प्रक्षेपण आदि युक्तियों के द्वारा तथ्य एकत्र किये जा सकते हैं।

9. **विश्लेषण एवं निर्वचन** - सामग्री के एकत्रित होने के बाद उसके सारणीयन, वर्गीकरण एवं विश्लेषण प्रणालियों का संकेत दिया जा सकता है। उसके निर्वचन में कौन सी पद्धतियों का सहारा लिया जाएगा अथवा उसकी सामान्यतया या प्रामाणिकता की मात्रा क्या होगी, आदि बातों का उल्लेख न्यूनाधिक मात्रा में किया जा सकता है।

10. **सर्वेक्षण काल एवं धन** - इसमें यह भी संकेत दिया जाना चाहिए कि सर्वेक्षण कितने समय के भीतर सम्पन्न हो जायेगा? इसी प्रकार शोध में लगने वाले समय एवं धन का अनुमान भी बताया जाना चाहिए।

एक अच्छे अन्वेषण-रूपोंकन या प्ररचना में अनेक विशेषतायें पाई जाती हैं। यह शोध प्रक्रिया के दौरान आवश्यकतानुसार संशोधित एवं परिवर्तित किए जा सकने के कारण लचीला होता है। शोध प्ररचना सभी उपलब्ध सामग्री साधनों एवं स्रोतों का अध्ययन करने के पश्चात ही बनाई जाती है। किन्तु ऐसा करते समय अन्य विषयों या अनुशासनों की सामग्री यथावत ग्रहण नहीं की जाती। उसमें अवधारणाओं को प्रयोग करते समय राजनीतिक सन्दर्भ का ध्यान रखा जाता है। चरों का स्वरूप स्पष्ट कर देने से शोधकर्ता अपने मूल्यों को पृथक रखने में सफल हो जाता है। और अनुसंधान मूल्य-मुक्त बन जाता है। अनुसंधान प्रकल्प की उपयुक्त सभी विशेषतायें एवं अंश किन्हीं कठोर एवं निर्धारित मार्गों पर चलने को बाध्य नहीं है। नई स्थितियों, दशाओं एवं विशेषताओं के दृष्टिगोचर हो जाने पर उनमें स्पष्टीकरण देते हुए परिवर्तन कर लिया जाता है। वस्तुतः राजनीतिक विषयक अनुसंधान प्रकल्प में ऐसा करना आवश्यक भी हो जाता है।

3.3 अनुसंधान प्ररचना के चरण (Steps in Research Design)

अनुसंधान प्ररचना के प्रमुख चरण निम्नांकित हैं -

1. अनुसंधान समस्या का स्पष्ट एवं विस्तृत ज्ञान अनुसंधानकर्ता को होना चाहिए।
2. अनुसंधान कर्ता को अध्ययन से विशिष्ट उद्देश्यों की भी जानकारी होनी चाहिए।
3. अनुसंधानकर्ता को उन ढंगों एवं कार्यविधियों की भी स्पष्ट एवं विस्तृत जानकारी

होनी चाहिए जिनका प्रयोग करते हुए अनुसंधान के लिए आवश्यक आँकड़ों के संग्रह के मार्ग में आने वाली विभिन्न समस्याओं का समाधान प्रस्तुत किया जाएगा।

4. आँकड़ों के संग्रह के लिए विस्तृत एवं सुनियोजित योजना का उपलब्ध होना भी आवश्यक है।
5. आँकड़ों के विश्लेषण के लिए भी उपयुक्त योजना का प्राप्त होना आवश्यक है।

इस प्रकार अनुसंधान प्ररचना की रचना के निम्नांकित चरण होते हैं जो अनुसंधान के अनिवार्य अंग हैं -

1. अनुसंधान प्ररचना में सर्वप्रथम अध्ययन समस्या का प्रतिपादन किया जाना चाहिए।
2. वर्तमान में जो अनुसंधान कार्य किया जा रहा है उसको अनुसंधान समस्या से स्पष्ट रूप से सम्बन्धित करना अनुसंधान प्ररचना का दूसरा मुख्य कारण है।
3. वर्तमान में हमें जो अनुसंधान कार्य करना है उसकी सीमाओं को स्पष्ट रूप से निर्धारित करना।
4. अनुसंधान प्ररचना का चौथा चरण अनुसंधान के विभिन्न क्षेत्रों को विस्तृत करना है।
5. अनुसंधान प्ररचना के इस चरण में हम अनुसंधान परिणामों के प्रयोग के विषय में निर्णय लेते हैं।
6. इसके पश्चात हमें अवलोकन, विवरण तथा परिमाण के लिए उपयुक्त चरों का चयन करना चाहिए तथा इन्हें स्पष्ट रूप से परिभाषित करना चाहिए।
7. तदुपरान्त अध्ययन क्षेत्र एवं समग्र का उचित चयन एवं इनकी परिभाषा प्रस्तुत करना चाहिए।
8. इसके बाद अध्ययन के प्रकार एवं विषय क्षेत्र के विषय में विस्तृत निर्णय लेने चाहिए।
9. अनुसंधान प्ररचना के आगामी चरण में हमें अपने अनुसंधान के लिए उपयुक्त विधियों एवं प्राविधियों का चयन करना चाहिए।
10. इसके बाद अध्ययन में निहित मान्यताओं एवं उपकल्पनाओं का स्पष्ट उल्लेख करना चाहिए।

11. बाद में उपकल्पनाओं की परिचालनात्मक परिभाषा करते हुए उसे इस रूप में प्रस्तुत करना चाहिए कि वह परीक्षण के योग्य हो।
12. अनुसंधान प्ररचना के आगामी चरण के रूप में हमें अनुसंधान के दौरान प्रयुक्त किए जाने वाले प्रलेखों, प्रतिवेदन एवं अन्य प्रपत्रों का सिंहावलोकन करना चाहिए।
13. तदुपरान्त अध्ययन के प्रभावपूर्ण उपकरणों का चयन एवं इनका निर्माण करना तथा इनका व्यवस्थित पूर्व परीक्षण करना।
14. आँकड़ों के एकत्रीकरण का सम्पादन किस प्रकार किया जाएगा इसकी विस्तृत व्यवस्था का उल्लेख करना।
15. आँकड़ों के सम्पादन की व्यवस्था के उल्लेख के बाद उनके वर्गीकरण हेतु उचित श्रेणियों का चयन किया जाना एवं उनको परिभाषित करना।
16. आँकड़ों के संकेतीकरण के लिए समुचित व्यवस्था का विवरण तैयार करना।
17. आँकड़ों को प्रयोग योग्य बनाने हेतु सम्पूर्ण प्रक्रिया की समुचित व्यवस्था का विकास करना।
18. आँकड़ों के गुणात्मक एवं संख्यात्मक विश्लेषण के लिए विस्तृत रूपरेखा तैयार करना।
19. इसके पश्चात अन्य उपलब्ध परिणामों की पृष्ठभूमि में समुचित विवेचन की कार्यविधियों का उल्लेख करना।
20. अनुसंधान प्ररचना के इस चरण में हम अनुसंधान प्रतिवेदन के प्रस्तुतीकरण के बारे में निर्णय लेते हैं।
21. अनुसंधान प्ररचना का यह चरण सम्पूर्ण अनुसंधान प्रक्रिया में लगने वाला समय, धन एवं मानवीय श्रम का अनुमान लगाने का है। इसी दौरान हम प्रशासकीय व्यवस्था की स्थापना एवं विकास का अनुमान भी लगाते हैं।
22. यदि आवश्यक हो तो पूर्व परीक्षणों एवं पूर्वगामी अध्ययनों का प्रावधान करना।
23. अनुसंधान प्ररचना के इस चरण में हम कार्यविधियों से सम्बन्धित सम्पूर्ण प्रक्रिया, नियमों, उपनियमों, को विस्तारपूर्वक तैयार करते हैं।

24. अनुसंधान के इस चरण में हम कर्मचारियों, अध्ययनकर्ताओं के प्रशिक्षण के ढंग एवं कार्यविधियों का उल्लेख करते हैं।
25. अनुसंधान प्ररचना के इस अन्तिम चरण में हम यह प्रावधान करते हैं कि समस्त कर्मचारी एवं अध्ययन अनुसंधानकर्ता एक सामंजस्य की स्थिति को बनाए रखते हुए कार्य के नियमों, कार्यविधियों का पालन करते हुए किस प्रकार सन्तोषप्रद ढंग से कार्य को पूर्ण करेंगे।

3.3.1 अनुसंधान प्ररचना का वर्गीकरण (Classification of Research Design)

सामान्यतः अनुसंधान प्ररचनाओं को दो आधारों पर वर्गीकृत किया जाता है।- 1. अध्ययन के उद्देश्य के आधार पर, एवं 2. अध्ययन के उपागम के आधार पर।

1. अध्ययन के उद्देश्य के आधार पर - अध्ययन के उद्देश्य के आधार पर अनुसंधान प्ररचनाओं को पुनः अग्रलिखित चार उपवर्गों में विभाजित किया जा सकता है -

(अ) अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना

(ब) विवरणात्मक या निदानात्मक अनुसंधान प्ररचना

(स) प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना

(द) मूल्यांकनात्मक अनुसंधान प्ररचना ।

2. अध्ययन के उपागम के आधार पर - अध्ययन के उपागम के आधार पर भी अनुसंधान प्ररचनाओं को पाँच उपवर्गों में रखा जा सकता है -

(अ) सर्वेक्षणात्मक अनुसंधान प्ररचना,

(ब) क्षेत्र अध्ययन सम्बन्धी अनुसंधान प्ररचना,

(स) प्रयोग सम्बन्धी अनुसंधान प्ररचना,

(य) वैयक्तिक अध्ययन सम्बन्धी अनुसंधान प्ररचना ।

अनेक सामाजिक वैज्ञानिकों ने भी अनुसंधान प्ररचना को अनेक आधारों पर अनेक प्रकारों में वर्गीकृत किया है।

1. प्रतिपादनात्मक या अन्वेषणात्मक अध्ययन - इसका मूल उद्देश्य अधिक

सूक्ष्मता के साथ अध्ययन करने या उपकल्पनाओं को विकास करने अथवा अग्रिम अनुसंधान के लिए प्राथमिकताओं की स्थापना करना होता है।

2. **विवरणात्मक अथवा निदानात्मक अध्ययन** - इस प्रकार की प्ररचनाओं का उद्देश्य एक दी हुई परिस्थिति की विशेषताओं का वर्णन करना होता है।

3. **प्रयोगात्मक अध्ययन** - इस प्रकार की प्ररचनाओं का परीक्षण करना होता है। प्रयोगात्मक प्ररचनाओं को तीन उपवर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

1. प्रतिपादनात्मक अथवा अन्वेषणात्मक ।

2. विवरणात्मक अथवा निदानात्मक।

3. प्रयोगात्मक ।

ये खोज की तीन सीढ़ियाँ हैं। अन्वेषणात्मक अध्ययन किसी विषय में खोज की प्रारम्भिक अवस्था होती है। इस प्रकार के अध्ययन के द्वारा विषय से परिचयन प्राप्त किया जाता है। इस खोज की अगली सीढ़ी है। वर्णनात्मक अध्ययन। इन अध्ययनों के द्वारा किसी घटना, परिस्थिति, संगठन आदि के लक्षणों का विशुद्ध अध्ययन किया जाता है। यह भी कहा जा सकता है कि इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए वर्णनात्मक अध्ययनों का परीक्षण किया जाता है। खोज की अन्तिम सीढ़ी प्रयोगात्मक अध्ययनों की है। इसे “कार्य कारण सम्बन्धी अध्ययन” भी कहा जाता है। इसके द्वारा किसी कार्य जैसे मनोबल की कमी के कारणों का पता लगाने का प्रयास किया जाता है। इस हेतु इस लक्ष्य से बनाई गई उपकल्पनाओं का परीक्षण किया जाता है।

सामान्यतया कोई एक अध्ययन इनमें से किसी एक प्रकार का होता है अर्थात् उसका लक्ष्य मुख्यतया अन्वेषणात्मक, विवरणात्मक या प्रयोगात्मक सम्बन्ध का पता लगाना होता है। किन्तु किसी अध्ययन में इनका मिश्रण भी हो सकता है। प्रत्येक अध्ययन आगे आने वाले अध्ययनों का मार्ग प्रशस्त करता है जैसे यदि हम किसी राजनीतिक दल का अध्ययन कर रहे हैं तो यह पता लगाएँगे कि उसके सदस्यों की संख्या कितनी है उसकी नीतियाँ क्या हैं, उसका आंतरिक संगठन किस प्रकार का है, पिछले चुनाव में उसकी क्या स्थिति थी, आदि। इस अन्वेषणात्मक अध्ययन के दौरान हमें अनेक बातों के बारे में सामान्य जानकारी प्राप्त हो जाती है। इस सामान्य जानकारी के आधार पर हम उपकल्पनाओं का निर्माण करेंगे। जैसे एक उपकल्पना यह हो सकती है कि “इस दल को अनुसूचित जाति का समर्थन प्राप्त है।” उपर्युक्त उपकल्पना की परीक्षा हम

विवरणात्मक अध्ययन में करेंगे। हम “समर्थन” की सक्रियात्मक या परिचालनात्मक परिभाषा करेंगे। समर्थन की परिचालनात्मक परिभाषा यहाँ “वोट देना” हो सकती है अर्थात् हम यह मान लेंगे कि जिसने दल को वोट दिया था वह उस दल का समर्थन करता है।” अतः जब हम यह जानना चाहें कि आपने किस दल का समर्थन किया था या आपने किसको वोट दिया था तो हमें उनसे पूछना पड़ेगा। इस प्रकार यह अध्ययन हमारी विवरणात्मक उपकल्पना का परीक्षण कर सकेगा। साथ ही यह कुछ नई, अधिक महत्वपूर्ण उपकल्पनाओं को जन्म दे सकता है। सम्भव है हम यह जानना चाहें कि इस दल के इतने चुनाव क्षेत्रों में जीतने का क्या कारण है। स्पष्ट है अनेक कारण हो सकते हैं।

इन महत्वपूर्ण कारणों का पता लगाने के लिए प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना का निर्माण कर अध्ययन करना होगा। हम अपने समान्य ज्ञान के आधार पर यह अनुमान लगा सकते हैं कि कौन कौन से महत्वपूर्ण कारक हैं। जैसे - सुदृढ़ आर्थिक स्थिति महत्वपूर्ण कारण था। यह कार्य कारण सम्बन्धी उपकल्पना हुई। इसके परीक्षण के लिए हम एक ढंग प्रयुक्त कर सकते हैं कि दो प्रकार के चुनाव क्षेत्रों में उस दल का परिणाम देखें - एक ऐसा जहाँ काफी पैसा खर्च किया गया है। परन्तु दूसरे दृष्टिकोण से ये क्षेत्र एक जैसे होने चाहिए। यदि हमें अधिक पैसा खर्च करने वाले क्षेत्र में दल को अधिक सफलता मिले तो हम कह सकते हैं कि सुदृढ़ आर्थिक स्थिति सफलता का एक कारण है। इस प्रकार विभिन्न प्रकार के अध्ययन विभिन्न लक्ष्यों की पूर्ति करते हैं। जैसे जैसे हमारा ज्ञान बढ़ता है, हम अधिक महत्वपूर्ण प्रश्नों का उत्तर देने वाली किन्तु अधिक जटिल अनुसंधान प्ररचना बनाने योग्य हो जाते हैं।

3.4 प्रतिपादनात्मक अथवा अन्वेषणात्मक अनुसंधान रचना (Exploratory Research Design)

प्रतिपादनात्मक अथवा अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना का सम्बन्ध नवीन तथ्यों की खोज से है। इस प्ररचना के द्वारा अज्ञात तथ्यों की खोज अथवा सीमित ज्ञान की खोज कर मानवीय ज्ञान में वृद्धि की जाती है। अनेक अन्वेषणात्मक अध्ययनों का उद्देश्य उपकल्पनाओं को विकसित करने और समस्याओं के निर्माण में संक्षिप्त अनुसंधानों पर जोर देना है। इनके अतिरिक्त इन अध्ययनों के और भी प्रकार हो सकते हैं। उदाहरण के लिए अनुसंधानकर्ता में घटना के अध्ययन की जागरूकता पैदा होती है जो अवधारणाओं की व्याख्या करते हैं और उसके साथ साथ अनुसंधानों को प्रधानता प्रदान करते हैं। इनका

उद्देश्य किसी सामाजिक घटना के अन्तर्निहित कारणों को ढूँढ निकालना होता है। इन कारणों के ढूँढ निकालने की सम्बद्ध रूपरेखा को 'अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना' कहा जाता है।

इस अनुसंधान प्ररचना में अनुसंधान कार्य की रूपरेखा इस प्रकार प्रस्तुत की जाती है। कि घटना की प्रकृति एवं प्रक्रियाओं की खोज की जा सकें। सामाजिक विज्ञान के लिए किसी क्षेत्र में जहाँ अनुसंधान कार्य द्वारा अर्जित ज्ञान सीमित है साथ ही सिद्धान्त का विकास भी परीक्षात्मक अनुसंधान के निर्देशन की दृष्टि से संक्षिप्त है वहाँ उपकल्पना का निर्माण अन्वेषणात्मक अध्ययन के आधार पर किया जाता है।

3.4.1 अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना के उद्देश्य (Objectives of Exploratory Research Design)

प्रमुख रूप से एक अन्वेषणात्मक प्ररचना के निम्नलिखित चार उद्देश्य हो सकते हैं -

- (1) अनुसंधान विषय की जानकारी करना - यदि हम किसी एक ऐसे विषय के बारे में अनुसंधान करना चाहते हैं जिस पर पहले अनुसंधान नहीं हुआ है तो उस विषय या समस्या का परिचय या जानकारी प्राप्त करनी होगी। उदाहरण के लिए जैसे हम किसी संस्था का अध्ययन करना चाहें तो पहले हमें यह पता लगाना पड़ेगा कि वह संस्था कब, किसने व क्यों स्थापित की ? इसकी स्थापना के पीछे कौन से कारण थे? इसका आय व्यय क्या है? आदि। इस प्रकार हमें सबसे पहले अनुसंधान विषय की जानकारी करनी होती है।
- (2) अनुसंधान की सम्भावनाओं एवं क्षेत्र का निर्णय - इस प्रकार का अध्ययन वर्णनात्मक अनुसंधान प्ररचना का मार्ग प्रशस्त करता है। बड़े एवं अधिक धन वाले अध्ययनों से पहले हमें इस बात की जानकारी प्राप्त हो जानी चाहिए कि हमारा मार्ग सही है। अन्यथा हो सकता है, हम व्यर्थ ही समय एवं धन का व्यय कर बैठें। इसी प्रकार सामाजिक अनुसंधान में हम अन्वेषणात्मक प्ररचना से यह पता लगाते हैं कि किसी विषय विशेष में अनुसंधान की क्या वास्तविक सम्भावनाएं हैं। जैसे - यदि हम किसी सरकारी संगठन का अध्ययन करना चाहते हैं तो सम्भव है कि वहाँ यह कठिनाई हो कि उसके तथ्य एवं आँकड़े सरकार गोपनीय मानती हो। यदि हम अन्वेषणात्मक अध्ययन करें तो यह बात हमें पहले ही ज्ञात हो जाएगी कि सरकार से उसकी अनुमति प्राप्त नहीं होगी तो हम विषय

को छोड़ देंगे। इसी प्रकार अन्वेषणात्मक प्ररचना से हम विषय का क्षेत्र निर्धारण भी ठीक प्रकार से कर सकेंगे।

(3) अवधारणाओं का स्पष्टीकरण एवं नवीन अवधारणाओं की खोज - वस्तुतः किसी भी वैज्ञानिक अध्ययन में यदि हमारी अवधारणाएं स्पष्ट न हों तो हमारे अनुसंधान का मूल्य बहुत कम हो जाने की सम्भावना है।

इसके अतिरिक्त अवधारणाएं सैद्धान्तिक संरचना का आधार होती हैं। इसलिए नई सैद्धान्तिक संरचना के लिए कभी कभी नवीन अवधारणाओं की रचना की जाती है। मार्क्स का “वर्ग संघर्ष”, वेबर का “आदर्श प्रारूप” आदि इसी प्रकार की नवीन अवधारणाएं हैं। यहाँ अनुसंधानकर्ता किसी पुरानी अवधारणा की नवीन परिभाषा भी कर सकता है जैसे कार्ल मार्क्स में “वर्ग” के सन्दर्भ में की। दोनों ही आधारों में अवधारणाओं का उपयोग अन्वेषणात्मक प्ररचना से बढ़ जाता है।

(4) उपकल्पनाओं का निर्माण - किसी भी वैज्ञानिक अध्ययन का उद्देश्य होता है सिद्धान्तों का परीक्षण । सिद्धान्त उपकल्पनाओं के तन्त्र होते हैं इसलिए क्रियात्मक दृष्टिकोण से हमारा उद्देश्य का परीक्षण हो जाता है। इस प्रकार उपकल्पनायें वैज्ञानिक अध्ययन को दिशा देती हैं तथा बताती हैं कि किन लक्षणों एवं संबंधों का अध्ययन करना है। इस प्रकार विषय या समस्या से परिचय प्राप्त करके उसके निरूपण करके तथा अवधारणाओं के स्पष्टीकरण एवं खोज द्वारा अन्वेषणात्मक अध्ययन नवीन उपकल्पनाएं बनाने में सहायक होता है।

इसी प्रकार इन मुख्य उद्देश्यों या प्रकार्यों के अतिरिक्त अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना के निम्नलिखित और उद्देश्य बताए जा सकते हैं।

1. अनुसंधानकर्ता को प्रघटना के बारे में जागरूकता एवं समझ प्रदान करना।
2. भविष्य में आने वाले अनुसंधान के विषय में प्रधानता या प्रमुखता की स्थापना करना।
3. सामाजिक महत्व की समस्याओं की ओर अनुसंधानकर्ता को प्रेरित करना।
4. समस्या के किस क्षेत्र में अध्ययन को केन्द्रित किया जाए इसका निर्धारण करना।
5. विज्ञान को परम्परागत सीमाओं से मुक्त करके उसके अध्ययन क्षेत्र का विकास करना।

अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना के लिए कुछ आवश्यकताओं या अनिवार्यताओं का होना भी आवश्यक होता है। वस्तुतः अन्वेषणात्मक प्ररचना में सबसे बड़ी कठिनाई समस्या का उपयुक्त चुनाव करने की है। सामान्यतः समस्या का चयन करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए-

1. समस्या का सामाजिक महत्व
2. समस्या का व्यावहारिक परिप्रेक्ष्य एवं
3. विश्वसनीय तथ्यों की प्राप्ति की सम्भावनाएं ।

3.5 विवरणात्मक अथवा निदानात्मक अनुसंधान प्ररचना (Descriptive Research Design)

सामाजिक अनुसंधान में हमें सामान्य नियमों का अन्वेषण करना होता है एवं उनका विवेचन व विशिष्ट परिस्थितियों का निदान खोजना भी हमारा प्रमुख उद्देश्य होता है। विवरणात्मक एवं निदानात्मक अध्ययन प्ररचनाओं में एक प्रमुख अन्तर यह है कि निदानात्मक प्ररचना कारणात्मक संबंधों को व्यक्त करने तथा सामाजिक क्रिया के लिए इन विभिन्न कारणों के आशयों का पता लगाने से संबंधित है।

विवरणात्मक तथा विवेचनात्मक अनुसंधान प्ररचना का मुख्य उद्देश्य समस्या से संबंधित वास्तविकता के आधार पर वर्णनात्मक विवरण प्रस्तुत करना है। इनकी विशेषता पूर्ण और यथार्थ सूचनार्यें प्राप्त करना है। अतः ये अध्ययन किसी समुदाय या समूह के सम्पूर्ण जीवन से संबंधित प्रक्रियाओं के होते हैं। सामाजिक अनुसंधान में प्रथम समस्या सामान्य नियमों की खोज व द्वितीय समस्या विशिष्ट परिस्थितियों के निदान से सम्बन्धित होती हैं।

इस प्रकार वर्णनात्मक या विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना के लिए आवश्यक होता है कि वैज्ञानिक वर्णन के आधार पर विषय के संबंध में यथार्थ एवं पूर्ण सूचनार्यें प्राप्त की जायें।

3.5.1 विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना के उद्देश्य (Objectives of Descriptive Research Design)

विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना के उद्देश्यों को तीन वर्गों में प्रस्तुत किया जा सकता है-

1. किसी समूह अथवा परिस्थिति के लक्षणों का परिशुद्ध वर्णन करना।
2. किसी चर की आवृत्ति निश्चित करना,
3. चरों के साहचर्य के विषय में पता लगाना।

1. **किसी समूह अथवा परिस्थिति के लक्षणों का परिशुद्ध वर्णन करना -** विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना में हम किसी समूह जैसे कोई राजनीतिक दल अथवा किसी परिस्थिति जैसे हड़ताल या चुनाव आदि का परिशुद्ध वर्णन करते हैं एवं क्रमवार विस्तृत ज्ञान प्राप्त करते हैं। यह ज्ञान गुणात्मक एवं संख्यात्मक दोनों ही प्रकार का हो सकता है। जैसे गुणात्मक ज्ञान से हम यह पता लगाते हैं कि किस चुनाव के उम्मीदवार किस किस राजनीतिक दल के थे अथवा वे किस किस जाति के थे। संख्यात्मक ज्ञान संख्या पर आधारित होता है। यह सामान्यतः किसी चर की आवृत्ति होती है जैसे किसी चुनाव में कितने लोगों ने भाग लिया?

2. **किसी चर की आवृत्ति निश्चित करना -** विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना से अध्ययन करते समय हमें विषय या समस्या का कुछ ज्ञान रहता है। यह ज्ञान पहले किये हुए अन्वेषणात्मक या दूसरे लोगों के अध्ययनों द्वारा प्राप्त होता है। इसलिए वर्णनात्मक अध्ययन के उद्देश्य सुस्पष्ट होते हैं जैसे यह निश्चित रहता है कि इसे किन लक्षणों का वर्णन करना है?

3. **चरों के साहचर्य के विषय में पता लगाना -** विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना का एक और उद्देश्य यह है कि इसके द्वारा चरों के साहचर्य के विषय में पता लगाया जाये। विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना में हम इसी प्रकार विभिन्न चरों के साहचर्य का पता लगाते हैं अर्थात् यह देखते हैं कि साहचर्य है या नहीं और यदि है तो किस प्रकार का? हम केवल उन चरों का साहचर्य देखते हैं जहाँ हमें इनकी आशा रहती है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि विवरणात्मक प्ररचना विवरणात्मक उपकल्पनाओं की परीक्षा करता है।

इसके अतिरिक्त विवरणात्मक अध्ययन कार्य कारण संबंधी उपकल्पनाओं के निर्माण में भी सहायक होता है। इस प्रकार की उपकल्पनाओं का परीक्षण एक अधिक विकसित प्ररचना द्वारा होता है। वर्णनात्मक अध्ययन द्वारा केवल इन उपकल्पनाओं का निर्माण होता है। जैसे यदि हम किन्हीं चरों में बहुत अधिक साहचर्य पायें तो हम यह उपकल्पना बना सकते हैं कि उनमें से एक कारण है और दूसरा प्रभाव। यहाँ यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि ऐसा संयोग से भी हो सकता है।

उपरोक्त विवेचना में हमें ध्यान रखना चाहिए कि विवरणात्मक एवं निदानात्मक अनुसंधान प्ररचना एक ही नहीं है। इन प्ररचनाओं में मुख्यतः अन्तर निम्नलिखित हैं -

1. विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना समस्या से संबंधित तथ्यों का वर्णन प्रस्तुत करती है, जबकि निदानात्मक अनुसंधान प्ररचना समस्या का वास्तविक स्वरूप बताकर समस्या के निदान का उपाय या हल भी बताती है।
2. विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना के अध्ययन उपकल्पनाओं द्वारा पूर्ण रूप से निर्देशित नहीं होते जबकि निदानात्मक प्ररचना के अध्ययनों को उपकल्पनायें पूर्ण रूप से निर्देशित करती हैं।
3. विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना का मुख्य उद्देश्य ज्ञान प्राप्ति ही होता है, जबकि निदानात्मक अनुसंधान प्ररचना का प्रमुख उद्देश्य समाज में उपस्थित समस्याओं के कारणों का पता लगाकर समाधान प्रस्तुत करना होता है।
4. विवरणात्मक अध्ययन उस क्षेत्र में विकास का पता लगाना है, जहाँ समस्याओं के बारे में विशेष जानकारी उपलब्ध नहीं होती है, जबकि निदानात्मक अध्ययन उसी क्षेत्र में किये जाते हैं जहाँ पर समस्याओं का स्वरूप स्पष्ट रूप से उभर कर सामने आ जाता है।
5. विवरणात्मक अध्ययन प्रायः प्रारम्भिक स्तर के अध्ययन होते हैं, जबकि निदानात्मक अध्ययन उच्चस्तरीय होते हैं।

इस प्रकार वर्णनात्मक या विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना एवं निदानात्मक अनुसंधान प्ररचना में अन्तर किया जा सकता है। लेकिन इन प्ररचनाओं के क्रियान्वयन के लिए अनुसंधानकर्ता को अनुसंधान प्रशिक्षण, समय, धन व कार्य क्षमता पर ध्यान देना चाहिए। इस प्रकार जब अन्वेषणात्मक ज्ञान की प्राप्ति हमारे अध्ययन का उद्देश्य होता है तो हम अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना का प्रयोग करते हैं, लेकिन जब किसी समूह समुदाय या परिस्थितियों का वर्णन एवं विश्लेषण करना होता है तो हम “विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना” का प्रयोग करते हैं।

3.6 प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना (Experimental Research Design)

प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है “प्रयोग” की अवधारणा पर आधारित है। प्रयोग मूलतः एक प्रकार का नियंत्रित अन्वेषण है। प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना को विस्तार से समझने के लिए यह आवश्यक होगा कि

हम प्रयोग को समझ लें। आर.एल.एकॉफ ने लिखा है कि, “प्रयोग एक ऐसी क्रिया है जिसे हम अन्वेषण कहते हैं।” सेलिज, जहोदा एवं अन्य के अनुसार, “अपने सबसे सामान्य अर्थ में एक प्रयोग को प्रमाण के संग्रह के संगठन के ऐसे ढंग के रूप में समझा जा सकता है जिससे उपकल्पना की सत्यता के विषय में परिणाम निकालने की अनुमति मिल सके।”

इस प्रकार प्रयोग की मूलभूत रूपरेखा अत्यन्त सरल है। मान लें कि हम यह जानना चाहते हैं कि पढ़ाने में संगणकों का उपयोग परम्परागत पढ़ाने के ढंग से अधिक लाभदायक है या नहीं। इसके लिए हम दो समान समूह लेंगे - एक प्रयोगात्मक समूह कहलाएगा एवं दूसरा ‘यथास्थ समूह’। प्रयोगात्मक चर संगणक है। अब हम किसी स्कूल की कक्षा के दो समूह बनाते हैं और एक समूह को संगणकों के माध्यम से पढ़ाते हैं। व दूसरे को परम्परागत ढंग से। शिक्षा सत्र के अन्त में दोनों समूहों को एक ही परीक्षा में बिठाकर उनके परीक्षाफल की तुलना करते हैं। यदि हम पाते हैं कि संगणक द्वारा शिक्षण समूह का परीक्षाफल श्रेष्ठ है तो हम कह सकते हैं कि संगणकों द्वारा पढ़ाना अधिक लाभकारी है।

इस प्रकार प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना “प्रयोग” पर आधारित है। यह भी भौतिक विज्ञानों में प्रयोगों की भाँति होती है। इस प्रकार की प्ररचनाओं का निर्माण अत्यन्त सोच समझ कर किया जाता है। इस प्ररचना के आधार पर तार्किक निष्कर्षों को निकाला जाता है। जान स्टुअर्ट मिल पहले व्यक्ति थे जिन्होंने प्रयोगात्मक विधि के आधार पर अनुसंधान प्ररचनाओं के संबंध में सुधार किए।

प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना के कारणात्मक संबंधों को व्यक्त करने वाली उपकल्पनाओं का परीक्षण करने के लिए प्रचलित किसी भी नियंत्रित प्रयोग के अन्तर्गत निम्नलिखित तत्व पाए जाते हैं-

1. इसमें ऐसी दो परिस्थितियों या समूहों का परीक्षण किया जाता है, जो अन्य सभी महत्वपूर्ण पक्षों के समान होते हैं।
2. कारणात्मक समझे जाने वाले कारक को प्रयोगात्मक समूह में ढूँढा जाता है अथवा उसमें इसका समावेश कराया जाता है।
3. भविष्यवाणी की जाने वाली घटना की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति पर्यवेक्षण प्रयोगात्मक एवं नियंत्रित दोनों ही समूहों पर किया जाता है।

3.6.1 प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना के प्रकार (Types of Experimental Research Design)

सामाजिक विज्ञानों में सदा प्रयोग की समस्त शर्तों को पूरा करना सम्भव नहीं होता है इसलिए आवश्यकता एवं सुविधा के अनुसार प्रयोग के ढंग में कुछ फेर बदल कर लिया जाता है। इसलिए प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना को मुख्यतः दो वर्गों में रखा जाता है।

1. केवल पश्चात परीक्षण
2. पूर्व पश्चात परीक्षण

3.6.2 केवल “पश्चात माप” वाले प्रयोग

इस प्रकार के प्रयोग में प्रयोगात्मक और यथास्थ समूह ऊपर बताई गयी प्रविधियों के अनुसार बनाए जाते हैं। प्रारम्भ में कोई भी चर नहीं मापे जाते। फिर प्रयोगात्मक समूह पर प्रयोगात्मक चर “क” का प्रभाव डाला जाता है। यथास्थ समूह पर प्रयोगात्मक चर का प्रभाव नहीं डाला जाता। प्रयोग के दौरान या अन्त में परतंत्र चर “ख” दोनों समूहों में मापते हैं। दोनों समूहों में “ख” का अन्तर “क” का प्रभाव माना जाता है।

इस अभिकल्प में सह-परिवर्तन का प्रमाण हमें इस प्रकार मिलता है कि प्रयोगात्मक समूह पर प्रयोगात्मक चर (कारण) का प्रभाव पड़ता है। और यथास्थ समूह पर नहीं। इसलिये दोनों समूहों में परतंत्र चर (कार्य) में पाया जाने वाला भेद प्रयोगात्मक चर के प्रभाव के कारण ही हो सकता है। घटनाक्रम का प्रमाण इस प्रकार मिलता है कि दोनों समूह प्रारम्भ में समान थे और यथास्थ समूह पर प्रयोगात्मक चर का प्रभाव नहीं पड़ा। इसलिए यथास्थ समूह में “ख” का “पश्चात” माप प्रयोगात्मक समूह में “ख” के “पूर्व” माप के बराबर माना जा सकता है। इस प्रकार अन्त में दोनों समूहों में पाया हुआ भेद प्रयोगात्मक चर का प्रभाव पड़ने के बाद ही हो सकता है। अन्य सम्भव चरों के विलोपन का प्रमाण यथास्थ समूह के होने से मिलता है। अन्य चरों ने इसे भी प्रभावित किया जायेगा। इसलिये दोनों समूहों का भेद अन्य कारकों के प्रभाव को घटा कर आता है।

इस प्रयोग के एक अच्छे उदाहरण में अमेरिका में द्वितीय महायुद्ध के समय एक फिल्म का प्रभाव देखा गया था। इसमें सेना की टुकड़ियों के दो समूह बनाये गये थे। यह समूह शिक्षा, आयु, जन्म, क्षेत्र, परीक्षाफल, प्रशिक्षण स्तर आदि के आधार पर

समान थे। फिर सिक्का उछालकर तय किया गया कि कौन सा प्रयोगात्मक समूह माना जाये। इस समूह को साधारण प्रशिक्षण के कार्यक्रम के अन्तर्गत यह फिल्म दिखाई गई। दूसरे समूह को यथास्थ समूह माना गया, फिल्म नहीं दिखाई गयी। लगभग एक सप्ताह के बाद दोनों समूहों से एक प्रश्नावली भरवाई गई। सैनिकों को यह पता नहीं था कि उन पर कोई प्रयोग हो रहा है या फिल्म के प्रभाव का अध्ययन हो रहा है। दोनों समूहों के उत्तरों के भेद के आधार पर फिल्म के प्रभाव का पता लगाया गया।

3.6.3 “पूर्व और पश्चात माप” वाले प्रयोग

इस अभिकल्प में प्रयोगात्मक समूह तो सदा होता है किन्तु यथास्थ समूह कभी होता है और कभी नहीं। कभी कभी दो या अधिक यथास्थ समूह भी होते हैं इसके मुख्य प्रकार छः हैं -

- अ) एक समूह द्वारा “पूर्व और पश्चात” अध्ययन
- ब) एक यथास्थ समूह वाला “पूर्व और पश्चात” अध्ययन
- स) समूहों को अदल बदल कर “पूर्व और पश्चात” अध्ययन
- द) दो यथास्थ समूहों वाला “पूर्व और पश्चात” अध्ययन
- य) तीन यथास्थ समूहों वाला “पूर्व और पश्चात” अध्ययन
- र) दो या अधिक प्रयोगात्मक चरों के संयुक्त प्रभाव का अध्ययन

अ) एक समूह द्वारा “पूर्व और पश्चात” अध्ययन - इस प्रकार के अध्ययन की विशेष बात यह है कि इसमें यथास्थ समूह नहीं होता। एक ही समूह में प्रयोग के पहले और बाद के भेद को प्रयोगात्मक चर का प्रभाव मान लिया जाता है। वैज्ञानिक शोध में इस प्रकार के प्रयोग पर आधारित अनुमानों को पूर्ण रूप से प्रमाणिक नहीं माना जा सकता। किसी विशेष स्थिति में ही इसका उपयोग किया जाता है। जैसे - यदि किसी भीषण रोग की चिकित्सा से सम्बन्धित शोध करनी हो और इस चिकित्सा से शोध लाभ की आशा हो तो सम्भव है अपने प्रयोग में सभी रोगियों की हम यही चिकित्सा करें, यथास्थ समूह न बनायें। यहाँ यथास्थ समूह बनाने का अर्थ होगा कुछ रोगियों को इस चिकित्सा से वंचित रखना। इसलिए ऐसे प्रयोग में यह समूह नहीं बनाया जाता। निष्कर्ष भी पूर्णतया प्रमाणिक नहीं होता।

ब) एक यथास्थ समूह वाला “पूर्व और पश्चात” अध्ययन - प्रयोगात्मक अभिकल्प का सबसे सरल और अधिक प्रयुक्त होने वाला रूप यही है। इसमें प्रयोगात्मक

और यथास्थ दोनों प्रकार के समूह बनाये जाते हैं और दोनों में पूर्व और पश्चात परतन्त्र चर का माप किया जाता है। प्रयोग के पश्चात दोनों समूहों के माप का अन्तर प्रयोगात्मक चर का प्रभाव माना जाता है।

पढ़ाने में टेलीविजन पुराने तरीके से अधिक लाभकर है या नहीं, यह पता लगाने के लिए किये जाने वाले प्रयोग में हम इस प्रकार के अध्ययन का विवेचन कर आये हैं। इसमें दो एक जैसे समूह बनाकर दोनों को एक ही परीक्षा में बिठाते हैं। अब एक समूह के सब विद्यार्थियों के अंकों का औसत निकालते हैं। यह उस समूह का "पूर्व" माप हुआ। इसी तरह दूसरे समूह का पूर्व माप निकालते हैं। फिर सिक्का उछाल कर एक समूह को प्रयोगात्मक बना देते हैं अर्थात् इसे टेलीविजन की सहायता से पढ़ाते हैं। दूसरे समूह को यथास्थ कहते हैं, अर्थात् इसे पुराने तरीके से पढ़ाते हैं शिक्षा सत्र के अन्त में दोनों समूहों को फिर एक ही परीक्षा में बिठाते हैं। फिर दोनों समूहों का अलग अलग "पश्चात" माप में से उसका "पूर्व" माप घटाते हैं। इसे हम प्रयोगात्मक समूह में हुआ अन्तर कहेंगे। इसी तरह यथास्थ समूह में हुआ अन्तर भी निकालते हैं। अब यह देखते हैं कि कौन सा अन्तर अधिक है- प्रयोगात्मक समूह वाला या यथास्थ समूह वाला। यदि प्रयोगात्मक समूह में यथास्थ समूह से अधिक अन्तर हुआ है तो कहेंगे कि टेलीविजन से पढ़ाना अधिक लाभकर है अन्यथा नहीं।

स) समूहों को अदल-बदल कर "पूर्व और पश्चात" अध्ययन - इस प्रकार के अध्ययन में प्रयोगात्मक और यथास्थ दोनों समूह होते हैं। "पूर्व माप केवल यथास्थ समूह में किया जाता है। प्रयोगात्मक समूह में नहीं किया जाता। प्रयोगात्मक चर का प्रभाव केवल प्रयोगात्मक समूह पर डाला जाता है। पश्चात माप केवल प्रयोगात्मक समूह में लिया जाता है। दोनों मापों का अन्तर प्रयोगात्मक चर का प्रभाव माना जाता है।

द) दो यथास्थ समूहों वाला "पूर्व और पश्चात" अध्ययन - यह अभिकल्प एक दूसरी कठिन समस्या को हल करता है। कभी कभी "पूर्व" माप प्रयोगात्मक चर को भी प्रभावित कर देता है इस प्रकार प्रयोगात्मक चर का विशुद्ध प्रभाव हम नहीं जान पाते। प्रयोगात्मक चर के "पूर्व" माप द्वारा इस प्रकार प्रभावित हो जाने को दोनों की अन्योन्य क्रिया कहते हैं। इस अभिकल्प द्वारा हम प्रयोगात्मक चर का प्रभाव और अन्योन्य क्रिया दोनों का पता लगा लेते हैं। इसमें प्रयोगात्मक और दोनों यथास्थ समूह लगभग एक जैसे होते हैं। प्रयोगात्मक समूह में "पूर्व" और "पश्चात" दोनों माप लिए जाते हैं। प्रथम यथास्थ में भी "पूर्व" और "पश्चात" माप लिये जाते हैं। प्रयोगात्मक समूह पर प्रयोगात्मक चर का प्रभाव डाला जाता है किन्तु पहले यथास्थ समूह पर नहीं।

द्वितीय यथास्थ समूह में “पूर्व” माप नहीं लिया जाता, इस प्रयोगात्मक चर का प्रभाव डाला जाता और “पश्चात” मरन लिया जाता है। प्रथम यथास्थ समूह पर प्रयोगात्मक चर का प्रभाव नहीं पड़ा इसलिए वहाँ भी अन्योन्य क्रिया नहीं हो सकती। इसलिए यदि यह मानना तर्कसंगत हो कि अन्य सम्भव चरों का प्रभाव नगण्य है। प्रथम यथास्थ समूह में “पूर्व” और “पश्चात” मापों में यदि कोई अन्तर है तो वह “पूर्व” माप के प्रभाव से हो सकता है।

प्रयोगात्मक समूह पर प्रयोगात्मक चर का प्रभाव पड़ा है। “पूर्व” माप हुआ है और अन्योन्य क्रिया की सम्भावना भी है इसलिए इस समूह में “पूर्व” और “पश्चात” मापों का अन्तर इन तीनों प्रभावों का योग है।

अपने अनुमानों को संक्षेप में हम इस प्रकार कह सकते हैं कि यदि यह मानना तर्कसंगत हो कि अन्य सम्भव (जैसे समसामयिक घटनाओं और विकास की प्रक्रियाओं) का महत्वपूर्ण प्रभाव नहीं पड़ा है तो -

1. प्रयोगात्मक समूह में “पूर्व” और “पश्चात” मापों का अन्तर

(ख) प्रयोगात्मक चर का प्रभाव + “पूर्व” माप का “पश्चात” माप का प्रभाव + अन्योन्य क्रिया

2. प्रथम यथास्थ समूह में “पूर्व” और “पश्चात” मापों का अन्तर

(ख) च “पूर्व” माप का “पश्चात” माप पर प्रभाव, और

2. द्वितीय यथास्थ समूह में (अनुमानित) “पूर्व” और “पश्चात” मापों का अन्तर हमें प्रयोगात्मक चर का विशुद्ध प्रभाव बता देता है।

साथ ही हमें अन्योन्य क्रिया का भी अनुमान हो जाता है ऊपर के समीकरणों से स्पष्ट है कि-

(ख) अन्योन्या क्रिया $\text{त्र ख}_1 + \text{ख}_2$

अन्योन्य क्रिया $\text{त्र ख} - (\text{ख}_1 + \text{ख}_2)$

य) तीन यथास्था समूहों वाला “पूर्व और पश्चात” अध्ययन - ऊपर के अन्तिम अभिकल्प में हमने यह मान लिया था कि समसामयिक घटनाओं और विकास की प्रक्रियाओं का प्रभाव नगण्य है। किन्तु जहाँ यह मानना तर्कसंगत न हो और यह सम्भावना भी हो कि अन्योन्य क्रिया हो रही है तो हम तीन यथास्थ समूहों वाले अभिकल्प का उपयोग करते हैं। इसमें जो नया, तृतीय यथास्थ समूह होता है उसका “पूर्व” माप नहीं लिया जाता, उस पर प्रयोगात्मक चर का प्रभाव भी नहीं डाला जाता,

केवल "पश्चात" माप लिया जाता है। इस प्रकार इस समूह चरों का प्रभाव तो होता है, "पूर्व" माप और प्रयोगात्मक चर का प्रभाव नहीं होता। बाकी अभिकल्प ठीक वैसा ही रहता है जैसे दो यथास्थ समूहों वाला था।

इसके अनुमानों को हम इस प्रकार कह सकते हैं -

प्रयोगात्मक समूह में "पूर्व" और "पश्चात" मापों का अन्तर

(ख) प्रयोगात्मक चर का प्रभाव + अन्य सम्भव चरों का प्रभाव
+ पूर्व माप का "पश्चात" अन्योन्य क्रिया।

प्रथम यथास्थ समूह में "पूर्व" और "पश्चात" मापों का अन्तर

(ख) त्र अन्य सम्भव चरों का प्रभाव + "पूर्व" माप का "पश्चात" माप पर प्रभाव
द्वितीय यथास्थ समूह में "पूर्व" और "पश्चात" मापों का अन्तर।

(ख) प्रयोगात्मक चर का प्रभाव + अन्य सम्भव चरों का प्रभाव

तृतीय यथास्थ समूह में "पूर्व" और "पश्चात" मापों का अन्तर।

(ख) त्र अन्य सम्भव चरों का प्रभाव

ऊपर के समीकरणों से स्पष्ट है कि -

1. प्रयोगात्मक चर का प्रभाव त्र $x_2 - x_3$
2. अन्योन्य क्रिया त्र $x - (x_1 + x_2 + x_3)$

इस प्रकार हम प्रयोगात्मक चर का विशुद्ध प्रभाव और अन्योन्य क्रिया दोनों को मापने में समर्थ हो जाते हैं।

र) दो या अधिक प्रयोगात्मक चरों के संयुक्त प्रभाव का अध्ययन - कभी कभी दो या अधिक प्रयोगात्मक चर एक साथ सक्रिय होते हैं। इनके संयुक्त प्रभाव के अध्ययन के लिए हमें अधिक जटिल अभिकल्प बनाने होते हैं जिनमें बहुत से समूह होते हैं। फिर अनुमान के लिए सांख्यिकी की विशेष प्रविधियों जैसे अन्तरवर्ग विश्लेषण का उपयोग किया जाता है।

3.6.4 प्रयोगात्मक अभिकल्प की आलोचना (Criticism of Experimental Research Design)

प्रयोगात्मक अभिकल्प का लाभ यह है कि इसके द्वारा हम विभिन्न कारकों के प्रभाव का वैज्ञानिक पद्यति से पता लगा सकते हैं अर्थात् चरों के संबंधों के विषय में अमूर्त

परिकल्पनाओं का परीक्षण कर सकते हैं। यदि ये परिकल्पनायें सत्य सिद्ध हों तो हमारे सिद्धान्त को बल मिलेगा और अन्य परीक्षणों द्वारा हम नियमों की खोज की दिशा में प्रगति कर सकेंगे।

प्रयोग की एक आलोचना यह है कि केवल दो चरों के संबंध का अध्ययन करते समय यह अन्य चरों के प्रभाव को आंखों से ओझल कर देती है। इस प्रकार प्रयोग की पद्धति चरों को एक दूसरे से कृत्रिम ढंग से अलग कर देती है। वास्तव में चर अलग अलग संदर्भों में अलग अलग प्रभाव डालते हैं। इस आलोचना के अनुसार सामाजिक विज्ञान में शोध को प्रयोग के स्थान पर क्षेत्रीय अध्ययन का अध्ययन किया जाये। इसमें चरों के नियंत्रण की प्रचलित पद्धति को छोड़ना होगा। जिन परिस्थितियों का अध्ययन किया जा रहा है उनमें जो अन्योन्य क्रिया मिलती है वह हम स्वीकार कर लेंगे। इस प्रकार के अध्ययनों के मुख्य उपकरण होते हैं सांख्यिकी की आंशिक सह संबंध और बहु संबंध की प्रविधियाँ। मनोविज्ञान के क्षेत्र में इस पद्धति का विशेष उपयोग हुआ है।

3.7 अन्वेषणात्मक अथवा निरूपणात्मक शोध प्ररचना (Causal Resarch Design)

किसी भी सामाजिक घटना के घटित होने के पीछे कोई न कोई कारण अवश्य छुपा हुआ होता है। जब कोई शोध कार्य इस कारण को ढूँढने के लिए किया जाता है तो उसे अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना कहते हैं। इस प्रकार शोध प्ररचना में शोध कार्य की सम्पूर्ण रूपरेखा को इस प्रकार बनाया जाता है जिससे कि अध्ययन की जाने वाली घटना की प्रकृति, घटना के कारणों व उनके बीच के कार्य कारण संबंधों की उचित जानकारी प्राप्त की जा सके। प्रत्येक शोध की सफलता के लिए उचित प्राक्कल्पना का निर्माण किया जाना आवश्यक है और किसी प्राक्कल्पना के निर्माण के लिए सफल शोध प्ररचना का निर्माण किया जाना आवश्यक है।

3.8 सारांश

अन्वेषण प्रारम्भ करने से पूर्व हम प्रत्येक अनुसंधान समस्या के विषय में सोच विचार करने के पश्चात यह निर्णय लें कि हमें किन ढंगों एवं कार्य विधियों का प्रयोग करते हुए शोध कार्य करना है तो नियंत्रण को लागू करने की आशा बढ़ जाती है। अनुसंधान कार्य करने की योजना या अनुसंधान प्रक्रिया की रूपरेखा को ही अनुसंधान अभिकल्प कहा जाता है। सामान्यतः अनुसंधान प्ररचना के दो प्रमुख उद्देश्य होते हैं- 1.

अनुसंधान समस्या के उत्तर प्रदान करना , एवं 2. विविधताओं को नियंत्रित करना।

एक अच्छे अन्वेषण रूपांकन या प्ररचना में शोध-प्रक्रिया के दौरान आवश्यकतानुसार संशोधित एवं परिवर्तित किए जा सकने के कारण लचीलापन होता है। सामान्यतः अनुसंधान प्ररचनाओं को दो आधारों पर वर्गीकृत किया जाता है। 1. अध्ययन के उद्देश्य के आधार पर, एवं 2. अध्ययन के उपागम के आधार पर।

1. **प्रतिपादनात्मक या अन्वेषणात्मक अध्ययन** - इसका मूल उद्देश्य अधिक सूक्ष्मता के साथ अध्ययन करने या उपकल्पनाओं का विकास करना अथवा अग्रिम अनुसंधान के लिए प्राथमिकताओं की स्थापना करना होता है।

2. **विवरणात्मक अथवा निदानात्मक अध्ययन** - इस प्रकार की प्ररचनाओं का उद्देश्य एक दी हुई परिस्थिति की विशेषताओं का वर्णन करना होता है।

3. **प्रयोगात्मक अध्ययन** - इस प्रकार की प्ररचनाओं का उद्देश्य उपकल्पनाओं का परीक्षण करना होता है।

3.9 बोध प्रश्न

1. शोध परिकल्प पर एक सुबोध टिप्पणी लिखिये।
2. शोध के विभिन्न प्रकारों का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।
3. निम्नलिखित पर टिप्पणियाँ लिखिये -
 - (अ) अन्वेषणात्मक अध्ययन
 - (ब) विवरणात्मक तथा निदानात्मक अध्ययन में अन्तर्भेद
 - (स) प्रयोगात्मक अध्ययन के प्रकार

3.10 सन्दर्भ पुस्तकें

सामाजिक अनुसंधान शोध - एम. एल. गुप्ता, डी.डी. शर्मा

सांख्यिकीय, डा. के. एल. गुप्ता,

सांख्यिकीय विधियाँ - प्रो. एस. पी. गुप्ता

अनुसंधान परिचय - डा. बी.एल. शर्मा

अनुसंधान परिचय - श्री पारसनाथ राय

Fundamental of Statistics - S.P. Singh

Principles of Statistics.

इकाई - 4 : निदर्शन अभिकल्प (Sampling Design)

इकाई की रूपरेखा-

- 4.0 उद्देश्य
- 4.1 प्रस्तावना
- 4.2 निदर्शन का अर्थ एवं परिभाषा
 - 4.2.1 संगणना एवं निदर्शन में अन्तर
 - 4.2.2 निदर्शन के आधार एवं विशेषतायें
 - 4.2.3 निदर्शन की सीमाएँ
- 4.3 निदर्शन के अवयव
 - 4.3.1 इकाई
 - 4.3.2 समग्र या समष्टि
 - 4.3.3 विशिष्ट समग्र का चयन
 - 4.3.4 निदर्शन इकाई
 - 4.3.5 निदर्शन ढाँचा
 - 4.3.6 स्तर
 - 4.3.7 साधन सूची
- 4.4 निदर्शन में चरण
 - 4.4.1 एक श्रेष्ठ अथवा प्रतिनिधिपूर्ण निदर्शन की विशेषताएँ
- 4.5 निदर्शन के प्रकार
 - 4.5.1 प्रायिकता या सम्भावना निदर्शन
 - 4.5.2 अर्द्ध प्रसम्भावना प्रतिचयन
 - 4.5.3 दैव एवं यादृच्छित निदर्शन
 - 4.5.4 दैव निदर्शन के लाभ
 - 4.5.5 दैव निदर्शन से हानियाँ
 - 4.5.6 स्तरीकृत निदर्शन
 - 4.5.7 बहुस्तरीय निदर्शन

- 4.5.8 व्यवस्थित निदर्शन
 4.5.9 गुच्छ निदर्शन
 4.5.10 अप्रसम्भाव्यता निदर्शन
 4.5.11 अप्रसम्भाव्यता निदर्शन विधि के दोष

- 4.6 सारांश
 4.7 बोध प्रश्न
 4.8 संदर्भ पुस्तकें

4.0 : उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात पाठक जान सकेंगे -

- निदर्शन का अर्थ एवं परिभाषा,
- संगणना एवं निदर्शन में अन्तर,
- निदर्शन के आधार एवं विशेषतायें तथा निदर्शन की सीमाएँ,
- निदर्शन में चरण, तथा
- निदर्शन के प्रकार।

4.1 प्रस्तावना

सामाजिक विज्ञानों में सामान्यतः मनुष्य एवं उनके समूहों का अध्ययन एवं अनुसंधान किया जाता है। ये समूह अनेक बार छोटे होते हैं, लेकिन अनेक बार बहुत बड़े भी होते हैं। परिणामस्वरूप इन बड़े समूहों का अध्ययन एवं अनुसंधान एक नितान्त जटिल प्रक्रिया होती है। अतः उस समूह के अध्ययन के लिए उसमें से कुछ लोगों को चुनकर उनका अध्ययन कर लिया जाता है। चुनाव की वही प्रक्रिया निदर्शन, प्रांगचयन, प्रतिदर्शन आदि नामों से जानी जाती है। निदर्शन को तभी उपयुक्त माना जा सकता है जब सम्पूर्ण समष्टि का सही प्रतिनिधित्व करें। निदर्शन सम्पूर्ण समष्टि का वास्तविक प्रतिनिधि है या नहीं इसकी एक कसौटी यह है कि निदर्शन के स्थान पर यदि सम्पूर्ण समष्टि का अध्ययन किया जाए तो परिणामों में सार्थक अन्तर नहीं पड़ना चाहिए। निदर्शन चुनने की यह प्रमुख समस्या है कि निदर्शन किस प्रकार चुना जाए ताकि वह समष्टि का ठीक प्रतिनिधित्व कर सके और उसमें कोई पूर्वाग्रह न हो। मांगिख्यकी दृष्टि से

ऐसी विधियाँ उपलब्ध हुई हैं जिनके द्वारा निदर्शन का ठीक चयन किया जा सकता है।

अनुसंधान कार्य में कुछ परिस्थितियाँ अवश्य ऐसी हो सकती हैं जिनमें हमें सम्पूर्ण समग्र का अध्ययन करना पड़ता है। केवल निदर्शन से काम नहीं चलता। उदाहरणार्थ, हमें यदि यह पता लगाना हो कि भारत में इस समय साक्षरता की क्या स्थिति है तो हमें सम्पूर्ण गणना करनी होगी, केवल निदर्शन लेकर काम नहीं चलेगा। किन्तु अधिकतर परिस्थितियों में हम निदर्शन के द्वारा निष्कर्ष निकाल सकते हैं। निदर्शन की प्रक्रिया अथवा समग्र या समष्टि से उसके एक ऐसे अंश का चुनाव, जिसके आधार पर सम्पूर्ण, समग्र या समष्टि के विषय में परिणाम निकाले जाते हैं अत्यधिक प्राचीन काल से अनुसंधान कार्यरिती के एक वैध एवं शीघ्रता के साथ कार्य करने के ढंग के रूप में प्रयोग में रहा है।

4.2 निदर्शन का अर्थ एवं परिभाषा

निदर्शन सामान्यतः समग्र में चुने गये अंश के चुनाव को कहा जाता है जो समग्र अथवा सम्पूर्ण का उचित प्रतिनिधित्व करते हैं। एक गृहिणी दूकान पर पनीर क्रय करने से पूर्व, उसका एक टुकड़ा नमूने के रूप में लेगी तथा एक रूई धुनिया केवल थोड़ा नमूना देखकर ही रूई की गाँठ खरीदेगा। यदि हम किसी जनसंख्या के बारे में कुछ जानने के उद्देश्य से कुछ तत्वों का चुनाव करते हैं तो हम उन तत्वों के समूह को निदर्शन कहते हैं। एक सांख्यिकीय निदर्शन उस सम्पूर्ण समूह अथवा संलग्न का सूक्ष्म चित्र है जिससे निदर्शन लिया गया। उस सम्पूर्ण समूह को जिससे निदर्शन के चुनाव किया जाता है जनसंख्या, समग्र अथवा प्रदाय कहा जाता है।

“किसी भी निदर्शन प्रणाली को अपनाते हुए चुने गये निदर्शन को दो आवश्यक शर्तों की पूर्ति करनी चाहिए -

- (1) तात्विक परिकल्पनाओं का परीक्षण सम्भव होना चाहिए। तात्विक परिकल्पनाएं निदर्शन के विषय में पूर्वकल्पनायं हैं।
- (2) सामान्यीकरण परिकल्पनाओं का परीक्षण सम्भव होना चाहिए अर्थात् निदर्शन के लिए स्थापित की गई परिकल्पनाओं के समग्र पर लागू होने की जाँच सम्भव होनी चाहिए।

यदि इन परिभाषाओं का विश्लेषण किया जाये तो यह स्पष्ट होता है कि समग्र में से जिन इकाइयों का चयन निदर्शन के रूप में किया जाता है उनके सामान्य लक्षण वे ही होते

है। जो उस समग्र के होते हैं और इसी दृष्टिकोण से उसे समग्र का प्रतिनिधि माना जाता है। इसका अभिप्राय यह भी हुआ कि यदि चुने गये निदर्शन की समग्र से तुलना की जाये तो उन दोनों में कोई सार्थक अन्तर नहीं मिलेगा। इन चुनी हुई इकाइयों के आधार पर अनुसंधानकर्ता अध्ययन संचालित करता है और उससे जो परिणाम प्राप्त किये जाते हैं उन्हें केवल उस चुने गये समूह पर ही लागू नहीं करता; बल्कि पूरे समग्र के लिए सही मानता है और उसके लिए सामान्यीकरण करता है। इस सुविधा के कारण निःसन्देह रूप से निदर्शन सामाजिक अनुसंधानों का एक आवश्यक व महत्वपूर्ण अंग बन गया है।

4.2.1 संगणना एवं निदर्शन में अन्तर (Difference between Census and Sample)

अब अनुसंधानकर्ता क्षेत्रीय स्रोत से तथ्य प्राप्त करना चाहता है तब उसे यह तय करना होता है कि वह अध्ययन विषय से सम्बन्धित समस्त व्यक्तियों का अध्ययन करें। इनमें पहली विधि समग्र या संगणना विधि तथा दूसरी निदर्शन विधि के नाम से जानी जाती है।

जनगणना या जनसंख्या सर्वेक्षण में विषय से संबंधित समस्त जनसंख्या या इकाइयों का अध्ययन किया जाता है। निदर्शन पद्धति में सम्पूर्ण जनसंख्या या समस्त इकाइयों का अध्ययन न करके उनमें से कुछ ऐसी इकाइयों का अध्ययन किया जाता है जिनमें उस समस्त जनसंख्या या समग्र की विशेषताएँ आ जायें। इस पद्धति में शोधकर्ता अपना ध्यान सीमित संख्या में "कुछ" इकाइयों पर केन्द्रित कर लेता है। इससे उसका अध्ययन कम समय, कम खर्च तथा कम श्रम का उपयोग करके ही पूरा हो जाता है।

जनगणना विधि वहाँ आवश्यक होती है जहाँ किसी विषय का गहन अध्ययन करना हो, उच्च स्तर की शुद्धता एवं विश्वसनीयता अपेक्षित हो, तथा सीमित क्षेत्र हो या इकाइयों के नमूने लेना कठिन हो क्योंकि उनमें भिन्नता बहुत अधिक है। उत्पादन गणना, आयात निर्यात गणना, में सामान्यतः यही विधि काम में लायी जाती है। अगर हम किसी नगर के मध्य श्रेणी के सारे परिवारों के आय व्यय की भी जाँच करें तो यह संगणना प्रणाली कहलायेगी। लेकिन व्यवहार में प्रत्येक इकाई को सम्मिलित करना कठिन एवं असुविधाजनक होता है। सम्भव है कि इकाइयाँ बड़े क्षेत्र में बिखरी हुई हों जिसके फलस्वरूप उनमें सम्पर्क स्थापित करना कठिन होता है। इसके अतिरिक्त इसमें अधिक समय, परिश्रम व धन की आवश्यकता होती है। सामाजिक अनुसंधान में समय और धन महत्वपूर्ण कारक है। समग्र का अध्ययन करने में बहुत अधिक व्यय होता है

और सम्भव है कि सूचना एकत्रित करने की योजना ही स्थगित कर दी जाए। समय, श्रम और धन के दृष्टिकोण के कुछ इकाइयों से सूचना प्राप्त करना अधिक उचित है। व्यावहारिक दृष्टिकोण से निदर्शन के परिणामों से उतनी ही परिशुद्धता प्राप्त की जा सकती है जितनी कि जनगणना विधि से सम्भव है।

4.2.2 निदर्शन के आधार एवं विशेषतायें

निदर्शन को समग्र का “प्रतिनिधि” मानने के लिए उसकी इकाइयों या घटकों की दो विशेषतायें होनी चाहिए। प्रथम, वे सब एकरूप या समरस हों, तथा द्वितीय उनमें सबको चयन किए जा सकने का समान अवसर हो। जनसंख्या या समग्र की समरसता का अर्थ यह है कि उनकी इकाइयों का प्रकृति लगभग समान होनी चाहिए। भिन्नतायें होने पर निदर्शन समग्र का प्रतिनिधित्व नहीं कर सकेगा। प्रत्येक इकाई या घटक को निदर्शन में आने का अवसर दिया जाना चाहिए। निदर्शन में शामिल होने का समान अवसर न दिये जाने पर कुछ इकाइयों निदर्शन में शामिल नहीं हों पायेंगी और निदर्शन सम्पूर्ण या समग्र का प्रतिनिधित्व नहीं कर सकेगा। यदि विद्यार्थियों के समग्र में से विज्ञान के विद्यार्थियों को अयोग्य मानकर निदर्शन तैयार किया जाएगा तो वह निदर्शन कभी भी प्रतिनिधि नहीं बन सकेगा।

एक अच्छा निदर्शन प्राप्त करने के लिए समग्र की विशेषताओं, उसके उपसमूहों तथा उपवर्गों के गुणों आदि को ध्यान में रखा जाता है। द्वितीय, उस निदर्शन का आकार पर्याप्त होना चाहिए जो उद्देश्य की पूर्ति करें। निदर्शन समग्र अनुपात निश्चित नहीं होता, न ही इसे बनाने का सूत्र है। यंग ने लिखा है कि “निदर्शन का आकार उसकी प्रतिनिधिपूर्णता की कोई आवश्यक गारन्टी नहीं है। अपेक्षाकृत रूप से, अच्छी तरह चयन किए गये छोटे निदर्शन घटिया तरीके से चयन किए गये बड़े निदर्शन से अधिक विश्वसनीय हो सकते हैं। निदर्शन की तीसरी विशेषता यह है कि उसके निर्माण करने में पक्षपात तथा मिथ्या-झुकावों को सर्वथा दूर रखा गया है। निदर्शन की इकाइयों का चयन न तो इस आधार पर किया जाना चाहिए कि वे आकर्षक, मनोरंजक, स्वार्थपरक अथवा सुगम हैं और न इस आधार पर उन्हें छोड़ देना चाहिए कि वे कठिन, दुर्गम तथा कष्टकारक हैं। उनका चयन अपने मन, आदर्श या धारणा के आधार पर नहीं करना चाहिए। जैसे जैसे साम्यवादी विचारधारा के शोधकर्ता को केवल वामपंथी व्यक्तियों को या समाजवादी विचारधारा के शोधकर्ता को केवल समाजवादी व्यक्तियों को अपने निदर्शन में स्थान देना उचित नहीं होगा। चतुर्थ, वह निदर्शन समया या विषय के अनुकूल बनाया जाये। उसका समग्र समस्या के क्षेत्र द्वारा निर्धारित किया जाये। पंचम,

निदर्शन सामान्य ज्ञान, तर्क एवं अनुभव पर आधारित होना चाहिए। उसमें विवेक तथा विचारों को जोड़ा जाये। यदि समग्र राजनीतिक समाज में रहने वाले आर्थिक भौतिक दृष्टिकोण वाले सचेत व्यक्ति से संबंधित होते हैं तो निदर्शन भी राजनीतिक व्यक्ति की प्रकृति के अनुसार बनाया जाना चाहिए।

4.2.3 निदर्शन की सीमाएँ

जैसा कि कई शोधकर्ताओं द्वारा बताया गया है, कि निदर्शन मे कठोर नियन्त्रण की आवश्यकता होती है, निदर्शन का सम्बन्ध छोटे समूहों के अध्ययन में रहना है, इसलिए इस पर आधारित शोध परिणामों को संदेह की दृष्टि से देखा जाता है। परिणामों की परिशुद्धता भी कई बार आकड़ों की भारीयता से प्रभावित होती है। निदर्शन सत्रिकट आकलनों के लिए सर्वश्रेष्ठ है। मूलतः निदर्शन की सीमाओं को हम निम्नलिखित बिन्दुओं में वर्णित कर सकते हैं -

1. निदर्शन उन स्थितियों में उपयोगी नहीं है, जहाँ समष्टि के प्रत्येक इकाई के बारे में जानकारी जरूरी है। उदाहरणार्थ अगर किसी विश्वविद्यालय में कार्यरत कर्मचारियों में 'बोनस' बाँटना हो तो निदर्शन उपयोगी नहीं होगा और प्रत्येक कर्मचारी का 'बोनस व्यक्तिगत रूप से निकालना पड़ेगा।
2. निदर्शन में हम यह पूर्वधारणा रखते हैं कि समष्टि के सभी अवयव एक समान होंगे, परन्तु कई ऐसी स्थितियाँ आती है जिसमें समष्टि विजातीय होता है उदाहरणार्थ किसी विद्यालय में पढ़ने वाले छात्रों की संगीत में रुचि।
3. सामाजिक वैज्ञानिकों को निदर्शन सम्बन्धित अतिरिक्त समस्याओं का सामना करना पड़ता है जैसे कि उत्तरदाताओं की अप्राप्यता, बिखरी हुई इकाइयाँ इत्यादि।
4. निदर्शन में एक छोटी त्रुटि भी परिणामों को पूर्णतया असत्य सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है।
5. निदर्शन से प्राप्त परिणाम केवल वस्तुस्थिति का एक अनुमान ही देते हैं न कि वास्तविकता का ज्ञान।

4.3 निदर्शन के अवयव

निदर्शन की कुछ प्रमुख अवयव निम्नांकित हैं -

1. इकाई
2. समग्र या समष्टि

3. निदर्शन इकाई
4. निदर्शन संरचना
5. स्तर
6. साधन सूची

4.3.1 इकाई

एक प्रारम्भिक इकाई अथवा केवल एक इकाई तत्व अथवा तत्वों का एक ऐसा समूह है जिस पर पर्यवेक्षण किए जा सकते हैं अथवा जिससे एक सुपरिभाषित सांख्यिकीय कार्यरिती के अनुसार अपेक्षित सांख्यिकीय सूचना प्राप्त की जा सकती है। उदाहरणार्थ व्यक्ति, परिवार, फर्म, कारखाने इत्यादि। एक सूचना प्रदान करने वाली इकाई वह इकाई है जो वास्तव में आवश्यक सांख्यिकीय सूचना प्रदान करती है। अथवा जिससे सूचना सरलतापूर्वक प्राप्त की जा सकती है। सूचना प्रदान करने वाली यह इकाई एक अकेली प्रारम्भिक इकाई अथवा अनेक प्रारम्भिक इकाइयों का समूह हो सकती है। उदाहरण के लिए परिवार का मुखिया। एक विश्लेषण की इकाई वह इकाई है जिसका प्रयोग सारिणीकरण के स्तर पर किया जाता है। यह ध्यान रहे कि सूचना प्रदान करने वाली इकाई तथा विश्लेषण की इकाई भिन्न भिन्न हो सकती है। उदाहरण के लिए सूचना प्रदान करने वाली इकाई के रूप में परिवार का मुखिया हो सकता है तथा विश्लेषण की इकाई के रूप में परिवार अथवा परिवार का कोई व्यक्ति हो सकता है।

राजनीतिक समग्र इकाइयाँ अवधारणाओं के द्वारा निर्मित तथा अमूर्त होती हैं। उनको केवल कतिपय चिन्हों, प्रतीकों या संकेतकों द्वारा ही पहचाना जाता है। पार्टन ने लिखा है कि “सर्वेक्षक यह विचार संबंधी भूल कर बैठता है कि मनुष्यों के समग्र का अध्ययन करते समय केवल व्यक्ति ही उनके समग्र की इकाई बन सकते हैं वास्तव में बहुत कम शोध अध्ययनों में व्यक्ति को अध्ययन की इकाई बनाया जाता है। राजनीतिक शोध में व्यक्ति के मतदाता, दलीय सदस्यता, राजनेता, अनुयायी आदि पक्ष शोध समग्र की इकाई बनते हैं। समग्र की अनेक इकाइयाँ हो सकती हैं। जैसे -

1. भौगोलिक इकाइयाँ - राज्य, जिला तहसील, ग्राम, नगर वार्ड, गली आदि।
2. राजनीतिक इकाइयाँ - राजनीतिक दल, राज्य, जिला परिषद, पंचायत समिति, पंचायत, दबाव समूह, विधानसभा, संसदीय समितियाँ, राष्ट्र, राष्ट्रीय समूह, राजनीतिक अभिजन, विरोध पक्ष, मतदाता वर्ग आदि।
3. प्रशासनिक इकाइयों- विभाग - कर्मचारी संघ, निगम, अधीनस्थ कार्यालय, नौकर शाह, प्रशासनिक निर्णय, प्रशासनिक कार्यविधि, स्वविवेकय क्षेत्र भर्ती

आयोग प्रशासनिक अधिकरण, सचिवालय आदि।

4. सामाजिक इकाइयों - परिवार, जाति क्लब, चर्च संस्कृति धर्म समाजीकरण आदि।
5. आर्थिक इकाइयों - बजट, कर, आय, राष्ट्रीय अथवा, व्यक्तिगत आय, उत्पादन, विनियोग, बैंक, मन्दी उद्योग आदि।
6. व्यक्ति संबंधी इकाइयों - सम्पूर्ण व्यक्ति, पुरुष, स्त्री, बालक, युवा, हिन्दू, मुस्लिम, ग्रामीण शहरी, नागरिक, तस्कर, व्यापारी, मजदूर आदि।

निदर्शन इकाई कोई भी क्यों न हो वह स्पष्ट सुनिश्चित एवं भ्रम रहित होनी चाहिए। वह प्रमाणिक तथा विषय के अनुकूल होनी चाहिए। सबसे बढ़कर वह अवलोकनीय, सम्पर्क योग्य अथवा उपयोगी होनी चाहिए।

4.3.2 समग्र या समष्टि

समग्र या समष्टि उस पूरे समूह को जिसके विषय में हम ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं कहा जाता है। एफ.एन. कर्लिजर ने लिखा है, "समग्र" शब्द का अर्थ व्यक्तियों घटनाओं अथवा वस्तुओं के सुपरिभाषित वर्ग के सदस्यों से है। जहोदा ने लिखा है कि, "समग्र उन सभी व्यक्तियों का योग है जो विशिष्टता के एक समान स्तर को बताते हैं।

"समग्र" शब्द का प्रयोग, समय के विभिन्न बिन्दुओं का एक विशिष्ट क्षेत्र में एक इकाई अथवा इकाइयों के समूह संबंधित पर्यवेक्षणों के संग्रह के लिए भी किया जाता है।

इस समग्र तथा उसकी इकाइयों को चुनना वैज्ञानिक शोध की दृष्टि से बहुत महत्व रखता है। शोधकर्ता जितनी अधिक स्पष्टता से अपने समग्र को समझेगा तथा उसकी इकाइयों को सावधानीपूर्वक चुनेगा, उतनी ही अधिक मात्रा में उसका शोध सफल तथा दूसरों द्वारा सत्यापन योग्य माना जाएगा। वस्तुतः शोधकर्ता "सम्पूर्ण" समूह का अध्ययन न करके उसके किसी "पक्ष" या सारभाग का अध्ययन करता है। समग्र या जनसंख्या दो प्रकार के होते हैं - 1. विशिष्ट विशेष या कार्यभार समग्र तथा 2 सामान्य समग्र।

विशेष या कार्यभार समग्र वह विशिष्ट मूर्त तथा स्पष्ट व्यवस्था होती है जिसमें से शोधकर्ता अपने सूचना दाताओं का चयन करता है। इस व्यवस्था को सांख्यिकी में जनसंख्या या समग्र कहा जाता है। शोधकर्ता प्रायः इस समग्र की सीमाओं तक ही सीमित रह कर कार्य करते हैं, किन्तु सिद्धान्त निर्माण में रुचि रखने वाला राजवैज्ञानिक या राज शोधकर्ता सामान्य कार्य करता है। किन्तु उसकी इच्छा यह होती है कि उसके निष्कर्ष उस विशेष व्यवस्था या समूह पर ही लागू न रहकर अन्य सभी समान व्यवस्थाओं एवं समूहों पर लागू हो। उसके सामान्यीकरण उस समूह से संबद्ध होते हुए भी स्थान और समय से आबद्ध न रहे। इन समस्त समूहों या व्यवस्थाओं के अमूर्त समग्र को, जिस पर शोधकर्ता

अपने निष्कर्ष लागू करना चाहता है। सामान्य समग्र कहा जाता है जैसे यदि किसी ने राजस्व मण्डल, राजस्थान का अध्ययन किया है तो वह यह चाहता है कि उसके निष्कर्षों को भी राजस्व मण्डलों पर लागू कर दिया जाए। सेल्जिनिक तथा गोल्डनर ने भी ऐसा ही किया है।

4.3.3 विशिष्ट समग्र का चयन

निदर्शन शोधकर्ता के विशिष्ट समग्र के भीतर होता है इसलिए विशिष्ट समग्र के विषय में पहले विचार किया जाना चाहिए। व्यवहार में, विशिष्ट समग्र के चयन का आधार बताना अत्यन्त कठिन कार्य माना जाता है। ऐसा करते समय दो बाधाएँ सामने आती हैं - प्रथम, विशिष्ट समग्र शोधकर्ता की सैद्धान्तिक मान्यताओं को बताता है तथा द्वितीय, समग्र के स्थायित्व या बने रहने के काल का पता लग जाता है जो हो सकता है कि सही न हो। विभिन्न शोधकर्ता एक ही अध्ययन विषय से सम्बन्धित समग्र जैसे - समुदाय के प्रमुख निर्णायकों के विषय में अपने भिन्न भिन्न परिपेक्षों के कारण अलग अलग निष्कर्ष निकालते हैं। बुद्धिजीवियों, "बेरोजगारों" आदि विषयक सामग्री के बारे में एकमत होना सम्भव नहीं है। विभिन्न संस्कृतियों वाले देशों में ये एक से नहीं होते। सभी देशों के 'शहरी औद्योगिक क्षेत्र' भी समान नहीं हैं। जिन कारणों से विशिष्ट समग्रों में विभिन्नता आ जाती है उनमें से तार्किक एवं सैद्धान्तिक कारण प्रमुख होते हैं। उनके समग्र उन शोधकर्ता से भिन्न हो जाते हैं जो विद्यमान प्राक्कल्पनाओं तथा सिद्धान्तों का परीक्षण या प्रमाणीकरण करना चाहते हैं।

समग्रों के चयन के निम्न आधार होते हैं :-

1. नये सिद्धान्त या सामान्यीकरण की खोज - ऐसा करने के लिए शोधकर्ता ऐसा समग्र चुनता है जिससे नये तथ्य, सामान्यीकरण आदि ज्ञात हो सकें। वह किसी संघ, दल या समूह का लगातार अध्ययन कर सकता है।
2. विद्यमान प्राक्कल्पनाओं या सिद्धान्तों का परीक्षण - इसके अन्तर्गत शोधकर्ता वर्तमान सामान्यीकरण या सिद्धान्त को प्रमाणित करना चाहता है जैसे शोधकर्ता भारत में गिरते हुए अनुशासन के लिए बढ़ते हुए विद्यार्थी राजनेता सम्बन्धों को प्रमाणित करने के लिए राजनीति प्रेरित विद्यार्थियों एवं उनसे सम्बन्धित नेताओं के समग्र को ले सकता है।
3. प्राक्कल्पना या सिद्धान्त का अप्रमाणीकरण - इसमें विद्यमान प्राक्कल्पना के सिद्धान्त को असिद्ध करने के लिए समग्र चुना जाता है। लिप्सेट ने मिचैल ने "अल्पतन्त्र की लोह विधि को असिद्ध करने के लिए एक संघ का अध्ययन किया है।
4. प्राक्कल्पना या सिद्धान्त का पुनः परीक्षण - कुछ शोधकर्ता अपने पहले के

निष्कर्षों या निर्वचनों का पुनः परीक्षण करते के लिए पुष्टिकारक सामग्री लेते हैं।। ये स्वयं या दूसरे के अनुसंधान कार्यों का प्रतिवर्तन करते हैं, अर्थात् दुबारा शोध करके सत्य की परख करते हैं। लेविस ने रेडफील्ड द्वारा किए गये एक गाँव के अध्ययन का प्रवर्तन किया था। हॉथोर्न प्रयोग का भी इसी प्रकार पुनः परीक्षण किया जा चुका है। ऐसा करके पूर्ववर्ती शोधकर्ताओं ने पूर्वाग्रहों का पता लगाया जा सकता है लेकिन समाज, समुदाय आदि स्थैतिक नहीं होते, अतएव प्रतिवर्तन अनेक समस्याओं को उत्पन्न कर देता है। राजनीति में तो परिवर्तन बहुत ही तीव्र गति से हो सकते हैं। अतः प्रतिवर्तन और भी अधिक सीमित हो जाता है।

5. सामान्य प्रकार की खोज - ऐसे समग्र को शोधकर्ता इसलिए चुनता है कि वह असामान्य या विपथगामी नहीं है। ऐसे समग्र का यन करने से पूर्व शोधकर्ता को विस्तृत अध्ययन करना पड़ता है। इस विषय में कार्टज एवं लेजार्सफील्ड का अध्ययन काफी प्रसिद्ध है।
6. प्रयोगात्मक अभिकल्प में प्रयोग - ऐसा प्रयोग कृत्रिम या प्राकृतिक हो सकता है। इसमें शोधकर्ता यह आशा करता है कि उस समग्र में प्रयोग करना संभव हो सकेगा। उदाहरण के लिए वोस्ट तथा एल्बर्ट ने मिलकर पाँच संस्कृतियों का प्रयोगात्मक अध्ययन किया है।
7. सामाजिक कारक - इस शीर्षक के अन्तर्गत समग्र को चयन करने में सामाजिक कारकों को शामिल किया गया है जैसे - आधार सामग्री की सुविधाजनक प्राप्ति, समय, धन तथा मानव शक्ति की सीमा, सुगमता तथा व्यावहारिक लाभ। व्यावहारिक लाभ में शोध कराने वालों का आदेश, प्रसन्नता, उपाधि की प्राप्ति आदि बातें विचाराधीन रहती हैं। कभी कभी आकस्मिक घटना या दैवयोग भी कारण बन जाता है। जेम्स वेस्ट की प्लेनविल गाँव के पास मोटरकार खराब हो गई और उसे वहीं कुछ दिन ठहराना पड़ा। उसने शोध के लिये उसी गाँव को समग्र बना लिया।
8. अन्य कारण- सामाजिक, आर्थिक, नैतिक एवं राजनीतिक दबाव भी विशेष समग्र को चुनने के लिए विवश करते हैं। समाज की विभिन्नताएं और परिवर्तनशीलता के साथ साथ शोध दल का संगठन भी विशेष निदर्शन के चयन का आधार बन जाता है। अतः इन आधारों का समग्रों निदर्शनों, प्रविधियों आदि सभी पर प्रभाव पड़ता है।

4.3.4 निदर्शन इकाई

ऐसी प्रारम्भिक इकाइयाँ अथवा उन इकाइयों के समूह जो स्पष्ट रूप से परिभाषित, पहचाने जाने योग्य एवं पर्यवेक्षणीय होने के अतिरिक्त निदर्शन की दृष्टि से सुविधाजनक

होते हैं, निदर्शन इकाइयाँ कहलाती हैं। उदाहरणार्थ, एक पारिवारिक बजट के अध्ययन में प्रायः परिवार को अत्यधिक सुविधाजनक मानते हुए निदर्शन इकाई के रूप में स्वीकार किया जाता है।

4.3.5 निदर्शन ढाँचा

आँकड़ों के संग्रह के दौरान किये जाने वाले समग्र की सभी निदर्शन इकाइयों का एक ऐसा ढाँचा आवश्यक होता है जो उनकी समुचित परिचयात्मक विशेषताओं को प्रदान कर सके और इस प्रकार के ढाँचे को निदर्शन ढाँचा कहा जाता है।

निदर्शन ढाँचों को दो समूहों में विभाजित किया जा सकता है -

1. निदर्शन इकाइयों की सूची, तथा
2. क्षेत्रीय इकाइयों की सीमाओं को निदर्शन करने वाले मानचित्र।

सूची ढाँचे के अन्तर्गत इकाइयों को पहचाने जाने के लिए उपयुक्त सूचना सहित निदर्शन इकाइयों की एक सूची पायी जाती है। प्रायः इस ढाँचे के अन्तर्गत निदर्शन इकाइयों से सम्बन्धित अतिरिक्त निदर्शन अथवा इनके समूहों की, जो प्रायः क्षेत्रीय इकाइयों के रूप में पायी जाती हैं, भौगोलिक सीमाएं प्रदर्शित की गई होती हैं जिन्हें स्पष्ट रूप से पहचाना जा सकता है।

4.3.6 स्तर

किसी समग्र या समष्टि के कई भाग किये जा सकते हैं। प्रत्येक भाग को स्तर कहते हैं। स्तर विभिन्न आधारों पर बन सकते हैं। जैसे - किसी स्कूल के विद्यार्थियों को स्तरों में बाँटने का आधार हो सकता है पास होना। पास होने वाले विद्यार्थियों का एक स्तर होगा और फेल होने वाले विद्यार्थियों का दूसरा। इसी प्रकार किसी ग्राम की समष्टि (जनसंख्या) को विभिन्न आधारों पर स्तरों में बाँटा जा सकता है। लिंग के आधार पर पुरुषों और स्त्रियों के स्तर, धर्म के आधार पर हिन्दुओं, मुसलमानों, ईसाइयों आदि के स्तर, शिक्षा के आधार पर निरक्षर, माध्यमिक शिक्षा प्राप्त और उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों के स्तर आदि।

4.3.7 साधन सूची

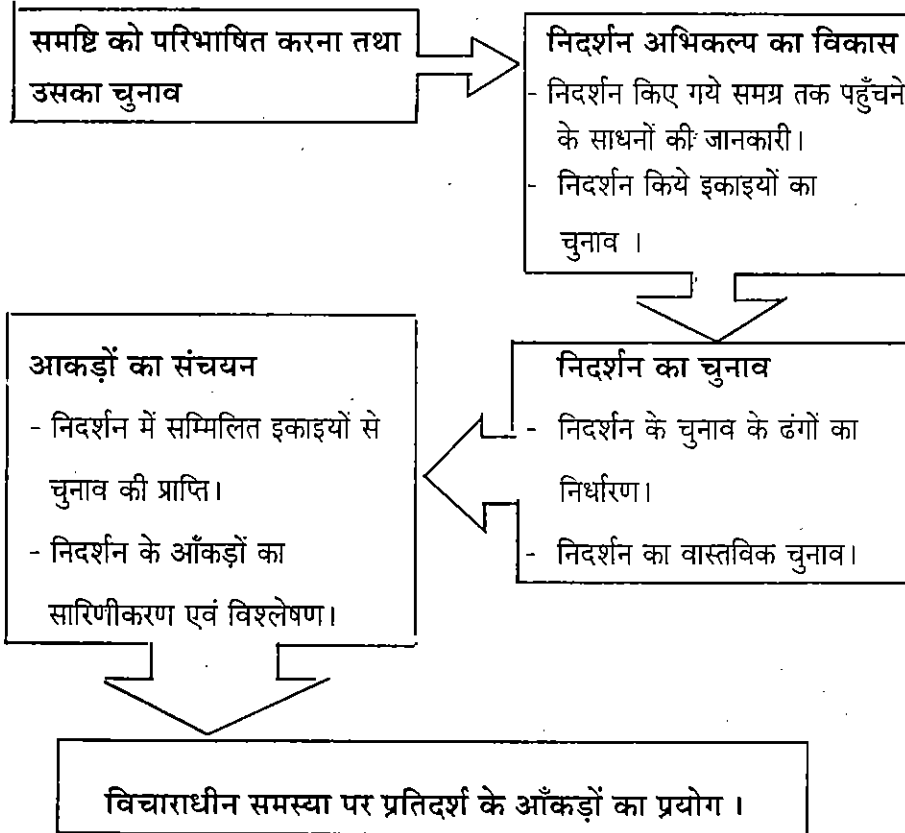
इकाइयों के सम्बन्ध में साधन सूची को उपलब्ध किया जाता है। इसकी सहायता से समग्र की इकाइयों को जाना जाता है। जैसे - टेलीफोन वाले व्यक्तियों में राजनीतिक जागरूकता का अध्ययन करने के लिए टेलीफोन डायरेक्टरी साधन सूची मानी जायेगी,

किन्तु अनेक समस्याओं का अध्ययन करने के लिए कोई भी साधन सूची उपलब्ध नहीं होती या अधूरी उपलब्ध होती है। ऐसी अवस्था में स्वयं शोधकर्ता को साधन सूची तैयार करनी पड़ती है। कभी कभी उसे तैयार करना भी बड़ा कठिन होता है। जैसे - राजनीतिक दलों को चन्दा देने वाले पूँजीपतियों का नाम जानना अत्यन्त कठिन होगा। वैज्ञानिक शोध के लिए यह आवश्यक है कि साधन सूची में समस्त इकाइयाँ शामिल कर ली जावें। कोई भी इकाई न छूटे।

यदि साधन सूची उपलब्ध होने योग्य हो तो शोध का कार्य सुगम हो जाता है। कई बार सूची होते हुए भी शोधकर्ता को मिल नहीं सकती जैसे आयकर विभाग के पास आयकरदाताओं की सूची अथवा पुलिस के पास सन्देहात्क चरित्र के लोगों या गुण्डों की सूची। किसी निदर्शन को तैयार करने से पूर्व साधन सूची अवश्य बनानी पड़ती है।

4.4 निदर्शन में चरण

निदर्शन के नियोजन को निम्नांकित चरणों में विभक्त किया है -



चित्र : निदर्शन के चरण

1. समष्टि को परिभाषित करना तथा उसका चुनाव

सर्वप्रथम समग्र की परिभाषा जाननी चाहिए। इस परिभाषा में स्थान, समय एवं इच्छित विशेषताओं का स्पष्ट उल्लेख किया जाना चाहिए। प्रायः ऐसे क्षेत्र का अध्ययन

करना अधिक उपयुक्त एवं सुविधाजनक होता है जिसकी जनगणना पहले से कर ली गई हो। समय की दृष्टि से इस तथ्य को ध्यान में रखा जाना चाहिए कि अवधि जितनी लम्बी होती है प्रतिनिधित्वपूर्ण प्रतिदर्श प्राप्त करने में उतनी ही अधिक कठिनाई का अनुभव करना पड़ता है। इच्छित विशेषताओं की दृष्टि से जनसंख्या की परिभाषा सामाजिक समूहों के संदर्भ में की जानी चाहिए।

2. निदर्शन अभिकल्प का विकास

समय की परिभाषा करने के पश्चात निदर्शन एवं सारिणीकरण के लिए भौगोलिक क्षेत्रों, सामाजिक समूहों, परिवारों, स्थानों, व्यक्तियों, घटनाओं, व्यवहारों, लक्षणों इत्यादि इकाइयों का चुनाव किया जाना चाहिए। प्रायः प्रयोग में लाई जाने वाली इकाइयों को -

- अ) भौगोलिक अथवा राजनीतिक अथवा प्रशासकीय इकाइयों,
- ब) सामाजिक समूहों अथवा संस्थाओं,
- स) परिवार अथवा कुटुम्ब अथवा निवास की अन्य इकाइयाँ अथवा फार्मों,
- द) व्यक्तियों तथा
- य) व्यक्तियों के व्यवहारों अथवा विचारों अथवा लक्षणों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है ।

जहाँ कहीं भी व्यक्तियों को इकाई के रूप में चुना जाता है वहाँ अध्ययन आदर्श रूप ग्रहण करता है क्योंकि व्यक्तियों द्वारा प्रदान किये गये प्रत्युत्तरों को सारणीबद्ध किया जा सकता है और इन सारिणियों की सहायता से अधिक उपयुक्त निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं। इसके बाद स्रोत सूची का पता लगाकर इसकी प्राप्ति की जाती है। यद्यपि समग्र एवं निदर्शन की इकाइयों का निर्धारण प्रायः मस्तिष्क में पायी जाने वाली स्रोत सूची के आधार पर किया जाता है फिर भी वास्तविक सूची का निर्माण सम्पूर्ण प्रतिदर्श योजना का एक आवश्यक अंग है।

3. निदर्शन का चुनाव

तत्पश्चात प्रयोग किये जाने वाले निदर्शन के प्रकार अथवा प्रकारों के विषय में निर्णय लिये जाते हैं। इसके बाद निदर्शन के आकार अथवा निदर्शन के अनुपात को निर्धारित किया जाता है। तत्पश्चात सम्पूर्ण निदर्शन कार्य नीति की योजना तथा निदर्शन के अनुपात को निर्धारित किया जाता है।

इसके बाद निदर्शन के सूची का निर्माण तथा निदर्शन का चुनाव किया जाता है। चुने गए निदर्शन की जाँच इस दृष्टि से की जाती है कि वास्तव में सही इकाइयों को ही निदर्शन में सम्मिलित किया गया है। इसके बाद परिचयात्मक सूचना को प्रतिदर्श कार्डों पर उतारा जाता है। क्षेत्र अनुसंधान को आरम्भ करने के निदर्शन के परिक्षण के लिए निदर्शन सारिणियों का निर्माण किया जाता है।

आकड़ों के संग्रह अवधि के दौरान निदर्शन का नियंत्रण किया जाता है तथा इस बात का प्रयास किया जाता है कि निदर्शन में चुनी गयी सभी इकाइयों में से सम्बन्धित सूचना को किस प्रकार सुरक्षित रखा जा सकता है। कार्यालय के अन्तर्गत निदर्शन पर आवश्यक नियंत्रण लागू किया जाता है तथा इस बात का प्रयास किया जाता है कि विभिन्न निदर्शन इकाइयों से सम्बन्धित सूचना को किस प्रकार सुरक्षित रखा जा सकता है।

4. आंकड़ों का संचयन

निदर्शन में चुनी गयी इकाइयों में पायी जाने वाली विशेषताओं की जाँच समग्र के अन्तर्गत पायी जाने वाली विशेषताओं के सन्दर्भ में की जाती है ताकि निदर्शन में पायी जाने वाली विभिन्न विशेषताओं का पता चल सके जिन पर आरम्भिक स्थितियों में ध्यान दिया गया है। निदर्शन के अन्तर्गत आवश्यकतानुसार सामंजस्य एवं संशोधन किया जाता है। अनुसंधान में प्राप्त आँकड़ों के निदर्शन के विश्वसनीयता के पृष्ठभूमि में विवेचना की जाती है, निदर्शन प्रणालियों को प्रकाशित किया जाता है और प्राप्त हुई समालोचना के आधार पर इनका मूल्यांकन किया जाता है।

4.4.1 एक श्रेष्ठ अथवा प्रतिनिधिपूर्ण निदर्शन की विशेषताएँ

निदर्शन की सफलता उसकी उपयुक्तता, परिशुद्धता पर आधारित है। एक अच्छे चुने गये निदर्शन के द्वारा ही हम अनुसंधान की सफलता की अपेक्षा कर सकते हैं। उपयुक्त निदर्शन तथा चुना जा सकता है जब अनुसंधानकर्ता को अपने समग्र के बारे में प्रयाप्त जानकारी हो एवं उसके पास परिशुद्ध समग्र सूची हो। मिल्ड्रेन पार्टिन लिखते हैं कि सर्वेक्षण में वह निदर्शन उत्तम होता है जो कुशल प्रतिनिधित्व, विश्वसनीयता एवं लोच की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

व्यवस्थित रूप से चुने गये अपेक्षाकृत छोटे निदर्शन बड़े निदर्शनों से भी अधिक विश्वसनीय होते हैं। सामान्यतः श्रेष्ठ निदर्शन की निम्नांकित विशेषताएँ कही जा सकती हैं-

1. पर्याप्त आकार-निदर्शन की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता उसके आकार की है

अर्थात् एक श्रेष्ठ निदर्शन के लिए यह आवश्यक है कि अनुसंधान समस्या के उद्देश्यों एवं प्रकृति के अनुसार पर्याप्त इकाइयों का चयन किया जाय। एक निदर्शन को केवल प्रतिनिधिपूर्ण होना ही पर्याप्त नहीं है। बल्कि उसमें पर्याप्तता भी होनी चाहिए। “एक निदर्शन उस समय पर्याप्त होता है जब आकार उसके लक्षणों की स्थिरता में विश्वास स्थापित करने के लिए पर्याप्त हो।”

2. **समग्र का उचित प्रतिनिधित्व** - निदर्शन अपने समय का सही प्रतिनिधि होता है। लुण्डबर्ग के अनुसार इस धारणा कि तथ्यों का अंश सम्पूर्ण का प्रतिनिधि है। की वैधता मात्र दो बातों से निर्धारित होती है। यथा 1. अवलोकन किये जा रहे तथ्यों की प्रकृति तथा 2. उनके चुनाव के लिए अपनायी गयी पद्धति। इस प्रकार निदर्शन समग्र का सही प्रतिनिधित्व तभी करेगा जब वह उसके समरूपा हो तथा उसके चुनाव के लिए सही पद्धति काम में ली गयी हो।

3. **अभिनति रहित** - एक श्रेष्ठ निदर्शन की प्रतिनिधित्वता इस बात पर निर्भर करती है कि उसका चुनाव अभिनति रक्षित है या नहीं। सामान्यतः निदर्शन में अभिनति तीन कारणों से आती है-

अ) यदि निदर्शन अप्रायिकता पद्धति से चुना गया हो।

इस प्रकार जब निदर्शन का चुनाव जाने अनजाने मानवीय इच्छा से प्रभावित हो जाता है तब वह अभिनतिपूर्ण हो जाता है।

ब) यदि समय सूची अपर्याप्त या अधूरी हो और विषय से संबंधित सभी इकाइयों को अपने में सम्मिलित न कर रही हो।

स) यदि अनुसंधानकर्ता अपनी इच्छा का प्रयोग करते हुए निदर्शन में कुछ भी परिवर्तन करता है। चाहे वह इस कारण ही क्यों न हो कि अनेक दूसरी इकाइयाँ लेना चाहता हो) तब इस बात की आशंका रहती है कि निदर्शन का किसी एक ओर मिथ्या झुकाव हो जायेगा।

इस प्रकार एक श्रेष्ठ निदर्शन का चुनाव करते समय वह ध्यान रखा जाता है कि अनुसंधानकर्ता की रुचि, स्वार्थ, इच्छा, सुविधा आदि पर न होकर वस्तुनिष्ठ तरीके से चुना जाना चाहिए।

4. **साधनों एवं उद्देश्यों के अनुरूप** - निदर्शन का चुनाव करते समय अनुसंधानकर्ता को इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिए कि चयनित निदर्शन अनुसंधान के पास उपलब्ध साधनों के अनुरूप हो एवं साधनों के अनुरूप ही निदर्शन की संख्या, चयन निदर्शन प्रविधि आदि को चुना जाना चाहिए। इसी प्रकार अनुसंधान उद्देश्यों के अनुरूप ही होना चाहिए अन्यथा वह व्यर्थ होगा।

4.5 निदर्शन के प्रकार

निदर्शन का चुनाव निम्न प्रकार से किया जाता है -

1. प्रायिकता (सम्भावना) निदर्शन (Probability sampling)
2. अर्द्ध प्रसम्भावना प्रतिचनय निदर्शन (Semi-Probability sampling)
3. अप्रायिकता (असम्भावित) निदर्शन (Non-Probability Sampling)

प्रायिकता का प्रतिचयन या निदर्शन मूलतः सांख्यिकी के नियमों पर आधारित है जिससे अनुसंधानकर्ता यह आकलन कर सकता है कि यदि समग्र एवं निदर्शन दोनों का अध्ययन किया जाए तो उनसे प्राप्त जानकारी में किस सीमा तक अन्तर होने की सम्भावना नहीं है। जितने अन्तर के लिए वह तैयार है उसके आधार पर यह निश्चय भी किया जा सकता है कि निदर्शन बड़ा होना चाहिए, जबकि अप्रायिकता या असम्भावित निदर्शन के आधार पर समग्र के विषय में ठीक ठीक आकलन नहीं हो सकता। इसका उपयोग सुविधा एवं धन की बचत के उद्देश्य से या अन्वेषणात्मक अध्ययनों में होता है जिससे अनुसंधानकर्ता को आगे अनुसंधान के लिए कुछ उपकल्पनायें प्राप्त हो जायें।

4.5.1 प्रायिकता या सम्भावना निदर्शन

सम्भावित या प्रायिकता शब्द का प्रयोग भी सम्भावित के गणितीय सिद्धांत के अर्थ में करते हैं। इस प्रकार के निदर्शन में प्रत्येक इकाई के चुनाव की सम्भावना रहती है। इस प्रकार निदर्शन का चुनाव ऐसी पद्धति से किया जाता है जिनमें समग्र की प्रत्येक इकाई को निदर्शन में आने का अवसर मिलता है। इसके साथ ही इस बात की गणना भी सांख्यिकीय आधार पर की जा सकती है कि इकाई के निदर्शन में सम्मिलित होने की क्याय संभावनायें हैं?

सम्भावित के दो प्रमुख प्रकार हैं -

1. प्राग-आनुभविक
2. अनुभवजन्य

(1) प्राग-आनुभविक - सम्भावित के साथ साइमन लाप्लास का नाम सम्बद्ध है। इसे प्राग-आनुभविक इसलिए कहा जाता है क्योंकि हम पहले से ही यह स्वीकार कर आगे बढ़ते हैं कि सम्भावित निश्चित होती है तथा हम घटनाओं की सम्भावित का निर्धारण आनुभविक रूप से खोज किये बिना भी कर सकते हैं। लाप्लास यह कहा करता था कि सम्भावित के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं। हम यह जानते हैं कि एक सिक्के में चित (Head) तथा पट (Tail) दो फलक हैं। इसलिए यदि एक सिक्के को उछाला जाये तो

इसके चित अथवा पट गिरने की सम्भावित $1/2$ है। हम इसी प्रकार जानते हैं कि एक पासे में 6 फलक हैं। किसी भी फलक के गिरने की सम्भाविता $1/6$ है।

(2) अनुभवजन्य - अनुभवजन्य तथा बारम्बारता सम्भावित अपनी मौलिक प्रकृति में अनुभवजन्य है। इसके अनुसार संभाविता परीक्षणों की एक श्रंखला में एक घटना के घटित होने की संख्या तथा प्रयोगों की सम्पूर्ण संख्या के बीच पाया जाने वाला अनुपात है। उदाहरण के लिए यदि हम एक सिक्के को 100 बार उछालें और हमें 40 बार चित प्राप्त हो तो चित के बल गिरने की घटना की सम्भाविता $40/100$ हो जायेगी। इसी प्रकार यदि हम एक पासे को 100 बार फेंकें और 10 बार 6 वाला फलक ऊपर आये तो 6 वाले फलक के ऊपर आने की सम्भाविता $10/100$ हो जायेगी।

सामान्य सम्भावित निदर्शनों के निम्नांकित लाभ हैं -

1. प्रशासनिक लागत अथवा पहले से ही सूचना निर्माण पर लगने वाली लागत में कमी होने के कारण कम लागत के बावजूद भी अच्छे परिणामों की प्राप्ति।
2. विभिन्न स्तरों में प्रयासों के समुचित वितरण के कारण कम व्यय होने पर भी अधिक अच्छे परिणामों की प्राप्ति।
3. व्यक्तिगत स्तरों के लिए आगणन करने की अधिक सम्भावना।

4.5.2 अर्द्ध-प्रसम्भावना प्रतिचयन (Semi-Probability Sampling)

प्रायिकता अथवा सम्भावना निदर्शन में जहोदा एवं कुक ने तीन विधियों का उल्लेख किया है जिन्हें क्रमशः 1 सरल दैव निदर्शन 2. स्तरीकृत दैव निदर्शन तथा 3. बहुस्तरीय दैव निदर्शन कहा जाता है। व्यवस्थित एवं गुच्छ निदर्शन भी प्रायिकता निदर्शन की ही प्रविधि है। अतः मोटे तौर पर प्रायिकता निदर्शन की निम्नांकित विधियाँ हैं।

1. दैव निदर्शन
2. स्तरीकृत निदर्शन
3. बहुस्तरीकृत निदर्शन
4. व्यवस्थित निदर्शन
5. गुच्छ निदर्शन

निदर्शन के प्रकारों को चित्रात्मक रूप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है।

4.5.2.1 दैव अथवा यादृच्छिक निदर्शन (Random Sampling)

दैव अथवा यादृच्छिक निदर्शन एवं प्रायिकता या सम्भावना निदर्शन को एक पर्यायवाची के रूप में प्रयोग किया जाता है। निदर्शन समग्र के एक अंश को निकालने का एक ऐसा ढंग है जो जनसंख्या अथवा समग्र के प्रत्येक सदस्य के चुनाव को ज्ञात सम्भाविता प्रदान करता है। यहाँ पर यादृच्छित शब्द चुनाव के विशिष्ट ढंग का विशेषण है निदर्शन का नहीं। यदि निदर्शन इस प्रकार किया जाय कि समग्र के सभी तत्वों या इकाइयों को निदर्शन में चुने जाने की सम्भाविता समान हो तो उसे हम दैव यादृच्छित निदर्शन कहते हैं।

दैव निदर्शन के प्रयोग में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए।

1. समग्र की इकाइयाँ स्पष्ट कर उनकी सूची तैयार की जाये,
2. इकाइयों का आकार लगभग समान हो,
3. प्रत्येक इकाई एक दूसरे से स्वतंत्र हो,
4. प्रत्येक इकाई को निदर्शन में चुनाव का समान अवसर मिलना चाहिए।
5. निदर्शन चयन की विधि स्वतंत्र होनी चाहिए।
6. अध्ययनकर्ता की प्रत्येक इकाई तक पहुँच सुलभ होनी चाहिए।
7. चुनी हुई इकाई को न तो छोड़ा जाना चाहिए और न ही उसका प्रतिस्थापन करना चाहिए।

दैव या यादृच्छिक निदर्शन के अनेक प्रकार हो सकते हैं एवं उनके चुनने की प्रमुख प्रविधियाँ निम्नलिखित हैं -

1. लॉटरी विधि
2. कार्ड प्रणाली
3. रेमण्ड प्रणाली
4. नियमित अंकन प्रणाली
5. अनियमित अंकन प्रणाली
6. ग्रिड प्रणाली

1. **लॉटरी विधि** - सरल दैव निदर्शन चुनाव की यह विधि बहुत ही सरल है। कई सामान्य अवसरों पर इसका प्रचलन जनसाधारण में भी देखने को मिलता है। इस विधि के अन्तर्गत अनुसंधानकर्ता समग्र की प्रत्येक इकाई के लिए एक एक कागज की पर्ची तैयार करता है। उस पर उस इकाई का नाम या संकेत लिख दिया जाता है इस प्रकार

बनाई गयी पर्चियों के आधार पर कागज की गोलियाँ बना ली जाती हैं और उन्हें एक साथ ठीक से मिला दिया जाता है। ऐसा करने के बाद अनुसंधानकर्ता जिस संख्या में निदर्शन का चुनाव करना चाहता है उतनी गोलियों निकाल लेता है। और उन पर जिन इकाइयों के नाम या संकेत होते हैं उन्हें निदर्शन मान लिया जाता है। इस विधि का उपयोग करने के लिए एक सावधानी यह रखनी पड़ती है कि सभी गोलियों का आकार बराबर हो।

2. **कार्ड प्रणाली** - यह प्रणाली लॉटरी प्रणाली से मिलती जुलती होती है। लॉटरी प्रणाली में कागज की पर्चियों के उपयोग के कारण इसका एक प्रमुख दोष यह है कि ये पर्चियाँ एक दूसरे से चिपक सकती हैं। एक से आकार रंग या बनावट के कार्डों की समस्त इकाइयों के नाम अथवा संख्या का या कोई अन्य चिन्ह अंकित कर दिया जाता है। सबको एकत्रित कर गोल तथा बड़े ड्रम में भर कर जितनी इकाइयों का चुनाव करना होता है उतने बार घुमाकर कार्ड निकाले जाते हैं। निकाले गये कार्डों वाली इकाइयों को शोधकर्ता द्वारा अध्ययन किया जाता है। यह दो तरह से किया जा सकता है- (क) इसमें शोधकर्ता स्वयं या अन्य कोई आँख बन्द करके तथा (ख) इसमें कोई भी आँख खुली रखकर इकाइयों का चयन करता है। दोनों के मध्य इतना ही अन्तर है।

3. **रेण्डम अंक या टिप्पेट प्रणाली** - सरल दैव निदर्शन के चयन की एक अन्य विधि को रेण्डम प्रणाली या टिप्पेट प्रणाली के नाम से जाना जाता है। इस प्रणाली को प्रो. टिप्पेट ने 1927 में गणितीय अंकों के आधार पर तैयार किया है। टिप्पेट की तरह ही फिशर एवं वेल्स (1936) केण्डल एवं स्मिथ (1939) रैण्ड कारपोरेशन (1955), राम मित्रा एवं मथाई (1966) ने भी निदर्शन सारणियाँ बनायी हैं। लेकिन वर्तमान समय में टिप्पेट सारिणी का प्रयोग अधिक किया जाता है। उन संख्याओं को देव निदर्शन का प्रयोग करने के लिए सुनिश्चित कर दिया गया। यह संख्या बिना ही किसी क्रम के कई पृष्ठों पर लिखी हुई है। शोधकर्ता आवश्यकतानुसार, जितनी इकाइयों का अध्ययन करना है। उतनी इकाइयों को किसी भी पृष्ठ से लगातार लेता जाता है। उदाहरण के लिए यदि 100 मजदूरों के समग्र से 10 मजदूरों की इकाइयों का अध्ययन करना है तो उन 100 इकाइयों को क्रम से जमा कर टिप्पेट के क्रम से लेंगे। टिप्पेट प्रणाली में संख्याओं के चुनाव के दो प्रमुख ढंग हैं - 1. प्रत्यक्ष चुनाव का ढंग 2. अवशेष चयन के ढंग ।

(क) **प्रत्यक्ष चुनाव का ढंग** - किररी विशिष्ट प्रकार से तथा क्रमबद्ध संख्याओं की सारिणी से संख्याओं को चुनकर उन संख्याओं को स्वीकार किया जाता है जो निदर्शन

के आकार से अधिक नहीं होती। उदाहरण के लिए यदि हम 400 इकाइयों के समय से चुनाव करना चाहते हैं और हमने यह निश्चित कर रखा है कि हम संघों के स्तम्भों के आरम्भ और अन्त में दी गई संख्याओं के तीन तीन के समूहों में चुनाव करेंगे क्योंकि 400 में तीन अंक पाए जाते हैं।

(ख) अवशेष वाला ढंग - मान लीजिए कि उस समग्र में 150 इकाइयाँ हैं जिससे हम अपने निदर्शन का चुनाव करना चाहते हैं ऐसी स्थिति में हमें निम्नांकित कार्यरिती का पालन करना पड़ेगा।

1. एकाएक हम संख्याओं का सारिणी के चाहे किसी भी स्तम्भ अथवा पंक्तियों से आरम्भ करें हमें तीन अंकों वाले समूहों के रूप में संख्याओं का चुनाव करना पड़ेगा।

2. हमें ज्ञात करना पड़ेगा कि तीन अंकों वाली संख्याओं में 150 का अधिकतम गुणन क्या है।

3. तीन तीन के समूहों के रूप में चुनी गई विभिन्न संख्याओं में से हमें केवल उन्हीं को स्वीकार करना होगा जो 900 से कम है।

4. स्वीकार की गई 150से अधिक संख्याओं को 150 से विभाजित कर इनके अवशेष को ज्ञात करना होगा तथा इसे ही अन्तिम रूप से निदर्शन में स्वीकार करना होगा।

4. नियमित अंकन प्रणाली - नियमित अंकन प्रणाली सरल देव निदर्शन की एक महत्वपूर्ण विधि मानी जाये या नहीं यह एक विवादित प्रश्न है। इस पद्धति के द्वारा अनुसंधानकर्ता जब निदर्शन का चुनाव करता है तब सबसे पहले वह वर्गान्तर की गणना करता है।

इस चुनाव वर्गान्तर की गणना करने के पश्चात आरम्भिक बिन्दु का चुनाव किया जाता है और उसके लिए अनुसंधानकर्ता पहली संख्या तथा वर्गान्तर जोड़ता है। जो संख्या प्राप्त होती है उसमें पुनः वर्गान्तर जोड़ा जाता है। और इस प्रक्रिया को समग्र की सूची में जिन इकाइयों के नाम होते हैं उन्हें निदर्शन में सम्मिलित कर लिया जाता है। एक उदाहरण से विधि को स्पष्ट किया जा सकता है। यदि हमें 10,000 के समग्र में से 500 व्यक्तियों का चयन इस विधि से करना है तो हम सर्वप्रथम इन 10,000 व्यक्तियों की सूची तैयार करेंगे। इसके बाद वर्गान्तर की गणना करेंगे जो कि इस उदाहरण के सन्दर्भ में 20 होगी। इस वर्गान्तर की गणना के बाद पहली संख्या व 20 के बीच किसी एक संख्या का चुनाव लॉटरी द्वारा करेंगे। उदाहरण के लिए, हम यह मान लेते हैं कि वह

संख्या 4 है। इस संख्या को आरम्भिक बिन्दु कहा जाएगा। इसमें वर्गान्तर की संख्या हमें प्राप्त होती है। समग्र की सूची में इन अंकों पर जिन व्यक्तियों के नाम होंगे उन्हें निदर्शन में सम्मिलित कर लिया जाएगा।

5. **अनियमित अंकन प्रणाली** - इसमें भी समग्र या जनसंख्या की समस्त इकाइयों की एक सूची बनायी जाती है। इस सूची में प्रथम और अंतिम अंक को छोड़कर शेष इकाइयों की क्रमसंख्या पर शोधकर्ता निशान लगाता चलता है। ये निशान उतनी ही इकाइयों पर लगाए जाते हैं इस कारण इसमें पक्षपात का समावेश हो जाता है।

6. **ग्रिड प्रणाली** - यह क्षेत्र या भौगोलिक आधार पर निदर्शन निर्माण की प्रणाली है। इसमें किसी विशाल भौगोलिक क्षेत्र का जहाँ से निदर्शन लेना है नक्शों या मानचित्र लेकर उस पर सेल्युलाइड की पारदर्शन ग्रिड प्लेट रख दी जाती है। इस प्लेट में वर्गाकार चौकोर खाने कटे हुए तथा उन पर नम्बर लिखे हुए होते हैं। यह पहले ही निश्चित कर लिया जाता है कि किस आधार पर किन किन नम्बरों का आकस्मिक ढंग से चलन किया जाना है। मानचित्र के जिन हिस्सों पर निर्धारित नम्बरों के वर्गाकार खाने आते हैं उनको चिन्हित करके अध्ययन के लिए चुन लिया जाता है। इसे क्षेत्र निदर्शन कहते हैं किन्तु वह थोड़ा सा भिन्न प्रकृति का होता है।

4.5.2.2 दैव निदर्शन के लाभ

इसके निम्नलिखित लाभ हैं -

1. दैव निदर्शन का प्रयोग किए जाने की स्थिति में समग्र की विशेषताओं अथवा इनके आवंटन का पूर्व ज्ञान आवश्यक नहीं है।
2. अनुसंधानकर्ता अपने परिणामों को यथार्थता का मूल्यांकन सरलतापूर्वक कर सकता है क्योंकि निदर्शन त्रुटियों संयोग के नियमों का पालन करती है।
3. दैव निदर्शन की इकाइयाँ एक समग्र की परिवर्तनशीलता को अधिक अच्छे ढंग से स्पष्ट कर सकती है। अपेक्षाकृत उस स्थिति की जिसे समान संख्या में इकाइयों का चुनाव स्वेच्छापूर्वक किया गया हो।
4. जैसे जैसे दैव निदर्शन का आकार बढ़ता जाता है वैसे वैसे निदर्शन की प्रतिनिधित्वपूर्णता भी बढ़ती जाती है तथा उस सीमा का निर्धारण सम्भावित के नियमों के आधार पर किया जा सकता है जिस सीमा तक इसके ऊपर समग्र के एक सही प्रतिनिधि के रूप में विश्वास कर सकते हैं

4.5.2.3 दैव निदर्शन से हानियाँ

1. पहले से समय के सूचीबद्ध रूप से उपलब्ध होने की आवश्यकता के पाए

जाने के कारण दैव निदर्शन का प्रयोग करने के मार्ग में आने वाली कठिनाई।

2. निदर्शन के चुनाव के पूर्व प्रत्येक इकाई के लिए संख्याओं के निर्धारण कार्य में होने वाले समय प्रयासों एवं धन के अतिरिक्त व्यय।

3. असंतोषजनक अथवा भ्रामक निदर्शन प्राप्त होने की सम्भावना। स्टीफन ने लिखा है- “यह दैव निदर्शन में असन्तोषपूर्ण चुनाव के दौरान चुनाव का दैव एक दिशा में उतनी ही त्रुटियाँ प्रदान करेगा जितनी कि दूसरी दिशा में बहुत कम सहायता एवं आराम प्रदान करता है।”

4. समान सांख्यिकीय विश्वसनीयता की प्राप्ति के लिए आवश्यक निदर्शन का आकार प्रयः स्तरीकृत निदर्शन की तुलना में दैव निदर्शन में अधिक बड़ा होता है।

5. क्षेत्र अध्ययनों के अन्तर्गत चुनी गई इकाइयों के विस्तृत क्षेत्र में फैले होने के कारण समय, प्रयास एवं धन का व्यय अधिक होता है।

4.5.2.4 स्तरीकृत निदर्शन (Stratified Sampling)

सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य विभिन्न वर्गों के बीच तुलनात्मक अध्ययन करना है अथवा ऐसी स्थिति में जबकि अध्ययनकर्ता अध्ययन से पूर्व यह तय कर लेता है कि निदर्शन में समग्र में पाये जाने वाले समस्त वर्गों का उचित प्रतिनिधित्व हो तब स्तरीकृत निदर्शन का उपयोग किया जाता है। ये दोनों ही उद्देश्य सरल दैव निदर्शन के द्वारा ही पूरी किए जा सकते हैं और किए जाते हैं। इसके अतिरिक्त एक ऐसी स्थिति में जबकि समग्र के विभिन्न वर्गों में से कोई एक वर्ग अपेक्षाकृत बहुत छोटा होता है तो सरल दैव निदर्शन के द्वारा लिए गये निदर्शन में उस वर्ग का उतना प्रतिनिधित्व नहीं हो पाता कि उसका दूसरों वर्गों से तुलनात्मक अध्ययन किया जा सके। यह महत्वपूर्ण है कि परिभाषा इस प्रकार दी जाए कि प्रत्येक तत्व एक और केवल एक ही स्तर में आए। यह हो सकता है कि सब स्तरों में से एक ही अनुसप्त में निदर्शन का अनुपात बराबर न हो।

स्तरीकृत निदर्शन को निम्नांकित सारिणी की सहायता से उदाहरण समझाया जा सकता है।

(क) समानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन - समानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन में प्रत्येक निदर्शन की इकाइयाँ उसी अनुपात में ली जाती हैं जिस अनुपात में वे समग्र के अन्तर्गत होती हैं। यदि विभिन्न स्तरों में भिन्न भिन्न संख्या में इकाइयाँ पाई जाती हैं तो प्रत्येक स्तर के लिए समानुपातिकता की प्राप्ति हेतु प्रत्येक स्तर में से इकाइयों को एक स्थिर अनुपात में चुनते हैं। समानुपातिक निदर्शन अनुसंधानकर्ता को इस विषय में निश्चित होने की सामर्थ्य प्रदान करता है कि वह प्रत्येक स्तर से सही अनुपात में इकाइयों का चुनाव कर रहा है।

समानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन के विषय में निम्नलिखित तथ्य उल्लेखनीय है। -

1. समानुपातिक निदर्शन सूक्ष्मता की सीमा को बढ़ा देता है। क्योंकि प्रत्येक स्तर के निदर्शन के अन्तर्गत समानुपातिक प्रतिनिधित्व होता है।
2. इसका प्रयोग करने पर गैर-समानुपातिक निदर्शन की तुलना में प्रायः अधिक बचत होती है।
3. इसका प्रयोग सापेक्षातया सरल है और इसलिए प्रायः प्रयोग में लाया जाना चाहिए।
4. इकाइयों के चुनाव की तुलना में गुच्छों को निदर्शन की इकाइयों के रूप में चुनाव अधिक लाभदायक होता है।
5. स्तरीकरण के लिए उपयुक्त चरों के निर्धारण एवं चुनाव पर अधिक समय व्यय नहीं किया जाता।
6. स्तरों की संख्या जितनी ही अधिक होती है त्रुटि की सम्भावना उतनी ही कम होती है।

(ख) असमानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन - कभी कभी असमानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन का चयन करना पड़ता है। जहोदा के अनुसार असमानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन के कई कारण हो सकते हैं -

1. निदर्शन के आकार की दृष्टि से सभी समान रूप से विश्वसनीय होते हैं। प्रत्येक स्तर के समान संख्या में इकाइयों का चुनाव किए जाने के कारण विभिन्न स्तरों की तुलना सम्भव हो जाती है।
2. निदर्शन के इस प्रकार से बहुत अधिक होती है क्योंकि इसके उत्तरदाता एक दूसरे से भौगोलिक समीपता की स्थिति में होते हैं।

4.5.2.5 बहुस्तरीय निदर्शन (Multi-Stage Sampling)

सरल दैव निदर्शन विधि से सम्बन्धित आने वाली कठिनाइयों में मुख्य हैं शोधकर्ता के पास समष्टि के समग्र इकाइयों की सूची का पहले से पूर्ण ज्ञान न होना तथा यदि अध्ययन क्षेत्र अधिक बढ़ा हो तो, इकाइयों के बीच भौतिक दूरी का अधिक होना। बहुस्तरीय निदर्शन इन दोनों कठिनाइयों का निवारण सरलता से कर लेता है बहुस्तरीय निदर्शन में समष्टि को कई स्तरों में विभाजित किया जाता है तथा हर स्तर से प्रतिचयन लिए जाता है। उदाहरणार्थ लोक सभा चुनाव में मतगणना से पहले विभिन्न समाचार पत्रों द्वारा कराया गया सर्वेक्षण बहुस्तरीय निदर्शन पर आधारित होता है।

4.5.2.6 व्यवस्थित निदर्शन (Systematic Sampling)

निदर्शन का उपयोग करने के स्थान पर समष्टि सूची में से नियमित अन्तराल के मद सदस्यों को चुन लेते हैं। जैसे यदि 1,500 की समष्टि में हमें 100 का प्रतिचयन लेना हो तो हम समष्टि सूची में से प्रत्येक पन्द्रहवें सदस्य को चुन लेते हैं 1500 को 100 से भाग देकर यह 15 का अन्तराल हमें मिल जाता है। यह आवश्यक है कि पहले तत्व का चयन दैव हो। पहली संख्या चुनने के लिए हम लाटरी की पद्धति या दैव संख्याओं की तालिका का उपयोग कर सकते हैं।

4.5.2.7 गुच्छ निदर्शन (Cluster Sampling)

यदि हम किसी समष्टि को बहुत से समूहों में बाँट लें और फिर इनमें से केवल कुछ समूहों का निदर्शन लेकर उनके तत्वों का अध्ययन करें तो इसे गुच्छ निदर्शन कहते हैं जैसे यदि किसी राज्य में 200 चुनाव क्षेत्र हों और हमें इनमें से 10 का प्रतिचयन ले लें और मतदाताओं का अध्ययन करें तो यह गुच्छ निदर्शन होगा, इस प्रकार से सारे राज्य में नहीं घूमना पड़ेगा। अपने नमूने में आम चुनाव क्षेत्रों के आधार पर हम सारे राज्य के विषय में आकलन कर सकेंगे। सामाजिक सर्वेक्षणों में इस प्रणाली का उपयोग यात्रा के खर्चों को कम करने के उद्देश्य से किया जाता है।

4.5.3 अप्रसम्भाव्यता निदर्शन (Non-Probability Sampling)

इस प्रतिचयन विधि में इकाइयों का चयन प्रासम्भाव्यता सिद्धान्त नहीं होता, बल्कि अध्ययनकर्ता को इकाइयों के चयन में प्रायः स्वतंत्रता रहती है। जब इकाइयों के चयन का आधार संयोग न रहकर सुविधा, अवसर, निर्णय आदि रहता है जब ऐसे निदर्शन को अप्रसम्भाव्यता निदर्शन कहे हैं। अप्रसम्भाव्य प्रतिचयन की निम्नलिखित विधियाँ होती हैं -

1. **खण्ड निदर्शन (Chunk Sampling)** - इसके अन्तर्गत सम्पूर्ण समष्टि का व्यापक अध्ययन न करके केवल किसी एक विशेष अंश का सुविधानुसार अध्ययन किया जाता है।
2. **यथांश निदर्शन (Quota Sampling)** - इसके अन्तर्गत प्रत्येक स्तर जैसे लिंगभेद, विभिन्न शैक्षिक स्तरों व अन्य स्तरों के समानुपात में प्रतिदर्श की इकाइयों को लिया जाता है।
3. **अवसरानुसार निदर्शन (Incidental or Accidental Sampling)** - इसके अन्तर्गत बिना किसी पूर्व योजना के इकाइयों से सम्पर्क किया जाता है जैसे ट्रेन, बस, होटल, रेखां मार्ग में जहाँ भी कोई व्यक्ति मिले, उससे ही समस्या सम्बन्धी जानकारी प्राप्त कर ली जाती है।

4. **सुविधानुसार निदर्शन (Convenience Sampling)**- अध्ययनकर्ता उन स्थानों, व्यक्तियों, सहभाषियों से सम्पर्क करता है, जिससे उसे सम्पर्क में पर्याप्त सुविधा रहती है। जैसे जब एक महिला शोधकर्ता अपने अध्ययन में अपनी सुविधा के आधार पर केवल महिलाओं का ही चयन अपने प्रतिदर्श इकाइयों के रूप में करती हैं, तब ऐसे निदर्श को सुविधानुसार निदर्श कहते हैं।

5. **उद्देश्यानुसार निदर्शन (Purposive Sampling)** - केवल समस्या से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित व्यक्तियों से ही सम्पर्क किया जाता है। जैसे राजनीतिक समस्याओं के अध्ययन के लिए राजनीति से सम्बन्धित व्यक्तियों को ही अपने प्रतिदर्श का आधार बनाना एक प्रकार से अध्ययन के उद्देश्य से अधिक उपयुक्त रहता है।

6. **विचारानुसार निदर्शन (Judgement Sampling)** - इसमें प्रतिदर्श इकाइयों का चयन विचारपूर्वक किया जाता है। इकाइयों का चयन अध्ययन से सम्बन्धित समस्या के विभिन्न पहलुओं को ध्यान में रखकर किया जाता है।

7. **विशेषज्ञानुसार निदर्शन (Expert's Sampling)** - ऐसे प्रतिदर्श में इकाइयों के चयन में अपने विशेष अनुभव व प्रशिक्षण के कारण विशेषज्ञ के मत की ही अधिक महत्वपूर्ण भूमिका रहती है।

8. **स्वेच्छानुसार निदर्शन (Self-Selected Sampling)** - इसके अन्तर्गत उन इकाइयों का अध्ययन किया जाता है जो स्वेच्छानुसार विभिन्न समस्याओं पर अपना पता समाचार पत्रों व पत्रिकाओं में व्यक्त करते रहते हैं। वहाँ अध्ययनकर्ता अपने प्रतिदर्श के लिए इकाइयों का चयन नहीं करता।

4.5.3.1 अप्रसम्भाव्यता निदर्शन विधि के दोष

1. इसमें इकाइयों का चयन प्रायः अध्ययनकर्ता की सुविधा पर होता है, अतः इसमें पक्षपात की अधिक सम्भावना होती है।
2. पक्षपात के कारण निदर्श समक्ष का प्रतिनिधित्व नहीं करता।
3. इसमें प्रतिचयन की त्रुटि की गणना में कठिनाई होती है क्योंकि ऐसे प्रतिदर्शन में प्रसम्भाव्यता सिद्धान्त की अभिकल्पना नहीं रहती है।
4. इसके द्वारा परिणाम विश्वसनीय तथा वैध नहीं होते, तथा इस कारण इसमें भविष्य कथन की क्षमता भी प्रायः उपलब्ध नहीं होती।

4.6 सारांश

निदर्शन सामान्यतः समग्र में से चुना गए अंश के चुनाव को कहा जाता है जो समग्र अथवा सम्पूर्ण का उचित प्रतिनिधित्व करते हैं। निदर्शन का सम्बन्ध छोटे समूहों

के अध्ययन में रहता है इसलिए इस पर आधारित शोध परिणामों को संदेह की दृष्टि से देखा जाता है। निदर्शन उन स्थितियों में उपयोगी नहीं है जहाँ समष्टि के प्रत्येक इकाई के बारे में जानकारी जरूरी है। निदर्शन की कुछ प्रमुख अवयव हैं - इकाई, समग्र या समष्टि, निदर्शन इकाई, निदर्शन संरचना, स्तर, साधन सूची। निदर्शन के नियोजन को चार चरणों में विभक्त किया जाता है : 1. समष्टि को परिभाषित करना तथा उसका चुनाव 2. निदर्शन अभिकल्प का विकास, 3. निदर्शन का चुनाव, 4. आँकड़ों का संचयन निदर्शन का चुनाव निम्न प्रकार से किया जाता है -

1. प्रायिकता (सम्भावना) निदर्शन (Probability Sampling)
2. अर्द्ध प्रसम्भावना प्रतिचयन (Semi-Probability Sampling)
3. अप्रायिकता (असम्भावित) निदर्शन (Non-Probability Sampling)

निदर्शन के चयन तथा इसके प्रयोग में चाहे किसी भी प्रविधि का उपयोग किया जाय, अध्ययनकर्ता के वैयक्तिक गुणों के बिना निदर्शन को न तो विश्वसनीय बनाया जा सकता है और नहीं इसके द्वारा यथार्थ सूचनाओं को प्राप्त किया जा सकता है। अनुसंधानकर्ता की बौद्धिक ईमानदारी, अध्ययन विषय का समुचित ज्ञान, समग्र की जानकारी तथा एक महत्वपूर्ण विधि के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है।

4.7 बोध प्रश्न

1. निदर्शन प्रणाली को क्यों प्रयोग किया जाता है? इसके प्रयोग में क्या सावधानी बरतनी चाहिए?
2. निदर्शन कितने प्रकार के होते हैं तथा इनका चयन किस प्रकार किया जाता है? उदाहरण सहित समझाइये।

4.8 सन्दर्भ पुस्तकें

सामाजिक अनुसंधान शोध - एम. एल. गुप्ता, डी.डी. शर्मा

सांख्यिकीय, डा. के. एल. गुप्ता,

सांख्यिकीय विधियाँ - प्रो. एस. पी. गुप्ता

अनुसंधान परिचय - डा. बी.एल. शर्मा

अनुसंधान परिचय - श्री पारसनाथ राय

Fundamental of Statistics - S.P. Singh

Principles of Statistics.

इकाई - 5 परिकल्पनाओं का निर्माण एवं परीक्षण (Hypothesis Formulation and Testing)

इकाई की रूपरेखा-

- 5.0 उद्देश्य
- 5.1 प्रस्तावना
- 5.2 परिकल्पना का अर्थ एवं परिभाषा
- 5.3 परिकल्पना का उद्देश्य
 - 5.3.1 चरों का वर्गीकरण
 - 5.3.2 परिकल्पना निर्माण के चरण
- 5.4 परिकल्पना की विशेषताएँ
 - 5.4.1 परिकल्पनाओं के उदगम स्रोत
- 5.5 परिकल्पनाओं का वर्गीकरण
 - 5.5.1 परिकल्पनाओं का परीक्षण
 - 5.5.2 परिकल्पना परीक्षण के प्रकार
 - 5.5.3 शोध समस्या के आधार पर
 - 5.5.4 आँकड़ों के वितरण के आधार पर
 - 5.5.5 आँकड़ों के संग्रह में चरों की मापन विधि पर आधारित
 - 5.5.6 शोध में सम्मिलित चरों की संख्या पर आधारित
- 5.6 सारांश
- 5.7 बोध प्रश्न
- 5.8 संदर्भ ग्रन्थ

5.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात पाठक जान सकेंगे -

- परिकल्पना का अर्थ तथा परिकल्पना को परिभाषित करने का तरीका ,
- परिकल्पनाओं का वर्गीकरण एवं परिकल्पना निर्माण के चरण,
- परिकल्पना की विशेषतायें एवं परिकल्पनाओं के उदगम स्रोत, तथा

5.1 प्रस्तावना

सामाजिक प्रघटनाओं के अध्ययन में परिकल्पनाओं या उपकल्पनाओं का निर्माण, उनका प्रयोग एवं उनकी उपयोगिता अनुसंधान का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष है। किसी भी सामाजिक प्रघटना के वैज्ञानिक अध्ययन में अनुसंधानकर्ता वस्तुतः एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकता जबकि वह अपना अनुसंधानकार्य उपकल्पना से प्रारम्भ न करे। उपकल्पना के अभाव में अनुसंधान की न तो दिशा निर्धारित होती है एवं न ही विषय क्षेत्र का ज्ञान अनुसंधानकर्ता को होता है। अतः अनुसंधानकर्ता के लिए यह आवश्यक है कि वह आकड़ों के संकलन व अवलोकन के लिए अपनी कल्पना, अनुभव या अन्य किसी स्रोत के आधार पर एक कार्यकारी तर्क वाक्य का निर्माण करें एवं बाद में अनुसंधान के दौरान इस तर्क वाक्य की परीक्षा करें। यह तर्क सामान्यतः उपकल्पना या परिकल्पना कहलाता है।

5.2 परिकल्पना का अर्थ एवं परिभाषा

परिकल्पना को सामान्यतः एक कार्यकारी तर्क वाक्य या एक काम चलाऊ सामान्यीकरण' माना जाता है। इस तर्क वाक्य अथवा सामान्यीकरण की अनुसंधान के दौरान परीक्षा की जाती है। वह सत्य भी हो सकता है तथा असत्य भी। परिकल्पना का शाब्दिक अर्थ है पूर्व चिन्तक, अर्थात् पहले से सोचा गया कोई भी बिचार या चिन्तन। गुडे एवं हैट्ट ने अपनी महत्वपूर्ण पुस्तक 'मेथड्स इन सोशल रिसर्च' में इसे परिभाषित करते हुए लिखा है कि 'उपकल्पना भविष्य की ओर देखती है। यह एक तर्कपूर्ण वाक्य है, जिसकी वैधता की परीक्षा की जा सकती है। यह सत्य भी सिद्ध हो सकती है और असत्य भी'। साधारण शब्दों में परिकल्पना शोधकर्ता द्वारा शोध प्रश्न के उत्तर के बारे में एक सटीक अनुमान है, जिसे वह शोध विधियों द्वारा सत्यापित करना चाहता है।

उपयुक्त परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि परिकल्पना एक ऐसा कार्यकारी तर्क वाक्य, कल्पनात्मक धारणा या पूर्वानुमान होता है जिसे अनुसंधानकर्ता अनुसंधान की प्रकृति के आधार पर पहले से निर्मित कर लेता है एवं अनुसंधान के दौरान अनुसंधानकर्ता परिकल्पना की वैधता की परीक्षा करता है। यह परिकल्पना सत्य असत्य दोनों हो सकती है। यदि अनुसंधान में संकलित एवं विश्लेषित किए गये तथ्यों के आधार पर परिकल्पना प्रमाणित हो जाती है एवं इसी प्रकार की परिकल्पना अनेक बार अनेक

स्थानों पर अर्थात् समग्र व काल से परे प्रमाणित होती जाती है। तो वे धीरे धीरे एक सिद्धान्त के रूप में प्रतिस्थापित होती जाती हैं।

5.3 परिकल्पना का उद्देश्य

वैज्ञानिक अध्ययन परिकल्पना के अभाव में संभव नहीं, परन्तु वैज्ञानिक शब्द का अर्थ अत्यन्त लचीला है। अतः कुछ अध्ययन केवल कठोर मापदण्ड पर ही वैज्ञानिक होते हैं और कुछ साधारण मापदण्ड पर ही वैज्ञानिक कहे जा सकते हैं। वास्तव में सामाजिक विज्ञानों की भी समस्याओं का स्वरूप कठोर मापदण्ड पर वैज्ञानिक नहीं है। कुछ अध्ययनों का स्वरूप बहुत सरल व साधारण होता है। विशेषतः अनुसंधान की प्रारम्भिक अवस्था कभी कभी केवल सामान्य महत्व की जानकारी के लिए ही किया जाता है। अतः ऐसे अन्वेषणात्मक अध्ययन (Exploratory Research) में परिकल्पना की रचना व्यर्थ रहती है क्योंकि यह समस्या का अध्ययन का मुख्य उद्देश्य केवल सामान्य आकड़ों का संकलन करना ही होता है, और उससे प्राप्त जानकारी से ही अनुसंधान का प्रयोजन समाप्त हो जाता है।

परिकल्पना अधिकतर कारणत्मक अनुसंधान (Causal Research) अथवा प्रायोगिक अनुसंधान (Experimental Research) के परीक्षण से सम्बन्धित होता है। किसी परिकल्पना का प्रमुख उद्देश्य चरों के बीच सम्बन्धों को परिभाषित करना है। जैसा कि हम जानते हैं कि परिकल्पना शोध करने के पूर्व ही शोध के अनुमानित परिणाम की व्याख्या है यह परिणाम इस तर्क पर आधारित है कि कैसे एक चर दूसरे चर को प्रभावित करता है। इसलिए, परिकल्पना के प्रमुख घटकों में चर राशियाँ तथा उनमें सम्बन्ध हैं। यह भी कहा जा सकता है कि परिकल्पनाओं के द्वारा शोधकर्ता शोध प्रक्रिया से सम्बन्धित चरों में संबंधों का सत्यापन करता है।

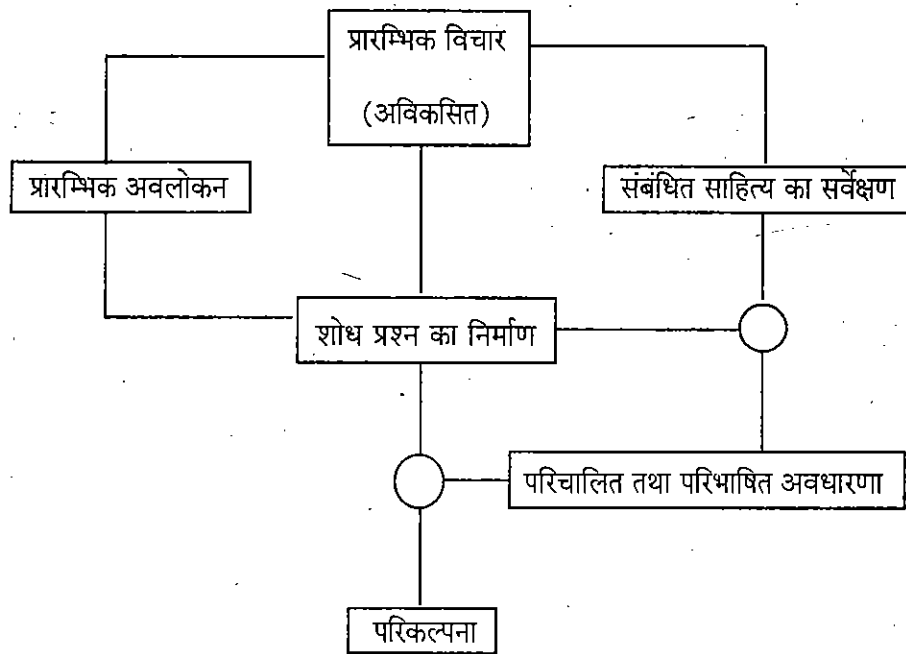
5.3.1 चरों का वर्गीकरण (Classification of Variables)

आमतौर पर चरों को तीन श्रेणी में विभाजित किया जाता है- आश्रित, स्वतन्त्र तथा नियन्त्रित। स्वतंत्र चर वे होते हैं जिन्हें अनुसंधानकर्ता परिवर्तित करते हैं, उदाहरणार्थ अगर एक शोधकर्ता यह देखना चाहता है कि खाद की मात्रा बढ़ाने से खेत की उत्पादकता पर क्या प्रभाव पड़ता है और इसके लिए वह अलग अलग खेतों में खाद की अलग अलग मात्रा देता है तथा हर खेत की पैदावार का आकलन करता है तो इस प्रयोग में उत्पादकता की मात्रा स्वतंत्र चर है तथा खेत में हुई पैदावार आश्रित चर है।

नियंत्रित चर वे चर हैं जिन्हें अनुसंधानकर्ता स्थिर रखना चाहता है। दिये गये उदाहरण में हर खेत में पानी की मात्रा को स्थिर रखकर ही खाद की कार्यक्षमता का परीक्षण किया जा सकता है, अतः पानी की मात्रा इस प्रयोग में नियंत्रित चर है।

5.3.2 परिकल्पना निर्माण के चरण (Steps in Formulation of a Hypothesis)

परिकल्पना का निर्माण, जैसा कि दिये गये रेखा चित्र में हम देख सकते हैं, अविकसित प्रारम्भिक विचार से शुरू होता है। इसकी उत्पत्ति के स्रोत हम इकाई 1 में पढ़ चुके हैं। इसके पश्चात ही हम संबन्धित साहित्य का सर्वेक्षण तथा प्रारम्भिक अवलोकनों के आधार पर शोध समस्या अथवा शोध प्रश्न का निर्माण करते हैं। तत्पश्चात परिचालित तथा परिभाषित अवधारणाओं (Operational Definitions of Constructs) के सापेक्ष परिकल्पना का निर्माण किया जाता है।



परिकल्पना निर्माण के चरण

5.4 परिकल्पना की विशेषताएँ (Characteristics of a Hypothesis)

प्राकृतिक एवं सामाजिक दोनों ही प्रकार के विज्ञानों में सामान्यतः अनुसंधानकर्ता अपना वैज्ञानिक अध्ययन किसी न किसी परिकल्पना के आधार पर ही प्रारम्भ करता है। गुडे एवं हैट्ट ने परिकल्पनाओं की निम्नलिखित पाँच विशेषताओं का उल्लेख किया है -

1. स्पष्टता
2. अनुभवसिद्धता
3. विशिष्टता
4. उपलब्ध प्रविधियों का सम्बन्ध
5. सिद्धान्तों से संबन्धित

परिकल्पना की कुछ सामान्य विशेषताएं निम्नलिखित हैं -

1. परिकल्पनाएं सरल एवं अध्ययन विषयों के अनुरूप होनी चाहिए। यदि अध्ययनकर्ता अपनी अध्ययन समस्या से भली भाँति परिचित है एवं वैज्ञानिक प्रकृति वाला है तो वह सुगमता से परिकल्पना का निर्माण करता है।
2. परिकल्पना अनुसंधान कार्य का मार्ग निर्देशन करने वाली होनी चाहिए। अन्यथा अनुसंधानकर्ता जिन तथ्यों का एकत्रीकरण करेगा उनमें से अधिकांश उपयोगी न होंगे।
3. परिकल्पनाओं में अवधारणात्मक में स्पष्टता होनी चाहिए अर्थात् उनमें एक तो अवधारणाएं दिखें और दूसरे शब्द एवं विचारधाराएं स्पष्ट एवं भ्रमरहित होनी चाहिए।
4. परिकल्पनाएं विशिष्ट होनी चाहिए, न कि सामान्य अर्थात् परिकल्पना तो सदैव अध्ययन समस्या के किसी विशिष्ट पक्ष से सम्बन्धित होनी चाहिए।
5. परिकल्पनाओं में ऐसे पूर्व विचार एवं अवधारणाएं होती हैं जिनकी सत्यता की जाँच वास्तविक शब्दों के आधार पर की जा सकती है एवं इनमें किसी प्रकार की भी आदर्शात्मकता नहीं होनी चाहिए।
6. परिकल्पना को आवश्यक एवं उपलब्ध पद्धतियों के अनुरूप होना चाहिए, यदि ऐसा नहीं होता है तो परिकल्पना को अव्यवहारिक माना जाता है।
7. परिकल्पनायें वैज्ञानिक रूप से वस्तुनिष्ठ होनी चाहिए। अर्थात् इन्हें अनुसंधानकर्ता के आदर्श मूल्य एवं स्वयं की भावनाओं को महत्व न देकर वस्तुनिष्ठ आधारों पर निर्मित करना चाहिए।
8. परिकल्पना जब पूर्व निर्मित सिद्धान्तों से संबन्धित होती हैं तो निरन्तर अध्ययन के आधार रूप में बनी रहती है। नयी एवं अलग अलग तरह की उपकल्पनायें वैज्ञानिकता के लिए कम सफल होती हैं।
9. परिकल्पना प्रस्तुत अध्ययन समस्या का पर्याप्त उत्तर होनी चाहिए अर्थात् जो अध्ययन समस्या अनुसंधानकर्ता के सामने है उसका पर्याप्त उत्तर परिकल्पना द्वारा प्राप्त होना चाहिए।

5.4.1 परिकल्पनाओं के उद्गम स्रोत (Sources of Hypothesis)

सामान्यतः सामाजिक विज्ञानों में परिकल्पनाओं के दो प्रमुख स्रोतों का उल्लेख किया गया है- पहला वैयक्तिक या निजी स्रोत तथा दूसरा बाह्य स्रोत। वैयक्तिक या निजी स्रोत अनुसंधानकर्ता की अपनी स्वयं की अन्तर्दृष्टि सूझबूझ कोरी कल्पना, विचार, अनुभव कुछ भी हो सकता है। वह सामान्यतः अपनी प्रतिभा, दूरदर्शिता, विचारों की मौलिकता तथा अनुभवों के आधार पर उपकल्पना का निर्माण कर सकता है। अनेक उदाहरण ऐसे दिये जा सकते हैं जिनमें वैज्ञानिकों ने अपने व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर ऐसी अनेक परिकल्पनाओं का निर्माण किया जिनके आधार पर विश्व विख्यात वैज्ञानिक नियमों का प्रतिपादन संभव हुआ।

बाह्य स्रोत में कोई भी साहित्य, कल्पना, कहानी, कविता, विचार, अनुभव, सिद्धान्त, साहित्य, दर्शन, नाटक, उपन्यास अथवा प्रतिवेदन आदि कुछ भी हो सकता है। इसका मूल आशय यह है कि जब कभी अनुसंधानकर्ता किसी अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों के द्वारा प्रतिपादित एक सामान्य विचार के आधार पर अपनी परिकल्पना का निर्माण करता है तो उसे हम परिकल्पना का बाह्य स्रोत करते हैं। चार प्रमुख स्रोत जिन्हें उपकल्पना की दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जाता है वे निम्नलिखित हैं-

1. **सामान्य संस्कृति** - व्यक्तियों की गतिविधियों को समझने का सबसे अच्छा तरीका उनकी संस्कृति को समझना है। व्यक्तियों का व्यवहार एवं उनका सामान्य चिन्तन, बहुत सीमा तक उनकी अपनी संस्कृति के अनुरूप ही होता है। अतः अधिकांश उपकल्पनाओं का मूल स्रोत यह सामान्य संस्कृति होती है जिसमें विशिष्ट विज्ञान का विकास होता है।
2. **वैज्ञानिक सिद्धान्त** - वैज्ञानिक सिद्धान्त जो समय समय पर वैज्ञानिकों द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं, भी कुछ परिकल्पना के स्रोत हो सकते हैं। प्रत्येक विज्ञान में अनेक सिद्धान्त होते हैं, इन सिद्धान्तों से हमें एक विषय के विभिन्न पहलुओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होती है। इस प्रकार इन सिद्धान्तों के अन्तर्गत सम्मिलित पक्षों के सम्बन्ध में प्राप्त ज्ञान भी उपकल्पनाओं का स्रोत माना जा सकता है।
3. **सादृश्यतायें**- जब कभी दो क्षेत्रों में कुछ समानताएं या समरूपताएं दिखायी देती हैं तो सामान्यतयः इस आधार पर भी परिकल्पनाओं का निर्माण कर लिया जाता है, अर्थात् ऐसी समरूपताएं या सादृश्यताएं परिकल्पना के निर्माण तथा घटना में किसी कामचलाऊ नियम की खोज के लिए अत्यन्त उपयोगी पथ प्रदर्शक होती है। कभी कभी

दो तथ्यों के मध्य समानता के कारण नई परिकल्पना का जन्म होता है, और इनकी प्रेरणा के कारण सदृश्यताएं होती हैं लुई पास्चर द्वारा चेचक के टीके लगाने के सिद्धान्तों में गायों के चेचक से संक्रमित होने तथा उसी से सादृश्य मनुष्य के शरीर में चेचक के कीटाणु छोड़ने को उपकल्पना माना गया है।

4. **व्यक्तिगत प्रकृति - वैशिष्ट्य अनुभव** - परिकल्पना का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत सिद्धान्त है। सिद्धान्त हमारे चिन्तन को दिशा देता है। प्रत्येक सिद्धान्त से निगमन द्वारा हमें अनेक उपकल्पनाएँ प्राप्त होती हैं, फिर भी इन परिकल्पनाओं से निगमन द्वारा हम कुछ निष्कर्ष निकालते हैं जिनकी अनुभाव द्वारा ज्ञात तथ्यों से तुलना की जाती है।

5.5 परिकल्पनाओं का वर्गीकरण (Classification of Hypothesis)

1. **आप्रायोगिक परिकल्पनाएँ (Non-Experimental Hypothesis)** - जैसा कि इसके नाम से ही दर्शित है यह उन अनुसंधानों से सम्बन्ध रखता है जो कि वैज्ञानिक मापदण्डों का कठोर अनुपालन नहीं करते हैं। उदाहरणार्थ कई सामाजिक शोधक्रियाएँ पूर्णतयः वैज्ञानिकता की कसौटी पर खरी नहीं उतरतीं। आप्रायोगिक अनुसंधानों में परिकल्पना प्रायः तीन प्रकार की होती है।

1. **साधारण स्तर परिकल्पना (Simple Level Hypothesis)** - इस प्रकार की परिकल्पना से एक अनुसंधान से सम्बन्धित चरों एवं घटनाओं का केवल साधारण अध्ययन किया जाता है। उदाहरणार्थ अगर हमें 'सड़क दुर्घटनाओं की जानकारी प्राप्त करना है' तब ऐसे अनुसंधान में केवल आँकड़ों का संकलन अथवा वर्गीकरण करना ही पर्याप्त होता है।

2. **विषम स्तर परिकल्पना (Complex Level Hypothesis)** - जब अनुसंधान का उद्देश्य चरों तथा घटनाओं का घन अध्ययन होता है, उस स्थिति में अनुसंधान के स्वरूप का विषम होना स्वाभाविक ही है। उदाहरणार्थ, उपरोक्त शोध समस्या में ही अगर हमें यह भी जानना है कि सड़क दुर्घटनायें सड़क के किन किन स्थानों में तथा किस समय होती हैं तो आँकड़ों के संकलन, वर्गीकरण तथा विश्लेषण के कार्यभार में अत्यधिक वृद्धि हो जायेगी, और तदनुसार ऐसे विषम अनुसंधान से सम्बन्धित परिकल्पना को विषम स्तर परिकल्पना कहेंगे।

3. **विशिष्ट स्तर परिकल्पना (Refined Level Hypothesis)** - कुछ अनुसंधान ऐसे होते हैं कि जिनमें संबंधित चरों व घटनाओं के प्रकार्यात्मक सम्बन्धों

(Functional Relations) व कार्यकरण संबंधों (Causal Relationships) का अध्ययन करना होता है। निःसन्देह, ऐसे अनुसंधान का स्वरूप अधिक विशिष्ट होता है, उदाहरणार्थ मान लिया जाय कि अगर हम यह जानना चाहते हैं कि क्या सड़क दुर्घटना यन्त्रों की खराबी के कारण ही मुख्यतः होते हैं, तो इस शोध प्रश्न के लिए हमें विशिष्ट स्तर परिकल्पना की संरचना करनी होगी।

2. प्रायोगिक परिकल्पना (Experimental Hypothesis) - प्रायोगिक अनुसंधानों में परिकल्पनाओं का स्वरूप थोड़ा भिन्न होता है क्योंकि उनमें सम्बन्धित चरों का नियंत्रण जोड़ तोड़ तथा अभिक्रियाओं के कारण कठोर वैज्ञानिक मापदण्ड पर करना होता है, तथा उनसे सम्बन्धित आँकड़ों का स्वरूप अत्यन्त जटिल होता है और उनका विश्लेषण भी विषम सांख्यिकीय प्रविधियों द्वारा किया जाता है। अतः प्रायोगिक अनुसंधानों में परिकल्पनाओं का स्वरूप अत्यधिक निश्चित नियंत्रित तथा संक्रियात्मक रहता है। प्रायोगिक अनुसंधानों में प्रायः निम्नलिखित परिकल्पनाओं का उपयोग किया जाता है।

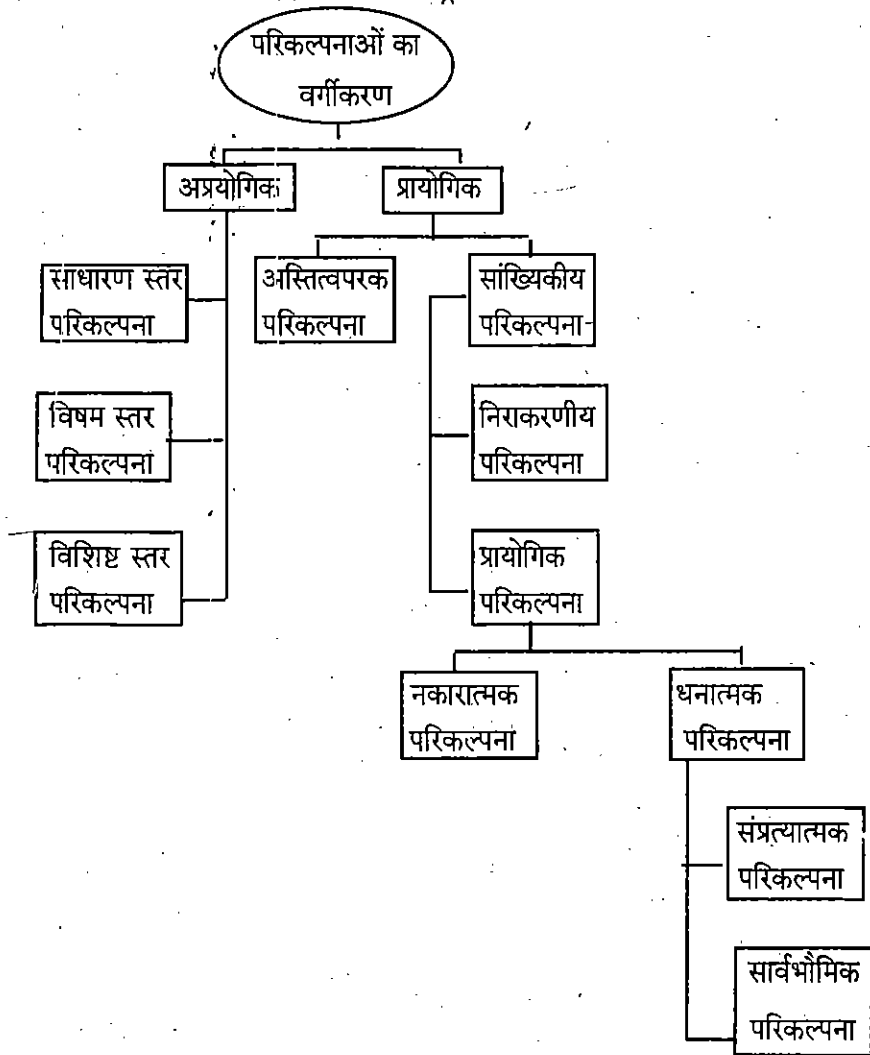
1. अस्तित्वपरख परिकल्पना (Existential Hypothesis) - अस्तित्वपरख का शाब्दिक अर्थ यह है कि जिसका इस समय अस्तित्व है। इस प्रकार अस्तित्वपरख परिकल्पना का सम्बन्ध एक वर्तमान स्थिति के सीमित, स्थानीय तथा व्यक्तिगत अध्ययन से होता है। इस प्रकार के अध्ययन की महत्वपूर्ण विशेषता यह होती है कि इसका अन्तर्गत एक ही इकाई का गहन अध्ययन होता है और इससे प्राप्त निष्कर्ष का स्वरूप पर्याप्त मात्रा में वैज्ञानिक भी रहता है। उदाहरणार्थ स्मरण ज्ञान तथा प्रतिवृत्ति क्रिया से सम्बन्धित शोध।

2. सांख्यिकीय परिकल्पना (Statistical Hypothesis) - की यह विशेषता होती है कि इसके स्वरूप की रचना इस प्रकार की जाती है कि जिससे सम्बन्धित चरों के प्रकार्यात्मक सम्बन्धों के अध्ययनों में उपयुक्त सांख्यिकीय परीक्षणों का उपयोग सुविधापूर्वक किया जा सके। एक सांख्यिकीय परिकल्पना एक ऐसा कथन होता है जिसका संबंध एक या एक से अधिक प्राचाल (Parameter) से होता है और यह संबंध एक ऐसी स्थिति से रहता है कि जो सत्य हो सकती है।

निराकरणीय परिकल्पना (Null Hypothesis - H_0) - निराकरणीय परिकल्पना की उपधारणा रहती है कि स्वतंत्र चर के प्रभाव के कारण दो या दो से अधिक समूहों में कोई वास्तविक अन्तर उत्पन्न नहीं हुआ है, और जो अन्तर देखने में आया है, उसका सम्बन्ध प्रतीचयन संबंधी त्रुटियों तथा संयोगजन्य त्रुटियां कुछ भी हो सकता है, परन्तु स्वतंत्र चर

का प्रभाव वह नहीं है। स्वतंत्र चर तब तक अन्तर का कारण नहीं माना जायेगा जब तक कि यह अन्तर सन्देह के परे सिद्ध नहीं किया जाता। उदाहरणार्थ यदि हमारा तर्क वाक्य यह है कि गणित योग्यता के आधार पर लड़के और लड़कियाँ एक समान नहीं होतीं, तब इस तर्क वाक्य की पुष्टि का सरलतम आधार पर यह होगा कि हम यह तर्क वाक्य सिद्ध करें कि गणितीय योग्यता के आधार पर लड़कों और लड़कियों में सार्थक अन्तर नहीं है। यदि हम उनमें सार्थक अन्तर नहीं सिद्ध कर पाते हैं तब हमें यह मानना होगा कि गणित योग्यता के आधार पर लड़के और लड़कियाँ एक समान होते हैं।

परन्तु यदि उनकी योग्यताओं में सार्थक अन्तर देखने में आता है तब निराकारणीय परिकल्पना को अस्वीकृत करना होगा और केवल इस स्थिति में हम एक दूसरे प्रकार की परिकल्पना की रचना करेंगे जिसमें हम कह सकेंगे कि गणित में लड़कों की योग्यता लड़कियों की योग्यता से अधिक होती है। (या फिर गणित में लड़कियों की योग्यता लड़कों की योग्यता से अधिक होती है), इस प्रकार की परिकल्पना को वैकल्पिक परिकल्पना Alternative Hypothesis H_A) कहते हैं।



परिकल्पना का वर्गीकरण

4. **प्रायोगिक परिकल्पना (Experimental Hypothesis H₁)** - प्रायोगिक परिकल्पना की रचना में दो समूहों में अन्तर प्रत्याशित रहता है। चूँकि सामान्यतः समूहों में अभिक्रियाओं की मात्राएँ अलग अलग होती हैं अतः प्रयोगकर्ता अपने आँकड़ों के द्वारा प्रायोगिक परिकल्पना की पुष्टि को प्रत्याशित करता है। प्रायोगिक परिकल्पना को वैकल्पिक परिकल्पना भी कहते हैं। चूँकि ऐसी परिकल्पना के अन्तर्गत अध्ययन से संबंधित दोनों समूह में अन्तर प्रत्याशित रहता है, अतः प्रायोगिक परिकल्पना के अन्तर के प्रकार के आधार पर दो रूप, एक धनात्मक परिकल्पना (Positive Hypothesis) तथा दूसरा नकारात्मक परिकल्पना (Negative Hypothesis) देखने में आता है, इनके आधार पर सम्बन्धित प्रस्तावित परिकल्पना के भी दो रूप हो जाते हैं।

5. **संप्रयात्मक परिकल्पना (Conceptual Hypothesis)** - जब एक परिकल्पना स्वतंत्र चर तथा आश्रित चर के प्रत्याशित संबन्धों के विषय में एक संक्षिप्त कथन होता है, तब उसे संप्रयात्मक परिकल्पना कहते हैं। एक संप्रयात्मक परिकल्पना की रचना प्रतिरूप (माडल) के आधार पर की जाती है। इसकी रचना से पूर्व अनुसंधानों तथा सम्बन्धित सिद्धान्तों की सहायता ली जाती है, तथा सम्बन्धित चरों व सम्प्रत्ययों की संक्रियात्मक व्याख्या करनी होती है।

6. **सार्वभौमिक परिकल्पना (Universal Hypothesis)** - इस प्रकार की परिकल्पना का उद्देश्य सम्बन्धित चरों के विषय में ऐसे सम्बन्ध स्थापित करना होता है जिनका स्वरूप सार्वभौमिक हो अथवा परिकल्पना के आधार पर प्राप्त निष्कर्षों में ऐसे सामान्य नियमों की रचना करना होता है जो प्रत्येक काल तथा देश में वैध हो। सार्वभौमिक परिकल्पना केवल उसी स्थिति में सम्भव है, जबकि एक विषय का ज्ञान भण्डार पर्याप्त रूप से वैज्ञानिक स्तर पर विकसित हो। उदाहरणार्थ अवगद्धों की गैसेस हेतु परिकल्पना (Boyle's Hypothesis for Gases)

5.5.1 परिकल्पनाओं का परीक्षण (Testing of Hypothesis)

परिकल्पना का परीक्षण एक अनुमान तथा निर्णय लेने की प्रक्रिया है जिसमें हम प्रतिदर्श के आधार पर यह सत्यापित करते हैं कि समष्टि प्राचाल (Parameters of the Universal Set) एक दी गई संख्या से कम, ज्यादा अथवा बराबर है। परिकल्पना के परीक्षण द्वारा हम यह तय कर सकते हैं कि दिये गये परिकल्पना की विश्वसनीयता कितनी है? परिकल्पना परीक्षण में विद्यार्थियों को परिकल्पना की विश्वसनीयता का मूल्यांकन करना पड़ता है। निराकरणीय परिकल्पना को अस्वीकार करने से पहले यह मान लिया

जाता है कि परिकल्पना की विश्वसनीयता उसके मान पर निर्भर करती है।

परिकल्पना परीक्षण में हम सांख्यिकी के प्रयोग से परिकल्पना के सत्य होने की प्रायिकता ज्ञात करते हैं। परिकल्पना परीक्षण के सामान्यतः चार चरण होते हैं :

1. निराकरणीय परिकल्पना का निर्माण तथा वैकल्पिक परिकल्पना का निर्माण।
2. परिकल्पना की सत्यता का मूल्यांकन करने के लिए परीक्षण आँकड़ों का निर्धारण।
3. पी-मूल्य (p-value) को ज्ञात करना, जो कि इस बात की प्रायिकता दर्शाता है कि परीक्षण आँकड़ों की सार्थकता कम से कम उतनी ही है जितनी कि परिकल्पना के सत्य होने की स्थिति में अवलोकनों में प्राप्त होता है। पी-मूल्य का मान जितना छोटा होगा, निराकरणीय परिकल्पना की सत्यता के विरुद्ध तर्क उतना ही सशक्त होगा।
4. निकाले गये परीक्षण आँकड़ों के दिये गये सार्थक स्तर के मानक मूल्यों से तुलना की जाती है। यदि परीक्षण आँकड़ों का मूल्य मानक मूल्यों से अधिक होता है तो निराकरणीय परिकल्पना को अस्वीकारकर वैकल्पिक परिकल्पना को स्वीकार कर लेते हैं और इसके विपरीत दशा में हम वैकल्पिक परिकल्पना को अस्वीकार कर के निराकरणीय परिकल्पना को स्वीकार कर लेते हैं।

5.5.2 परिकल्पना परीक्षण के प्रकार (Types of Hypothesis Tests)

परिकल्पना के परीक्षण के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षण हैं। प्रत्येक परीक्षण निश्चित परिस्थिति तथा पूर्वधारणा के लिए उपयुक्त होता है। हर परीक्षण की दूसरे के सापेक्ष कुछ अच्छाइयाँ एवं कमियाँ रहती हैं। परिकल्पना परीक्षण का प्रकार मुख्यतः निम्नलिखित पूर्वधारणाओं पर आधारित किया जाता है।

5.5.3 शोध समस्या के आधार पर (On the Basis of Research Problem)

जैसा कि पूर्व में बताया गया है कि निराकरणीय परिकल्पना उपधारणा इस बात की पुष्टि करती है कि स्वतंत्र चर के प्रभाव के कारण दो या दो से अधिक समूहों में कोई वास्तविक अन्तर उत्पन्न हुआ है या नहीं। उदाहरणार्थ यदि हम यह देखना चाहते हैं कि किसी कक्षा में पढ़ रहे छात्रों की लम्बाई औसतन पाँच फीट है या नहीं तो इसके लिए हम निराकरणीय परिकल्पना निम्न प्रकार से लिख सकते हैं।

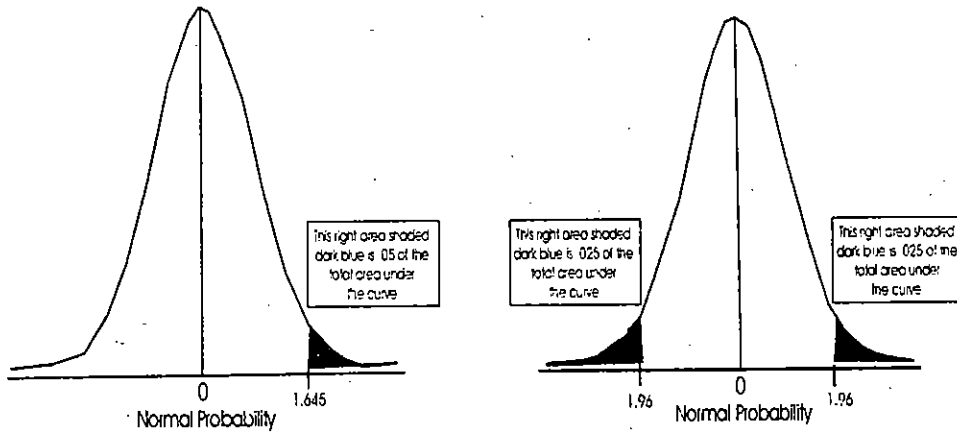
$$(1) \quad H_0 : \text{छात्रों की लम्बाई} \leq 5 \text{ फीट या,}$$

(2) H_0 : छात्रों की लम्बाई ≥ 5 फीट

यदि हम सिर्फ यह जानना चाहते हैं कि 'क्या छात्रों की औसत लम्बाई 5 फीट से अधिक है?' इसके लिए पहली परिकल्पना पर्याप्त है और यदि प्रश्न यह है कि 'क्या छात्रों की औसत लम्बाई 5 फीट से अधिक है' तो दूसरी परिकल्पना का प्रयोग होगा, परन्तु हम सिर्फ यह देखना चाहते हैं कि औसत लम्बाई 5 फीट है अथवा नहीं, तब हमें ऐसी परिकल्पना का निर्माण करना होगा जो कि पहले लिखे दोनों परिकल्पनाओं को एक साथ परीक्षित करें, अर्थात्

(3) H_0 : 5 फीट \leq छात्रों की लम्बाई ≥ 5 फीट

पहले दो प्रकार की परिकल्पनाओं का परीक्षण हम एकपक्षीय (One Tailed test) परीक्षण से करते हैं, क्योंकि यहाँ सिर्फ आँकड़ों के वितरण को मानक प्रकृत वितरण (Standard Normal Distribution) के सापेक्ष एक ही दिशा से पुष्टि करना होता है, इसके विपरीत उपरोक्त लिखित तीसरे परिकल्पना में पुष्टि दोनों दिशा में करने के लिए हम द्वि-पक्षीय परीक्षण (Two-tailed test) की सहायता लेते हैं।



टी-परीक्षण, A-परीक्षण तथा जेड - एक-पक्षीय परीक्षण के उदाहरण हैं (यद्यपि इन परीक्षणों को द्वि-पक्षीय परीक्षण के रूप में भी उपयोग किया जा सकता है।

5.5.4 आँकड़ों के विवरण के आधार पर (On the Basis of Data Distribution)

टी-परीक्षण तथा ए-परीक्षण का उपयोग जिन आँकड़ों पर किया जाता है, उसका स्वरूप प्रायः जनसंख्या सम्बन्धित प्राचल होता है, परन्तु कुछ आँकड़े ऐसे भी होते हैं कि जिनका स्वरूप प्राचल न होकर अप्राचल होता है। ऐसा प्रायः तब होता है जबकि आँकड़े दो या अधिक संवर्गों में विभाजित होते हैं स्पष्टतः व्यक्तियों, मूल्यों घटनाओं व आकड़ों को जब इस प्रकार का विभाजन होता है तब उनके सम्बन्धों में प्राचल सम्बन्धी अथवा प्रतिचयन सम्बन्धी अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। ऐसी स्थिति में उनका संबंध सामान्य जनसंख्या से न होकर विशेष संवर्गों से होता है। सांख्यिकी में ऐसे संवर्गों में

विभाजित आँकड़ों को ही अप्राचल आँकड़े कहते हैं। ऐसे संवर्गों में विभाजित आँकड़ों के अन्तर की सार्थकता की जाँच के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षणों का उपयोग किया जाता है। निम्नलिखित सारणी में कुछ प्रमुख प्राचल तथा अप्राचल परीक्षण तथा उनके सूत्र दिये गये हैं।

<p>उद्देश्य</p> <p>किसी समूह के मध्यमान की सार्थकता का आंकलन</p> <p>To assess the Mean of a population (μ)</p>	<p>प्राचल परीक्षण (Parametric Tests)</p> <p>z-test, test statistics given as $z = \frac{\bar{X} - \mu_{H_0}}{\sigma_p / \sqrt{n}}$</p> <p>t-test, test statistics given as $t = \frac{\bar{X} - \mu_{H_0}}{\sigma_p / \sqrt{n}}$ with d.f. = (n-1), where</p> $\sigma = \sqrt{\frac{\sum (X_i - \bar{X})^2}{n-1}}$	<p>अप्राचल परीक्षण (Non-Parametric Tests)</p> <p>Sign Test, test statistic is given by $z = \frac{x - 0.5}{\sqrt{\frac{0.25}{n}}}$ where</p>
<p>दो बड़े तथा स्वतंत्र समूहों के माध्यमान के अन्तर की सार्थकता की जाँच</p> <p>To assess the difference in mean of two independent samples.</p>	<p>z-test for difference in mean, and the test statistics is given as:</p> $z = \frac{\bar{X}_1 - \bar{X}_2}{\sqrt{\sigma_p^2 \left(\frac{1}{n_1} + \frac{1}{n_2} \right)}}$ <p>OR</p> <p>In case σ is not known we use in t-test, test statistics given as</p> $t = \frac{\bar{X}_1 - \bar{X}_2}{\sqrt{\frac{\sum_{i=1}^n (X_{1i} - \bar{X}_1)^2 + \sum_{i=1}^n (X_{2i} - \bar{X}_2)^2}{n_1 + n_2 - 2}} \times \sqrt{\frac{1}{n_1} + \frac{1}{n_2}}}$ <p>with d.f. = (n₁ + n₂ - 2).</p> <p>Alternatively</p> $t = \frac{\bar{X}_1 - \bar{X}_2}{\sqrt{\frac{(n_1 - 1)\sigma_1^2 + (n_2 - 1)\sigma_2^2}{n_1 + n_2 - 2}} \times \sqrt{\frac{1}{n_1} + \frac{1}{n_2}}}$	<p>Wilcoxon Matched Pair Test (also known as Signed Rank Test);</p> <p>$z = \frac{R - \mu_1}{\sigma_1}$ where R is the sum of ranks of the smaller sample</p> $\sigma_1 = \sqrt{\frac{n_1 n_2 (n_2 + n_1 + 1)}{12}}$ $\mu_1 = \frac{n_2 (n_2 + n_1 + 1)}{2}$ <p>n₁ = Smaller Sample n₂ = Larger sample.</p> <p>Wilcoxon-Mann Whitney Test (U test)</p> $U = n_1 n_2 + \frac{n_2 (n_2 + 1)}{2} R$ <p>Where n₁ and n₂ are the sample sizes and R₁ is the sum of ranks assigned to the values of the</p>

	<p>Paired t-test or difference test</p> $t = \frac{\bar{D} - o}{\sqrt{\frac{\left(\sum_{i=1}^n D_i^2 - \bar{D}_2^2\right) n}{n-1}} / \sqrt{n}}$ <p>With d.f.=(n-1), where n=no. of pairs of two samples.</p> <p>Where D is the difference in pairs and \bar{D} is the average of difference in the pairs.</p>	<p>first sample.</p>
<p>किसी प्रतिदर्श के अनुपात की सार्थकता</p> <p>To Assess the proportion (p) of a sample.</p>	<p>z-test and the test statistics is given as:</p> $Z = \frac{H - p}{\sqrt{p - q \ln}}$ <p>if p and q are not known we use and in their places.</p>	<p>One sample Run Test</p> <p>Distribution mean</p> <p>s.d.</p> $\sigma_1 = \sqrt{\frac{2n_1 n_2}{(n_1 + n_2)^2 (n_1 + n_2 - 1)}}$
<p>प्रसारण की सार्थकता</p> <p>Variance (σ_p^2) Analysis</p>	<p>Chi-square and the test statistics is given as-</p> $X^2 = \frac{\sigma_x^2}{\sigma_r^2} (n-1)$ <p>with d.f.=(n-1)</p> <p>F test and the test statistics is given as</p> $F = \frac{\sigma_{r_1}^2}{\sigma_{r_2}^2} = \frac{\sum (X_n \bar{X}_1)^2 \ln-1}{\sum (X_n - \bar{X}_n)^2 \ln-1}$ <p>where σ_{x1}^2 is treated $> \sigma_{x2}^2$</p> <p>with d.f. = $\zeta_2 = (n_1 - 1)$</p> <p>for greater variance and d.f. = $\zeta_1 = (n_2 - 1)$ for smaller variance.</p>	<p>The Kruskal Wallis Test (11 Test):</p> $H = \frac{12}{n(n+1)} \sum_{i=1}^k \frac{R_i^2}{n_i} - 3(n+1)$ <p>where $n = n_1 + n_2 + \dots + n_k$</p> <p>and R_i being the sum of the ranks assigned to n_i observation in the ith sample.</p>

5.5.5 आँकड़ों के संग्रह में चरों की मापन विधि पर आधारित (On the Basis of Scale used for Data Collection)

सभी परिकल्पना परीक्षण चरों तथा उनके आपस के सम्बन्धों से जुड़े होते हैं, इसलिए चरों से संगठित आँकड़े किस मापन प्रक्रिया पर आधारित हैं, परीक्षण के चयन के लिए अति आवश्यक है। मुख्यतः मापन को निम्नलिखित श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है।

1. **क्रमवाचक मापक (Ordinal Scale)** - मापन के सारे मद एक क्रम में रहते हैं, किन्तु उनके बीच न तो अन्तर बराबर होता है न ही अनुपात। उदाहरणार्थ तुलनात्मक अध्ययनों में हम यह तो जानते हैं कि कोई मद दूसरे से अधिक है अथवा नहीं, किन्तु यह नहीं कह सकते कि कितना अधिक है।
2. **गुणात्मक मापक (Nominal Scale)** - मापन के सारे मद केवल चरों की गुणात्मकता का ही संकलन करते हैं तथा इनका क्रम से विश्लेषण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। उदाहरणार्थ कक्षा में छात्रों की नामांकन सूची जो कि सिर्फ छात्र के नाम के वर्णों पर आधारित है।
3. **अन्तराल मापक (Interval Scale)** - मापन के सारे मद एक क्रम में रहते हैं। उदाहरणार्थ - किसी कक्षा में उत्तीर्ण छात्रों की रैंक सूची। प्रथम आये छात्र एवं पाँचवें आये छात्र के बीच 4 छात्र हैं। उसी प्रकार तीसवें तथा चौतीसवें छात्र के बीच में चार छात्र हैं, परन्तु हम यह नहीं कह सकते हैं कि पाँचवां स्थान प्राप्त करने वाला छात्र तीसवां स्थान प्राप्त करने वाले छात्र से छः गुना अधिक होशियार है।
4. **अनुपात मापक (Ratio Scale)** - मापन के सारे मद एक क्रम में रहते हैं तथा किन्हीं दो के बीच का अन्तर का अनुपात स्थिर रहता है। उदाहरणार्थ मीटर - स्केल, जिसमें 2 सेमी. तथा 4 सेमी. के बीच का अन्तर 25 सेमी. तथा 27 सेमी. के बीच के अन्तर के बराबर नहीं होता है, बल्कि 2 सेमी. 4 सेमी. के आधा, 1 सेमी के दुगुना, इत्यादि के बराबर होता है।

अनुपात मापक से सम्बन्धित आँकड़ों में प्राचल परीक्षणों का प्रयोग करते हैं, तथा अन्य के लिए अप्राचल परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है। अन्तराल मापक से संचयित आँकड़ों का विवरण यदि सामान्य प्रकृत (Standard Normal) हो तो प्राचल परीक्षण का प्रयोग किया जा सकता है।

मापन विधि (Scale Type)	परिकल्पना परीक्षण
गुणात्मक मापक (Normal Scale)	Mc Nemar Test, Sign test
क्रमवाचक मापक (Ordinal Scale)	Wilcoxon test
अंतराल मापक (Interval Scale)	t-test (for sample size < 30), z-test for large sample, ANOVA, Chi-Square Test
अनुमान मापक (Ratio Scale)	t-test (for sample size <30), z-test for

large samples, ANOVA, Chi-Square
Test

परिकल्पनाओं का निर्माण एवं
परीक्षण

5.5.6 शोध में सम्मिलित चरों की संख्या पर आधारित

यदि हमारी शोध समस्या एक से अधिक चरों के सम्बन्धों के उद्देश्य से की जा रही हो तो उस स्थिति में एक चरीय विश्लेषण (Univariate Analysis) पर्याय नहीं होगा। यदि हम दो चरों का प्रभाव एक साथ देखना चाहते हैं तो हमें द्वि-चरीय विश्लेषण (Bivariate Analysis) करना होगा, और यदि यही प्रभाव हम तीन अथवा उससे अधिक चरों में देखना चाहें तब हमें बहु-चरीय विश्लेषण (Multivariate Analysis) करना होगा।

उदाहरण 1 : एक अध्ययन में विज्ञान विषय के प्रति लड़कों तथा लड़कियों की प्रतिक्रियाओं की आवृत्ति अग्र रूप से प्राप्त हुई। बताइये क्या इनमें सार्थक अन्तर है?

संवर्ग	पूर्णतः अमान्य A	अमान्य B	अनिश्चित C	मान्य D	पूर्णतः मान्य E	योग F
लड़के	4	10	20	40	25	100
लड़कियाँ	10	15	50	20	5	100
योग	15	25	70	60	30	200

प्रस्तुत उदाहरण में ज्ञात करने के लिए लड़कों तथा लड़कियों की संयुक्त आवृत्तियों के आधार पर गणना की जाती है। अतः यहाँ विभिन्न संवर्गों के लिए लड़कों की f_o संख्या निम्नलिखित होगी।

A संवर्ग में 200 में से संयुक्त अभिवृत्तियाँ 15 हैं,

अतः संवर्ग में 100 में से संयुक्त अभिवृत्तियाँ 7.5 हैं,

इसी प्रकार B, C, D तथा E संवर्गों में ये संख्यायें क्रमशः 12, 5, 35, 30 तथा 15 हुईं। चूँकि यहाँ लड़कों तथा लड़कियों की f_o सभी संवर्गों में समान होगी।

संवर्ग	पूर्णतः अमान्य A	अमान्य B	अनिश्चित C	मान्य D	पूर्णतः मान्य E
f_o	5	10	20	40	25
f_e	7.5	12.5	35	30	15
$f_o - f_e$	-2.5	-2.5	-15	10	10
$(f_o - f_e)^2$	6.25	6.25	225	100	100
$(f_o - f_e)^2 / f_o$.83	.50	6.43	3.33	6.67
$\Sigma \chi^2$	17.76				

संवर्ग	पूर्णतः अमान्य A	अमान्य B	अनिश्चित C	मान्य D	पूर्णतः मान्य E
f_o	10	15	50	20	5
f_e	7.5	12.5	35	30	15
$f_o - f_e$	2.5	2.5	-15	-10	-10
$(f_o - f_e)^2$	6.25	6.25	225	100	100
$(f_o - f_e)^2 / f_o$.83	.50	6.43	3.33	6.67
$\Sigma \chi^2$	17.76				

यहाँ लड़कों तथा लड़कियों का योग = 17.76 + 17.76 = 35.2

यहाँ $d, f = (2-1)(5-1) = 4$

4. d, f पर सार्थकता के लिए का मान 5 प्रतिशत विश्वास के स्तर पर = 9.488, एवं 1 प्रतिशत स्तर पर = 13.277

प्रस्तुत अध्ययन में प्राप्त χ^2 का मान दोनों मानों से अधिक है, अतः यहाँ निराकरणी परिकल्पना सत्य नहीं हो सकती है और 1 प्रतिशत विश्वास स्तर पर यह मानना होगा कि विज्ञान विषय के प्रति लड़के और लड़कियों की रुचि में सार्थक अन्तर देखने में आये हैं।

5.6 सारांश

अनुसंधानकर्ता के लिए यह आवश्यक है कि वह आकड़ों के संकलन व अवलोकन के लिए अपनी कल्पना, अनुभव या अन्य किसी स्रोत के आधार पर एक कार्यकारी तर्क वाक्य का निर्माण करे एवं बाद में अनुसंधान के दौरान इस तर्क वाक्य की परीक्षा करें। यह तर्क वाक्य सामान्यतः उपकल्पना या परिकल्पना कहलाता है। परिकल्पना शोधकर्ता द्वारा शोध प्रश्न के उत्तर के बारे में एक सटीक अनुमान है, जिसे वह शोध विधियों द्वारा सत्यापित करना चाहता है। अन्वेषणात्मक अध्ययन (Exploratory Research) में परिकल्पना की रचना व्यर्थ रहती है क्योंकि यहाँ समस्या के अध्ययन का मुख्य उद्देश्य केवल सामान्य आकड़ों का संकलन करना ही होता है। परिकल्पना के प्रमुख घटकों में चर राशियाँ तथा उनमें संबंध है। यह भी कहा जा सकता है कि परिकल्पनाओं के द्वारा शोधकर्ता शोध प्रक्रिया से सम्बन्धित चरों में सम्बन्धों का सत्यापन करता है।

सामान्यतः सामाजिक विज्ञानों में परिकल्पनाओं के दो प्रमुख स्रोतों का उल्लेख किया गया है - पहला वैयक्तिक या निजी स्रोत तथा दूसरा बाह्य स्रोत। प्रायोगिक अनुसंधानों में परिकल्पनाओं का स्वरूप थोड़ा भिन्न होता है, क्योंकि उनमें संबंधित चरों का नियंत्रण जोड़ तोड़ तथा अभिक्रियाओं के कारण कठोर वैज्ञानिक मापदण्ड पर प्रायोगिक अभिकल्पों का उपयोग करना होता है, तथा उनसे सम्बन्धित आकड़ों का स्वरूप अत्यन्त जटिल होता है। और उनका विश्लेषण भी विषय सांख्यिकीय प्रविधियों द्वारा किया जाता है। प्रायोगिक अनुसंधानों में प्रायः निराकरणीय परिकल्पना और वैकल्पिक परिकल्पना का उपयोग किया जाता है। निराकरणीय परिकल्पना की उपधारणा रहती है कि स्वतंत्र चर के प्रभाव के कारण दो या दो से अधिक समूहों में कोई वास्तविक अन्तर उत्पन्न नहीं हुआ है और जो अन्तर देखने में आया है, उसका संबन्ध प्रतिचयन संबंधी त्रुटियाँ तथा संयोगजन्य त्रुटियाँ कुछ भी हों सकता है। परन्तु स्वतंत्र चर का प्रभाव वह नहीं है तथा स्वतंत्र चर तब तक अन्तर का कारण नहीं माना जायेगा जब तक कि यह अन्तर सन्देह के परे सिद्ध नहीं किया जाता। परिकल्पना के परीक्षण के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षण हैं प्रत्येक निश्चित परिस्थिति तथा पूर्वधारणा के लिए उपयुक्त होता है।

5.7 बोध प्रश्न

1. परिकल्पना के अर्थ, उद्देश्य तथा निर्माण - चरणों का उपयुक्त उदाहरण की सहायता से विवेचना कीजिए।
2. परिकल्पना परीक्षण के प्रकारों की दृष्टान्त सहित व्याख्या दीजिए।

5.8 संदर्भ पुस्तकें

सामाजिक अनुसंधान शोध - एम. एल. गुप्ता, डी.डी. शर्मा

सांख्यिकीय, डा. के. एल. गुप्ता,

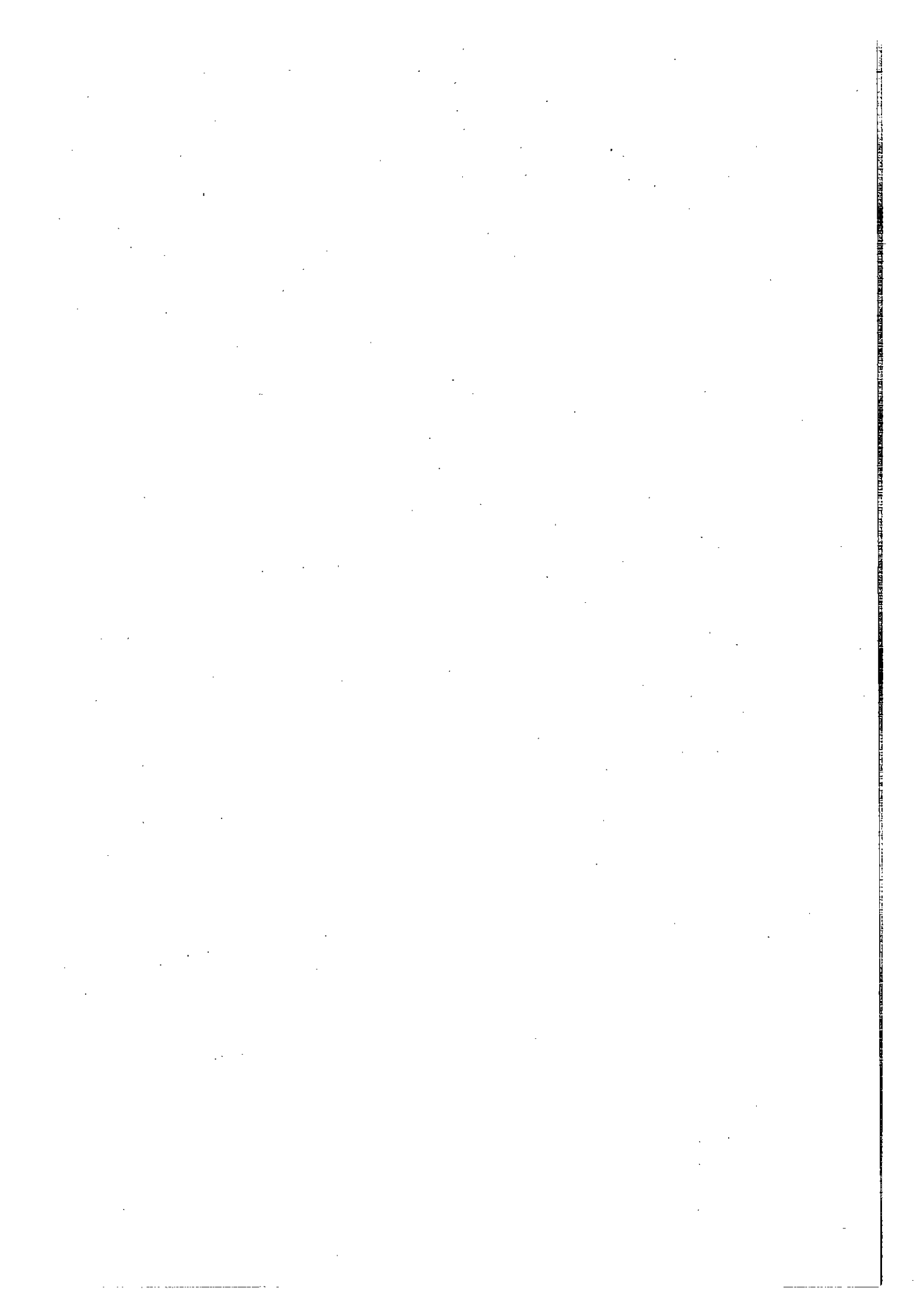
सांख्यिकीय विधियाँ - प्रो. एस. पी. गुप्ता

अनुसंधान परिचय - डा. बी.एल. शर्मा

अनुसंधान परिचय - श्री पारसनाथ राय

Fundamental of Statistics - S.P. Singh

Principles of Statistics.





उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

M.Com-04 (N)
संचार कौशल एवं
शोध विधि

खण्ड

4

आंकड़ों का विश्लेषण (Data Analysis)

इकाई - 1	5
आंकड़ों के संग्रहण की नीतियाँ	
इकाई - 2	24
अवलोकन	
इकाई - 3	36
अनुसन्धान हेतु साक्षात्कार एवं प्रश्नावली की निर्माण	
इकाई - 4	54
आंकड़ों के विश्लेषण की मापन तकनीकें	

खण्ड-4 परिचय

खण्ड 4 आँकड़ों का विश्लेषण में कुल चार इकाइयाँ हैं जिनके द्वारा आँकड़ों के विश्लेषण की विधि को समझाया गया है। प्रथम इकाई में आँकड़ों के संग्रहण की नीतियों की चर्चा की गयी है जिसके अन्तर्गत समकों के प्रकार, प्राथमिक एवं द्वितीयक समकों के अन्तर एवं इनको एकत्रित करने की रीतियों के साथ साथ बरती जाने वाली सावधानियों की चर्चा की गयी है।

द्वितीय इकाई में अवलोकन (Observation) के अर्थ को समझाते हुए अवलोकन की विशेषताओं एवं प्रकार का वर्णन किया गया है। साथ ही अवलोकन विधि की उपयोगिता एवं इसकी विश्वसनीयता की चर्चा की गयी है।

तृतीय इकाई में अनुसन्धान हेतु साक्षात्कार एवं प्रश्नावली निर्माण की चर्चा की गयी है जिसके अन्तर्गत साक्षात्कार का अर्थ एवं परिभाषा, विशेषताएं, उद्देश्य एवं साक्षात्कार के प्रकार का वर्णन किया गया है। साथ ही साक्षात्कार प्रविधि के प्रमुख चरण, गुण एवं दोष का वर्णन किया गया है।

चतुर्थ इकाई में आँकड़ों के विश्लेषण की मापन तकनीक की चर्चा आँकड़ों के विश्लेषण हेतु पूर्ण दशाएं, विश्लेषण के चरण एवं मापन तकनीकों के द्वारा की गयी है।

इकाई 1 : आँकड़ों के संग्रहण की रीतियाँ (Method of Data Collection)

इकाई रूपरेखा

- 1.0 उद्देश्य
- 1.1 प्रस्तावना
- 1.2 समंक
- 1.3 समंकों के प्रकार
- 1.4 प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों में अन्तर
- 1.5 प्राथमिक समंकों को एकत्र करने की रीतियाँ
- 1.6 द्वितीयक समंकों के संकलन की रीतियाँ
- 1.7 द्वितीयक समंकों के प्रयोग में सावधानियाँ
- 1.8 सारांश
- 1.9 बोध प्रश्न
- 1.10 व्यावहारिक प्रश्न
- 1.11 परीक्षण प्रश्न

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप यह जान सकेंगे -

- आँकड़े के अर्थ एवं इनके विभिन्न प्रकार,
- आँकड़ों के एकत्रीकरण की प्रमुख रीतियाँ,
- प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों के मध्य अंतर
- एक अच्छी प्रश्नावली तैयार करने की विधि।

1.1 प्रस्तावना

अनुसन्धान ज्ञान का आधार है, ज्ञान के उन्नयन एवं संवर्धन हेतु अनुसन्धान की आवश्यकता होती है। किसी भी अनुसन्धान से हम निष्कर्ष तब तक नहीं प्राप्त कर सकते जब तक कि सम्बन्धित तथ्य को हम आँकड़ों के रूप में प्रस्तुत न कर सकें। अतः आँकड़ों का संग्रहण अनुसन्धान का मूलाधार है अर्थात् अनुसन्धान रूपी विशाल भवन का निर्माण संकलित समकों की नीव पर ही हो सकता है। आँकड़े जितने शुद्ध होंगे, अनुसन्धान के निष्कर्ष उतने ही परिष्कृत होंगे। अतः अनुसन्धानकर्ता को आँकड़े के संग्रहण में विशेष सतर्कता बरतने की आवश्यकता होती है-

1.2 समंक (Data)

समकों को वर्गीकृत करने के पूर्व हम संक्षेप में 'समंक' से आपको परिचित कराना चाहेंगे। प्रश्न उठता है कि समंक क्या है? क्या समंक कहीं से एकत्रित अवयवस्थित आँकड़े हैं? वस्तुतः समंक (Data) किसी अकेली संख्या या तथ्य को नहीं कहा जा सकता समंक सदैव तथ्य के समूह के रूप में होते हैं। अर्थात् एक विद्यार्थी के अंक, एक परिवार की आय, एक श्रमिक की मजदूरी संख्यात्मक तथ्य होते हुए भी समंक नहीं कहे जा सकते। समंक की सबसे बड़ी विशेषता समान प्रकृति की एक से अधिक संख्याओं का होना है। जैसे पाँच विद्यार्थियों के अंक, तीन परिवारों की आय, पाँच श्रमिकों की मजदूरी इत्यादि। समकों को हम सदैव संख्याओं के रूप में व्यक्त कर सकते हैं। उदाहरण स्वरूप यदि हम कहें कि अ अमीर है, ब गरीब है तो हम इसे संख्यात्मक तथ्य नहीं कह सकते। यह कथन संख्यात्मक होने, (अर्थात् अ की आय रु0 5000 तथ्य की आय रु0 500) पर ही हम इसे समंक की श्रेणी में रख सकते हैं।

समंकों का संकलन सदैव पूर्व निश्चित उद्देश्य के लिए होता है। उद्देश्य विहीन आँकड़ों से हम कोई निष्कर्ष नहीं प्राप्त कर सकते।

संकलित समंक परस्पर सह-सम्बन्धित होने चाहिए। अतः आँकड़े ऐसे होने चाहिए जिनकी परस्पर तुलना की जा सके अर्थात् यदि हम किसी व्यक्ति की आय व अन्य व्यक्ति की लम्बाई के आँकड़े एकत्र करते हैं तो इन्हें समंक नहीं कहा जा सकता। आँकड़े के सम्बन्ध में एक सामान्य तथ्य यह कि “सभी सांख्यिकीय समंक संख्यात्मक तथ्य होते हैं। किन्तु सभी संख्यात्मक तथ्य समंक नहीं होते।”

1.3 समंकों के प्रकार (Types of Data)

आँकड़ों के संग्रहण के आधार पर हम इन्हें दो भागों में विभाजित कर सकते हैं।

(अ) प्राथमिक समंक (Primary Data)

(ब) द्वितीयक समंक (Secondary Data)

प्राथमिक समंक :- प्राथमिक समंकों से अभिप्राय उन समंकों से हैं जिन्हें अनुसन्धानकर्ता द्वारा प्रथम बार भौतिक अथवा मूलरूप में एकत्रित किया जाता है। संकलनकर्ता द्वारा इन्हें प्रथम बार एकत्र किये जाने के कारण इन्हें प्राथमिक समंक कहा जाता है। होरेस सेक्राइस्ट के शब्दों में “प्राथमिक समंकों से अभिप्राय यह है कि वे मौलिक हैं अर्थात् उनका समूहीकरण बहुत ही कम या नहीं हुआ है’ घटनाओं का अंकन या गणन उसी प्रकार किया गया है जैसा पाया गया है। ये मुख्य रूप से कच्चे पदार्थ होते हैं।

उदाहरण स्वरूप यदि कोई व्यक्ति स्त्री साक्षरता से सम्बन्धित आँकड़े एकत्र करता है तो संकलित सामग्री के लिए प्राथमिक कहलायेगी।

द्वितीयक समंक (Secondary Data) द्वितीयक समंकों से आशय उन समंकों से है जिनका एकत्रीकरण किसी अन्य व्यक्ति, संगठन, अथवा शासन द्वारा पूर्व से किया जा चुका है और अनुसन्धानकर्ता द्वारा उन्हीं आँकड़ों को प्रयोग में लाया जाता है। उदाहरणस्वरूप यदि कोई व्यक्ति सरकार द्वारा प्रकाशित स्त्री साक्षरता सम्बन्धी आँकड़ों का प्रयोग स्वयं के अनुसन्धान हेतु करता है तो वे आँकड़े उसके द्वितीयक आँकड़े होंगे। यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक होगा कि सभी संकलित आँकड़े कभी न कभी प्राथमिक अवश्य होते हैं, संकलनकर्ता एवं प्रयोगकर्ता के भिन्न-भिन्न होने पर आँकड़े द्वितीयक स्वरूप धारण कर लेते हैं।

ब्लेयर के शब्दों में “द्वितीयक समंक वे होते हैं जो पहले से अस्तित्व में हैं और जो वर्तमान प्रश्नों के उत्तर में नहीं बल्कि किसी दूसरे उद्देश्य के लिए एकत्र किये जाते हैं।”²

1.4 प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों में अन्तर

प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों में कोई मूलभूत अन्तर नहीं होते, अनुसन्धानकर्ता एवं संकलनकर्ता अलग-अलग होने की दशा में ये अंतर प्रकट होते हैं। प्राथमिक एवं द्वितीयक आँकड़े के मध्य अन्तर हम निम्नवत कर सकते हैं।

अन्तर का आधार	प्राथमिक समंक	द्वितीयक समंक
मौलिकता	प्राथमिक समंक मौलिक होते हैं और अनुसन्धान कार्य में इनका प्रयोग कच्चे माल की भाँति होता है।	द्वितीयक समंक मौलिक नहीं होते अर्थात् वे पहले से ही विद्यमान होते हैं
उद्देश्य	प्राथमिक समंक पूर्णरूप से अनुसन्धान की दृष्टि से एकत्र/किये जाते हैं।	द्वितीयक समंक अनुसन्धानकर्ता की आवश्यकतानुसार नहीं संकलित किये जाते।

2. "Secondary Data and those already in existence and which have been collected for some other purpose than answering the aversion of hand.

संकलन	प्राथमिक समंक अनुसन्धानकर्ता द्वारा स्वयं संकलित किये जाते हैं।	द्वितीयक समंक अन्य व्यक्तियों या संगठनों द्वारा पूर्व में ही एकत्रित किये होते हैं।	आंकड़ों के संग्रहण की नीतियाँ
प्रयोग	प्राथमिक समंकों के प्रयोग हेतु- अनुसन्धानकर्ता को संकलित आँकड़ों में संशोधन नहीं करना पड़ता	द्वितीयक समंकों के प्रयोग हेतु अनुसन्धानकर्ता को संकलित आँकड़ों में संशोधन करने की आवश्यकता पड़ सकती है।	
व्यय	प्राथमिक समंकों के संकलन में, अधिक समय, परिश्रम व धन की आवश्यकता होती है।	द्वितीयक समंक प्रायः पत्र-पत्रिकाओं, सरकारी व गैरसरकारी प्रकाशनों से सरलतापूर्वक उपलब्ध हो जाते हैं। अतः इनके संकलन में किसी भी प्रकार का व्यय, श्रम, व समय नहीं नष्ट करना पड़ता	
सर्तकता	प्राथमिक समंकों के प्रयोग में अधिक सर्तकता की आवश्यकता नहीं होती।	द्वितीयक समंकों के प्रयोग में अधिक सर्तकता की आवश्यकता होती है।	
विश्वसनीयता	प्राथमिक समंकों की विश्वसनीयता अपेक्षाकृत अधिक होती है क्योंकि ये अनुसन्धानकर्ता द्वारा स्वयं एकत्र किये जाते हैं।	द्वितीयक समंक की विश्वसनीयता अपेक्षाकृत कम होती है क्योंकि ये किसी अन्य व्यक्ति द्वारा किसी अन्य उद्देश्य से संकलित किये जाते हैं।	

वस्तुतः प्राथमिक व द्वितीयक समंकों में अन्तर केवल मात्रा (Degree) का होता है। एक ही समंक कहीं पर प्राथमिक होते हैं और दूसरे स्थान पर द्वितीयक बन जाते हैं।

सेक्राइस्ट के शब्दों में “व्यापकरूप से प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों के मध्य मात्रा का अन्तर है। समंक जो एक पक्ष के लिए प्राथमिक होते हैं वहीं दूसरे पक्ष के लिए द्वितीयक होते हैं।”

उदाहरण स्वरूप सरकार द्वारा एकत्र किये गये जनगणना सम्बन्धी आँकड़े सरकार के लिए प्राथमिक हैं किन्तु प्रयोगकर्ताओं के लिए द्वितीयक होते हैं।

1.5 प्राथमिक समंकों को एकत्र करने की रीतियाँ (Methods of Collecting Primary Data)

प्राथमिक समंकों का संकलन चूँकि अनुसन्धान द्वारा स्वयं

अथवा किसी अन्य संकलनकर्ता के माध्यम से स्वयं की देखरेख में कराया जाता है अतः प्राथमिक समंको का संकलन प्रत्यक्ष सम्पर्क पर आधारित होते हैं। सामान्य तौर पर प्राथमिक समंकों के संकलन की निम्नलिखित रीतियाँ हैं-

- (i) प्रत्यक्ष व्यक्तिगत अनुसन्धान (Direct Personal Investigation)
- (ii) अप्रत्यक्ष मौखिक अनुसन्धान (Indirect Oral Investigation)
- (iii) स्थानीय स्रोतों या संवाददाताओं से प्राप्त समंक (Information through local sources or correspondents)
- (iv) सूचकों द्वारा प्रश्नावली भरवाना (Questionnaires to be filled by Informants)
- (v) प्रगणकों द्वारा अनुसूचियाँ भरना (Schedules to be filled by Enumerators)
- (vi) रजिस्ट्रेशन पद्धति (Registration Method)

प्रत्यक्ष व्यक्तिगत अनुसन्धान

प्रत्यक्ष व्यक्तिगत अनुसन्धान विधि के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता स्वयं अनुसन्धान के क्षेत्र में जाकर सम्बन्धित व्यक्तियों से प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित करके आवश्यक सूचनाओं एवं समंकों का संकलन करता है। उदाहरण स्वरूप यदि अनुसन्धानकर्ता किसी फैक्ट्री में कार्यरत श्रमिकों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना चाहता है तो वह स्वयं फैक्ट्री में जाकर उनकी आय के सम्बन्ध में आँकड़े एकत्रित करेगा।

लाभ :

- (i) इस प्रणाली के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता द्वारा स्वयं क्षेत्र में जाकर आंकड़े एकत्रित करने के कारण उच्च स्तर की शुद्धता पाई जाती है।
- (ii) इस प्रणाली में लोचकता के गुण पाये जाते हैं क्योंकि इसमें अनुसन्धानकर्ता आंकड़े संकलित करते समय प्रश्नों में आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर सकता है।
- (iii) एक ही व्यक्ति द्वारा आँकड़ों का संकलन किये जाने के कारण इससे सजातीयता एवं एकरूपता के गुण पाये जाते हैं।
- (iv) व्यक्तिगत सम्पर्क होने के कारण सूचनादाता में अतिरिक्त उत्साह पूर्वक प्रश्नावली के उत्तर देने की लालसा होती है।

दोष इस प्रणाली में निम्नलिखित दोष पाये जाते हैं।

- (i) इस रीति का प्रयोग सीमित क्षेत्र के अनुसन्धान में हो सकता है। क्योंकि एक व्यक्ति द्वारा बड़े अनुसन्धान क्षेत्र में व्यक्तिगत सम्पर्क नहीं स्थापित किया जा सकता है।
- (ii) अनुसन्धानकर्ता का अपना दृष्टिकोण, मान्यताएँ एवं पूर्वाग्रह होने के कारण आंकड़ों के संकलन या प्रश्नावली के उत्तर में पक्षपात की सम्भावना बनी रहती है।
- (iii) यह पद्धति अधिक खर्चीली है क्योंकि इसमें समय एवं धन दोनों का अधिक व्यय होता है।

(II) अप्रत्यक्ष मौखिक अनुसन्धान -

इस रीति के अन्तर्गत अनुसन्धान से सम्बन्धित व्यक्तियों या पक्षकारों से प्रत्यक्षरूप से सूचनाएँ प्राप्त न करके बल्कि उनकी

जानकारी रखने वाले अन्य पक्षकारों या व्यक्तियों से मौखिक पूछताछ के द्वारा समंक एकत्र किये जाते हैं। उदाहरण स्वरूप यदि किसी उद्योग में श्रमिकों की आर्थिक दशा के बारे में जानकारी उनके नियोक्ताओं (मालिकों) से लिया जाना।

लाभ :

- (i) अनुसन्धान का क्षेत्र विस्तृत हो जाता है।
- (ii) इसके माध्यम से कुछ विशिष्ट सूचनाओं या प्रकृतियों के बारे में भी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं जैसे श्रमिकों का जुआ खेलना, छात्रों की नशे की प्रकृति, इत्यादि।
- (iii) अनुसन्धान के विस्तृत क्षेत्र की तुलना में यह विधि कम खर्चीली है।
- (iv) इस रीति में समंक संकलन में व्यक्तिगत पक्षपात की सम्भावना कम रहती है।

दोष :

- (i) किसी व्यक्ति के सम्बन्ध में अन्य व्यक्ति द्वारा जानकारी लेने के कारण सूचनाओं में भ्रम की स्थिति उत्पन्न हो सकती है।
- (ii) सूचनाएँ संकलित कराने वाले पक्षों की लापरवाही, अज्ञानता एवं उदासीनता का प्रभाव आँकड़ों पर प्रतिकूल पड़ सकता है।
- (iii) इसके अन्तर्गत उच्च किस्म की शुद्धता का अभाव पाया जाता है।

(III) संवाददाताओं या स्थानीय स्रोतों से प्राप्त समंक-

इस रीति में समंकों के एकत्रण के लिए अनुसन्धान के क्षेत्र में स्थानीय स्तर पर संवाददाताओं की नियुक्ति कर ली जाती है अथवा

पूर्व से कार्यरत किसी स्थानीय स्रोत का प्रयोग किया जाता है।
उदाहरण स्वरूप समाचार पत्रों में मूल्य समंकों के प्रकाशन हेतु इस
रीति का प्रयोग किया जाता है।

लाभ :

- (i) इस रीति का प्रयोग अनुसन्धान के विस्तृत क्षेत्र में किया जा सकता है।
- (ii) यह पद्धति मितव्ययी है।
- (iii) शीघ्र एवं नियमित रूप से सूचनाएं प्राप्त करने हेतु यह विधि अत्यन्त उपयोगी है।

दोष :

- (i) संवाददाताओं द्वारा नियमित रूप से सूचनाएँ प्रदान करने के कारण उनके द्वारा कभी-कभी भ्रामक एवं असत्य सूचनाएँ उपलब्ध कराई जाती हैं।
- (ii) संवाददाताओं द्वारा सूचनाएँ भेजने के कारण उनमें मौलिकता की कमी होती है।
- (iii) विभिन्न स्थानों एवं विभिन्न विधियों द्वारा सूचना एकत्र किये जाने के कारण आँकड़ों में एकरूपता एकरूपता का अभाव पाया जाता है।
- (iv) संवाददाताओं द्वारा कभी-कभी सूचना भेजने में विलम्ब कर देने के कारण सूचना का औचित्य समाप्त हो जाता है।

(IV) प्रश्नावली भरवाकर सूचना प्राप्त करना -

इस रीति के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता समंक एकत्र करने हेतु एक प्रश्नावली (प्रश्नों की सूची) तैयार करता है तथा उन प्रश्नावलियों को डाक द्वारा अथवा व्यक्तिगत सम्पर्क करके सूचकों (जिनके

सूचना प्राप्त करनी है) को प्रेषित कर देता है। प्रश्नावली के साथ एक अनुरोध पत्र (Covering letter) भी लगाया जाता है तथा सूचकों को समंक एकत्रीकरण का उद्देश्य बताकर उनके द्वारा सही सूचना प्रदान करने का अनुरोध किया जाता है। डाक द्वारा प्रश्नावली वापस मंगाने हेतु पता लिखा एवं डाक टिकट लगा एक लिफाफा संलग्न करने से सूचकों को प्रश्नावली भेजने में धन नहीं व्यय करना पड़ता है

लाभ :

- (i) यह प्रणाली अपेक्षाकृत **मितव्ययी** है इसमें प्रश्नावली छपवाने व डाक टिकट लगाने के अतिरिक्त कोई अन्य व्यय नहीं करना पड़ता।
- (ii) यह प्रणाली अनुसंधान क्षेत्र **विस्तृत** होने की स्थिति में अत्यन्त उपयुक्त है।
- (iii) इस विधि से प्राप्त सूचनाएँ **मौलिक** एवं शुद्ध होती है।

दोष :

- (i) इस रीति का प्रयोग केवल शिक्षित वर्ग तक किये जाने के कारण इसका क्षेत्र अत्यन्त सीमित हो जाता है।
- (ii) सूचकों पर कोई अंकुश या पर्यवेक्षण के अभाव के उनके द्वारा **अपूर्ण तथा असत्य** सूचनाएँ प्रदान कर दी जाती है।
- (iii) सूचकों द्वारा अरुचि, आलस्य, भय, आशंका, अथवा गोपनीयता भंग होने के कारण अधूरी सूचनाएँ प्रदान की जाती है।
- (iv) अपर्याप्त सूचना प्राप्त होने की दशा में पूरक प्रश्न पूँछना सम्भव नहीं हो पाता, जिससे इसमें लोच का अभाव

पाया जाता है।

**(V) प्रगणकों द्वारा प्रश्नावलियाँ अथवा अनुसूचियाँ
भरकर सूचना प्राप्त करना -**

इस रीति से समकों को संकलित करने हेतु प्रगणकों की नियुक्ति की जाती है। प्रगणकों द्वारा प्रश्नों की एक सूची लेकर सूचकों में सम्पर्क किया जाता है। सूचकों द्वारा प्राप्त सूचनाएँ प्रगणकों द्वारा स्वयं प्रश्नावली में भरी जाती हैं।

गुण :

- (i) वृहद क्षेत्र में समग्र अथवा प्रतिदर्श अनुसन्धान (Census Study) के लिए यह प्रणाली उपयुक्त है। इसका प्रयोग अशिक्षित सूचकों के मध्य भी किया जा सकता है।
- (ii) प्रगणकों द्वारा सूचकों से सही सूचनाएँ प्राप्त हो जाने के कारण सूचनाओं में शुद्धता होती है।
- (iii) सभी प्रगणकों का प्रशिक्षण एक ही प्रकार से दिये जाने के कारण उनके द्वारा संकलित सूचनाओं में एकरूपता पाई जाती है।

दोष :

- (i) यह प्रणाली अत्यन्त खर्चीली है क्योंकि इसमें प्रश्नावली छपवाने के साथ साथ प्रगणक भी नियुक्त करने पड़ते हैं।
- (ii) प्रगणकों का चयन एवं प्रशिक्षण अत्यन्त दुष्कर कार्य होता है।

(VI) रजिस्ट्रेशन पद्धति :

इस रीति के अन्तर्गत किसी तथ्य से सम्बन्धित सूचनाओं के

पंजीकरण की व्यवस्था कर दी जाती है, तथा उसी आधार पर अनवरत आँकड़े एकत्र होते रहते हैं। उदाहरण भारत में जन्म व मरण का पंजीयन अनिवार्य है तथा इसी आधार पर जन्म तथा मृत्यु के आँकड़े एकत्र होते रहते हैं।

गुण :

यह पद्धति मितव्ययी है और कानूनी व्यवस्था होने के कारण सूचनाओं में शुद्धता बनी रहती है।

दोष:

रजिस्ट्रेशन के लिए एक विभाग की स्थापना करनी पड़ती है। प्रायः अभी भी लोग जन्म एवं मृत्यु का पंजीयन नहीं करते हैं।

1.6 द्वितीयक समंकों के संकलन की रीतियाँ

द्वितीयक समंक वे समंक होते हैं जिन्हें किन्हीं संगठनों या व्यक्तियों द्वारा पूर्व में संग्रहीत किया जाता है। ये समंक अनुसन्धानकर्ता के व्यक्तिगत प्रयास से न संग्रहीत होकर बल्कि प्रकाशित व अप्रकाशित रूप में उपलब्ध होते हैं। प्रायः अनुसन्धानकर्ता द्वारा प्रकाशित आँकड़ों का ही प्रयोग किया जाता है। द्वितीयक समंकों के प्रयोग में समंकों के मौलिक संकलन की समस्या उत्पन्न नहीं होती। अप्रकाशित समंक विश्वविद्यालयों एवं शोध संस्थानों के शोधग्रन्थ हो सकते हैं इनके सम्बन्ध में लोगों को कम जानकारी होने के कारण इनका प्रयोग सीमित होता है।

प्रकाशित समंक प्राप्त करने के निम्नलिखित स्रोत हो सकते हैं।

(1) **सरकारी प्रकाशन (Government Publication)-** प्रत्येक देश की सरकारें अपने विभिन्न मन्त्रालयों एवं उनके विभागों द्वारा विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित समंक नियमित रूप

से प्रकाशित किये जाते हैं। इन समकों में पर्याप्त विश्वसनीयता होती है। भारतवर्ष में प्रकाशित प्रमुख शासकीय प्रकाशन निम्नवत् हैं।

- | | | |
|-------|------------------------------------|-------------|
| (i) | भारतीय रिजर्व बैंक बुलेटिन | (मासिक) |
| (ii) | आर्थिक सर्वेक्षण | (वार्षिक) |
| (iii) | पंचवर्षीय योजना प्रारूप | |
| (iv) | स्टैटिस्टिकल एबस्ट्रैक्ट आफ इंडिया | (वार्षिक) |
| (v) | इण्डियन ट्रेड जर्नल | (साप्ताहिक) |
| (vi) | जनगणना रिपोर्ट | |
| (vii) | मुद्रा एवं वित्त रिपोर्ट | (मासिक) |

(2) अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के प्रकाशन- कतिपय अन्तर्राष्ट्रीय संस्थान जैसे संयुक्त राष्ट्रसंघ (U.N.O.), विश्वबैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (I.M.F.), अन्तर्राष्ट्रीय श्रमसंघ (I.L.O.) द्वारा समय-समय पर आँकड़ों का संकलन एवं प्रकाशन किया जाता है। विदेशों में होने वाले शासकीय प्रकाशन भी इसी श्रेणी में आते हैं जैसे, विश्वबैंक की वार्षिक रिपोर्ट, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष की रिपोर्ट इत्यादि।

(3) आयोग एवं समितियों की रिपोर्ट - प्रायः देश की विभिन्न समस्याओं के अध्ययन के लिए सरकार द्वारा अथवा किसी अन्य संस्था द्वारा आयोग या समितियाँ नियुक्त की जाती रहती हैं। ये आयोग अथवा समितियाँ समस्याओं का अध्ययन करके सम्बन्धित आँकड़े संकलित करके समय-समय पर अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करती रहती है जैसे वित्त आयोग के प्रतिवेदन, योजना आयोग के प्रतिवेदन इत्यादि।

(4) अर्द्ध सरकारी संगठनों के प्रकाशन - नगर पालिका, नगर महापालिका, नगर निगम, जिला परिषद्, इत्यादि संगठन विभिन्न प्रकार के आँकड़े एकत्रित करके प्रायः प्रकाशित करते रहते हैं जैसे जन्म, मृत्यु, स्वास्थ्य, शिक्षा एवं विवाह से सम्बन्धित आँकड़े।

(5) व्यापारिक एवं गैर सरकारी संगठनों के प्रकाशन - प्रायः अनेक व्यापारिक संगठन अपने क्षेत्र से सम्बन्धित समकों का प्रकाशन करते रहते हैं जैसे भारतीय कॉटन मिल्स फेडरेशन, भारतीय उद्योग एवं वाणिज्य संघ, जूट मिल्स एसोसियेशन, बिड़ला ग्रुप, टाटाग्रुप, रिलायन्स ग्रुप इत्यादि। इसी प्रकार अनेक गैर सरकारी संगठनों द्वारा भी विगत कुछ वर्षों में समकों का प्रकाशन किया जा रहा है। इनमें, इकोनामिक टाइम्स का डेटा बैंक, मनोरमा इयर बुक, इत्यादि प्रमुख हैं।

(6) विश्वविद्यालय एवं शोध संस्थाओं के प्रकाशन :- देश के प्रमुख विश्वविद्यालय एवं शोध संस्थानों द्वारा भी अपने विशिष्ट शोध-कार्यों का प्रकाशन करते रहते हैं जैसे, भारतीय सांख्यिकीय संस्थान, राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन, विश्वविद्यालय शोध ब्यूरो, केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन इत्यादि।

(7) समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ - देश की प्रमुख समाचार पत्र, पत्रिकाओं द्वारा भी प्रायः विभिन्न प्रकार के सर्वेक्षणों का प्रकाशन किया जाता रहता है। ये आँकड़े अत्यन्त उपयोगी होते हैं। भारत में इकोनामिक टाइम्स, दी फाइनैन्शियल एक्सप्रेस, योजना, कुरूक्षेत्र, इत्यादि पत्र पत्रिकाएँ अपने प्रकाशनों में महत्वपूर्ण आँकड़े प्रकाशित करते रहते हैं।

(8) व्यक्तिगत शोधकर्ताओं के प्रकाशन :- अनेक शोधकर्ता व्यक्तिगत रूप से भी अनेक समस्याओं पर शोधकार्य करते

रहते हैं। जिनका प्रकाशन उनके द्वारा प्रायः पत्र-पत्रिकाओं, या पुस्तकों के रूप में होता है।

(ब) अप्रकाशित स्रोत -

अनेक शोध संस्थाओं, संगठनों, व्यक्तियों, विश्वविद्यालयों इत्यादि में योग्य एवं अनुभवी व्यक्तियों द्वारा एकत्रित बहुत से आँकड़े अप्रकाशित रह जाते हैं। इन आंकड़ों की उपलब्धता होने पर इनका प्रयोग द्वितीयक आंकड़ों के रूप में किया जा सकता है।

1.7 द्वितीयक समंकों के प्रयोग में सावधानियाँ

द्वितीयक समंकों का संकलन चूँकि अन्य व्यक्तियों अथवा संगठनों द्वारा किया जाता है तथा इनके प्रयोग हेतु उद्देश्य प्रायः पूर्व में निर्धारित नहीं। होते अनुसन्धानकर्ता के लिए इन आंकड़ों के संग्रहण, स्रोत, एवं विश्वसनीयता की कोई गारण्टी नहीं होती। अतः इनके प्रयोग करने में निम्न सावधानियाँ ध्यान पर रखनी चाहिए।

(1) संकलन का उद्योग - सर्व प्रथम अनुसन्धानकर्ता को इस तथ्य का पता लगाना चाहिए कि समंकों को मूल रूप से संकलित करने का क्या उद्देश्य था ? यदि पूर्व निर्धारित उद्देश्य एवं अनुसन्धानकर्ता के वर्तमान उद्देश्य में समानता हो तो द्वितीयक समंकों का प्रयोग निःसंकोच किया जा सकता है।

(2) संकलनकर्ता की योग्यता - जिस संकलनकर्ता द्वारा आँकड़े एकत्र किये गये थे, उसकी योग्यता, कुशलता, उसकी ईमानदारी तथा राष्ट्रीयता एवं उपलब्ध संसाधनों के संदर्भ में जानकारी होना आवश्यक होता है।

(3) समंक संकलन का समय - द्वितीयक समंकों का प्रयोग करते समय समंक संकलन की अवधि को भी ध्यान में

रखना होता है। यदि समंकों का संकलन वर्षों पूर्व किया गया है और अब तक सम्बन्धित क्षेत्र में नवीनता आ चुकी है तो पूर्व संकलित समंक अनुसन्धान के लिए अनुपयुक्त हो जाते हैं जैसे जनसंख्या सम्बन्धी 1991 में संकलित आँकड़े वर्तमान में अनुसन्धान के सही निष्कर्ष नहीं प्रदान कर सकते।

(4) शुद्धता का स्तर - पूर्व में संकलित आँकड़ों की शुद्धता सम्बन्धी स्तर के संदर्भ में जानकारी प्राप्त कर लेना आवश्यक होता है। यदि शुद्धता का स्तर वर्तमान समस्या से मेल खाता है तो हम उन आँकड़ों का प्रयोग कर सकते हैं।

(5) समंक संकलन की रीति - अनुसन्धानकर्ता द्वारा द्वितीयक समंकों का प्रयोग करने से पूर्व यह जानना आवश्यक होता है कि समंकों का संकलन संगणना रीति से किया गया है अथवा निदर्शन रीति से।

(6) सन्निकटीकरण की सीमा - यह जान लेना भी आवश्यक होगा कि समंकों के सन्निकटीकरण की सीमा क्या है। यह सीमा जितनी कम होगी समंक उतने ही विश्वसनीय होंगे।

(7) परीक्षात्मक जाँच - अनुसन्धानकर्ता द्वारा द्वितीयक समंकों के प्रयोग से पूर्व उनकी परीक्षात्मक जाँच कर लेना भी आवश्यक होता है। इसके लिये समंकों के योग, दर, प्रतिशत, इत्यादि की गणना करके उनकी विश्वसनीयता को परखा जा सकता है।

(8) इकाई का परिभाषा - अनुसन्धान कर्ता द्वारा द्वितीयक समंकों को प्रयोग करने से पूर्व संग्रहीत आँकड़ों सम्बन्धी इकाई की परिमाण को भी ध्यान में रखना पड़ता है। उदाहरण स्वरूप यदि गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली जनसंख्या का अध्ययन करना है तो पूर्व संकलित आँकड़े गरीबी रेखा की सीमा बदल जाने

के कारण निष्प्रयोज्य हो जायेंगे।

आंकड़ों के संग्रहण की
नीतियाँ

1.8 सारांश

किसी भी प्रकार की समस्या के सम्बन्ध में अनुसन्धान करने हेतु आँकड़ों की आवश्यकता होती है। आँकड़ों हम दो प्रकार से प्राप्त कर सकते हैं, एक वे आँकड़ों जिन्हें हम स्वयं क्षेत्र में जाकर एकत्र करते हैं, उन्हें हम प्राथमिक समंकों कहते हैं, वे आँकड़ों जो किसी अन्य अनुसन्धानकर्ता अथवा सरकार द्वारा एकत्र किये जाते हैं तथा हमें विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं से प्रकाशित रूप से प्राप्त होते हैं उन्हें हम द्वितीयक समंकों कहते हैं। अनुसन्धान के परिणामों की शुद्धता आँकड़ों पर निर्भर करती है। आँकड़ों जितने शुद्ध होंगे अनुसन्धान के परिणाम भी उतने ही शुद्ध होंगे आँकड़ों की शुद्धता जितना कम होगी अनुसन्धान के परिणाम भी भ्रामक होंगे। अतः समंकों संकलन में इस तथ्य को ध्यान में रखना आवश्यक होता है कि उन्हें सही स्रोतों से संकलित किया जाय। प्रकाशित आँकड़ों को सतही तौर पर देखकर ही स्वीकार कर लेना अनुसन्धानकर्ता के लिए घातक हो सकता है। अतः द्वितीयक समंकों का प्रयोग करते से पूर्व इनका भली भाँति परीक्षण कर लेना आवश्यक होता है। प्राथमिक समंकों से प्राप्त निष्कर्ष अपेक्षाकृत अधिक विश्वसनीय होते हैं। द्वितीयक समंकों का एकत्रीकरण किसी अन्य व्यक्ति द्वारा किये जाने के कारण अनुसन्धानकर्ता द्वारा प्राप्त निष्कर्षों की विश्वसनीयता अपेक्षाकृत कम होती है। वस्तुतः सांख्यिकीय अनुसन्धान में आँकड़ों की शुद्धता पर ही निष्कर्षों की शुद्धता निर्भर करती है।

1.9 बोध प्रश्न

- (i) प्राथमिक समंकों क्या होते हैं। उन्हें हम कैसे प्राप्त करते हैं।
- (ii) द्वितीयक समंकों के बारे में आप क्या जानते हैं?

- (iii) क्या प्राथमिक एवं द्वितीयक आँकड़ों के मध्य कोई अंतर है ?
- (iv) द्वितीयक समकों के प्रयोग में आप क्या सावधानी बरतेंगे ?
- (v) प्रश्नावली के बारे में संक्षिप्त टिप्पणी लिखो।

1.10 व्यावहारिक कार्य

- (1) आप अपने गाँव का सर्वेक्षण करके कुल जनसंख्या, स्त्री, पुरुष संख्या, उनकी साक्षरता, स्कूल जाने वाले बच्चों की संख्या, संकलित करके निष्कर्ष निकालिए।
- (2) द्वितीयक समंक प्राप्त करने के किन्ही तीन माध्यमों का उल्लेख कीजिए।

1.11 परीक्षण प्रश्न

- (i) प्राथमिक समकों का संकलन अनुसन्धानकर्ता द्वाराकिया जाता है।
- (ii) द्वितीयक समकोंहोते हैं।
- (iii) किसी अकेली संख्या को हम आँकड़ा कह सकते हैं अथवा नहीं।
- (vi) प्राथमिक समंक.....होते हैं।

उत्तर :- (i) स्वयं (ii) प्रकाशित अथवा अप्रकाशित (iii) नहीं
(v) मौलिक

संदर्भ ग्रन्थ

1. Elements of Statistics - Dr. D.N. Ethance
2. Stastical methods, Edward A.L.
3. व्यावसायिक सांख्यिकीय - डा० एस० एम० शुक्ल
4. अनुसन्धान परिचय - श्री पारसनाथ राय

5. सांख्यिकीय विधियाँ - प्रो० एस० पी० गुप्ता, डा० अलका गुप्ता
6. सामाजिक अनुसन्धान (शोध) एम० एल० गुप्ता
7. Principles of Statistics - Prof. Ramendu Roy.

आंकड़ों के संग्रहण की
नीतियाँ

इकाई 2 : अवलोकन (Observation Design)

इकाई रूपरेखा

- 2.0 उद्देश्य
- 2.1 प्रस्तावना
- 2.2 अवलोकन/निरीक्षण का अर्थ एवं परिभाषा
- 2.3 अवलोकन की विशेषताएँ
- 2.4 अवलोकन के प्रकार
- 2.5 अवलोकन विधि की उपयोगिता या महत्व
- 2.6 अवलोकन विधि की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता
- 2.7 अवलोकन की विश्वसनीयता के उपाय
- 2.8 सारांश
- 2.9 बोध प्रश्न
- 2.10 परीक्षण प्रश्न

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन का उद्देश्य है कि

- हम अवलोकन का अभिप्राय भली भाँति समझ लें।
- अवलोकन के प्रकार /वर्गीकरण कर सकें।
- अनुसन्धान के उपकरण के रूप में अवलोकन की विश्वसनीयता के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकें।
- अनुसन्धान में अवलोकन की उपयोगिता के बारे में जान सकें।

2.1 प्रस्तावना

हम सदैव अपने चारों ओर होने वाली घटनाओं का अवलोकन करते रहते हैं। प्रातः उठकर खिड़की दरवाजे खोलकर या छत पर खड़े होकर प्रकृति की मनोरम छटा एवं मौसम की दशा का अवलोकन करते हैं। वस्तुतः अवलोकन हमारे दैनिक जीवन की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण क्रिया है। अनुसन्धान कार्य की पूर्णता एवं सफलता अवलोकन पद्धति का प्रयोग किये बिना प्राप्त नहीं की जा सकती। वस्तुतः अवलोकन विधि अनुसन्धान की अत्यधिक प्राचीन एवं प्रचलित विधि है। मानव द्वारा अपने चारों ओर फैले प्रारम्भिक ज्ञान को अवलोकन द्वारा ही प्राप्त हुआ। सर्दी, गर्मी, बरसात, धूप, छाँव इत्यादि पर्यावरणीय घटनायें अवलोकन के द्वारा ही मानव मष्तिष्क के समाहित हुईं।

2.2 अवलोकन का अर्थ एवं परिभाषा

अवलोकन शब्द अंग्रेजी भाषा के "Observation" शब्द का हिन्दी रूपान्तर है। जिसका अर्थ में देखना, अवलोकन करना, या निरीक्षण करना। अवलोकन के माध्यम से विश्व में अनेक महानतम आविष्कार हुए हैं। उदाहरणस्वरूप मैडम मेरी क्यूरी ने रेडियोधर्मिता, न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण एवं एलेक्जेंडर फ्लेमिंग ने पेंनिसिलीन की खोज अवलोकन विधि के द्वारा ही की थी।

ज्ञान की खोज में अवलोकन विधि का प्रयोग प्राचीन काल में होने के कारण सोजर महोदय इसे वैज्ञानिक अनुसन्धान की शास्त्रीय पद्धति कहते हैं। वस्तुतः यह यथार्थ है कि हमने अवलोकन द्वारा ही अतीत में बहुत सारा ज्ञान प्राप्त किया है किन्तु अनुसन्धान की वैज्ञानिक विधि के रूप में अवलोकन का व्यवस्थित होना परमावश्यक होता है। इसके अन्तर्गत घटनाओं को देखना, सुनना, समझना एवं उन्हें लिखना भी सम्मिलित किया जाता है।

जहोदा एवं कुक के शब्दों में “अवलोकन केवल दैनिक जीवन की ही अत्यधिक व्यापकता क्रिया मात्र नहीं है, यह वैज्ञानिक जाँच का भी एक प्राथमिक यंत्र है।”

गुडे तथा हाट के शब्दों में “विज्ञान अवलोकन से प्रारम्भ होता है तथा उसे सत्यापन के लिए अन्ततः अवलोकन कर ही पुनः लौट आना पड़ता है।”

जॉन डार्लड के अनुसार “अनुसन्धान का प्राथमिक यन्त्र मानव बुद्धि का अवलोकन तथा वस्तुओं के आधार पर ज्ञान प्राप्त करना होता है।”

प्रो० सी० ए० मेजर के अनुसार - “ठोस अर्थ में अवलोकन को कानों तथा वाणी की अपेक्षा नेत्रों के प्रयोग की आजादी होती है।

आक्सफोर्ड शब्द कोश को अनुसार “घटनाएँ, कार्य कारण, अथवा पारस्परिक सम्बन्धों के सम्बन्ध में, जिस रूप में वे उपस्थित होती हैं, का यथार्थ निरीक्षण एवं वर्णन है।”

उपरोक्त परिभाषाओं के आलोक में हम कह सकते हैं कि कार्य-करण अथवा पारस्परिक सम्बन्धों के बारे में ज्ञान प्राप्त करने हेतु स्वाभाविक रूप से घटित होने वाली घटनाओं को सूक्ष्म रूप में देखना ही अवलोकन है। वस्तुतः अवलोकन के माध्यम से ही हम प्राथमिक सामग्री का संकलन प्रत्यक्ष रूप में कर सकते हैं।

इसके अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता द्वारा घटनाओं को देखा, सुना, समझा एवं सामग्री को संकलित किया जाता है।

2.3 अवलोकन की विशेषताएँ

वस्तुतः अवलोकन अनुसन्धान की प्राचीनतम पद्धति है, प्रत्यक्ष अध्ययन मानवीय इन्द्रियों के प्रयोग इत्यादि के माध्यम से हम

अवलोकन की प्रक्रिया को समझ सकते हैं।

(i) प्रत्यक्ष अध्ययन :- अवलोकन विधि के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता घटनाओं को प्रत्यक्ष रूप में अपने नेत्रों से देखता है। उनसे सम्बन्धित व्यक्तियों से सम्पर्क कर तथ्यों को एकत्रित करता है।

(ii) मानव इन्द्रियों का प्रयोग :- अवलोकन विधि के अन्तर्गत मानवीय इन्द्रियों का प्रयोग किया जाता है। इसके अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता- द्वारा मुख्य मुख्य रूप से अपने कान, आँख, एवं वाणी का प्रयोग किया जाता है।

(iii) सूक्ष्म एवं उद्देश्यपूर्ण अध्ययन :- अवलोकन विधि के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता स्वयं घटनास्थल पर उपस्थित होकर घटनाओं का गहन एवं सूक्ष्म अध्ययन करता है।

(iv) प्राथमिक सामग्री का संकलन :- चूँकि अनुसन्धानकर्ता स्वयं घटनास्थल पर उपस्थित रहकर घटनाओं के बारे में प्राथमिक जानकारी एकत्र करता है। अतः घटनाओं के प्रत्यक्षदर्शी होने के कारण वे घटनाएँ अति विश्वसनीय होती हैं।

(v) कार्य-कारण सम्बन्ध ज्ञात करना :- सामान्य अवलोकन में हम प्रायः घटनाओं के देखते हैं। जबकि वैज्ञानिक अवलोकन के अन्तर्गत हम घटनाओं को देखकर उनके कारणों तथा परिणामों की भी खोज करते हैं।

(vi) निष्पक्षता :- अवलोकन के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता, चूँकि स्वयं घटनाओं को अपने नेत्रों से देखता है और उन्हें विज्ञान की कसौटी पर कसकर, भली-भाँति जाँच परख करता है इसलिए उसका निष्कर्ष वैज्ञानिक एवं निष्पक्ष होता है।

(vii) सामूहिक व्यवहार का अध्ययन :- अवलोकन विधि सामूहिक व्यवहार का अध्ययन करने हेतु सर्वोत्तम विधि है।

अवलोकन की उपरोक्त विशेषताओं के आलोक में हम कह सकते हैं कि यह अनुसन्धान की एक विश्वसनीय, वैज्ञानिक एवं महत्वपूर्ण प्रविधि है।

2.4 अवलोकन के प्रकार (Kinds of Observation)

घटनाओं की विविधता एवं जटिलता के आधार पर समस्त घटनाओं का अध्ययन एक ही प्रकार के अवलोकन से नहीं किया जा सकता। अनुसंधानकर्ता कभी स्वयं, व कभी समूह में विविध प्रकार की घटनाओं का अध्ययन करता है। सामान्य तौर पर अध्ययन की सुविधा के लिए अवलोकन को निम्नवत् वर्गीकृत किया जा सकता है,

- (1) अनियन्त्रित अवलोकन
- (2) नियन्त्रित अवलोकन
- (3) सहभागी अवलोकन
- (4) असहगामी अवलोकन
- (5) अर्द्ध सहगामी अवलोकन
- (6) सामूहिक अवलोकन

1. **अनियन्त्रित अवलोकन** - अनुसन्धान के क्षेत्र में अनियन्त्रित अवलोकन प्राचीन विधि है। अनियन्त्रित अवलोकन से आशय ऐसे अवलोकन से है जिनमें उन लोगों या घटनाओं जिनका हम अवलोकन कर रहे हैं, उन पर अवलोकन के समय किसी प्रकार का नियन्त्रण न रहे। दूसरे शब्दों में अनियन्त्रित अवलोकन के अन्तर्गत अवलोकनकर्ता एवं अवलोकित, घटना, व्यक्ति अथवा समूह पर किसी भी प्रकार का कोई नियंत्रण नहीं रखा जाता अर्थात् अवलोकनकर्ता द्वारा उन घटनाओं का उनके वास्तविक एवं स्वाभाविक

रूप में ही अध्ययन किया जाता है।

2. नियंत्रित अवलोकन - नियंत्रित अवलोकन से आशय अवलोकन की ऐसी प्रविधि से है जिसके अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता स्वयं घटना पर योजनाबद्ध रूप से नियंत्रण रखता है। उसकी भूमिका वास्तविक स्थिति एवं प्राप्त सामग्री के मध्य एक मध्यस्थ की होती है। उसके द्वारा संकलन के विभिन्न साधनों का प्रयोग करके सामग्री का संग्रहण कराया जाता है। नियंत्रित अवलोकन के अन्तर्गत तथ्यों का संकलन निश्चित एवं पूर्व नियोजित रूप से किया जाता है। प्रायः इस विधि का प्रयोग आक्रमण, नेतृत्व, उद्यमों में कार्यरत श्रमिकों आदि के लिए किया जाता है।

3. सहभागी अवलोकन - सहभागी अवलोकन के आशय ऐसे अवलोकन से है, जिसके अन्तर्गत अवलोकन कर्ता एवं अध्ययन किये जाने वाले में सम्मिलित होकर अवलोकन कार्य करता है। समूह या घटना की सभी क्रियाओं में उसकी सहभागिता होती है। वस्तुतः सहभागी अवलोकन में अनुसन्धानकर्ता उस घटना या समूह से इस प्रकार घुल मिल जाता है कि कभी कभी उसे अपने अस्तित्व का ध्यान भी नहीं रहता।

4. असहभागी अवलोकन - असहगामी अवलोकन के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता अध्ययन की विषय वस्तु, घटना, या समूह के साथ अपने को सम्मिलित नहीं करता, एवं तटस्थ दृष्टा की भाँति वैज्ञानिक रूप में घटना का अवलोकन करता है। इस विधि के अन्तर्गत अध्ययनकर्ता सम्बन्धित विषय वस्तु घटना, अथवा समूह के मध्य निवास नहीं करता, और न ही उनकी किसी गतिविधि में भाग लेता है। उसकी भूमिका एक अपरिचित और मौन दर्शक भी होती है।

5. अर्द्धसहभागी अवलोकन - अर्द्धसहभागी अवलोकन

से आशय अवलोकन की उक्त तकनीक से है जिसके अन्तर्गत अवलोकनकर्ता अध्ययन की जाने वाली घटना, विषय वस्तु या समुदाय के सामान्य कामकाज में भाग लेता है किन्तु अधिकांशतया वह तटस्थ भाव से अवलोकन करता है। इस विधि के अन्तर्गत सहभागी व असहभागी दोनों विधियों के लाभ प्राप्त होते हैं।

6. सामूहिक अवलोकन - अवलोकन की इस विधि के अन्तर्गत अवलोकन कार्य किसी एक व्यक्ति द्वारा न किया जाकर बल्कि अनुसन्धानकर्ताओं के समूह द्वारा किया जाता है। वस्तुतः सामूहिक अवलोकन नियंत्रित व अनियंत्रित अवलोकन का मिश्रण है। इस विधि के अन्तर्गत एक ही विषय वस्तु का अध्ययन कई अनुसन्धानकर्ताओं द्वारा किया जाता है।

2.5 अवलोकन विधि की उपयोगिता या महत्त्व

अनुसन्धान के क्षेत्र में अवलोकन विधि की उपयोगिता सर्वांवादेत है, प्राचीन काल से ही अवलोकन द्वारा अनेक अनुसन्धान किये गये हैं, जैसे जेम्सवाट द्वारा उबलते पानी से भाप की शक्ति का अवलोकन करके भाप के इंजन का निर्माण किया गया। सामान्यतया अवलोकन विधि निम्नलिखित कारणों से अत्यन्त उपयोगी है।

(i) **प्राथमिक एवं सरल पद्धति** - मानव द्वारा प्राचीन काल से ही अवलोकन का प्रयोग किया जाता रहा है अतः यह अनुसन्धान की प्राथमिक विधि है। इसके अतिरिक्त अनुसन्धान की विभिन्न प्रचलित विधियों में यह विधि सबसे सरल है।

(ii) **यथार्थ एवं विश्वसनीय** - चूँकि अवलोकन विधि के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता स्वयं अपने नेत्रों से घटनाओं एवं तथ्यों का अवलोकन करता है अतः यह प्रविधि अन्य प्रविधियों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक यथार्थ एवं विश्वसनीय है।

- (iii) **प्राक्कल्पना के निर्माण** - अवलोकन के माध्यम से अनुसन्धानकर्ता को अनेक घटनाओं को देखने, सुनने व समझने का अवसर मिलता है जिसके कारण उसके अनुभवों में अभिवृद्धि होती है। परिणामस्वरूप अवलोकनकर्ता ने विभिन्न प्राक्कल्पनाओं के निर्माण की क्षमता प्राप्त हो जाती है।
- (iv) **सत्यापन की सुविधा** - मानव द्वारा अवलोकन विधि से संकलित किये गये तथ्यों की सत्यता को आसानी से सत्यापित किया जा सकता है। वस्तुतः अनुसन्धान की शुद्धता हेतु सत्यापन एक अनिवार्य आवश्यकता होती है।
- (v) **सर्वाधिक प्रचलित विधि** - अनुसन्धान के लिए प्रचलित विभिन्न विधियों में अवलोकन विधि सर्वाधिक प्रचलित एवं लोकप्रिय पद्धति है- प्रायः प्रत्येक प्रकार के अनुसन्धान में इसका प्रयोग सदियों से होता आता है अतः यह एक परिष्कृत एवं परिमार्जित विधि है।

2.6 अवलोकन विधि की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता

अनुसन्धान की समस्त प्रविधियों में अवलोकन विधि की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता सर्वाधिक है। इसके अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता स्वयं अपने नेत्रों से घटनाओं को देखता एवं कानों से सुनता है। किन्तु फिर भी अवलोकन को सत्यता का अचूक प्रमाण नहीं माना जा सकता है। अवलोकन की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता में संदेह के कतिपय प्रमुख कारण निम्न हैं।

- (i) **ज्ञानेन्द्रियों की सीमाएँ** - अवलोकन में हम अपने नेत्रों का ही प्रयोग करते हैं। कई बार हम जो कुछ देखते हैं और जो यथार्थ है उसमें भिन्नता आ जाती है। प्रायः हम विचित्र

आवाजों, एवं चटकीले रंगों की ओर शीघ्र आकर्षित होते हैं।

- (ii) अवलोकन एवं निर्वचन - कई बार हम जो कुछ देखते हैं, उसका निर्वचन हम अपने पूर्व ज्ञान एवं अनुभव के आधार पर किसी और रूप में कर देते हैं। इससे अवलोकन की विश्वसनीयता कम हो जाती है। उदाहरण स्वरूप यदि किसी फैक्ट्री के दरवाजे पर कुछ धुंधला सा लिखा हो तो पढ़ने वाले लोग उसे “अन्दर आना मना है” ही पढ़ेंगे।
- (iii) व्यवहार की कृत्रिमता - अनुसन्धानकर्ता जब किसी घटना, या विषय का अध्ययन करता है तो वास्तविकता का अध्ययन नहीं कर पाता क्योंकि अनुसन्धान सामग्री या सम्बन्धित लोगों को यह पता चल जाता है कि उनके व्यवहार का अवलोकन किया जा रहा है। जिससे उनमें कृत्रिमता आ जाती है।
- (iv) घटना की अपर्याप्तता - कई बार अनुसन्धानकर्ता द्वारा अपूर्ण घटनाओं का अवलोकन किया जाता है। अपूर्ण घटनाओं के अवलोकन से अनुसन्धान की प्रमाणिकता एवं विश्वसनीयता समाप्त हो जाती है।
- (v) अनुसन्धानकर्ता का पक्षपात - यदि अनुसन्धानकर्ता किसी विशेष मत अथवा विचारधारा का पक्षधर है तो उसके द्वारा किया गया अवलोकन दोषपूर्ण हो सकता है। यही कारण है कि किसी एक घटना का निर्वचन कई लोगों द्वारा किये जाने पर उनके परिणामों में भिन्नता आ जाती है।

2.7 अवलोकन की विश्वसनीयता के उपाय

अनुसन्धान हेतु अवलोकन की प्रक्रिया अत्यन्त विश्वसनीयता बनाने हेतु हमें निम्न प्रयास करने चाहिए।

- (i) अवलोकन में विश्वसनीयता लाने हेतु अवलोकनकर्ता को अवलोकन की एक विस्तृत कार्य योजना तैयार कर लेनी चाहिए।
- (ii) अनुसन्धानकर्ता द्वारा अवलोकन की विश्वसनीयता बनाये रखने हेतु अनुसूची का प्रयोग करना चाहिए, उसके द्वारा घटनाओं को देखकर तत्काल अनुसूची में लिखे प्रश्नों का उत्तर भरते जाना चाहिए।
- (iii) अवलोकन कर्ता को परिकल्पना (Hypothesis) का निर्माण अवश्य कर लेना चाहिए। क्यों कि परिकल्पना निर्माण के उपरान्त अध्ययनकर्ता अध्ययन से सम्बन्धित तथ्यों का ही संकलन करेगा।
- (iv) अवलोकनकर्ता को सदैव अवलोकन की प्रमाणिकता हेतु टेप रिकार्डर, वीडियो, फोटो, इत्यादि वैज्ञानिक यन्त्रों का प्रयोग करना चाहिए।

2.8 अवलोकन पद्धति के दोष या सीमाएं

अवलोकन पद्धति चूँकि किसी वैज्ञानिक कसौटी पर आधारित होती है। अतः इस विधि में निम्नलिखित दोष हो सकते हैं।

- (i) अवलोकन कार्य चूँकि नेत्रों द्वारा देखकर एवं कान द्वारा सुन कर किया जाता है अतः इन ज्ञानेन्द्रियों की भी सीमायें होती हैं। कभी-कभी हम कतिपय विशेष घटनाओं की ओर अधिक आकर्षित होते हैं।
- (ii) जब अवलोकित सामग्री, या विषयवस्तु को यह पता चल जाता है कि उसके व्यवहारों का अवलोकन किया जाता है तो उनके व्यवहारों में कृतिमता आ जाती है।
- (iii) अवलोकनकर्ता चूँकि मानव होता है वह मानवीय दुर्बलताओं,

क्रोध, द्वेष, घृणा, पक्षपात इत्यादि से ग्रसित हो सकता है, जिससे अध्ययन दोषपूर्ण दो जाते हैं।

- (iv) ऐसी अनेक घटनायें होती हैं जिनका अवलोकन नहीं हो पाता, जैसे अपराध व्यक्तिगत जीवन, प्रेमी प्रेमिका सम्बन्ध इत्यादि।

2.9 सारांश

वस्तुतः मानव अपने आरम्भिक जीवन में ही वस्तुओं या घटनाओं को देखकर उन्हें पहचानने, उपयोगिता का मापन करने इत्यादि कार्यों में लगा हुआ है। वस्तुतः हम बिना किसी वस्तु का अवलोकन किये उसके बारे में कोई निष्कर्ष नहीं निकाल सकते, अतः अवलोकन अनुसन्धान का मूलाधार है। विश्व में अनेक बड़े आविष्कार अवलोकन से ही सम्भव हो सके, जेम्सवाट ने बटलोई में उबलते पानी के ढक्कन को बार-बार उठता गिरता देखकर ही भाप की शक्ति का पता लगाया, और भाप के इंजन का निर्माण किया। अवलोकन विधि का प्रयोग करके हम आज भी अनेक वैज्ञानिक, एवं सामाजिक शोध पूर्ण करते हैं। यह विधि अत्यन्त सरल, उपगोयी एवं विश्वसनीय है। इसमें सत्यापन करने की सुविधा भी है। समय के साथ-साथ इसके अर्न्तगत अनेक प्रामाणिक उपकरणों मय कैमरा, रिकार्डर, इत्यादि उपकरणों का प्रयोग होने लगा है। आज भी यह विधि अत्यन्त प्रामाणिक एवं विश्वसनीय मानी जाती है।

2.10 बोध प्रश्न

- (i) अवलोकन से आप क्या समझते हैं ?
- (ii) अवलोकन को वर्गीकृत कीजिए।
- (iii) सामूहिक अवलोकन से आप क्या समझते हैं?
- (iv) अवलोकन की विश्वसनीयता के विभिन्न उपाय बताइये।
- (v) अवलोकन की विश्वसनीयता के विभिन्न उपाय बताइए।

(vi) अवलोकन विधि के दोष व सीमाओं का उल्लेख कीजिए।

2.11 परीक्षण प्रश्न

- (i) अवलोकन विधि को वैज्ञानिक अनुसन्धान की शास्त्रीय पद्धति किसने कहा?
- (ii) अवलोकन हेतु हम किन इंद्रियों का प्रयोग करते हैं?
- (iii) अवलोकन के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता किस प्रकार के आकड़े एकत्र करता है।
- (iv) अवलोकन की वह विद्या जिसमें अवलोकनकर्ता उस घटना या समूह से मिल जाता है।

उत्तर (i) गोजर (ii) आँख, कान, (iii) प्राथमिक (iv) सहगामी अवलोकन

संदर्भ सूची

- (1) सांख्यिकीय - डा० के० एल० गुप्ता
- (2) अनुसन्धान परिचय - डा० वी एल० शर्मा
- (3) Elements of Statistical - Mr. Mohan Singhal
- (4) अनुसन्धान परिचय - जी०पी० एन० राय
- (5) सांख्यिकीय विधियाँ - प्रो० एस० पी० गुप्ता
- (6) Statistics - Prof. B.N. Asthana

इकाई 3 : अनुसन्धान हेतु साक्षात्कार एवं प्रश्नावली का निर्माण

इकाई रूपरेखा

- 3.0 उद्देश्य
- 3.1 प्रस्तावना
- 3.2 साक्षात्कार का अर्थ एवं परिभाषा
- 3.3 साक्षात्कार प्रविधि की विशेषताएँ
- 3.4 साक्षात्कार के उद्देश्य
- 3.5 साक्षात्कार के प्रकार
- 3.6 साक्षात्कार प्रविधि के प्रमुख चरण
- 3.7 साक्षात्कार प्रविधि के गुण अथवा महत्ता
- 3.8 साक्षात्कार प्रविधि के दोष अथवा सीमाएँ
- 3.9 प्रश्नावली
- 3.10 प्रश्नावली का निर्माण
- 3.11 प्रश्नावली का बाह्य अथवा भौतिक पक्ष
- 3.12 प्रश्नावली का नमूना
- 3.13 साराँश
- 3.14 बोध प्रश्न
- 3.15 परीक्षण प्रश्न

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो सकेंगे
कि-

- साक्षात्कार का अर्थ समझ सकें, एवं परिभाषित कर सकें,
- साक्षात्कार के उद्देश्य से भली-भाँति अवगत हो सकें,
- साक्षात्कार का वर्गीकरण कर सकें,
- आप साक्षात्कार आयोजित कर सकें,
- अनुसन्धान हेतु साक्षात्कार की उपयोगिता को समझ सकें।

3.1 प्रस्तावना

अनुसन्धान की तकनीक के रूप में अवलोकन अत्यन्त प्राचीन पद्धति है। अवलोकन विधि की कतिपय सीमाओं के कारण हम अनुसन्धान के एक औजार के रूप में साक्षात्कार विधि का प्रयोग करते हैं। जैसा कि आप जानते हैं कि साक्षात्कार आमने -सामने बैठकर बातचीत करने जैसा ही होता है इस पद्धति के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता अपनी अध्ययन वस्तु से आमने - सामने के सम्बन्ध (Face to Face Relationship) स्थापित कर वार्तालाप कर सकता है। हममें से सभी प्रायः कभी न कभी साक्षात्कार देते व लेते हैं। इसके माध्यम से हम अनुसन्धान हेतु आवश्यक विषय सामग्री सहजतापूर्वक प्राप्त कर सकते हैं। वस्तुतः साक्षात्कार एक प्रकार की मौखिक प्रश्नावली है जो साक्षात्कारकर्ता के मस्तिष्क में साक्षात्कार के समय बनती जाती है एवं साक्षात्कार देने वाला व्यक्ति उस प्रश्नावली के उत्तर तत्काल मौखिक रूप में देता चलता है।

3.2 साक्षात्कार का अर्थ एवं परिभाषा

साक्षात्कार को अंग्रेजी में इन्टरव्यू (Interview) कहा जाता है, यह शब्द दो शब्दों के मेल से बना है Inter का अर्थ है भीतर तथा View का अर्थ है देखना। दोनों शब्दों को सम्मिलित रूप से हम अन्तरदृष्टि, अथवा अन्तरदर्शन कह सकते हैं। अर्थात् हम जिन अप्रकट अथवा अदृश्य तथ्यों का वाह्य रूप से निरीक्षण नहीं कर

सकते, उन तथ्यों की जानकारी प्राप्त करना ही साक्षात्कार कहलाता है।

वस्तुतः साक्षात्कार शैक्षणिक अथवा वैज्ञानिक स्तर पर सम्पन्न की गयी वह प्रक्रिया है जिसमें अपरिचित एक दूसरे के आमने सामने होते हैं।

सी०ए० मोजर के शब्दों में - “एक सर्वेक्षण साक्षात्कार, साक्षात्कारकर्ता तथा उत्तरदाता के मध्य एक वार्तालाप है जिसका उद्देश्य उत्तरदाता से निश्चित सूचना प्राप्त करना होता है।

हैंडर तथा लिंडमेन के शब्दों में - “साक्षात्कार दो या अधिक व्यक्तियों के मध्य एक संवाद है जिसमें मौखिक उत्तर प्रत्युत्तर होते हैं।

फायर के शब्दों में - “साक्षात्कार एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है जिसमें दो व्यक्तियों के मध्य उत्तर प्रत्युत्तर होते हैं।

उपर्युक्त परिभाषाओं में यह स्पष्ट है कि साक्षात्कार अनुसन्धान की एक ऐसी व्यवस्थित एवं पूर्व नियोजित पद्धति है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति उद्देश्य विशेष को सम्मुख रखकर आमने-सामने, उत्तर प्रत्युत्तर संवाद, एवं वार्तालाप करते हैं। वस्तुतः यह एक मनोवैज्ञानिक विधि है जिससे साक्षात्कारकर्ता उत्तरदाता की भावनाओं विचारों मनोकृतियों एवं आन्तरिक तथ्यों का अध्ययन करता है।

3.3 साक्षात्कार प्रविधि की विशेषताएँ

- साक्षात्कार सम्पादित करने हेतु दो या दो से अधिक व्यक्तियों का होना आवश्यक होता है।
- साक्षात्कार कर्ता एवं साक्षात्कार देने वाले के मध्य परस्पर सम्पर्क, वार्तालाप अवश्य होनी चाहिए।
- साक्षात्कार का आयोजन किसी पूर्व निर्धारित उद्देश्य की पूर्ति

के लिए किया जाता है।

- साक्षात्कार सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक क्रिया है।
- साक्षात्कार में अनुसन्धानकर्ता द्वारा अध्ययन विषय से सम्बन्धित सूचनाओं तथ्यों का संकलन किया जाता है।
- साक्षात्कार सूचना संकलन की मौखिक विधि है।
- साक्षात्कार के अन्तर्गत आमने-सामने के प्राथमिक सम्बन्ध स्थापित किये जाते हैं।

3.4 साक्षात्कार के उद्देश्य

साक्षात्कार के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं :

1. **प्रत्यक्ष सम्पर्क द्वारा सूचनाओं की प्राप्ति** - साक्षात्कार विधि के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित करके सूचनाओं का आदान प्रदान करता है। इसके अन्तर्गत दो या दो से अधिक व्यक्तियों के मध्य प्रत्यक्षतः विचारों का आदान-प्रदान होता है।
2. **व्यक्तिगत तथ्यों की प्राप्ति** - साक्षात्कार आयोजन का उद्देश्य लोगों से सम्बन्धित व्यक्तिगत एवं आन्तरिक तथ्य प्राप्त करना भी है।
3. **अवलोकन का अवसर** - साक्षात्कार के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता को व्यक्तिगत विचारों / तथ्यों की जानकारी के साथ-साथ व्यक्ति के व्यवहार इत्यादि के अवलोकन का आधार भी प्राप्त होता है।
4. **उपकल्पनाओं का स्रोत** - साक्षात्कार का उद्देश्य अनुसन्धानकर्ता के लिए उपकल्पनाओं (Hypothesis) के निर्माण हेतु आवश्यक सामग्री प्राप्त करना है।

3.5 साक्षात्कार के प्रकार

साक्षात्कार के उद्देश्यों, क्षेत्र, अवधि, इत्यादि के आधार पर इसे निम्नलिखित भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

1. **निदानात्मक साक्षात्कार** - निदानात्मक साक्षात्कार से अभिप्राय उस पद्धति से है जिससे अनुसन्धान की विषयवस्तु के कारणों को ज्ञात किया जा सके, जैसे डाक्टर द्वारा रोग के कारणों को जानने हेतु रोगी से पूँछताछ।
2. **उपचारात्मक साक्षात्कार** - अनुसन्धान हेतु चयनित विषय से सम्बन्धित समस्याओं के समाधान हेतु आयोजित साक्षात्कार उपचारात्मक साक्षात्कार कहलाता है।
3. **अनुसन्धानात्मक साक्षात्कार** - अनुसन्धानात्मक साक्षात्कार का उद्देश्य वैज्ञानिक व सामाजिक अनुसन्धानों के बारे में नवीन तथ्यों की खोज करना होता है।
4. **व्यक्तिगत साक्षात्कार** - इस प्रकार के साक्षात्कार के अन्तर्गत एक समय में एक व्यक्ति साक्षात्कार लेने वाला एवं एक व्यक्ति सूचना देने वाला होता है। दोनों परस्पर विषय से सम्बन्धित वार्तालाप करते हैं। अनुसन्धानकर्ता प्रश्न पूँछता है एवं सूचनादाता उन प्रश्नों के उत्तर देता है।
5. **सामूहिक साक्षात्कार** - इसके अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता एक समय में एक से अधिक व्यक्ति अथवा समूह से आवश्यक सूचनायें प्राप्त करता है। वह समूह से बारी-बारी प्रश्न पूँछता है किन्तु समूह की उपस्थिति एवं सहमति आवश्यक होती है।
6. **औपचारिक साक्षात्कार** - औपचारिक साक्षात्कार के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता, अनुसूची अथवा प्रश्नावली में दिये गये प्रश्नों को ही पूँछता है तथा साक्षात्कार कर्ता द्वारा दिये

गये उत्तरों को लिखता है। इस प्रक्रिया में साक्षात्कारकर्ता पूर्ण रूप से नियंत्रण से रहता है इसलिए इसे नियंत्रित साक्षात्कार भी कहा जाता है।

7. **अनौपचारिक साक्षात्कार** - इस प्रकार के साक्षात्कार के अन्तर्गत किसी भी विशेष अनुसूची की सहायता नहीं ली जा सकती। इसके अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता साक्षात्कारदाता से किसी भी प्रकार के प्रश्न पूछने हेतु स्वतन्त्र होता है इसीलिए इसे अनियन्त्रित साक्षात्कार भी कहा जाता है।

3.6 साक्षात्कार प्रविधि के प्रमुख चरण

जैसा कि आप जानते हैं, किसी भी अनुसन्धान के आयोजन हेतु उद्देश्य का पूर्वनिर्धारण आवश्यक होता है। निर्धारित उद्देश्य के अनुसार अनुसन्धान की प्रविधि का चयन किया जाता है। अनुसन्धानकर्ता यदि साक्षात्कार के माध्यम से कोई सूचना एकत्र करना चाहता है तो उसे साक्षात्कार की पूर्व तैयारी व कतिपय मानक निर्धारित करने होंगे। सामान्य तौर पर जब हम किसी अनुसन्धान के आयोजन हेतु साक्षात्कार प्रविधि का प्रयोग करते हैं तो हमें निम्नलिखित चरणों (Step) से होकर गुजरना पड़ता है।

1. साक्षात्कार आयोजित करने से पूर्व हमें उससे सम्बन्धित समस्त तैयारी कर लेना चाहिए। इसके लिए सर्वप्रथम यह आवश्यक होता है कि साक्षात्कारकर्ता अनुसन्धान की अध्ययन समस्या के समस्त पहलुओं का विस्तृत ज्ञान प्राप्त कर ले।
2. साक्षात्कार के उद्देश्य का निर्धारण करने के साथ ही वांछित सूचनाओं के सन्दर्भ में स्पष्ट निश्चय कर लेना चाहिये।
3. साक्षात्कारकर्ता द्वारा साक्षात्कार का आयोजन किस प्रकार

किया जायेगा, यह भी निश्चित कर लेना चाहिए, जैसे व्यक्तिगत सामूहिक इत्यादि।

4. जिन प्रश्नों के आधार पर सूचनाएँ एकत्र करनी है उन प्रश्नों को व्यवस्थित एवं उद्देश्यपूर्ण ढंग से प्रस्तुतीकरण हेतु तैयार कर लेना चाहिए।
5. साक्षात्कार से प्राप्त सूचनाओं के लेखन की विधि भी सुनिश्चित कर लेनी चाहिए।
6. साक्षात्कार हेतु अनुकूलतम अवसर एवं उपयुक्त स्थान का चुनाव कर लेना भी आवश्यक होता है।
7. साक्षात्कार हेतु सम्मुख उपस्थित होने के तत्काल पश्चात् कार्य भी सुनिश्चित हेतु आत्मीय सम्बन्ध (rapport) स्थापित करना आवश्यक होता है।
8. साक्षात्कार के प्रश्न क्रमबद्ध, सरल एवं स्पष्ट, मूल विषय से सम्बद्ध एवं भावना से रहित होने चाहिए।
9. साक्षात्कार के प्रश्नों का समुचित उत्तर संक्षेप में लिख लेना आवश्यक होता है। इसके लिए टेपरिकार्डर का भा प्रयोग किया जा सकता है।

3.7 साक्षात्कार प्रविधि के गुण अथवा महत्ता

वस्तुतः साक्षात्कार विधि द्वारा हम अनुसन्धान विषय से सम्बन्धित मौखिक सूचनाएँ प्राप्त कर सकते हैं। साक्षात्कार के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता को अवलोकन का अवसर भी प्राप्त होता है। साक्षात्कार के महत्व अथवा गुणों को हम विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत निम्न प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं।

- (1)मनोवैज्ञानिक महत्व - साक्षात्कार विधि के अन्तर्गत व्यक्ति का मनोवैज्ञानिक अध्ययन सम्भव हो सकता है। इसके

अन्तर्गत साक्षात्कार के दौरान साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति के उद्देश्यों, भावनाओं धारणाओं, इच्छाओं, विचारों, मुद्राओं इत्यादि के आधार पर सूचनादाता के मनोवैज्ञानिक व्यवहार का अध्ययन किया जाता है।

(2) **भूतकालीन घटनाओं का अध्ययन** - साक्षात्कार के अन्तर्गत भूतकालीन घटनाओं एवं उनके प्रभावों का अध्ययन किया जाता है। प्रायः अनेक घटनाओं की पुनरावृत्ति नहीं होती अतः उस घटना के बारे में जानकारी प्राप्त करने हेतु उन व्यक्तियों के साक्षात्कार की आवश्यकता पड़ती है जिन्होंने उस घटना को देखा है।

(3) **अमूर्त घटनाओं का अध्ययन** - साक्षात्कार के द्वारा हम अमूर्त एवं अदृश्य घटनाओं का भी अध्ययन कर सकते हैं। व्यक्ति की मानसिक दशा, विचार, भावनाओं, संवेगों आदि का अध्ययन भी इसके अन्तर्गत किया जा सकता है।

(4) **सूचनाओं का सत्यापन** - साक्षात्कार के अन्तर्गत सूचनादाता द्वारा दी गई सूचनाओं की विश्वसनीयता एवं सत्यता की जाँच साक्षात्कार के दौरान ही की जा सकती है।

(5) **घटनाओं का अवलोकन** - साक्षात्कार के दौरान साक्षात्कारकर्ता घटनाओं के बारे में प्रश्न पूछने के अतिरिक्त कई घटनाओं का अवलोकन भी कर सकता है।

(6) **लचीली विधि** - साक्षात्कार विधि विषय वस्तु एवं संचालन की दृष्टि से लचीली विधि है। इसका प्रयोग विभिन्न प्रकार के तथ्यों का संकलन करने हेतु किया जाता है।

3.8 साक्षात्कार विधि के दोष अथवा सीमाएं

साक्षात्कार विधि की अनेक अच्छाइयों के साथ-साथ इसमें कतिपय विसंगतियाँ भी हैं। इस विधि की सीमायें निम्नलिखित हैं-

- (i) **दोषपूर्ण स्मरण शक्ति** - साक्षात्कार के दौरान प्रायः साक्षात्कारकर्ता सूचनाओं को लिखता नहीं है। अतः साक्षात्कार के दौरान हुई समस्त वार्ता स्मरण रख पाना असम्भव होता है।
- (ii) **पक्षपात की सम्भावना** - सूचनादाता एवं साक्षात्कारकर्ता के विचारों मूल्यों एवं चिन्तन में भिन्नता होने के कारण किसी एक घटना पर समान दृष्टिकोण असम्भव होता है। अतः सूचनादाता अपने विचार प्रकट करते समय अपने व्यक्तिगत भावों एवं पक्षपात को अवश्य जोड़ता है।
- (iii) **साक्षात्कारदाता पर निर्भरता** - साक्षात्कार में सूचनाओं का संकलन पूर्णरूपेण साक्षात्कारदाता पर निर्भर करता है। साक्षात्कारदाता प्रायः साक्षात्कारकर्ता से अनेक बहाने करके बार-बार बुलाता है।
- (iv) **अशुद्ध रिपोर्ट** - साक्षात्कारकर्ता द्वारा लिखित प्रतिवेदन में उसके व्यक्तिगत पक्षपात विचारों एवं भावनाओं का समावेश होने के कारण प्रायः रिपोर्ट में शुद्धता का विलोपन हो जाता है।
- (v) **खर्चीली प्रणाली** - साक्षात्कार एक खर्चीली प्रणाली है क्योंकि इसके अन्तर्गत साक्षात्कारकर्ता अनेक साक्षात्कारदाताओं से सम्पर्क करता है। वृहद स्तर पर साक्षात्कार के आयोजन हेतु कार्यकर्ताओं की नियुक्ति, प्रशिक्षण, वेतन, मार्ग व्यय इत्यादि पर अधिक समय करना पड़ता है।

3.9 प्रश्नावली (Questionnaire)

प्रश्नावली विषय अथवा समस्या से सम्बन्धित अनेक प्रश्नों की एक सूची होती है, जिसे अनुसन्धानकर्ता द्वारा तैयार करके डाक द्वारा अथवा व्यक्तिगत सम्पर्क करके सूचनादाताओं के पास भेजा जाता है। वस्तुतः प्रश्नावली के अन्तर्गत अनुसन्धान से सम्बन्धित सामग्री को प्रश्नों के रूप में क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

3.10 प्रश्नावली का निर्माण (Formation of Questionnaire)

अनुसन्धान की सफलता अथवा असफलता बहुत हद तक प्रश्नावली की रचना एवं निर्माण विधि पर निर्भर करती है। प्रश्नावली के प्रश्नों का उत्तर प्रायः अनुसन्धानकर्ता भी गैरमौजूदगी में सूचनादाता द्वारा दिये जाते हैं। अतः प्रश्नावली के निर्माण में अत्यधिक सावधानी व सर्तकता की आवश्यकता होती है। प्रश्नावली के निर्माण में हमें निम्न तथ्यों का ध्यान अवश्य देना चाहिए।

1. अध्ययन की समस्या - (The Problem of Study)- प्रश्नावली निर्माण से पूर्व समस्या के विभिन्न पक्षों का अध्ययन एवं विश्लेषण आवश्यक होता है। समस्या के विभिन्न पहलुओं को दृष्टिगत रखते हुए ही प्रश्नावली का निर्माण करना चाहिए।

2. प्रश्नों की उपयुक्तता - (Suitability of Questionnaire) - प्रश्नावली में किसी भी प्रश्न को सम्मिलित करने से पूर्व उन प्रश्नों का उपयुक्तता पर अवश्य विचार कर लेना चाहिए। अनावश्यक प्रश्नों के सम्मिलित करने से धन, समय व श्रम भी बर्बादी होती है।

3. प्रश्नों की स्पष्टता - (Clarity of Questions)

- प्रश्नावली के अन्तर्गत पूछे गये प्रश्न सरल सुस्पष्ट होने चाहिए, भ्रमक प्रश्नावली से हम अनुसन्धान के लाभ को प्राप्त नहीं कर सकते।

4. सही सूचना प्रदान करने वाले प्रश्न - प्रश्नावली में पूछे जाने वाले प्रश्न सही एवं स्पष्ट सूचना प्रदान करने वाले होने चाहिए।

5. न्यूनतम प्रश्न (Minimum questions) प्रश्नावली में प्रश्नों की संख्या न्यूनतम होना चाहिए। अधिक लम्बी प्रश्नावली के उत्तर देने में प्रायः सूचनादाता को परेशानी होती है। उनके द्वारा प्रश्नावली प्रायः भरकर वापस ही नहीं की जाती है। लम्बी प्रश्नावली के निर्माण में अनावश्यक धन, समय व श्रम का अपव्यय होता है।

6. गणना (Calculation) - प्रश्नावली में इस प्रकार के प्रश्नों को सम्मिलित करना चाहिए, जिनकी गणना, वर्गीकरण, एवं सारणीयन आसानी से किया जा सके। अधिकांश प्रश्नों के उत्तर 'हाँ' या 'नहीं' में होने पर अनुसन्धान हेतु अध्ययन में वस्तुनिष्ठता बनी रहती है।

7. गोपनीय सूचनाएँ (Secret Information) - प्रश्नावली में सूचनादाता से सम्बन्धित व्यक्तिगत एवं गोपनीय सूचनाओं से सम्बन्धित प्रश्नों को नहीं सम्मिलित करना चाहिए क्योंकि ऐसे प्रश्नों के उत्तर सूचनादाता नहीं देता। इसके अतिरिक्त सूचनादाता द्वारा दी गई सूचनाओं की गोपनीयता भी बनाये रखनी चाहिए।

8. तकनीकी शब्दों की व्याख्या - यथासम्भव प्रश्नावली में तकनीकी शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। यदि ऐसा करना आवश्यक होने पर उन तकनीकी शब्दों की व्याख्या अवश्य कर देना चाहिए।

3.11 प्रश्नावली का वाह्य अथवा भौतिक पक्ष (Physical Aspects of Questionnaire)

प्रश्नावली की सफलता प्रश्नों की भाषा, शैली व शब्दों पर निर्भर करने के अतिरिक्त उसकी भौतिक बनावट पर भी निर्भर करती है। भौतिक बनावट के अन्तर्गत निम्नलिखित पक्षों को ध्यान में रखा जाता है।

- (i) **आकार** - सामान्य तौर पर प्रश्नावली का निर्माण इतने बड़े कागज में होना चाहिए जिसे आसानी से मोड़कर लिफाफे में रखा जा सके। कागज का आकार 8"×12" अथवा 9"×11" हो सकता है। छोटे आकार भी प्रश्नावली हेतु पोस्टकार्ड का प्रयोग मितव्ययी होता है।
- (ii) **कागज** - प्रश्नावली के निर्माण हेतु प्रयोग किया जाने वाला कागज, चिकना, कड़ा, मजबूत एवं टिकाऊ होना चाहिए। रंगीन कागज का प्रयोग भी किया जा सकता है।
- (iii) **प्रश्नावली की लम्बाई** - प्रश्नावली की लम्बाई अनावश्यक रूप से अधिक नहीं होनी चाहिए जिसे भरने में सूचनादाता को परेशानी हो।
- (iv) **पठनीय** - प्रश्नावली की पठनीयता बनाये रखने हेतु उसे छपवाना अथवा सायक्लोस्टाइल कराया जा सकता है।
- (v) **हाशिया एवं स्थान छोड़ना (Margin and Spacing)** - प्रश्नावली का निर्माण करने के पश्चात् प्रायोगिक तौर पर एक छोटे निर्देशन क्षेत्र में उसका परीक्षण अवश्य कर लेना चाहिए जिसमें प्रश्नावली की किसी भी त्रुटि का

3.12 प्रश्नावली का नमूना

भारतवर्ष के वर्तमान राजनीतिक परिवेश से जनता सन्तुष्ट नहीं है। राजनीतिक जनता की अपेक्षाओं के अनुकूल आचरण नहीं कर रहे हैं। विकास की गति अत्यन्त धीमी है। चारों तरफ भ्रष्टाचार अन्याय का बोलबाला है। राजनीतिज्ञों द्वारा विकास के लिए आवंटित धनराशि का दुरुपयोग किया जा रहा है। गरीबी, बीमारी, बेरोजगारी से जनता त्रस्त है। न्यायपालिका की कार्य प्रणाली पर भी प्रश्न चिन्ह लग चुके हैं। आगे एक प्रश्नावली की जा रही है। कृपया अपने व्यस्ततम समय से थोड़ा वक्त निकालकर प्रश्नावली के समुचित उत्तर भेजने का कष्ट करें। आपके उत्तर पूर्णरूपेण गोपनीय रखे जायेंगे। कुछ चुने हुए उत्तरदाताओं को पुरस्कृत करने की भी योजना है।

(1) आप सूचनाएँ एकत्र करने हेतु किन साधनों का प्रयोग करते हैं?

- (i) अखबार (ii) दूरदर्शन / रेडियो
(iii) पारस्परिक चर्चा (iv) उपर्युक्त सभी

(2) दिन प्रतिदिन घटित होने वाली घटनाओं के लिए आप किसे जिम्मेदार मानते हैं?

- (i) वर्तमान शासन प्रणाली (ii) वर्तमान राजनीतिज्ञ
(iii) वर्तमान न्याय प्रणाली (iv) इनमें से कोई नहीं
(v) इनमें से सभी

(3) क्या आप वर्तमान शासन प्रणाली से संतुष्ट हैं ?

- (i) हाँ (ii) नहीं

(4) यदि नहीं तो आप किस प्रकार की शासन प्रणाली चाहते हैं ?

- (i) संसदीय (ii) अध्यक्षतात्मक
(iii) राजतन्त्र (iv) सैनिक तानाशाही

(5) वर्तमान समय में देश के समक्ष सबसे प्रमुख सवाल क्या है?

- (i) आतंकवाद (ii) देश की एकता
(iii) आर्थिक विकास (iv) इनमें से सभी

(6) देश की एकता के लिए क्या जरूरी है?

- (i) राज्यों की स्वायत्तता (ii) शक्तिशाली केन्द्र
(iii) सैनिक शासन (iv) इनमें से कोई नहीं

(7) गरीबी एवं बेरोजगारी दूर करने के हेतु क्या आवश्यक है?

- (i) आरक्षण (ii) अवसर की समानता
(iii) आर्थिक विकास (iv) भ्रष्टाचार का अंत

(8) क्या आप वर्तमान सरकार की कार्यप्रणाली से सन्तुष्ट हैं?

- (i) हाँ (ii) नहीं

(9) यदि नहीं तो आप किस पार्टी की सरकार चाहते हैं?

- (i) भाजपा (ii) सपा
(iii) बसपा (iv) कोई नहीं

(10) क्या आप जनता प्रतिनिधियों की कार्यप्रणाली से सन्तुष्ट हैं?

- (i) हाँ (ii) नहीं
(iii) कुछ नहीं कह सकता

यदि अन्य कोई खास बात कहना चाहते हैं तो लिखें

(11) आप बेरोजगारी को कैसे दूर कर सकते हैं?

- (i) उद्योग लगाकर (ii) सबको काम के अवसर प्रदान कर
- (iii) जनसंख्या नियंत्रण करके (iv) उपर्युक्त सभी

(12) गरीबी हटाने का सर्वोत्तम तरीका क्या है ?

- (i) खैरात बांटना (ii) उद्योग लगाना
- (iii) गरीबों को देश से निकाल देना
- (iv) अमीरों से छीनकर गरीबों को बांट देना

(13) आप इस देश में अपने आपको सुरक्षित महसूस करते हैं।

- (i) हाँ (ii) नहीं

(14) वर्तमान पुलिस प्रणाली से आप संतुष्ट हैं।

- (i) हाँ (ii) नहीं

(15) वर्तमान न्याय प्रणाली क्या जनभावनाओं के अनुरूप कार्य कर रही है?

- (i) हाँ (ii) नहीं

(16) वर्तमान न्याय प्रणाली से आप क्या अपेक्षा रखते हैं?

- (i) तत्काल न्याय (ii) संविधान की परिधि में न्याय
- (iii) पक्षपात रहित-न्याय (iv) उपर्युक्त सभी

यदि वर्तमान व्यवस्था के संदर्भ में आप कोई सुझाव देना चाहते हैं तो निम्न बाक्स में लिखें।

यहाँ आप अपना पूर्ण विवरण दें। यह जानकारी पूर्णरूपेण गोपनीय रहेगी।

नाम :.....

पूर्ण पता :.....धर्म

रोजगार :.....मासिक आय

आयकर दाता हैं अथवा नहीं।

लिंग.....उम्र.....

शैक्षिक योग्यता

कभी विशेष यात्रा की है

फोन/मोबाइल नं०

3.13 सारांश

अवलोकन वह विद्या है जिसके माध्यम से हम अनेक वस्तुओं व घटनाओं के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। वस्तुतः अवलोकन अनुसन्धान की तकनीक के रूप में प्राचीनकाल से प्रचलित है किन्तु अवलोकन विधि की सीमाओं के कारण अनुसन्धान के लिए साक्षात्कार विधि का प्रयोग किया गया। साक्षात्कार विधि के माध्यम से हम अपनी अध्ययन वस्तु के आमने-सामने के सम्बन्ध स्थापित करके वार्तालाप कर सकते हैं। इसके माध्यम से हम अनुसन्धान हेतु आवश्यक विषय सामग्री सहजता पूर्वक प्राप्त कर सकते हैं। साक्षात्कार के अन्तर्गत हम शैक्षणिक अथवा मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान सहजता पूर्वक सम्पादित कर सकते हैं। साक्षात्कार विधा के अन्तर्गत प्रत्यक्ष सम्पर्क द्वारा सूचनाओं की प्राप्ति होने के कारण अनुसन्धान के परिणाम के सत्य के करीब होते हैं। साक्षात्कार के अतिरिक्त प्रश्नावली का प्रयोग भी अनुसन्धान हेतु अत्यन्त उपयोगी होता है। प्रश्नावली, विषय अथवा समस्या से सम्बन्धित अनेक

प्रश्नों की एक सूची होती है। अनुसन्धान से सम्बन्धित सामग्री को प्रश्नों के रूप में क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत करके हम अनेक सूचनायें एकत्र कर सकते हैं।

3.14 बोध प्रश्न

- (i) साक्षात्कार का अर्थ एवं परिभाषा कीजिए।
- (ii) साक्षात्कार विधि की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
- (iii) साक्षात्कार विधि के दोष अथवा सीमाएं क्या हैं?
- (iv) प्रश्नावली से आप क्या समझते हैं?
- (v) आप प्रश्नावली का निर्माण किस प्रकार से करेंगे?
- (vi) कोई अध्ययन विषय लेकर एक प्रश्नावली तैयार करें?

3.15 बोध प्रश्न

- (i) अनुसन्धान की तकनीक के रूप में अवलोकन प्राचीन/नवीन पद्धति है।
- (ii) साक्षात्कार सम्पन्न करने हेतु कम से कम दो या अधिक व्यक्ति होने चाहिए।
- (iii) साक्षात्कार का आयोजन पूर्व निर्धारित उद्देश्य/बिना किसी उद्देश्य के होता है।
- (iv) साक्षात्कार विधि के अन्तर्गत हम प्रत्यक्ष/परोक्ष सम्पर्क द्वारा सूचनायें प्राप्त करते हैं।
- (v) साक्षात्कार विधि के अध्ययन से हम मौखिक/लिखित सूचनायें प्राप्त करते हैं।
- (vi) प्रश्नावली के प्रश्नों का उत्तर सूचनादाता अनुसन्धानकर्ता की मौजूदगी/गैरमौजूदगी में देता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

- (1) Method in social Research, Goode & Hatt
- (2) Social Research, Zund berg - G.A.
- (3) सामाजिक सर्वेक्षण व सामाजिक शोध - रवीन्द्र नाथ मुखर्जी
- (4) सामाजिक अनुसन्धान शोध - एम० एल० गुप्ता, डी०डी० शर्मा

इकाई 4 : आँकड़ों के विश्लेषण की मापन तकनीकें (Scaling Techniques of Data Analysis)

इकाई रूपरेखा

- 4.0 उद्देश्य
- 4.1 प्रस्तावना
- 4.2 आँकड़ों का विश्लेषण
- 4.3 आँकड़ों के विश्लेषण हेतु पूर्व दशायें
- 4.4 आँकड़ों के विश्लेषण के चरण
- 4.5 चर
- 4.6 आँकड़ों के विश्लेषण की मापन तकनीकें
- 4.7 साराँश
- 4.8 बोध प्रश्न

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप यह जान सकेंगे कि-

- आँकड़ों के विश्लेषण करने के विधि,
- आँकड़ों के विश्लेषण से परिणाम प्राप्त करने का तरीका, तथा
- आँकड़ों के विश्लेषण की मापन की विभिन्न तकनीकें ।

4.1 प्रस्तावना

अनुसन्धान के लिए केवल तथ्यों का एकत्रीकरण ही पर्याप्त नहीं होता बल्कि एकत्रित आँकड़ों के आधार पर कतिपय निष्कर्ष

प्राप्त करने की आवश्यकता होती है। एक अच्छा शोधकर्ता एकत्रित तथ्यों का प्रस्तुतीकरण इतने सुन्दर ढंग से करता है कि उनमें सजीवता आ जाती है और वे स्वयं बोलने लगते हैं। सर्वप्रथम शोधकर्ता द्वारा तथ्यों का सम्पादन किया जाता है। विभिन्न प्रविधियों द्वारा एकत्रित तथ्यों की जाँच करके त्रुटियों को दूर करने का प्रयास किया जाता है। विसंगतियाँ दूर कर तथ्यों को स्पष्टता प्रदान की जाती है।

4.2 आँकड़ों का विश्लेषण/निर्वचन

अनुसन्धानकर्ता द्वारा आँकड़ों के एकत्र करने के उपरान्त उनका विश्लेषण किया जाता है। वस्तुतः तथ्यों के संकलन, सम्पादन, वर्गीकरण एवं सारणीयन के उपरान्त अनुसन्धानकर्ता उन आँकड़ों के विश्लेषण एवं निर्वचन (विवेचन) का कार्य प्रारम्भ करता है। विश्लेषण एवं निर्वचन के आधार पर ही नियमों का प्रतिपादन, उपकल्पनाओं की सत्यता की परख एवं वैज्ञानिक निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं।

4.3 आँकड़ों के विश्लेषण हेतु पूर्व दशायें

वस्तुतः तथ्यों (आँकड़ों) का विश्लेषण एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है किन्तु इसकी सफलता हेतु अनुसन्धानकर्ता में कतिपय विशिष्ट गुणों का होना अनिवार्य होता है आँकड़ों का विश्लेषण तभी तथ्यपरक हो सकता है जबकि निम्नलिखित पूर्व दशाओं को अनुसन्धानकर्ता पूरी करता हो।

- (i) तथ्यों के बारे में समग्र जानकारी होना - आँकड़े के विश्लेषण हेतु अनुसन्धानकर्ता के लिए वस्तुतः अध्ययन के आधार पर उपलब्ध आँकड़े इतने अव्यवस्थित होते हैं कि अध्ययनकर्ता व उनका विश्लेषण करने हेतु सक्षम नहीं

होता। अतः विश्लेषणकर्ता को स्वतः विभिन्न गुणों, तथ्यों के प्रति जागरूक होना चाहिए।

- (ii) **व्यक्तिगत पक्षपात से राहत** - अनुसन्धानकर्ता को इस तथ्य की ओर विशेष सावधानी बरतनी होगी कि किसी भी दशा में आँकड़ों के विश्लेषण में व्यक्तिगत पक्षपात न होने पाये। विश्लेषण में अभिनति (Bias) पक्षपात होने पर सही निष्कर्ष नहीं प्राप्त किये जा सकते।
- (iii) **घटनाओं के प्रति विशेष अन्तर्दृष्टि** - चूँकि अनुसन्धानकर्ता तथा संकलन के समय स्वयं अनेक घटनाओं का अवलोकन के माध्यम से साक्षी होता है अतः अवलोकित घटनाओं के सम्बन्ध से अनुसन्धानकर्ता की अन्तर्दृष्टि स्पष्ट एवं सूक्ष्म होनी चाहिए।
- (iv) **वैज्ञानिक ईमानदारी** - आँकड़ों के विश्लेषण हेतु अनुसन्धानकर्ता में वैज्ञानिक ईमानदारी का होना परमावश्यक होता है। यद्यपि आँकड़ों के विश्लेषण हेतु अनुसन्धानकर्ता द्वारा वैज्ञानिक कार्य विधियों का सहारा लिया जाता है किन्तु वैज्ञानिक ईमानदारी के अभाव में उसके द्वारा वैज्ञानिक नियमों की उपेक्षा की जा सकती है।
- (v) **समालोचनात्मक कल्पना शक्ति का होना** - अनुसन्धानकर्ता चूँकि तथ्यों के संकलन के उपरान्त उनके मध्य पाये जाने वाले सह-सम्बन्धों (Corelations) को भी जानना चाहता है। अतः उसमें समालोचनात्मक कल्पना शक्ति का होना आवश्यक होता है। समालोचनात्मक कल्पना शक्ति के आधार पर ही विभिन्न तथ्यों के मध्य पारस्परिक सम्बन्धों को ज्ञात कर उनका समालोचनात्मक परीक्षण किया जाता है।

4.4 आँकड़ों के विश्लेषण के चरण (Stages of Data Analysis)

आँकड़ों के विश्लेषण हेतु वैज्ञानिक विधि का प्रयोग करने हेतु अनुसन्धानकर्ता कई चरणों से गुजरता है। प्रत्येक चरण में सम्पादित किये जाने वाले कार्यों को व्यवस्थित ढंग से सम्पन्न करने पर ही वैज्ञानिक निष्कर्ष यथार्थ हो सकते हैं। तथ्य विश्लेषण के महत्वपूर्ण चरण निम्नलिखित हैं :

- (i) **आँकड़ों का सम्पादन** - आँकड़ों के सम्पादन का आशय संकलित आँकड़ों का सूक्ष्म निरीक्षण करके उनकी कमियों, अशुद्धियों को दूर करके तथ्यों को स्पष्टता, प्रदान करने से है।
- (ii) **तथ्यों का वर्गीकरण** - अनुसन्धान के उद्देश्यों को दृष्टिगत रखते हुए आँकड़ों को वर्गीकृत किया जाता है। आँकड़ों के वर्गीकरण का उद्देश्य विश्लेषण एवं निर्वचन (Analysis and Interpretation) तथ्यों को व्यवस्थित करना है।
- (iii) **द्वितीयक समंकों की जाँच** - जब हम अनुसन्धान में प्राथमिक तथ्यों के साथ-साथ द्वितीयक तथ्यों का प्रयोग करते हैं तब हमें द्वितीयक तथ्यों की विश्वसनीयता की परख अवश्य कर लेनी चाहिए।
- (iv) **संकेतन** - संकेतन का उद्देश्य लम्बे उत्तरों को संक्षेपित करके विश्लेषण कार्य को सरल बनाना है। प्राप्त आँकड़ों उत्तरों को अर्थपूर्ण श्रेणियों में विभाजित करने की प्रक्रिया को संकेतन कहते हैं।
- (v) **सारणीयन** - अनुसन्धान के अन्तर्गत समस्या से सम्बन्धित

तथ्यों को संकलित करके उन्हें सारणियों अथवा तालिकाओं के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

- (vi) **साँख्यिकीय विश्लेषण** - अत्यावश्यक होता है।
- (vii) **निर्वचन** - आँकड़ों के विश्लेषण का एक प्रमुख चरण निर्वचन है। यह अनुसन्धान का महत्वपूर्ण भाग है। निर्वचन की प्रक्रिया के अन्तर्गत हम प्राप्त तथ्यों के आधार पर परिणाम निकालते हैं।
- (viii) **सामान्यीकरण** - सामान्यीकरण के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता द्वारा निष्कर्ष प्राप्त करके नियमों व सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया जाता है।

4.5 चर (Variables)

अनुसन्धान कार्य हेतु आँकड़ों का संग्रहण जितना आवश्यक होता है उन एकत्रित आँकड़ों का विश्लेषण भी उतना ही आवश्यक होता है। आँकड़ों के विश्लेषण से ही हम निष्कर्ष निकाल सकते हैं। आँकड़ों के विश्लेषण से पूर्व श्रेणी को गुणात्मक तथ्यों (Quantitative series) में परिवर्तित किया जाता है। उदाहरण स्वरूप हम परिवारों का मापन परिवारों के सदस्यों की गणना करके कर सकते हैं।

1. **गुणात्मक चर (Qualitative Variables)** - गुणात्मक चर वे चर होते हैं जो आँकड़ों के किसी गुण विशेष को इंगित करते हैं। इनके आधार पर हम अनुसन्धान में प्रयुक्त सामग्री को कतिपय स्पष्ट श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं। जैसे लिंगभेद के आधार पर स्त्री, पुरुष, अध्ययन विषयों के आधार पर कला, वाणिज्य व विज्ञान, धर्म के आधार पर हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, पारसी इत्यादि।

2. **मात्रात्मक चर (Quantitative Variables) -**
मात्रात्मक चर वे होते हैं जो आँकड़ों में निहित गुणों की मात्रा को तय करते हैं। जैसे छात्रों के परीक्षा प्राप्तांक, गरीबी रेखा का मापन इत्यादि मात्रात्मक चर सतत् चर एवं असतत् चर दो रूपों में हो सकते हैं। सतत चर वे है जो किन्हीं दो मानों के मध्य का मान भी धारण कर सकते हैं जैसे लम्बाई 5 फिट हो सकती है तथा 5 फिट चार इंच भी हो सकती है। इस प्रकार लम्बाई, वजन, मापन इत्यादि सतत् चर होते है। इसके विपरीत असतत चर वे होते हैं जिन्हें किन्हीं दो मानों के मध्य नहीं रखा जा सकता है। जैसे परिवार के सदस्यों की संख्या 3-4 नहीं हो सकती, वह संख्या तीन या चार हो सकती है। इसी प्रकार किसी परिवार में बच्चों की संख्या 5-6 नहीं हो सकती। यह संख्या या तो पाँच होगी अथवा छह होगी। अर्थात् असतत् चरों के मान सदैव पूर्णांक में होंगे।

4.6 आँकड़ों के विश्लेषण की मापन तकनीकें

आँकड़ों के विश्लेषण की मापन तकनीकों को आँकड़ों की कतिपय विशेषताओं, जैसे, चरों की प्रकृति, यथार्थता, परिणामों की प्रकृति इत्यादि के आधार पर निम्नलिखित रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है।

- (i) **नामित पैमाना (Nominal Scale) -** आँकड़ों के विश्लेषण हेतु प्रयोज्य नामित पैमाना के अन्तर्गत आँकड़ों को किसी गुण अथवा - विशेषता के आधार पर मापित किया जाता है। इसके अन्तर्गत आँकड़ों को उनके गुण अथवा विशेषता के आधार पर कतिपय वर्गों अथवा समूहों में बाँट लिया जाता है। प्रत्येक वर्ग गुण अथवा विशेषता के आधार पर भिन्न-भिन्न होते हैं। जैसे विषयों

के आधार पर वाणिज्य, कला, व विज्ञान वर्ग, निवास के आधार पर शहरी, ग्रामीण, लिंगभेद के आधार पर स्त्री, पुरुष इत्यादि प्रकार के विभाजन नामित पैमाने के अन्तर्गत किये जाते हैं। मापन की यह तकनीक अपेक्षाकृत कम परिष्कृत है क्योंकि इसके अन्तर्गत हम आँकड़ों के गुणों के आधार पर केवल गणना कार्य कर सकते हैं।

(ii) क्रमित पैमाना (Ordinal Scale) - आँकड़ों के मापन की यह तकनीक आँकड़ों में अन्तर्ग निहित गुणों की मात्रा व आकार पर आधारित होती है। इस प्रकार के मापन के अन्तर्गत अनुसन्धान सामग्री (व्यक्तियों, वस्तुओं) को उनके किसी गुण विशेष की मात्रा के आधार पर कतिपय वर्गों में विभाजित कर दिया जाता है। जैसे व्यक्तियों के कार्य का वर्गीकरण उत्कृष्ट, अतिउत्तम, उत्तम, व खराब। इसी प्रकार विद्यार्थियों को उनकी योग्यता के आधार पर श्रेष्ठ (Excellent), अच्छा (Good), औसत (Average) व कमजोर (Weak) इत्यादि। क्रमित पैमाने के अन्तर्गत हम आँकड़ों को उनके गुणों के आधार पर घटते व बढ़ते क्रम में रख सकते हैं। इसके अन्तर्गत भी हम समूह के सदस्यों की गणना मात्र कर सकते हैं। समूहों के व्यक्त करने वाले प्रतीकों के साथ गणितीय क्रियायें नहीं की जा सकती। जैसे हम किसी कक्षा के विद्यार्थियों के परीक्षा परिणाम मात्र श्रेणी के आधार पर वर्गीकृत कर सकते हैं।

(iii) अन्तरित पैमाना (Interval Scale) - आँकड़ों के विश्लेषण की यह मापन तकनीक गुण की मात्रा अथवा परिणाम पर आधारित होती है। इस प्रकार के मापन के अन्तर्गत अनुसन्धान की सामग्री को उनके गुणों की मात्रा

के आधार पर इकाइयों के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है तथा किन्हीं दो आँकड़ों के मध्य अन्तर समान रहता है। जैसे विद्यार्थियों को उनके अंग्रेजी भाषा ज्ञान के आधार पर अंक प्रदान करना। यहाँ 32-33 अंकों के मध्य वही अन्तर होता है। प्रायः हम सामाजिक, आर्थिक मनोवैज्ञानिक, व शैक्षणिक चरों का मापन अन्तरित पैमाने के आधार पर ही करते हैं। इन इकाइयों के साथ हम गणितीय क्रियायें (यथा, जोड़, घटना, इत्यादि कर सकते हैं। इस स्तर के मापन में शून्य जैसा कोई बिन्दु नहीं होता है। इस स्तर के मापन परिणाम सापेक्ष हो सकते हैं निरपेक्ष कदापि नहीं। जैसे गणित में फेल विद्यार्थी को हम यह नहीं कह सकते हैं कि उसका गणित ज्ञान शून्य है। वह मात्र प्रश्न पत्र में दिये गये प्रश्नों को हल नहीं कर सका, उसके द्वारा गणित के अन्य प्रश्नों को हल किया जा सकता है। अन्तरित मापन के अन्तर्गत हम गुणा, भाग जैसी गणनायें नहीं कर सकते हैं।

(iv) **अनुपातिक पैमाना (Ratio Scale)** - आँकड़ों के विश्लेषण की यह मापन तकनीक सर्वाधिक परिष्कृत एवं परिमार्जित है। इस प्रकार के मापन में अन्तरित मापन पैमाने के सभी गुणों के साथ-साथ शून्य की परिकल्पना भी निहित रहती है। शून्य प्रायः वह स्थिति होती है जब आँकड़ों का कोई गुण रूपेण अस्तित्व हीन हो जाता है। जैसे, भार, दूरी, व लम्बाई इत्यादि का मापन आनुपातिक मापन पैमाने के अन्तर्गत आते हैं क्योंकि मापन की इकाइयाँ पूर्ण रूपेण अस्तित्व हीन हो सकती है। आनुपातिक मापन पैमाने में प्राप्त मापों की अनुपातिक तुलनीयता हो सकती है। जैसे 80 किग्रा भार वाली किसी वस्तु को 40

किग्रा भार वाली उसी वस्तु को, दो गुने रूप में व्यक्त किया जा सकता है। आनुपातिक मापन से प्राप्त परिणामों के साथ हम जोड़, घटाना, गुणा, भाग, इत्यादि गणितीय क्रियायें आसानी से कर सकते हैं।

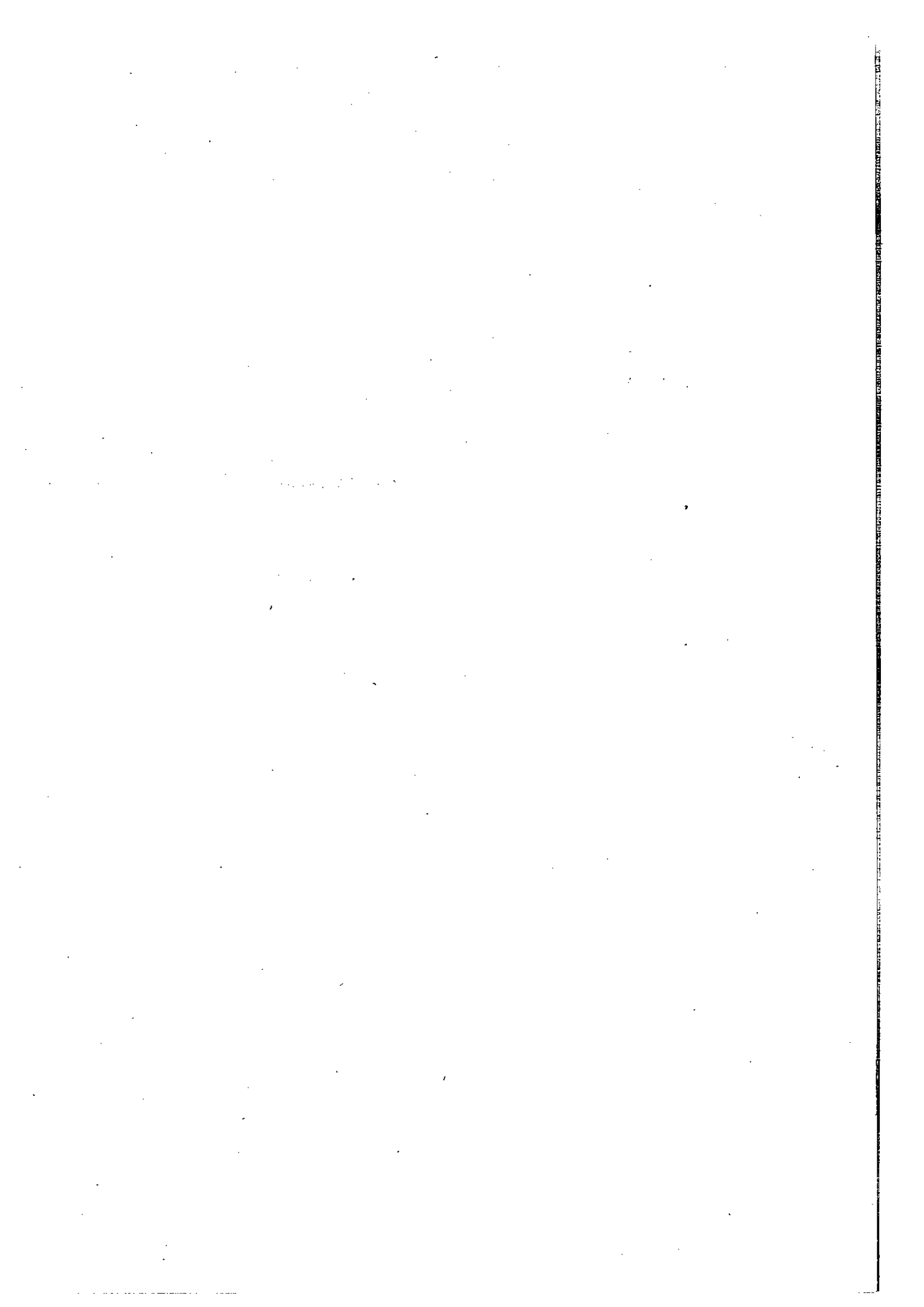
4.7 साराँश

ज्ञान शब्द अपने आप में वृहत कार्य संजोये हुए हैं जानने की कोई सीमा नहीं होती। हम अपने ज्ञान की सीमाओं में नहीं बाँध सकते। ज्ञान प्राप्ति एवं इसके विकास तथा परिमार्जन हेतु अनुसन्धान एक सशक्त माध्यम है। अनुसन्धान की प्रक्रिया के माध्यम से ही हम अपने ज्ञान को नवीनीकृत कर सकते हैं। अनुसन्धान हेतु हमें कतिपय तथ्यों को आँकड़ों के रूप में संग्रहीत करने की आवश्यकता होती है। आँकड़ों के संग्रहण के उपरान्त उनका सम्पादन, वर्गीकरण, सारणीयन, विश्लेषण, एवं निर्वचन करके ही हम अनुसन्धान के परिणाम प्राप्त कर सकते हैं। वस्तुतः आँकड़ों के विश्लेषण हेतु कतिपय मापकों की आवश्यकता होती है। इन्हीं मापन तकनीकों के माध्यम से आँकड़ों का विश्लेषण करके निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं।

4.8 बोध प्रश्न

- (i) आँकड़ों के विश्लेषण से क्या अभिप्राय है?
- (ii) आँकड़ों के विश्लेषण हेतु पूर्व दशाओं का उल्लेख करो?
- (iii) आँकड़ों के विश्लेषण के प्रमुख चरण क्या हैं?
- (iv) चर किसे कहते हैं, वे कितने प्रकार के होते हैं?
- (v) आँकड़ों के विश्लेषण की मापन तकनीकों का उल्लेख कीजिए। कौन सी विधि गणितीय गणनाओं को सम्पादित करने में सक्षम हैं?

- (i) Method in social Research - Goode & Hatt.
- (ii) सामाजिक सर्वेक्षण व सामाजिक शोध, रवीन्द्र नाथ मुकर्जी
- (iii) Fundamentals of Statistics - S.P, Singh
- (iv) Social Research - Lung berg, G.A.,
- (v) Principals of Statistics - Ramendu Roy.





उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

M.Com-04 (N)
संचार कौशल एवं
शोध विधि

खण्ड

5

सांख्यिकीय पैकेज एवं रिपोर्ट लेखन

इकाई - 1	5
प्रबंध शोधकर्ता के लिए प्रासंगिक साफ्टवेयर सकुल के लिए जागरूकता	
इकाई - 2	13
विश्लेषण तथा निष्कर्ष ग्रहण (Analysis and Drawing Inferences)	
इकाई - 3	19
अनुसंधान प्रतिवेदन का लेखन (Research Report Writing)	
इकाई - 4	24
डाटा भण्डारण और खनन (Data ware housing and Mining)	

परामर्श-समिति

प्रो० नागेश्वर राव	कुलपति - अध्यक्ष
डॉ० हरीशचन्द्र जायसवाल	वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक
श्री एम० एल० कनौजिया	कुलसचिव - सचिव

संरचनात्मक सम्पादन

डॉ० मंजूलिका श्रीवास्तव	निदेशक, दूरस्थ शिक्षा परिषद, नई दिल्ली
-------------------------	--

विषयगत सम्पादन

प्रो० एस० ए० अंसारी	निदेशक, मोनिरबा, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
---------------------	--

लेखक

डॉ० सुबोजित बनर्जी	असिस्टेन्ट प्रोफेसर, डिपार्टमेन्ट आफ बिजिनेस एडमिनिस्ट्रेशन, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर
--------------------	--

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के स्वयं के हैं।

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिथियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

खण्ड-5 परिचय

इस खण्ड में विशेषरूप से संप्रेषण (Communication) में सांख्यिकीय पैकेज एवं रिपोर्ट लेखन की कुशलताओं (Skills) की चर्चा की गई है। प्रथम इकाई शोधकर्ताओं के लिए कम्प्यूटर के महत्व, डाटा में एक्सेल का प्रयोग एवं विश्लेषण, एक्सेल में डेटा प्रविष्टि, तथा चार्ट बनाना उन्हें सूत्र में दर्ज करके परिकलन आदि की व्याख्या की गई है। द्वितीय इकाई में आंकड़ों के संकलन, सांकेतिकरण, संवर्गीकरण, सारणीयन की रचना अनुसंधान से प्राप्त आंकड़ों का सांख्यिकीय प्रस्तुतीकरण तथा विश्लेषण आदि की व्याख्या की गयी है। तृतीय इकाई में अनुसंधान प्रतिवेदन लेखन के महत्व, अनुसंधान प्रतिवेदन के मुख्य संघटक तथा अनुसंधान प्रतिवेदन के लेखन में क्या सावधानियाँ रखनी चाहिये आदि बातों की चर्चा की गई है। चतुर्थ इकाई में डाटा भण्डार गृह की मूल अवधारणा एवं विशिष्टता डाटा भण्डार गृह के विकास, डाटा भण्डार गृह की व्यवस्था एवं डाटा खनन (Data Mining) एवं खनन प्रणाली आदि को विस्तारपूर्वक बताया गया है।

इकाई - 1 : प्रबंध शोधकर्ता के लिए प्रासंगिक साफ्टवेयर संकुल के लिये जागरूकता

(Awareness of Software Packages Relevant to Management Researcher)

इकाई की रूपरेखा-

- 1.0 उद्देश्य
- 1.1 प्रस्तावना
- 1.2 एम एस-एक्सेल
 - 1.2.1 एम.एस. एक्सेल में डाटा दर्ज करना
 - 1.2.2 पाठ तथा संख्यात्मक डेटा स्वरूप
 - 1.2.3 परिणाम की गणना के लिए कार्यपत्रक में कोई सूत्र दर्ज करना
- 1.3 एम एस एक्सेल में चार्ट बनाना
 - 1.3.1 चार्ट विजाई
- 1.4 सारांश
- 1.5 अभ्यास - प्रश्न
- 1.6 संदर्भ-पुस्तकें

1.0 : उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद पाठक जान सकेंगे :

- प्रबंध शोधकर्ताओं के लिए कम्प्यूटर का महत्व;
- डाटा में एक्सेल का प्रयोग विश्लेषण और व्याख्या;
- एक्सेल में डेटा प्रविष्टि; तथा
- चार्ट बनाना और सूत्र दर्ज करके परिकलन करना।

1.1 प्रस्तावना

तीव्र गति से गणना एवं प्रदर्शन करने की क्षमता के साथ-साथ कम्प्यूटर, अनुसंधान के लिए सबसे पसंदीदा उपकरण बन गया है, आधुनिक अनुसंधान के क्षेत्र में अनुसंधान प्रणाली पर कोई भी पाठ कम्प्यूटर के उल्लेख के बिना अधूरा है। कम्प्यूटर आसानी से और जल्दी से परिकलन कर सकते

हैं और जो काम पहले कई दिनों या महीने में होते थे अब कम समय में आसानी से हो सकते हैं। हेर फेर इसके अलावा है। यह जोड़तोड़ तथा गणना डेटा के आधार पर किया जा सकता है। इसके साथ कम्प्यूटर एडेड विश्लेषण आयामों से अनुसंधान समस्या का विश्लेषण शोधकर्ता कर सकते हैं। विश्लेषण के अलावा कम्प्यूटर साफ्टवेयर अत्यन्त परिष्कृत संपादन और डेटा में उपयोगी होते हैं। सांख्यिकीय साफ्टवेयर भी विसंगतियों को दूर करने और मूल्यों के लापता मान ज्ञात करने का काम कर रहे हैं।

कम्प्यूटर का अनुप्रयोग केवल अनुभवजन्य अध्ययन करने के लिए सीमित नहीं है। इसका समान लाभ के साथ, खोजपूर्ण अध्ययन के लिए भी इस्तेमाल किया जा सकता है। उभरती तकनीक डाटा खनन का प्रयोग डेटा के एक सेट के भीतर अन्वेषण गतिविधियों का समर्थन करने के उद्देश्य से कर रहे हैं। उन्नत डेटा भण्डारण और पुनर्प्राप्ति की क्षमता का प्रयोग डेटा के भण्डारगृहों से डेटा खनन के साथ सफलतापूर्वक शोधकर्ताओं द्वारा किया जाता है। व्यापार के लिए जटिल मुद्दों और उनके समाधान हेतु विशेष साफ्टवेयर अनुसंधान की प्रक्रिया के हर चरण के लिए उपलब्ध हैं। अनुकार संकुल व्यापक रूप से आटोमोबाइल जैसे तकनीकी केन्द्रित उद्योगों में अनुसंधान के लिए उपयोग किया जाता है। उद्घुयन और जैव प्राद्योगिकी इंटरनेट क्रान्ति के आने के साथ, शोधकर्ताओं ने यह सर्वेक्षण प्रशासन और डाटा एकत्र करने के लिए एक सुविधाजनक माध्यम मिल गया है www.opinion.com और www.surveymonkey.com जैसे वेबसाइट उपकरण हैं जिनके माध्यम से शोधकर्ता अपनी प्रश्नावली डिजाइन कर सकते हैं और नेट पर होस्ट कर सकते हैं; उत्तरदाताओं का उपयोग और रजिस्टर कर सकते हैं एक बटन के एक क्लिक के साथ अपने जवाब एकत्र कर सकते हैं। स्वचालित रूप से एक डेटाबेस है जिसका उपयोग सांख्यिकीय विश्लेषण के लिये किया जा सकता है।

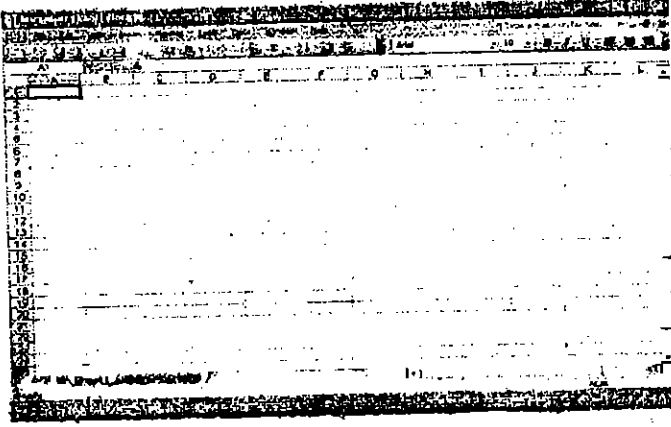
इस पाठ में, एक सामान्य रूप से उपयोग और बुनियादी कम्प्यूटर पैकेज MS-Excel की चर्चा की गई है जिसका विश्लेषण के लिए उपयोग किया जाता है। कार्यपत्रकों (Worksheets) और इस साफ्टवेयर से संबंधित कोशिकाओं (Cells) के रूप में कुछ बुनियादी अवधारणाओं पर भी चर्चा की गई है।

1.2. एम.एस. एक्सेल MS-Excel

Microsoft Excel सबसे आम डेटा प्रबंधन अनुप्रयोग है। जैसा कि नाम का सुझाव है, यह Microsoft Office पैकेज है जो माइक्रोसाफ्ट विंडोज आपरेटिंग सिस्टम पर चलता है। यह 1991 के बाद से बाजार में लाया गया है। नए संस्करण कई अतिरिक्त सुविधाओं के साथ आए हैं लेकिन पैकेज के बुनियादी कामकाज नहीं हैं।

Microsoft Excel तालिका स्वरूप में डेटा एकत्र करने के लिए उपयोगी है। सांख्यिकीय मान की गणना, कार्यों का मूल्यांकन, और कार्यों का रेखांकन Excel अनुमति देता है। एक सारणी

के रूप में गणना हम बाहर ही गणना करना अगर हम उन्हें कागज और पेंसिल के साथ कर रहे थे के रूप में ज्यादा “ “ पेपर Excel में किसी कार्यपत्रक (Worksheet) कहा जाता है और यह लेबल पंक्तियों और स्तंभों के द्वारा एक आयकताकार ग्रिड में विभाजित है एक पंक्ति (Rows) और स्तंभ (Columns) के प्रतिच्छेदन किसी कार्यपत्रक कक्ष के रूप में भेजा है और इन कोशिकाओं में डेटा, पाठ, और सूत्र जो एक गणना और उसके संबंधित दस्तावेज शामिल होते हैं। कार्यपत्रक किसी भी कम्प्यूटर के लिए प्रारम्भ विन्दु डेटा विश्लेषण सहायता प्राप्त है जब छोटा नीचे एक जैसे एक्सेल, एक स्प्रेडशीट खिड़की, खोलने, पर प्रकट होगा।



छवि 1: EXCEL स्प्रेडशीट खिड़की

स्प्रेडशीट पंक्तियों के होते हैं (1, 2, 3.....) और स्तंभों (ए, बी, सी वर्तमान के रूप में नाम बॉक्स में प्रदर्शित होने के रूप में अच्छी तरह से बाक्सिंग दिखने सेल के साथ) ऊपर चित्र A1 में मौजूदा सेल के रूप में प्रकट होता है आकृति में भी सूचना कार्यपत्रक के शीर्ष पर उपकरण पट्टियाँ, एक कोशिका (चयनित है इस पर प्रकाश डाला कर्सर क्लिक करके), केवल एक ही कक्ष किसी भी समय में चयनित किया जा सकता है और इस कक्ष को सक्रिय कक्ष के रूप में भेजा है इन में से कई शब्द प्रोसेसर में जो परिचित हैं और वे बहुत ही इसी तरह के भीतर स्प्रेडशीट कार्यों की सेवा, किसी पाठ (हमारे गणना दस्तावेजीकरण करने के लिए प्रयोग किया जाता है)। एक स्प्रेडशीट में दर्ज तरीके के एक नम्बर अपने फॉन्ट शैली, फॉन्ट आकार बदलने सहित में प्रारूपित किया जा सकता है यह बोल्ड, इटैलिक और इतना पर कर रही है। संख्यात्मक डेटा के रूप में भी उपकरण (\$,% आदि)। तीसरे उपकरण पट्टी के दाईं ओर से एकत्र किया जा सकता है तरीकों की एक किस्म में स्वरूपित किया जा सकता है।

प्रश्नावली - 1

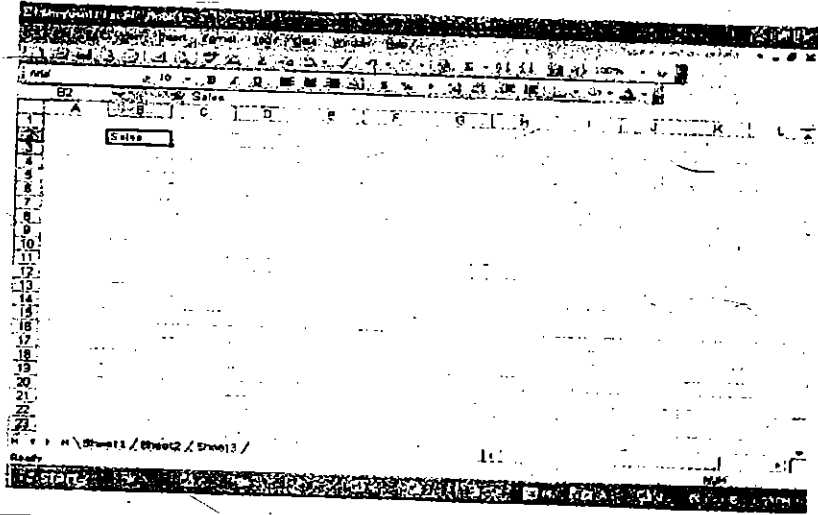
आधुनिक दिन अनुसंधानकर्ता कम्प्यूटर के लिए एक अमोघ संसाधन है कम्प्यूटर के चरित्रिक गुणों के संदर्भ में व्याख्या कीजिए।

प्रश्नावली 2

स्प्रेडशीट्स क्या हैं? क्यों उन्हें कम्प्यूटर के लिए निर्माण बलॉक के रूप में माना जाता है।

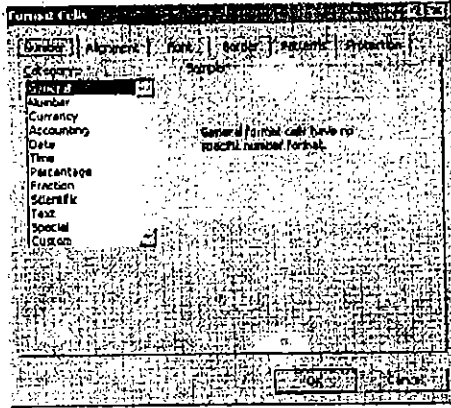
1.2.1 एम.एस. एक्सेल में डाटा दर्ज करना

याद है कि किसी कार्यपत्रक कक्ष इस पर क्लिक करके सक्रिय कक्ष बनाया गया है। एक बार जब यह किया जाता है तो सेल डेटा स्वीकार करने को तैयार हो जाता है (नीचे आकृति) हमने सक्रिय कक्ष के रूप में कक्ष B2 चयन किया है और फिर शब्द में टाइप किया, "बिक्री में"। जैसा कि हम देख सकते हैं शब्द ही सेल में दोनों और सूत्र पट्टी में दिखाई देता है अगर हम (संपादित करें या मिटा दें और बदलें) इस शब्द के बाद हम सेल पर बस क्लिक करें, तो सूत्र पट्टी जहाँ यह मानक पाठ संपादन 1-बीम सूचक बन जाता है, करने के लिए कर्सर को स्थानांतरित करना चाहते हैं संपादन सूत्र पट्टी में जगह लेता है और जब हम क्लिक करें चेक सूत्र पट्टी के छोड़ दिया है (यह एक बार हम क्लिक करें प्रदर्शित करने के लिए संपादन मोड में सूत्र पट्टी सक्रिय हो जायेगा) या कुंजी दर्ज करें प्रेस बाक्स कक्ष में परिलक्षित।



1.2.2 पाठ तथा संख्यात्मक डेटा स्वरूपण

एक्सेल कक्षों में पाठ और डेटा स्वरूपण के लिए कई क्षमताओं को प्रदान करता है। इन पाठ स्वरूपों हमें एक स्प्रेडशीट है कि लगभग एक यह है कि आकर्षक और प्रेरक है अपठनीय है बदलने के लिए अनुमति देते हैं हम स्वरूप मेनू के माध्यम से प्रारूप सकते हैं। यदि कोशिकाओं (कक्षाओं) को हम प्रारूप देने के लिए चाहते हैं तो स्वरूप का चयन करें और कक्ष पर क्लिक करें। हाइलाइट एक संवाद बाक्स को पॉप कि प्रारूप हमें (के लिए उपलब्ध फॉन्ट, आकार, सरेखण, सीमाओं आदि के विकल्प प्रदर्शित) होगा। बनाओ, परिवर्तन और ठीक में से वांछित क्लिक करें अगर हम एक ही बार में प्रारूप करने के लिए संपूर्ण पंक्तियों या स्तंभों को चाहते हैं तो संख्या का चयन करें या पत्रक के किनारे पर पत्र के लिए कक्षों की मार्कर है की पूरी श्रृंखला को उजागर स्वरूप मेनू पर जाएँ और पंक्तियाँ या स्तंभ का चयन करें। गुण संपादित करने के लिए हम चाहेंगे का चयन करें। एक संवाद बाक्स प्रकट होगा जो हमें हमारे परिवर्तनों को बनाने के लिए अनुमति देता है।



Excel स्वरूपण मेनू

1.2.3 परिणाम की गणना के लिए कार्यपत्रक में कोई सूत्र दर्ज करना

सेल में किसी प्रकार के सूत्र को सूत्र कक्ष में प्रवेश शुरू करने के लिए क्लिक करें निम्नलिखित प्रेस दर्ज करें:-

*गुणन के लिए, + जोड़ के लिए / भाग के लिए, तथा - घटाव के लिए

सूत्रों से युक्त संख्या एक संख्या है कि जिसका फलन कभी नहीं बदलेगा। उदाहरण के लिए अगर हम = 68* सूत्र लिखने के परिणाम 48 का फलन किया जाएगा, तो इसका फलन सदैव यही रहेगा।

हालाँकि, एक कक्ष संदर्भ जिसमें सूत्र उस कक्ष में डेटा के मूल्य पर आधारित परिणाम पैदा करता है, उदाहरण के लिए अगर हम = C3 सूत्र -डी लिखते हैं तो यह उस कक्ष में डेटा पर आधारित एक परिणाम का उत्पादन होगा,

यदि किसी सूत्र का एक हिस्सा कोष्ठक में है वह हिस्सा हमेशा सूत्र के आराम से पहले गणना की जाएगी, फार्मूला = (बी 2 सी 2* उदाहरण के लिए) - कोशिकाओं B2 और C2 के गुणा उत्पाद से A3 कक्ष A3 में डेटा घटाना होगा।

Year	Sales (in rupees Lakhs)
2000	115
2001	205
2002	435
2003	677
2004	895
2005	1075
2006	1275
2007	1500

Year	Sales (in rupees Lakhs)
2000	115
2001	205
2002	435
2003	677
2004	895
2005	1075
2006	1275
2007	1500

उपरोक्त आंकड़ों को जोड़ने के लिए एक उदाहरण है। विभिन्न वर्षों में एक ही उत्पाद की बिक्री एक ही करने के दो तरीके हो सकते हैं। पहली विधि के द्वारा अलग से राशि की कोशिकाओं को दूसरी विधि में डेटा को एक क्रमबद्ध एक सारणी में व्यवस्थित कर के जोड़ने के लिए दिखाया जा सकता है।

1.3 : एम-एस एक्सेल में चार्ट बनाना

चार्ट्स का प्रयोग कर के आप अपने वर्कशीट में प्रविष्ट आँकड़ों को अनेक आकर्षक प्रकार के ग्राफ के रूप में दर्शा सकते हैं। आप तो जानते ही हैं कि ग्राफ के रूप में प्रदर्शित आँकड़े अधिक प्रभावशाली होते हैं और आप भी अवश्य ही अपने आँकड़ों को आकर्षक ग्राफ के रूप में दिखाना चाहेंगे। यहाँ में चार्ट्स का प्रयोग करके कुछ सामान्य ग्राफ बनाने की विधियों के विषय में चर्चा की जायेगी।

1.3.1 चार्ट विजार्ड

चार्ट्स का प्रयोग करके आकर्षक ग्राफस बनाने का सबसे सरल तरीका है चार्ट विजार्ड। चार्ट विजार्ड आपको एक डायलॉग बाक्स में एक के बाद एक यह बताते जाता है कि आगे अब आपको क्या करना है।

जिन आँकड़ों को ग्राफ के रूप में प्रदर्शित करना है उन्हें शीर्षक सहित हाईलाइट करें।

	A	B	LFkku
	कक्षा में		
	स्थान		
1			
2	अभिलाष	1	
3	सुनील	2	
4	मोहन	3	
5	अशोक	4	
6	मनजु	5	
7			

शीर्षक सहित हाईलाइट डाटा

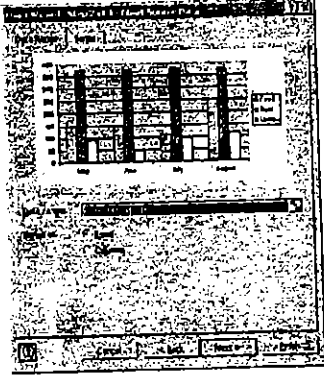
टूलबार में चार्ट विजार्ड बटन को क्लिक करें जिससे चार्ट विजार्ड डायलॉग बाक्स (Chart Wizard dialog box) खुल जायेगा। चार्ट टाइप (Chart type) - डायलाग बाक्स में दर्शाये गये विभिन्न चार्ट टाइप (Chart type) तथा आवश्यकता हो तो चार्ट सबटाइप (Chart subtype) का चयन करें। और आगे (Next) को क्लिक कर दें। चार्ट विजार्ड अब हमें चार कदम की एक शृंखला के माध्यम से ले जाएगा।



चार्ट में चरण 1

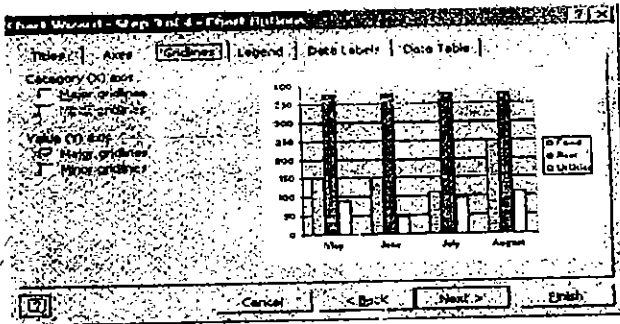
चार्ट विजार्ड हमें इन चार चरणों के माध्यम से वापस जाने के विकल्प देता है। यदि हम कोई पिछला चरण संपादित करना चाहते हैं तो वापस बटन प्रेस करेंगे, नोट : एकाधिक टैब संवाद बाक्स के शीर्ष पर स्थित कुछ चरणों में अतिरिक्त विकल्प संकेत मिलता है।

प्रबंध शोधकर्ता के लिए
प्रासंगिक साफ्टवेयर
संकुल के लिए
जागरूकता



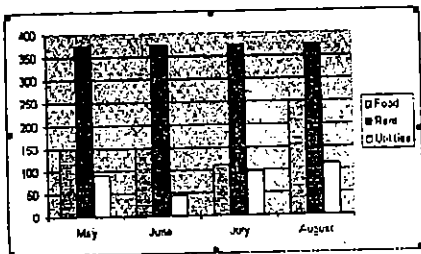
चार्ट में चरण 2

चार्ट विजार्ड अब हमें पूछने के लिए हमारे स्रोत डेटा को सत्यापित करेगा। यदि डेटा श्रेणी बाक्स में निहित डेटा सही है तो अगला क्लिक करें। अगर यह गलत है संक्षिप्त संवाद डेटा श्रेणी बाक्स के अंत में स्थित बटन पर क्लिक करें इस चार्ट विजार्ड संवाद बाक्स ताकि छिपा है कि हम अपने डेटा श्रेणी कर सकते हैं। जब हम संवाद संक्षिप्त करें बटन पर क्लिक करें सही डेटा श्रृंखला का चयन किया है फिर से वापस करने के लिए चार्ट विजार्ड बाक्स लाने के लिए अगला पर क्लिक करें।



चार्ट में चरण 3

अगला संवाद बाक्स हमारे चार्ट विकल्प बदलने के लिए अनुमति देता है। हम प्रत्येक अक्ष शीर्षक सेट के द्वारा अपनी कथा के स्थान को समायोजित कर सकते हैं। ग्रिडलाइने दिखाने या छुपाने के लिए। जब हम अगले पर इन विकल्पों को क्लिक करें समायोजित किया है फिर, टैब्स ध्यान दें।



चार्ट में चरण 4

चार्ट विजार्ड के अंतिम कदम हमें पूछता है कि हम एक नए या मौजूदा पत्रक में चार्ट पत्रक पर जगह की तरह होगा, उचित बटन पर क्लिक करें और समास अंकन द्वारा हमारे चयन करें, यदि हम अपने चार्ट, चार्ट कि हम संपादित करना चाहते हैं। कि हिस्से पर क्लिक करने के लिए समायोजन करने के लिए चाहेंगे, यह एक संवाद बाक्स कि हमें चार्ट कि हम चुना है कि हिस्से में परिवर्तन करने के लिए अनुमति देता है लाएगा।

प्रश्नावली 3

3. एम एस एक्सेल के संबंध में संक्षिप्त में समझाओ :

- (i) पाठ स्वरूपण
- (ii) एम एस एक्सेल में डेटा में प्रवेश करना
- (iii) फार्मूला प्रवेश करना
- (iv) चार्ट विजार्ड

1.4 : सारांश

तीव्र गति से गणना प्रदर्शन करने की क्षमता के साथ कम्प्यूटर अनुसंधान के लिए सबसे पसंदीदा उपकरण बन गया है कम्प्यूटर आसानी से और जल्दी परिकलन कर सकते हैं। कम्प्यूटर का प्रयोग केवल अनुभवजन्य अध्ययन करने के लिए सीमित नहीं है। इसका समान लाभ के साथ खोजपूर्ण अध्ययन के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। उभरती तकनीकों डाटा खनन जैसे डेटा के एक सेट के भीतर अन्वेषण गतिविधियों का समर्थन करने के उद्देश्य से कर रहे हैं। Microsoft Excel स्प्रेडशीट प्रोग्राम है जो एक करने के लिए पंक्तियाँ या एक स्प्रेडशीट के स्तंभों में संख्यात्मक मानों या डेटा दर्ज करने की अनुमति देता है, और गणना, रेखांकन के रूप में ऐसी बातों के लिए इन संख्यात्मक प्रतिष्ठियों का उपयोग करना है, और सांख्यिकीय विश्लेषण।

इकाई 2 : विश्लेषण तथा निष्कर्ष ग्रहण (Analysis and Drawing Inferences)

इकाई रूपरेखा

- 2.0 उद्देश्य
- 2.1 प्रस्तावना
- 2.2 सांकेतिकरण
- 2.3 संवर्गीकरण
 - 2.3.1 संवर्गीकरण की रचना के सम्बन्ध में नियम
 - 2.3.2 संवर्गीकरण के तरीके
- 2.4 सारणीयन
- 2.5 प्राप्त आंकड़ों का सांख्यिकीय प्रस्तुतीकरण तथा विश्लेषण
- 2.6 आंकड़ों का निर्वचन
- 2.7 कार्य-कारण सम्बन्धों की विवेचना
- 2.8 सारांश
- 2.9 अभ्यास के लिए प्रश्न
- 2.10 संदर्भ ग्रन्थ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् पाठक जान सकेंगे :

1. आंकड़ों का संकलन, सांकेतिकरण, संवर्गीकरण, सारणीयन तथा विश्लेषण का अभिप्राय;
2. संवर्गीकरण की रचना के सम्बन्ध में नियम तथा सर्वांगीण विश्लेषण में इनका महत्व;
3. अनुसंधान से प्राप्त आंकड़ों का सांख्यिकीय प्रस्तुतीकरण तथा विश्लेषण, तथा
4. कार्य-कारण (Causal) सम्बन्धों की विवेचना।

2.1 प्रस्तावना

एक शोधकर्ता द्वारा सम्पन्न किए गये अनुसन्धान के प्रति वैज्ञानिक दो तथ्यों के प्रति अपनी विवेचना अभिव्यक्त करते हैं :

1. आंकड़े
2. आंकड़ों का विवेचन

आंकड़ों का सम्बन्ध यहाँ उनके संकलन, सांकेतिकरण, संवर्गीकरण, सारणीयन तथा विश्लेषण से है। एक अनुसंधान-समस्या के संदर्भ में जहाँ तक संगत तथा सम्बन्धित आंकड़ों के

संकलन का सम्बन्ध है, इस विषय पर इस तथ्य को अधिकांशतः बल दिया जाता है कि वैज्ञानिक अध्ययनों में जिन प्रयोज्यों के माध्यम से आवश्यक सूचना का संकलन सम्पन्न किया जाता है, उनका चयन तथा संभव यादृच्छिकृत प्रक्रिया पर आधारित रहना चाहिए क्योंकि यादृच्छिकरण द्वारा चयन की गयी इकाइयाँ ही अपने सम्बन्धित समष्टि की प्रतिनिधि होती हैं और यहां पर भी स्पष्ट है कि विश्वसनीय तथा वैद्य आंकड़ों के संकलन के लिए अध्ययन से सम्बन्धित इकाइयाँ अपने समष्टि की पूर्णरूपेण प्रतिनिधि होना चाहिए।

अध्ययन से सम्बन्धित सामग्री का स्वरूप कभी-कभी मात्रात्मक न होकर गुणात्मक रहता है। ऐसी स्थिति में उसके संकेतीकरण की आवश्यकता होती है।

2.2 संकेतीकरण (Coding)

संकेतीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक अनुसंधान के अन्तर्गत प्राप्त गुणात्मक सामग्री को ऐसा वस्तुपरक रूप प्रदान किया जाता है कि जिससे उसको संख्यात्मक तथा मात्रात्मक रूप में परिवर्तित किया जा सके व उसे सारणी बद्ध किया जा सके और जिससे उसके विश्लेषण व निर्वचन में विशिष्ट सुविधा हो सके। सांकेतीकरण से एक ऐसे पद का बोध होता है जो कि प्रश्नों के प्रतिउत्तरों तथा सूचनादाता द्वारा प्राप्त सूचना को विशिष्ट संबर्गों में इस उद्देश्य से प्रस्तुत करता है ताकि उनका विश्लेषण प्रस्तुत किया जा सके।

इस प्रकार की स्थितियाँ प्रायः असंरचित साक्षात्कारों, टी.ए.टी. (Thematic Appreciation Test) व अन्य लिखित स्रोतों से प्राप्त सामग्रियों के अध्ययन में विशेषतः देखने में आती है। संकेतन के पश्चात् संकेतीकृत सामग्री के संवर्गीकरण की आवश्यकता पड़ती है, जिससे प्राप्त सामग्री को सुविधापूर्वक सारणीबद्ध किया जा सके।

2.3 संवर्गीकरण (Categorization)

संवर्गीकरण ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा संकेतीकृत सामग्री को दो या दो से अधिक वर्गों में इस उद्देश्य से प्रस्तुत किया जाता है, ताकि आगे चल कर उनको सारणीबद्ध किया जा सके तथा उनके विश्लेषण तथा निर्वचन में उपयुक्त वस्तुपरक तथा सांख्यिकीय विधियों को अनुप्रयुक्त किया जा सके। अतः संकेतीकृत सामग्री के संवर्गीकरण का स्वरूप विभाजी तथा श्रेणी बद्ध भी रहता है। विभाजी संवर्गीकरण की स्थिति में एक विशेष गुण की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति को व्यक्त किया जा सकता है, जबकि श्रेणीबद्ध संवर्गीकरण के अन्तर्गत संबन्धित घटनाओं, विषयों तथा विशिष्ट गुणों को तीन, चार, या इससे भी अधिक क्रमबद्ध श्रेणियों में प्रस्तुत किया जा सकता है।

2.3.1 संवर्गीकरण की रचना के सम्बन्ध में नियम

1. संवर्गों की रचना अनुसन्धान समस्या के अनुकूल ही होनी चाहिए, इससे यह अभिप्राय है कि संवर्गों की रचना ऐसी होनी चाहिए जिससे अनुसन्धान में उठाये गये प्रश्नों के समुचित उत्तर प्राप्त हो सकें।
2. संवर्गों की रचना व्यापक (Exhaustive) तथा पूर्ण होनी चाहिए - इसका उद्देश्य यहाँ यह रहता है कि प्राप्त सम्पूर्ण सम्बन्धित सूचना यहाँ रचित संवर्गों के अन्तर्गत ही सम्मिलित

की जा सके। यहाँ ऐसा न हो की संवर्गों की रचना अपूर्ण रहने से कुछ आवश्यक तथा महत्वपूर्ण जानकारी छूट जाये।

3. संवर्गों की संरचना पारस्परिक रूप से अपवर्जी (Exclusive) होनी चाहिए। इसका उद्देश्य प्राप्त सांकेतिकरण सामग्री को विशिष्ट, निश्चित व कठोर वस्तुपरक रूप प्रदान करना होता है।
4. एस संवर्ग की रचना का आधार केवल एक ही सिद्धान्त रहना चाहिए। इसका उद्देश्य यहाँ एक संवर्ग को विश्लेषण की दृष्टि से केवल एक निश्चित इकाई ही मानना होता है।
5. प्रत्येक संवर्ग का सम्बन्ध केवल सम्बन्धित समष्टि (Related Universe or Aggregate) से ही होना चाहिए। यदि एक अध्ययन में एक विद्यार्थी की उपलब्धि का अध्ययन बुद्धि के स्तर के संदर्भ में किया गया है, तो उपलब्धि संवर्गीकरण केवल प्रत्याशित चर के रूप में ही किया जाना चाहिए।

इन नियमों के आधार पर प्राप्त संवर्गीकरण सामग्री को उपयुक्त व यथार्थ विश्लेषण तथा विवचन के दृष्टिकोण से सारणीबद्ध किये जाने की आवश्यकता पड़ती है।

2.3.2 संवर्गीकरण के तरीके

किसी वर्ग या समूह वर्गीकरण कई तरीकों से बनाया जा सकता है। आप अपनी पुस्तकों को विषयों- 'इतिहास', 'भूगोल', 'गणित', 'विज्ञान', आदि में वर्गीकृत करने के स्थान पर इन्हें वर्णमाला के क्रम में लेखकों के आधार पर वर्गीकृत कर सकते हैं। अथवा, आप इन्हें प्रकाशन-वर्ष के आधार पर भी वर्गीकृत कर सकते हैं। आप इन्हें किस प्रकार से वर्गीकृत करना चाहते हैं, यह आपकी आवश्यकता पर निर्भर करेगा। ठीक इसी प्रकार से, अपरिष्कृत आंकड़ों को भी विभिन्न तरीकों से वर्गीकृत किया जा सकता है जो आपके अध्ययन के उद्देश्य पर निर्भर करता है। उन्हें समय के अनुसार समूह-बद्ध किया जा सकता है। इस प्रकार के वर्गीकरण को **कालानुक्रमिक वर्गीकरण** कहते हैं। इस प्रकार के वर्गीकरण में, आंकड़ों को समय के संदर्भ-जैसे वर्ष, तिमाही, मासिक या साप्ताहिक आदि के रूप में, आरोही या अवरोही क्रम में वर्गीकृत किया जा सकता है। निम्नलिखित उदाहरण वर्षों के आधार पर भारत की जनसंख्या के वर्गीकरण को दिखाता है। चर 'जनसंख्या' एक **काल-श्रेणी** है, क्योंकि इसमें विभिन्न वर्षों के मानों (Value) की एक श्रेणी-चित्रित की गई है :

उदाहरण 1

भारत की जनसंख्या (करोड़ में)

वर्ष	जनसंख्या (करोड़ में)
1951	35.7
1961	43.8
1971	54.6
1981	68.4
1991	81.8
2001	102.7

स्थानिक वर्गीकरण के अंतर्गत आंकड़ों का वर्गीकरण भौगोलिक स्थितियों जैसे कि देश, राज्य, शहर, जिला, कस्बा आदि के संदर्भानुसार होता है।

2.4 सारणीयन (Tabulation)

सारणीयन, संवर्गीकृत सामग्री को क्रमबद्ध, स्पष्ट, संक्षिप्त व बोधगम्य रूप प्रदान करता है, ताकि उसके सांख्यिकीय विश्लेषण व विवचन में विशिष्ट सुविधा उपलब्ध हो सके। सारणीयन केवल विभिन्न प्रकार के प्रत्युत्तरों की संख्याओं के प्रकारों को उनके उपयुक्त संवर्गों में अभिलेख किये जाने को ही कहते हैं।

संवर्गीकृत सामग्री के सारणीयन के पश्चात् ही सांख्यिकीय विश्लेषण किया जाता है। इसके अन्तर्गत प्राप्त मूल्य आंकड़ों को प्रतिशतों, माध्यों, पारस्परिक सम्बन्धों तथा सूचकांकों में परिवर्तित करके प्रस्तुत किया जाता है, तथा उनमें अन्तर की सार्थकता कि जाँच के लिए उपयुक्त परीक्षणों को अनुप्रयुक्त किया जाता है। ताकि अध्ययन समस्याओं में उठाय गये प्रश्नों के समूचित उत्तर उपलब्ध हो सके। विश्लेषण के अन्तर्गत आंकड़ों को क्रमबद्ध रूप प्रदान किया जाता है तथा उनको संघटक भागों में इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है कि अनुसंधान प्रश्नों के उत्तर प्राप्त किये जा सकें।

सम्बन्धित आंकड़ों के विश्लेषण से अनुसंधान में उठाये गये प्रश्नों के उत्तर स्वतः ही प्राप्त नहीं हो जाते। बल्कि अनुसंधान प्रक्रम के अन्तर्गत शोधकर्ता विचारपूर्वक ऐसे विश्लेषण प्रतिमान (Analysis Paradigms) की रचना प्रस्तुत करता है, ताकि उनके आधार पर उपयुक्त विवेचन साध्य हो सके। इसके पहले यहाँ आंकड़ों के प्रस्तुतीकरण व विश्लेषण का संक्षिप्त विवरण भी आवश्यक जान पड़ता है।

2.5 प्राप्त आंकड़ों का सांख्यिकीय प्रस्तुतीकरण तथा विश्लेषण (Statistical Presentation and Analysis of Data Obtained)

अनुसंधान प्रक्रिया के अन्तर्गत प्राप्त मूल आंकड़ों (Raw Scores) तथा संकेतीकृत (Coded) व संवर्गीकृत (Categorized) सामग्री को व्यवस्थित तथा संक्षिप्त रूप प्रदान करने के लिए उन्हें सर्वप्रथम आवृत्ति वितरण (Frequency Distribution) में प्रस्तुत करना होता है। इससे उनके माध्य ज्ञात करने में भी अत्यधिक सुविधा उपलब्ध होती है। यहाँ माध्यों के विभिन्न रूप मध्यमान मध्यांक व बहुलक होते हैं। प्राप्त माध्यों के आधार पर ही संबंधित चरों के तुलनात्मक अध्ययन की सुविधा प्राप्त होती है और इससे आगे चलकर विभिन्न समूहों में विचलनशीलता (Variability) के मापन में भी सहायता मिलती है। विचलनशीलता के मुख्य माप प्रसार, चतुर्थांश (QD) विचलन, मध्यमांक विचलन (MD) तथा मानक विचलन (SD) होते हैं। मध्यमांक विचलन तथा मानक विचलन के आधार पर आगे चलकर दो समूहों के मध्यमानों में अन्तर कि सार्थकता की जाँच संपन्न की जा सकती है। तीन या तीन से अधिक ऐसे समूहों के मध्यमानों के अन्तरों की जाँच प्रसरण के विश्लेषण (ANOVA) के द्वारा की जाती है।

प्राप्त आंकड़ों के अन्तरों की सार्थकता की जाँच के अतिरिक्त उनमें पारस्परिक सम्बन्धों को भी जानने का प्रयास किया जाता है। इससे उनमें सह-संबंध गुणांक की गणना की जाती है तथा ऐसे व्यापक आंकड़ों में सह-सम्बन्ध जानने के लिए कभी-कभी प्रकीर्ण-आरेख (Scatter Diagram)

का भी प्रयोग किया जाता है।

आकड़ों को सरलतापूर्वक बोधगम्य बनाने के लिए प्रायः उनको आलेखीय निरूपण के माध्यम से भी प्रस्तुत किया जा सकता है। इसके लिए उनको प्रोफाइल तथा सूचकांकों के माध्यम से प्रस्तुत करना तुलना व विवेचन के दृष्टिकोण से बहुत सुविधाजनक रहता है।

सूचनांकों (Indices) का वैज्ञानिक विश्लेषण में अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान है। वास्तव में एक सूचनांक (Index) एक ऐसा अंक होता है जो कि दो या दो से अधिक अंकों को संयुक्त रूप से व्यक्त करता है।

उदाहरणार्थ, बुद्धि-लब्धि (IQ) यहाँ एक सूचनांक है। ऐसे ही प्रतिशत का मान, अनुपात तथा समानुपात भी सूचकांक हैं। इन के द्वारा आवश्यक सूचना संकेत रूप में ही स्पष्ट हो जाती है। अतः मूल आंकड़ों की तुलना अनुसंधानों में सूचकांकों का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। इसी कारण शोधकर्ता द्वारा अपने अनुसंधान में इनका उपयोग नितान्त आवश्यक रहता है।

आंकड़ों के ऐसे प्रस्तुतीकरण व विश्लेषण के पश्चात् उनके निर्वचन की आवश्यक पड़ती है विवेचन अनुसंधान प्रक्रम का एक अभिन्न तथा महत्वपूर्ण अंग होता है।

2.6 आंकड़ों का निर्वचन (Data Interpretation)

अनुसंधान से संबंधित आँकड़ों के विश्लेषण के साथ निर्वचन की भी प्रक्रिया आरम्भ हो जाती है। निर्वचन के अन्तर्गत विश्लेषण के परिणामों को लिया जाता है। इसके द्वारा अनुसन्धान के अन्तर्गत प्राप्त सम्बन्धों के तर्क-संगत आधार पर अनुमान लगाये जाते हैं, और अध्ययन से सम्बन्धित सम्बन्धों के प्रति निष्कर्ष ज्ञात किये जाते हैं।

शोधकर्ता अपने अनुसंधानों के परिणामों के परिप्रेक्ष्य में ही निर्वचन के द्वारा अनुसंधान से सम्बन्धित समस्याओं के उत्तर प्राप्त करता है। यदि प्राप्त निर्वचनों से अनुसंधान में रचित परिकल्पना की पुष्टि होती है, तब इससे सिद्धान्त-रचना की ओर संकेत आपेक्षित रहता है, और यदि प्राप्त निर्वचनों के आधार पर परिकल्पना अस्वीकृत होती है, तब इससे शोधकर्ता को उसके अस्वीकृत होने के सम्भावित कारणों की यहाँ खोज करनी पड़ती है। यहाँ नकारात्मक परिणामों के कारण सम्भवतः अशुद्ध परिकल्पना, अनुपयुक्त विधितन्त्र (Inappropriate Methodology) दोषपूर्ण संयंत्र (Defective Design) व त्रुटीपूर्ण मापन (Measurement) हो सकते हैं। उदाहरणार्थ कभी-कभी शोधकर्ता के अनुसन्धान का स्वरूप एक्स पोस्ट फेक्टो रहता है परन्तु यह यहाँ अपने आँकड़ों को ऐसा मानने लगता है, जैसा कि उसने उन्हें प्रायोगिक विधि द्वारा संकलित किया हो।

वास्तव में निर्वचन (Interpretation) की पर्याप्तता (Adequacy) के लिए यह आवश्यक है कि अनुसन्धान अभिकल्प, विधितन्त्र, परीमापन, व विश्लेषण के अन्य चरण भी पर्याप्त स्तर तक उपयुक्त रहें। यहाँ निर्वचन की भाषा का स्वरूप भी सदैव प्रतिबन्धात्मक रहता है। इसमें अधिकांशतः इस प्रकार के कथन रहते हैं, यदि है.... तब है। इस सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण तथ्य यहाँ यह भी है कि विज्ञान में कुछ भी अन्तिम रूप से प्रमाणित व सिद्ध नहीं माना जाता। इसके लिए निष्कर्ष को वस्तुतः विश्वास के स्तर पर व्यक्त करना ही कठोर वैज्ञानिक आधार पर अधिक उपयुक्त व उत्तम रहता है।

2.7 कार्य कारण (Causal) सम्बन्धों की विवेचना

विवेचना करते समय शोधकर्ता को सम्बन्धित चरों के कारणता (Causality) के सम्बन्धों को स्थापित करने में और भी अधिक सतर्क व सावधान रहना पड़ता है। साधारणतः दो चरों में सह-सम्बन्ध गुणांक को अत्यधिक मात्रा के आधार पर शोधकर्ता उनके कारणता के सम्बन्धों को स्वतः ही सिद्ध मान लेता है, परन्तु ऐसा निष्कर्ष यहाँ त्रुटिपूर्ण ही रहता है। सह-सम्बन्ध गुणांक के आधार पर, वास्तव में, दो चरों में केवल साहचर्यार्थक (Associative) सम्बन्धों का ही पता लगता है, कारणता का नहीं। अतः अपने विवेचन में शोधकर्ता को इस महत्वपूर्ण तथ्य के प्रति अति सचेत रहना अनिवार्यतः अपेक्षित रहता है।

2.8 सारांश

एक शोधकर्ता द्वारा सम्पन्न किए गये अनुसंधान के प्रति वैज्ञानिक दो तथ्यों के प्रति विवेचना अभिव्यक्त करते हैं।

(1) आंकड़े

(2) आंकड़ों का विवेचन

संकेतीकरण एस ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक अनुसंधान के अन्तर्गत प्राप्त गुणात्मक सामग्री को ऐसा वस्तुपरक रूप प्रदान किया जाता है कि जिससे उसको संख्यात्मक तथा मात्रात्मक रूप से परिवर्तित किया जा सके व उसे सारणी बद्ध किया जा सके और जिससे उसके विश्लेषण व निर्वचन में विशिष्ट सुविधा हो सके। संवर्गीकरण ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा संकेतीकृत सामग्री को दो या दो से अधिक वर्गों में इस उद्देश्य से प्रस्तुत किया जाता है, ताकि आगे चलकर उनको सारणीबद्ध किया जा सके तथा उनके विश्लेषण तथा निर्वचन में उपयुक्त वस्तुपरक तथा सांख्यिकीय विधियों को अनुप्रयुक्त किया जा सके। सारणीयन संवर्गीकृत सामग्री को क्रमबद्ध, स्पष्ट, संक्षिप्त व बोधगम्य रूप प्रदान करता है, ताकि उसके सांख्यिकीय विश्लेषण व निर्वचन में विशिष्ट सुविधा उपलब्ध हो सके, सारणीयन केवल विभिन्न प्रकार के प्रत्युत्तरों की संख्याओं के प्रकारों को उनके उपयुक्त संवर्गों में अभिलेख किये जाने को ही कहते हैं।

आंकड़ों को सरलतापूर्वक बोधगम्य बनाने के लिए प्रायः उनको आरेखीय निरूपण के माध्यम से भी प्रस्तुत किया जा सकता है। शोधकर्ता अपने अनुसंधानों के परिणामों के परिप्रेक्ष्य में ही निर्वचन के द्वारा अनुसंधान से सम्बन्धित समस्याओं के उत्तर प्राप्त करता है। निर्वचन करते समय शोधकर्ता को संबन्धित चरों के कारणता (Causality) के सम्बन्धों को स्थापित करने में और भी अधिक सतर्क व सावधान रहना पड़ता है।

2.9 अभ्यास के लिये प्रश्न

1. Explain and illustrate the analysis of data and the techniques of drawing inferences from them.

आंकड़ों के विश्लेषण तथा उनसे निष्कर्ष-ग्रहण करने के तरीकों की व्याख्या कीजिए तथा दृष्टान्त दीजिए।

इकाई 3 : अनुसंधान प्रतिवेदन लेखन (Research Report Writing)

इकाई रूपरेखा

- 3.0 उद्देश्य
- 3.1 प्रस्तावना
- 3.2 अनुसंधान प्रतिवेदन के उद्देश्य
- 3.3 अनुसंधान प्रतिवेदन के संघटक
- 3.4 प्रतिवेदन लेखन
- 3.5 सारांश
- 3.6 अभ्यास के लिए प्रश्न
- 3.7 संदर्भ ग्रन्थ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् पाठक जान सकेंगे कि :

1. अनुसंधान प्रतिवेदन लेखन करना किसी भी शोधकर्ता के लिए आवश्यक क्यों है;
2. अनुसंधान प्रतिवेदन के मुख्य संघटक कौन से हैं; तथा
3. अनुसंधान प्रतिवेदन लिखने में किन सावधानियों को ध्यान में रखना चाहिए।

3.1 प्रस्तावना

अनुसंधान प्रतिवेदन का लेखन अनुसंधान प्रक्रम का एक महत्वपूर्ण तथा अभिन्न अंग है। इसके अन्तर्गत शोधकर्ता को अपने अनुसंधान प्रक्रम के प्रति विशेष गुणों को प्रदर्शित नहीं करना होता, बल्कि उसको अपने शोध के सम्बन्ध में विशेषतः तथा स्पष्ट रूप से यह बताना होता है कि :

1. इस अनुसंधान की क्या समस्या रही है?
2. इस अनुसंधान के सम्पन्न करने का तर्क संगत आधार क्या रहा है?
3. इस अनुसंधान का विधि तन्त्र क्या रहा है?
4. इस अनुसन्धान से क्या परिणाम उपलब्ध हुए हैं?
5. इस अनुसन्धान में शोधकर्ता ने स्वयं क्या निष्कर्ष निकाले हैं?

3.2 अनुसंधान प्रतिवेदन के उद्देश्य (Purpose of a Research Report)

शोधकर्ता को अपने अनुसंधान के प्रतिवेदन को प्रस्तुत करना अनेक कारणों से आवश्यक तथा एक प्रकार से अनिवार्य रहता है। इसका प्रथम तथा प्रमुख प्रयोजन यह रहता है कि ऐसे प्रतिवेदन के प्रस्तुतीकरण में स्वयं शोधकर्ता की अपनी एक प्रबल जिज्ञासा की सन्तुष्टि होती है। दूसरे, जब तक अनुसंधान प्रतिवेदन प्रस्तुत व प्रकाशित नहीं होता, तब तक सम्बन्धित क्षेत्र के अन्य वैज्ञानिकों को शोधकर्ता द्वारा सम्पन्न किये गये अनुसंधानों का पता नहीं लगने पाता और ऐसा अनुसंधान चाहे कितना भी सनसनीखेज तथा उच्चकोटि का ही क्यों न हो, एक प्रकार से वैज्ञानिक जगत से ओझल तथा उपेक्षित रहता है। तीसरे, अनुसंधान का एक सामान्य उद्देश्य प्रायः वैज्ञानिक भण्डार को निरन्तर विकसित करना तथा उनमें वृद्धि करना रहता है। अब यदि अनुसंधान के परिणामों व निष्कर्षों को अनुसंधान प्रतिवेदन के माध्यम से शोध पत्रिकाओं में प्रकाशन के लिए प्रस्तुत ही नहीं किया जाता है, तब प्रचलित वैज्ञानिक ज्ञान भण्डार में किस प्रकार ऐसी अपेक्षित वृद्धि संभव हो सकेगी। इस के अतिरिक्त अनुसंधान प्रतिवेदन के प्रस्तुतीकरण का एक उद्देश्य यहाँ यह भी रहता है कि इस क्षेत्र के अन्य शोधकर्ता भी इस प्रतिवेदन को देखें, जानें, व इस के सम्बन्ध में अपनी टिप्पणी व आलोचना प्रस्तुत करें और यदि उनमें कोई शोधकर्ता आवश्यक समझे तो उसकी पुनरावृत्ति भी कर सके। इस प्रकार इस अनुसंधान प्रतिवेदन के प्रस्तुतीकरण से नवीन अनुसंधानों को प्रबल प्रेरणा मिलती है और इससे सैद्धान्तिक ज्ञान-रचना में भी सहायता मिलती है, और उससे कभी-कभी व्याहारिक समस्या के समाधान में सुलभता होती है। इस प्रकार अनुसंधान प्रतिवेदन के प्रस्तुतीकरण से वैज्ञानिक जगत के प्रति सैद्धान्तिक व व्याहारिक सम्प्रक्षेप तथा महत्वपूर्ण योगदान कि विशिष्ट योग्यता सम्पन्न होती है, तथा नवीन अनुसंधानों की रचनात्मक पृष्ठभूमि भी प्रशस्त होती है।

3.3 अनुसंधान प्रतिवेदन के संघटक

अनुसंधान प्रतिवेदन मुख्यतः निम्नलिखित संघटकों में विभाजित रहते हैं :

1. **शीर्षक (Title)** - अनुसंधान प्रतिवेदन का शीर्षक न अधिक विस्तृत और न अधिक संक्षिप्त ही होता है। शीर्षक के कथन की रचना इस प्रकार की होनी चाहिए जिससे अनुसंधान से संबंधित समस्या यथासंभव पूर्णतः स्पष्ट हो सके। यदि अध्ययन का स्वरूप प्रायोगिक है तब शीर्षक का कथन ऐसा होना चाहिए, जिससे स्वतंत्र चर परतंत्र चर के स्वरूप स्पष्ट हो सकें।
2. **परिचय (Introduction)** - इसका आरंभ अनुसंधान समस्या से सम्बन्धित सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि के संक्षिप्त विवरण से होता है। इसका उद्देश्य प्रस्तुत अनुसंधान की भूमिका को प्रशस्त करना होता है। आगे इस में प्रायः निम्नलिखित अंशों पर प्रकाश डाला जाता है :-

(अ) समस्या (Problem) तथा उसका तर्क संगत (Rational) आधार

(ब) परिकल्पना की रचना (Hypothesis Formulation) तथा उसकी रचना का

(स) समस्या के कथन तथा परिकल्पना से संबंधित मुख्य पदों की सक्रियात्मक व्याख्या (Operational explanation) प्रस्तुत करना।

प्रतिवेदन में जहाँ तक समस्या के प्रस्तुत करने का प्रश्न है, विभिन्न प्रकार के अनुसंधान प्रतिवेदनों में समस्या के लिखने का स्वरूप प्रायः कुछ अलग-अलग ही रहता है, परन्तु जहाँ तक संभव हो इसका कथन न्यूनतम ही रखने का प्रयास किया जाता है। इसका मौलिक उद्देश्य संक्षेप में पाठकों को यह बताना होता है कि समस्या क्या है: जैसे

क्या पूर्वाभ्यास का प्रतिक्रिया काल पर सार्थक प्रभाव पड़ता है?

क्या बालकों के बुद्धि-लब्धि के स्तरों का वाचिक अधिगम पर सार्थक प्रभाव पड़ता है?

समस्या के कथन के सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि समस्या के कथन व परिकल्पना रचना से सम्बन्धित मुख्य पदों की सक्रियात्मक (Operational) व्याख्या प्रस्तुत की जानी भी यहाँ आवश्यक रहती है, ताकि विभिन्न पाठक उनका समरूप ही अर्थ लगावें।

सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि के परिचय तथा पूर्व अनुसंधानों की समीक्षा के प्रस्तुत करने का प्रमुख उद्देश्य यह बताना रहता है कि अनुसंधान के लिए प्रस्तुत समस्या के उठाये जाने का तर्क संगत आधार क्या है? दूसरे यहाँ यह भी स्पष्ट करना होता है कि प्रस्तुत अनुसंधान समस्या से संबन्धित अतीत में क्या और किस प्रकार के अनुसंधान किये गये हैं और उनमें विधि तन्त्र संबंधी व विश्लेषण के विषय में क्या दोष देखने में आये हैं, और यहाँ अनुसंधान में प्रस्तुत परिकल्पना की रचना का सैद्धान्तिक आधार क्या रहा है।

3. प्रक्रिया (Procedure)- इसके अन्तर्गत अनुसन्धान से संबन्धित परिकल्पना के परीक्षण के विधितन्त्र को प्रस्तुत करना होता है तथा सम्बन्धित आँकड़ों के संकलन पर प्रकाश डाला जाता है। प्रतिवेदन के इस भाग के विभिन्न अंग इस प्रकार हैं:

1. प्रतिदर्श तथा प्रतिचयन (Sample and Sampling)

2. चरों का मापन (Measurement of Variables)

3. विश्लेषण की विधि (Methods of Analysis)

अनुसंधान विधि-तन्त्र को बताने का यहाँ एक उद्देश्य यह रहता है कि आगे अन्य कोई अनुसन्धानकर्ता यदि इस अनुसंधान की पुनरावृत्ति करना चाहे, तब उसे संबंधित पूर्व विधितन्त्र की जानकारी उपलब्ध हो सके साथ ही साथ, शोधकर्ता को यहाँ संबंधित आँकड़ों के संकलन में विधि-तन्त्र की उपयुक्ता को भी संक्षेप में बताना पड़ता है।

विधि-तन्त्र के प्रथम भाग में शोधकर्ता को अपने प्रतिदर्श तथा प्रतिदर्श के प्रयोज्यों की प्रतिचयन की प्रक्रिया को बताना होता है, और यह स्पष्ट करना होता है कि यहाँ अध्ययन से संबंधित मूहों के प्रयोज्यों को किस प्रकार यादृच्छिकृत किया गया है और यदि ऐसा नहीं किया गया है तो ऐसा करना क्यों संभव नहीं था। क्या यहाँ अध्ययन का स्वरूप-एक्स-पोस्ट फैक्टो है।

यहाँ अध्ययन से संबंधित किस उपकरण को उपयोग में लाया गया है तथा अन्य किन यंत्रों

की यहाँ सहायता ली गयी है। साथ ही साथ शोधकर्ता को यहाँ संबंधित चरों के नियंत्रण, मापन व अभिलेखन की विधियों को भी संक्षेप में व्यक्त करना होता है, और आँकड़ों के संकलन के पश्चात उनके विश्लेषण की विधि-टी परीक्षण (t-test), काई वर्ग परीक्षण (X^2 test) व प्रसरण विश्लेषण आदि का भी उल्लेख करना होता है।

यहाँ अधिकांश प्रतिवेदनों में यह भी बताया जाता है कि आँकड़ों के संकलन के लिए पहले किस प्रकार के पथ-प्रदर्शी अध्ययन तथा पूर्व परीक्षण संपन्न किये गये तथा उनसे विधि-तन्त्र सम्बन्धी क्या जानकारी उपलब्ध हुई।

4. परिणाम विवेचन व निष्कर्ष - कभी-कभी प्रतिवेदन के इस भाग के तीन अंगों को अलग-अलग ही प्रस्तुत किया जाता है। परन्तु इनको यहाँ सम्मिलित रूप से एक ही भाग में प्रस्तुत करना प्रायः अधिक उपयुक्त रहता है, क्योंकि इन तीनों अंगों में अनुसंधान समस्या के उत्तर के रूप में सभी अभिन्न परस्परिक आश्रितता रहती है। यहाँ मुख्य प्रश्न रहता है कि प्राप्त आँकड़ों के विश्लेषण के आधार पर संबंधित परिकल्पना ही पुष्टी हुई है या नहीं। इस विषय पर प्रतिवेदन लेखक को अति सावधानी पूर्वक तथ्यों को यथा संभव इतने परिशुद्ध तथा यथापूर्ण से प्रस्तुत करना होता है, जितना की यहाँ ऐसा करना उसके लिए संभव रहा है। इस सम्बन्ध में अपने कथन की पुष्टि में प्रतिवेदन लेखक का सम्बन्धित आँकड़ों की तालिका, सार्थकता के परीक्षण व परिणाम को भी प्रतिवेदन में यथा स्थान तथा यथा संभव संक्षिप्त तथा संघनित रूप में सम्मिलित करना रहता है। यदि अध्ययन से संबंधित तालिकाओं की संख्या अधिक रहती है, तब उनमें से अधिकांश को परिशिष्ट में ही प्रस्तुत करना अधिक उपयुक्त रहता है।

प्रतिवेदन लेखन को प्रतिवेदन में संभवतः यह स्पष्ट बताना होता है कि प्रस्तुत अनुसंधान के निष्कर्षों की अनुप्रयुक्ति की क्या परिसीमायें हैं। इसका उद्देश्य यहाँ यह संकेत देना होता है कि प्रस्तुत अनुसंधान के निष्कर्ष किस सीमा तक वैध हैं। प्रतिवेदन के अन्त में प्रायः अनुसंधान से संबंधित संदर्भ ग्रन्थों व शोध पत्रिकाओं का क्रमबद्ध परन्तु संक्षिप्त विवरण देना भी तर्क संगत ही रहता है।

कभी-कभी प्रतिवेदन के आरंभ में संपूर्ण अनुसंधान का सारांश प्रस्तुत करना रहता है। इसके अन्तर्गत शोध क्रिया के मुख्य-मुख्य अंशों का उल्लेख रहता है। अधिकांशतः इस भाग में अनुसंधान समस्या, उसका आधार व परिकल्पना तर्क-परीक्षण की संक्षिप्त विधि तथा प्राप्त निष्कर्षों का संघनित वर्णन किया जाता है।

3.4 अनुसंधान प्रतिवेदन लेखन (Research Report Writing)

स्पष्ट एवं सफल प्रतिवेदन लेखन का कार्य प्रायः एक ही प्रयास में सम्पन्न नहीं हो जाना। प्रतिवेदन के प्रथम प्रारूप (First Draft) में अनेक संशोधन व परिवर्तन की आवश्यकता पड़ती है। प्रतिवेदन के प्रस्तुतीकरण का स्वरूप न इतना विस्तृत हो उसमें अनावश्यक सूचनायें भरी रहें और न इतना संक्षिप्त रहें कि उसमें आवश्यक सूचनायें आने ही न पायें। इस कारण प्रतिवेदन का स्वरूप संघनित रहना चाहिये।

आरंभिक शोधकर्ताओं के लिए यह आवश्यक है कि वह इस संबंध में सुप्रसिद्ध शोध-पत्रिकाओं का ध्यानपूर्वक दो-चार बार गहन अध्ययन करें तथा शोध से संबंधित तथ्यात्मक सामग्री (आँकड़ों) तथा परिणामों, तालिकाओं और रूप-रेखाओं की प्रस्तुतीकरण की शैली का भी निरीक्षण करें। इसके पश्चात् ही अपने अनुसंधानों के प्रतिवेदन के लेखन के कार्य को आरम्भ करें।

आगे प्रतिवेदन लेखन में दो विधियों से आवश्यक सुधार व तर्कसंगत संशोधन लाये जा सकते

हैं :-

1. अपने लेखन के अध्ययन की पुनरावृत्ति स्वयं लगभग दो-तीन सप्ताह पश्चात् की जानी चाहिए। इससे समय के व्यतीत हो जाने से वस्तुपरकता व निष्पक्षता आने का अपूर्व अवसर रहता है, क्योंकि कुछ समय बीतने पर प्रतिवेदन लेखक की अभिव्यक्ति में इस सम्बन्ध में पर्याप्त तटस्थता आ जाती है।
2. दूसरा, लिखित प्रतिवेदन को उस क्षेत्र के अन्य अनुभवी व्यक्तियों व विशेषज्ञों को दिखाने से भी यथासंभव आवश्यक संशोधन व परिवर्तन यथा समय पर किये जा सकते हैं। इस सम्बन्ध में शोधकर्ता के लिए यहाँ यह अपेक्षित है कि ऐसे अनुभवी व्यक्तियों व विशेषज्ञों की आलोचना को जरा भी बुरा म मान कर सहर्ष स्वीकार करें और उनके संदर्भ में प्रतिवेदन लेखन में आवश्यक संशोधन या परिवर्तन संपन्न करें।

3.5 सारांश

शोधकर्ता को अपने अनुसंधान के प्रतिवेदन को प्रस्तुत करना अनेक कारणों से आवश्यक तथा अनिवार्य रहता है। अनुसंधान प्रतिवेदन मुख्यतः निम्नलिखित कारणों से भागों में विभक्त रहते हैं :

शीर्षक, परिचय, प्रक्रिया, परिणाम विवेचन व निष्कर्ष

स्पष्ट तथा सफल प्रतिवेदन लेख का अर्थ प्रायः एक ही प्रयास से सम्पन्न नहीं हो जाता। प्रतिवेदन के प्रथम प्रारूप में अनेक संशोधन व परिवर्तन की आवश्यकता पड़ती है। प्रतिवेदन के प्रस्तुतीकरण का स्वरूप न इतना विस्तृत हो कि इनमें अनावश्यक सूचनायें भरी रहें और न इतनी संक्षिप्त रहे की उसमें आवश्यक सूचनायें आने ही न पायें। इस कारण प्रतिवेदन का स्वरूप संघनित रहना चाहिए।

3.6 अभ्यास के लिये प्रश्न

1. What are the contents of an ideal research report? Explain and illustrate them

एक आदर्श अनुसंधान प्रतिवेदन की विषय - सामग्री क्या होती है? उनकी व्याख्या कीजिए तथा दृष्टान्त दीजिए।

3.7 संदर्भ ग्रन्थ

1. अनुसंधान परिचय - श्री पारसनाथ राय
2. व्यावसायिक सांख्यिकीय - डा० एस० एम० शुक्ल
3. सामाजिक अनुसंधान शोध - एम०एल० गुप्ता, डी० डी० शर्मा
4. Method in social Research - Goode & Hatt
5. Principles of Statistics - Ramendu Roy

इकाई - 4 : डाटा भण्डारण और खनन (Data Warehousing and Mining)

इकाई की रूपरेखा-

- 4.0 उद्देश्य
- 4.1 प्रस्तावना
- 4.2 डाटा भण्डारण - परिभाषाएँ
- 4.3 डाटा भण्डारण का उदभव कैसे हुआ?
- 4.4 डाटा भण्डार गृह का आयोजन
- 4.5 डाटा भण्डारण का लाभ
- 4.6 डाटावेयरहाउस (भण्डार-गृह) से डाटा का विश्लेषण और वितरण
- 4.7 डाटा खनन
- 4.8 डाटा चयन कार्यप्रणालियाँ
- 4.9 संक्षेप / सार
- 4.10 अपनी समझ का परीक्षण करें
- 4.11 निर्णय सहायक प्रणाली की विशेषतायें
- 4.12 संदर्भ पुस्तकें

4.0 : उद्देश्य

इस अध्याय को पढ़ने के बाद पाठक को समझ में आना चाहिए -

- डाटा भण्डार गृह (वेयरहाउस) की मूल अवधारणा और विशिष्टता।
- डाटा भण्डार गृह का विकास।
- डाटा भण्डार गृह की व्यवस्था और इससे डाटा का वितरण।
- डाटा खनन तथा खनन प्रणाली ।

4.1 प्रस्तावना

नये सदी में ई-व्यवसाय व्यापार का नया मंत्र बनने के साथ, प्रत्येक क्षण कंपनियाँ इस सूचना क्रान्ति को अंगीकार कर रही हैं। परन्तु इस क्रान्ति में सिर्फ वही कम्पनियाँ बची रह सकेंगी जो नयी तकनीकों एवं प्रणालियों को स्वीकार कर सकेंगी।

व्यापारिक पर्यावरण के बहुत अवयवों से जुड़े जानाकारियों को एकत्र करने के लिए प्रबन्धक हमेशा विकसित तकनीकी उपकरणों एवं यन्त्रों का उपयोग करते हैं। इसके लिए परम्परागत विधियों जैसे आन्तरिक रिपोर्टिंग प्रणाली और टी पी एस (ट्रान्सैक्शनल प्रोसेसिंग सिस्टम), लेन देन प्रक्रिया

हमेशा से उपयोग में थे, परन्तु इन्टरनेट तथा नवीनतम तकनीकों के उदभव के साथ डाटा तथा जानकारियों में, वृहद परिभाषा के नाते, रूपान्तरित करने तथा संचालन करने में आसानी हो गयी है।

डिजिटल अर्थव्यवस्था के हर क्षण बढ़ते महत्व के कारण व्यापार को अपने डिजिटल संसाधनों यानी अपने डाटा को प्रत्येक अन्तिम पैसे के मूल्य का प्रबन्धन करने की पहले से ज्यादा जरूरत है। प्रभावी निर्णय के लिए प्रभावी प्रबन्धन की आवश्यकता है। ई-व्यवसाय के व्यापक क्रियान्वयन से पहले, डाटा प्रबन्धन, व्यवसाय के लिए सिर्फ एक आन्तरिक चुनौती है। अब जब इन्टरनेट की माँग बढ़ी है और व्यापारों के डिजिटल बाजार में अपना स्थान बनाने हेतु अपनी डाटा स्थिति का खुलासा ग्राहकों, साथियों और यहाँ तक कि प्रतिद्वन्दियों को करना चाहिए। डाटा-भण्डारण तकनीकियाँ, डाटा एकाकीकलन को मूल आधारभूत क्षमता प्रदान करने वाला है।

4.2 डाटा भण्डारण - परिभाषाएँ

डाटा भण्डारण एक लोकप्रिय व्यावसायिक अनुप्रयोग बनता जा रहा है, जिसे बहुत कम्पनियों में पहले से प्रयोग किया जा रहा है। बिल-इन्मौन डाआ-को भण्डार गृह संकल्पना तथा परिभाषिक शब्दावली हेतु व्यापक श्रेय दिया जाता है। “डाटा भण्डारण, प्रबन्धन/संचालन निर्णयात्मक प्रक्रिया के अवलंब (बल प्रदान करने) हेतु, एक विषय अनुकूलित, समकालित, समय-परिवर्तित तथा स्थिर/स्थायी डाटा का संग्रह है।”

अतिरिक्त व्याख्या द्वारा, इनमान अधोलिखित परिभाषा देते हैं :

समकालित : वह डाटा जिन्हें कई स्रोतों से डाटा भण्डार गृह में एकत्र किया गया है। तथा जो सुसंगत सम्पूर्ण में विलीन हो गये हैं।

विषयानुकूल : वह डाटा जो एक विशेष विषय के बारे में जानकारी देते हैं, बनिस्बत एक कम्पनी की सारी विधियों के बारे में।

समय-परिवर्तित : डाटा भण्डार गृह के सभी डाटा की पहचान एक विशेष समयावधि में किया जाना।

स्थायित्व : डाटा, डाटा-गोदाम में अचल होती है। समय-समय पर अन्य डाटा जोड़ा जाता है लेकिन कभी भी डाटा हटाया नहीं जाता।

व्यावसायिक लेन-देन की एक प्रति के रूप में जहाँ डाटा को विशेष तौर पर पूछताछ और विश्लेषण के लिए संरचित किया जाता है, परिचालन प्रणाली अपने डाटा के अनन्त समय के लिए बाँध कर नहीं रख सकता है, इसलिए डाटा को डाटा भण्डार गृह में भेजा जाता है।

4.2.1 डाटा भण्डार गृह की विशिष्ट विशेषता

डाटा भण्डार गृह की अधोलिखित विशेषताओं को उपरोक्त वर्णित परिभाषाओं से पहचाना जा सकता है।

अ) डाटा गोदाम में डाटा का एक वृहत् संग्रह होता है, जिसे पहले ही निष्पादित किया जा चुका

है।

- ब) सभी डाटा जो संग्रहित हैं, वो एक विशेष समय गठन के संदर्भ में हैं।
- स) डाटा को डाटा गोदाम में बहुश्रोतों के माध्यम से डाला जाता है। अन्य शब्दों में, एक डाटा गोदाम कम्पनी के सभी गतिविधियों से सम्बन्धित बहुत प्रकार के डाटा रखता है।
- द) जैसे जैसे डाटा, बहु स्रोतों से डाटा भण्डार गृह में डाला जाता है, सभी डाटा को एक आम मंच में रूपान्तरित किया जाता है। ये डाटा को पूछताछ तथा विश्लेषण हेतु मिलाने के लिए सामर्थ्य बनाता है।
- ई) उपयोगकर्ता के आवश्यकतानुसार डाटा को वापस बुलाया जा सकता है।
- फ) डाटा भण्डार-गृह में समय-समय पर डाटा का आधुनीकीकरण किया जाता है। (नये डाटा भरा जाता है।)

4.3 डाटा भण्डारण का उदभव कैसे हुआ?

बहुत मायनों में, डाटा भण्डारण का इतिहास है। पहले से ही संग्रहित डाटा का अधिक मूल्य प्राप्त करने के लिये या डाटा संशोधनों के वृहत परिमाण को कार्यान्वयन बनाने के लिये अन्य उपायों को सुनिश्चित करने के लिए डाटा भण्डारण किया जाता है।

लक्ष्य/उद्देश्य है, डाटा को कार्यान्वित करना। इतिहास अभिसरण द्वारा भी विशेष है। जैसा कि आकृति सं. 12-1 में दिखाया गया है। यह दर्शाता है - बहुत समय से अनेक धारणाएँ और तकनीकों को सन्निविष्ट किया गया है। और फलस्वरूप, दूसरे, अन्य धारणाओं और तकनीकों को प्रभावित और अभिसरित किया गया है। इन्टरनेट काल के आने के साथ, तकनीकियों का अभिसरण बहुत सरल तथा तेज हो गया है। कुछ तीस साल पहले रिपोर्टिंग प्रणाली ने कारोबार अनुप्रयोग फाइलों से डाटा विभाजन की शुरुआत की और अपने स्वयं को उद्भरण बनाया नैगम निर्णय लेने वालों के द्वारा आसानी से व्यथित होने वाले प्रारूप में।

संघात/प्रभाव प्रिन्टों ने 'वैच रिपोर्ट' के हार्ड कापियों की ढेर लगादी, पाक्षिक, मासिक, त्रैमासिक एवं वार्षिक आधार पर। यदि एक रिपोर्ट खो गयी और उसे पुनः चलाना/उपयोग करना है, टेप रीलों, जिनमें निकाले गये डाटा हैं को व्यवस्थित किया जाता है। उस पर लेबल लगाया जाता है (अंकितक किया जाता है।) और लटका दिया जाता है।

भूतकाल में (पहले), डाटा भण्डार-गृह की क्रियाशीलता/क्रियात्मकता बहुत सीमित थी। और चित्रमय प्रतिनिधित्व तथा डाटा के विश्लेषण हेतु केवल कुछ साधनों/उपकरणों का अर्पण किया जाता था। व्यक्तिगत कम्प्यूटरों के उदभव के साथ, डाटा इन आदिम डाटा पुस्तकालयों से व्यक्तिगत पुस्तकालयों की तरफ प्रस्थान करने लगे। इसने स्थानीय डाटा के विश्लेषण को सरल बना दिया परन्तु इस हानि के साथ कि सम्पूर्ण छवि का मिलना ज्यादा कठिन हो गया। क्योंकि नेटवर्कों का प्रचलन बहुत आम नहीं था। डाटा की अन्य प्रणालियों से साझेदारी नहीं की जा सकती थी।

डाटा भण्डार-गृह प्रणाली के परिचय/प्रवेश से पहले, प्रणाली का तृतीय समूह जिसका उपयोग किया गया था, वह था निर्णय समर्थन प्रणाली और कार्यकारी (व्यवस्थापक) सूचना प्रणाली, जिसने आंशिक रूप से डाटा भण्डार-गृह प्रणाली को क्रियात्मकता/ क्रियाशीलता प्रदान की। निर्णय समर्थन प्रणाली का उपयोग विवरण पर ध्यान देने हेतु किया जाता था, निचले से मध्यम स्तर के प्रबन्धकों के लिये, उपयोगी विशेष निर्णय से सम्बन्धित समस्याओं के लिये। जबकि कार्यकारी/व्यवस्थापक सूचना प्रणाली, डाटा के उच्च स्तरीय दृष्टि को दर्शाता है। प्रणाली के इस समूह का मूल डाटा साधारणतया वही है परन्तु संसाधित अलग तरीके से किया जाता है। प्रणाली के इस समूह को डाटा भण्डार-गृह प्रणाली के प्रणता के रूप में देखा जा सकता है। ये प्रणालियों कभी भी वास्तविक रूप में लोकप्रिय नहीं हुयीं क्योंकि य बहुत खर्चीली थीं।

डाटा भण्डार-गृह प्रणाली जो इन अनुप्रयोगों से उत्पन्न हुयी से विकसित हुए वो विश्लेषणात्मक उपकरण या यन्त्र प्रदान जो ज्यादा साधारण जरूरतों को संतुष्ट / पूरा करने में सक्षम हैं। दोनों विश्लेषकों प्रबन्धकों या प्रशासकों/व्यवस्थापकों को लक्षित किया जाता है। परन्तु विशेष आवश्यकताओं पर आधारित डाटा के अंशों का विश्लेषण करने हेतु, प्रणाली को उपयोग करने में समर्थ है।

4.4 डाटा भण्डार-गृह का आयोजन

डाटा प्रणाली को व्यवसायिक विश्लेषण हेतु एक उपयोगी और सफल उपकरण / यंत्र / माधन बनाने के लिये एक से ज्यादा संचालन प्रणाली के डाटा को जोड़ना जरूरी है। एक से ज्यादा संचालन प्रणालियों के डाटा को जोड़ने के लिए डाटा को एक एकल डाटा प्रारूप में तब्दील करना जरूरी है। यह डाटा विश्लेषण को एक सुसंगत तरीके से संभव बनाता है। ये अवश्य ही वास्तविक उत्पादन डाटा के साथ नहीं किया जा सकता है। एक प्रति का उपयोग होता है रूपान्तरण तथा दूसरा विश्लेषण होता है। डाटा भण्डार - गृह प्रणाली डाटा को जोड़ सकता है। उदाहरण के तौर पर विक्रय, विपणन, वित्त एवं उत्पादन अनुप्रयोगों द्वारा एक बार डाटा को एकत्रित कर लिया गया/ जोड़ लिया गया तो डाटा का क्रस संदर्भ करना तथा एक बड़ा दृश्य प्राप्त करना संभव होता है। आकृति 12-1 ग्राहक द्वारा खरीदारी परिस्थिति में, डाटा (वेयरहाउस) भण्डार-गृह की कार्यशीलता की व्याख्या करता है।

4.5 डाटा भण्डारण का लाभ

यद्यपि डाटा भण्डारण की प्रयोजनीयता असीम है डाटा भण्डारण के अधोलिखित लाभों की संक्षिप्त चर्चा की जा रही है।

- (1) एक बार डाटा को एकत्रित कर लिया गया/जोड़ लिया गया तो डाटा का क्रस संदर्भ करना तथा एक बड़ा दृश्य प्राप्त करने में संभव होता है।
- (2) डाटा (वेयरहाउस) भण्डार-गृह के डाटा समय के चारों तरफ सुव्यवस्थित /संघटित किया जाता है क्योंकि इन पहलू को अक्सर प्राथमिक खोज फिल्टर मापदण्ड के रूप में उपयोग किया जाता है। अधिकतर लोग एक दिये गये सप्ताह माह या तिमाह पर आधारित रिपोर्ट चाहते हैं और परिणामों

की अन्य सप्ताहों, महीनों तथा तिमाही परिणामों से तुलना करते हैं। विभिन्न डाटा स्रोतों के बीच डाटा का क्रास संदर्भ करने हेतु भी समय विशेषण का उपयोग किया जाता है। यह उपयोगकर्ताओं को एक कम्पनी के विभिन्न समुदायों के कार्यकलापों / गतिविधियों के बीच सहसम्बन्ध बनाने तथा पहचानने/ समझने (के लिये अनुमोदित करता है) की अनुमति देता है, यह अद्वितीय प्रणाली, डाटा भण्डारण - गृह प्रणाली को शक्तिशाली बनाती है।

(3) डाटा वेयरहाउस न सिर्फ बहुस्रोतों से डाटा का एकीकरण करते हैं, परन्तु उन्हीं स्रोतों के एकाधिक संस्करणों का विश्लेषण भी कर सकता है। यह उपयोगकर्ताओं को सत्यापन करने की अनुमति देता है। उदाहरणतः क्या मौजूदा अनुप्रयोगों के उन्नयन से कार्य में / प्रदर्शन में सुधार हुआ है या क्या नये कर्मचारी अन्य कर्मचारियों से ज्यादा आज पैदा करने में सक्षम है। अनुप्रयोज्य साफ्टवेयर को बदल कर डाटा भण्डार-गृह सम्पूर्ण कम्पनी का एक व्यवसायिक दृश्य रखने हेतु, पुराने और नये अब प्रायोज्य साफ्टवेयरों को जोड़ने का काम किया जा सकता है।

(4) एक बार डाटा को डाटा भण्डार-गृह में आयातित कर लिया गया है, ये गैर वाष्पशील यानी स्थिर हो जाता है। अर्थात् इस जानकारी में बाद में कोई बदलाव नहीं किया जाता है। जो डाटा परिचालन प्रणाली से आता है, वह अन्तिम अवस्था में, डाटा भण्डार-गृह में जाने के लिये प्रेरित होता है। डाटा भण्डार-गृह में जाने से पहले, आवेशित और उत्पादित डाटा को पूरा किया जाता है। इस डाटा को डाटा वेयरहाउस में ले जाने के बाद आप परिचालन प्रणाली के संसाधनों को मुक्त करते हैं और एक पुरूलेख बनाते हैं। जिसे बहु उद्देश्यों हेतु प्रयोग में लाया जा सकता है। डाटा को डाटा वेयर हाउस में रखने से परिचालन प्रणाली को भरने से दूर रखता है इस तरह से डाउनलाइन लागत पर बचत होती है।

(5) डाटा का अन्तिम स्थिति के अतिरिक्त, डाटा भण्डार-गृह का उपयोग डाटा के स्नैपशॉट (आशुचित्र) की तुलना करने में किया जा सकता है। जो एक समय में पूरा बदल जाता है।

4.6 डाटावेयर हाउस (भण्डार-गृह) से डाटा का विश्लेषण और वितरण

सभी ग्राहक स्पर्श बिन्दुओं से एकत्रित डाटा, डाटा भण्डार-गृह में प्रकट होते हैं तथा निर्णय करने वालों के लिए विश्लेषण एवं वितरण हेतु तैयार होते हैं। जूडी स्ट्रॉस और रेमॉण्ड फ्रास्ट (2000) ने निर्णय लेने के लिये उपयोग किये जाने वाले चार मुख्य प्रकार के विश्लेषणों को परिभाषित किया है। ये समाहित करते हैं :

- (1) डाटा खनन (माइनिंग)
- (2) ग्राहक रूपरेखांकन। (Profiling)
- (3) RFM विश्लेषण अर्थात् नयापन (Recency), आवृत्ति (Frequency), आर्थिक (Monetary) विश्लेषण
- (4) रिपोर्ट तैयार करना।

ग्राहक रूपरेखांकन डाटा भण्डारण की जानकारीयों का उपयोग करता है। इस प्रकार यह विपणक को विशेष लक्षित समूह की विशेषताओं और व्यवहार को समझने में मदद करता है। इस प्रक्रिया के माध्यम से विपणक को वास्तविक समझ हो सकती है कि कौन-कौन सा उत्पाद खरीद रहा है तथा संवर्धन की पेशकशों तथा मूल्य परिवर्तन पर उनकी प्रतिक्रिया कैसी है। ग्राहक रूपरेखांकन के कुछ अतिरिक्त लाभ समाहित करते हैं अधोलिखित विशेषताओं को :

- उन्नयन अपील हेतु लक्षित समूहों का चुनाव
- उन ग्राहकों को ढूँढना तथा बनाये रखना जो कम्पनी के लिये लम्बे समय तक के लिये आगे मूल्यवान हों।
- भारी/बहुमूल्य उत्पाद उपयोगकर्ताओं की विशेषताओं को समझने हेतु।
- उपयुक्त ग्राहकों हेतु सीधी क्रॉस सेलिंग गतिविधियाँ।
- उच्च प्रतिक्रिया वाले ग्राहकों को लक्षित कर के सीधे सेलिंग लागत को कम करना।

RFM विश्लेषण तीन मापदण्डों हेतु, डाटा बेस को स्कैन करता है। प्रथम, ग्राहक ने अन्तिम खरीद कब की (Recency नयापन) ? द्वितीय ग्राहक ने समान /उत्पाद को कितनी बार खरीदा (Frequency)। तृतीय, ग्राहक ने उत्पाद खरीदने हेतु कितना खर्च किया (Monetary value आर्थिक मूल्य) ? ये प्रक्रिया फर्म कम्पनी को उन ग्राहकों को संवर्धन की पेशकश करने की अनुमति देता है जो सबसे अधिक अनुप्रक्रियात्मक रहे हैं और इस तरह से उन्नयन लागत को कम करते हैं और बिक्री को बढ़ाते हैं।

4.7 डाटा खनन

व्यापार तथा वैज्ञानिक निर्णय लेने की प्रक्रिया के गुणवत्ता तथा प्रभावशीलता में सुधार के लिये डाटा खनन एक नयी तकनीक है। यह अन्य व्यापारिक निर्णय लेने में सहायक उपकरणों/साधनों यथा सांख्यिकी विश्लेषण, कम्प्यूटर रिपोर्टिंग तथा पूछताछ की पूरक है और प्रायः प्रतिस्थापित करती है। किसी उद्यमी डाटाबेस प्रणाली और डाटा रिकार्डों का शोषण कर, डाटा खनन, निवेश पर उच्च लाभ प्राप्त कर सकता है।

डाटा खनन, सांख्यिकी की विश्लेषण के माध्यम से बड़े डाटाबेस के गुप्त भविष्य जानकारीयों का निष्कर्षण समाहित करता है। यह विधि रोचक है क्योंकि निर्णय लेने वालों को किसी परिकल्पना के साथ डाटा तक पहुँचना नहीं होता है, वरन् देश में प्रवृत्ति खो जाने/पाने की साधारण रूचि के साथ डेटा तक जाना होता है। उदाहरण के तौर पर एक विक्रेता यह जानना चाहता है कि क्या एक विशेष उत्पाद में भारी खरीदारी करने वाला ग्राहक/ उपभोगकर्ता किसी एक विशेष माह के दौरान ज्यादा खरीदारी करता है।

खरबंदा तथा पार्थसारथी (2001) डाटा खनन को परिभाषित करते हैं एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में जहाँ एक वृहत् डाटा बेस से पहले से अन्जान, मान्य तथा अभियोज्य जानकारीयों का निष्कर्षण किया जाता है तथा तब इन जानकारीयों का उपयोग कर महत्वपूर्ण व्यापारिक निर्णय लिया जाता है।

4.8 डाटा खनन कार्यप्रणालियाँ

आँकड़ों के अनुसार डाटा खनन को दो बड़े वर्ग में वर्गीकृत किया जा सकता है। निश्चित विश्लेषण और खोजपूर्ण विश्लेषण। निश्चित विश्लेषण सम्बोधित होता है, परिकल्पना के शुरुआत के साथ और डाटा विश्लेषण का उपयोग कर परिकल्पना को सत्यापन करना या खण्डन करने से। खोजपूर्ण विश्लेषण, दूसरी तरफ सम्बन्धित होता है एक परिकल्पना की खोज के लिये जिससे डाटाबेस में से दर्शित रूझान की बेहतर व्याख्या होती है। निश्चित विश्लेषण जहाँ प्रणाली मॉडल निर्भर है परिकल्पना के शुरुआत करने में, से भिन्न खोजपूर्ण विश्लेषण में, प्रणाली रचना करता है एक परिकल्पना की जो स्वयं विश्लेषण का एक अंश है। वैचारिक तौर पर डाटा खनन, खोज करता है बिना किसी पूर्व नियोजित परिकल्पना के खोजपूर्ण विश्लेषण पर आधारित शुरुआत की।

परिकल्पना डाटा विश्लेषण कार्य प्रणाली के अन्तिम परिणाम का एक घटक बनाता है। निम्नलिखित तीन मुख्य डाटा खनन कार्य विधियाँ हैं -

- (1) खोज (2) भविष्य सूचक माडलिंग (3) न्यायिक विश्लेषण ।

खोज सम्मिलित करता है कि डाटा सेट में स्थायी प्रतिमान को सिर्फ पाने की प्रक्रिया को। ये प्रक्रिया समाहित करता है डाटा रिकार्डों का विभिन्न पैमानों पर विश्लेषण को जिन पर वह प्रतिनिधित्व कर सकें। यह प्रक्रिया सिर्फ प्रयास करता है एक विशेष रिकार्ड फिल्ड (क्षेत्र) के मूल्य पर आधारित भिन्न रिकार्डों के बीच रूचिकर प्रतिमान पाने का।

भविष्य सूचक माडलिंग एक ऐसी कार्यविधि है जो डाटा सेट में प्रतिमान/पैटर्न पाने की कोशिश करती है और तब प्रणाली के पैटर्न /प्रतिमानों पर आधारित मूल्यों की भविष्यवाणी करने की प्रयास करती है। यह प्रणाली भविष्यवाणी कर सकती है, कुछ लुप्त/खोये हुये मूल्यों का एक विशेष स्रोत के लिये जिन्हें पूर्व अवलोकित पैटर्न पर आधारित नये रिकार्ड में छोड़ दिया गया हो। न्यायिक विश्लेषण एक ऐसी प्रक्रिया / कार्य विधि है जो डाटा रिकार्ड में पैटर्नों को खोजने का लक्ष्य रखता है और तब विषम रिकार्डों या असामान्य विचलनों वाले रिकार्डों को चिन्हित करने के लिए इन पैटर्नों (प्रतिमानों) का उपयोग करता है। तालिका 12.2 डाटा खनन के कुछ आम अनुप्रयोगों को दर्शाती है।

वेब - ई-व्यवसाय को जनता तक ले आया है। पहले व्यावसायिक वेब साइट्स उटा गहन से दूर थे प्राथमिक बाउचरवेयर होना एक इलेक्ट्रानिक बिजली है विज्ञापन हेतु नये अन्य चैनल होना। डाटा बेस, वेबसाइटों से जुड़े थे सिर्फ पढ़ने हेतु मद में। हमारे डाटा उन्मुख परिप्रेक्ष्य से रूप ई-व्यवसाय नवीनतम है। व्यावसायिक पहल की लम्बी लाइन में जहाँ जरूरत है एक डाटा के वृहत व्याप्ति की, एक अनुप्रयोज्य प्रणाली से परे। व्यापार में डाटा भण्डारण प्रक्रियाओं तथा तकनीकियों का सबसे आम उपयोग/अनुप्रयोग है उन पहल शक्तियों/उपक्रमणों के मदद के सहायता करने में जो जैसा कि हम देख सकते हैं।, ई-व्यवसाय के अभिन्न अंग के रूप में, नये स्वरूप में विकसित हो रहे हैं।

डाटा भण्डारण तकनीक, डाटा संग्रहण तथा पुनः प्राप्ति के नये समाधान प्रदान करता है

यद्यपि डाटा भण्डारण और डाटा खनन अपेक्षाकृत नयी संकल्पनायें हैं, परन्तु हमेशा पद्यति प्रसंस्करण शक्ति व्यापक ब्रैण्डविद्ध तथा काम चलाऊ। तात्कालिक भण्डारण उपकरणों के साथ बहुत समय नहीं लगेगा जब ये तकनीक निर्णय लेने की पर्याय बन जायेगी।

4.9 संक्षेप / सार

डाटा गोदामीकरण का विकास बहुतेरे शोधकर्ताओं तथा संघटनों के बारम्बार किये गये प्रयासों से हुआ है, उनके संघटनों को उन डाटा में तक पहुँचने का जो संघटनों के सबसे विवेचनात्मक एवं मूल्यवान अस्तियों में से एक को प्रतिनिधित्व करते हैं, नभ्य, प्रभावी और कुशल माध्यम प्रदान करते हैं।

एक डाटा भण्डार-गृह, प्रबन्धन के निर्णय लेने में सहायक एक विषय उन्मुख, संगठित, समय परिवर्ती, स्थिर। डाटा संग्रहण की एक प्रक्रिया है। भूतकाल में डाटा भण्डार-गृह की क्रियात्मकता बहुत सीमित थी और चित्रमय प्रतिनिधित्व तथा डाटा के विश्लेषण हेतु सिर्फ कुछ साधन/उपकरण पेश करते थे।

डाटा प्रणाली को, व्यावसायिक विश्लेषण हेतु उपयोगी और सफल बनाने के लिये एक से अधिक परिचालित प्रणालियों के डाटा को एकत्र करने की/जोड़ने की जरूरत है। डाटा खनन सांख्यिकी विश्लेषण के माध्यम को बड़े डाटाबेस के गुप्त भविष्य सूचक जानकारी का निष्कर्ष समाहित करता है। यह विधि रोचक है क्योंकि निर्णय लेने वालों को किसी परिकल्पना के साथ डाटा तक पहुँचना नहीं होता है बल्कि डेटा में पैटर्न/प्रतिमान खोजने/पाने को साधारण रूचि के साथ डाटा तक जाना होता है। तीन मुख्य डाटा खनन कार्यविधियाँ हैं। ये खोज, भविष्य सूचक मॉडलिंग तथा न्यायिक विश्लेषण हैं।

4.10 अपनी समझ का परीक्षण करें

1. डाटा भण्डारण को परिभाषित करें। यह परम्परागत डाटा बेस से कैसे भिन्न हैं?
2. एक डाटा भण्डार-गृह की विशेष विशेषतायें क्या हैं?
3. डाटा भण्डारण के विकास की रूपरेखा बनायें।
4. डाटा खनन से आपका क्या अभिप्राय है?
5. डाटा खनन में उपयोग लायी जाने वाली आम कार्यप्रणालियाँ/विधियाँ कौन सी हैं?

4.11 निर्णय सहायक प्रणाली की विशेषताएँ

निर्णय सहायक प्रणाली

निर्णय सहायक प्रणाली या कार्यकारी/व्यवस्थापक/जानकारी प्रणाली जिसे डाटा भण्डार-गृह प्रणाली के प्रणेता के व्यापक रूप में देखा जाता है, की अधोलिखित विशेषतायें हैं :-

- (1) संगठित विचार/दृष्टि

संगठित विचार उदाहरणतः उत्पाद, ग्राहक तथा बाजारों पर उपलब्ध है जो और अधिक विवरण की अनुमति देते हैं।

(2) वर्णनात्मक शब्दावली

प्रबन्धको द्वारा आसानी से समझने के लिये ये प्रणाली डाटा के नाम को गुप्त कम्प्यूटर शब्दावली से आदर्श व्यवसायिक शब्दावली में रूपान्तरित करती है।

(3) पूर्व संशोधित डाटा

उपलब्ध डाटा पूर्व संशोधित है मानक नियमों को बेहतर जोड़ा जाने के लिये।

आकृति 12.1

डाटा संग्रहण तथा संग्रहण का भण्डारण, उदाहरण -

Customer	-	ग्राहक
Customer Data Base	-	ग्राहक का डेटा बेस
Bar Code Scanner	-	बार कोड स्कैनर
Product Data Base	-	उत्पाद का डाटा बेस
Operational System	-	परिचालन प्रणाली
Transactional Database-	-	लेन देन सम्बन्धित डाटा बेस

डाटा वेयरहाउस - डाटा भण्डार-गृह

आकृति 12.2

डाटा खनन एवं इसके अनुप्रयोज्य / अनुप्रयोगी क्षेत्र

गतिविधि	अनुप्रयोगी क्षेत्र
खोज/शोध	लक्षित विपणन, बाजार आधारित
अन्वेषण	विश्लेषण, संकर विक्रय
भविष्य सूचक माडलिंग	(क्रॉस विक्रय, बाजार खण्डीकरण) भविष्यवाणी, ग्राहक अवरोधन, संशोधिक उत्तरदायित्व,
न्यायिक विश्लेषण	उन्नत गुणवत्ता नियंत्रण प्रतियोगी विश्लेषण धोखाधड़ी का पता लगाना